इकाई 1 . नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1•1 प्रस्तावना
1•2 उद्देश्य
1•3 नाट्य शब्द का अर्थ
1•4 नाट्य साहित्य का उद्भव
1•4•1 उद्भव सम्बन्धी भारतीय मत
1•4•2 उद्भव सम्बन्धी पाश्चात्य मत
1•5 नाट्य साहित्य का विकास
1•5.1 भास
1•5•2 कालिदास
1•5•3 अश्वघोष
1•5.4 श्रीहर्ष
1.5.5 भवभूति
1•6 सारांश
1•7 शब्दावली
1•8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1•9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1•10 उपयोगी पुस्तकें
1•11 निबन्धात्मक प्रश्न

1•1 प्रस्तावना

संस्कृत नाटक से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है । जैसा कि आपने पूर्व में अध्ययन किया है की साहित्यशास्त्र में काव्य के दो भेद हैं दृश्य काव्य, श्रव्य काव्य । श्रव्य काव्य में आनन्दानुभूति कल्पना मार्ग से प्राप्त होती है जबकि दृश्य काव्य के द्वारा आनन्द की प्राप्ति रंगमंच पर साकार होती है । इसी दृश्य काव्य को रूप या रूपक के नाम से जाना जाता है ।

प्रस्तुत इकाई में आप यह जानेगें कि नाटक किसे कहते हैं । इसकी उत्पत्ति तथा विकास किस प्रकार हुआ । संस्कृत नाटकों के विकास में किसका योगदान है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि नाटक किसे कहते हैं । संस्कृत नाटकों का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ । महाकवि भास, ,शूद्रक, कालिदास अश्वघोष,हर्ष, भवभूति आदि महाकवियों का संस्कृत नाटकों में क्या योगदान है । नाटकों के द्वारा सहृदय सामाजिक को आनन्द की प्राप्ति होती जो मानव के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है इसकी उपयोगिता से परिचित करा सकेगें ।

1•2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि —

- नाटक किसे कहते हैं तथा इनका उद्भव किस प्रकार हुआ ।
- उद्भव से सम्बन्धित भारतीय एवं पाश्चात्य मतों को समझा पायेगें ।
- यह बता सकेगें कि कालिदास का जन्म कब और कहां हुआ था ।
- कालिदास की रचनाओं के बारे में बता सकेगें ।
- भास, शूद्रक, अश्वघोष, हर्ष, भवभूति आदि के नाटकों के नाम बता सकेगे ।

1•3 नाट्य शब्द का अर्थ

साहित्यशास्त्र में काव्य के दो भेद हैं 1 दृश्य काव्य ,श्रव्य काव्य । दृश्य काव्य के द्वारा भावक किसी भी घटना या वस्तु का चाक्षुष ज्ञान ग्रहण करता है, किन्तु श्रव्य काव्य के द्वारा केवल श्रवण ही प्राप्त होता है । श्रव्य काव्य में आनन्दानुभूति कल्पना मार्ग से प्राप्त होती है जबकि दृश्य काव्य के द्वारा इसी आनन्द की प्राप्ति रंगमंच पर साकार रूप से होती है । जिसका अभिनय किया जा सके उसे दृश्य काव्य कहते हैं 'दृश्यं तत्राभिनेयं' । इसी दृश्य काव्य को रूप या रूपक संज्ञा से भी जाना जाता है । रूपक शब्द की निष्पत्ति रूप धातु में ण्वुल प्रत्यय के योग से होती है । ये दोनों ही शब्द साहित्य में 'नाट्य' के द्योतक है । नाट्यशास्त्र में 'दशरूप' शब्द का प्रयोग नाट्य की विधाओं के अर्थ में हुआ है । अब प्रश्न यह उठता है कि नाट्य क्या है ? दशरूपककार आचार्य धनंजय नाट्य की परिभाषा इस प्रकार देते हैं —'अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्' अर्थात् अवस्था के अनुकरण को नाट्य कहते हैं ।

1•4 नाट्य साहित्य का उद्भव —

संस्कृत रूपकों के उद्भव एवं विकास का प्रश्न भी नाम रूपात्मक जगत की सृष्टि के समान विवादास्पद है। अधिकांश विद्वानों का दृष्टिकोण है कि परमात्मा ने जिस प्रकार नामरूपात्मक जगत की सृष्टि की है उसी प्रकार नाट्य विद्या की भी नाट्य विद्या के सम्बन्ध में भारतीय तत्ववेत्ता मनीषी यह अवधारणा रखतें हैं कि इसकी उत्पत्ति के मूल में परमात्मा ही है। यहां हम भारतीय एवं पाश्चात्य मतों को संक्षेप में प्रस्तुत कर रहे हैं —

1•4•1 उद्भव सम्बन्धी भारतीय मत

दैवीय उत्पत्ति सिद्धान्त — नाट्य विद्या की उत्पत्ति के सम्बन्ध में शुभंकर ने अपने संगीत दामोदर में लिखा है कि एक समय देवराज इन्द्र ने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे एक ऐसे वेद की रचना करें जिसके द्वारा सामान्य लोगों का भी मनोरंजन हो सके। इन्द्र की प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा ने समाकर्षण कर नाट्य वेद की सृष्टि की। सर्वप्रथम देवाधिदेव शिव ने ब्रह्मा को इस नाट्य वेद की शिक्षा दी थी और ब्रह्मा ने भरतमुनि को और भरत मुनि ने मनुष्य लोक में इसका इसका प्रचार प्रसार किया। इस प्रकार शिव ,ब्रह्मा भरत मुनि नाट्य विद्या के प्रायोजक सिद्ध् होते हैं।

भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में नाट्यविद्या के उद्भव के सम्बन्ध में कहा है कि सभी देवताओं ने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे जनसामान्य के मनोरंजन के लिए किसी ऐसी विधा की रचना करें। उनके इस कथन से ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य सामवेद से गायन यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस ग्रहण करके इस नाट्य वेद नामक पंचम वेद की रचना की। दशरूपककार आचार्य धनंजय ने भी इसी मत को स्वीकार किया है। भारतीय विद्वानों की यह मान्यता है कि पृथ्वी पर सर्वप्रथम इन्द्रध्वज महोत्सव के समय पर नाट्य का अभिनय हुआ था।

संवादसूक्त सिद्धान्त — इस सिद्धान्त के प्रतिपादकों का विचार है कि ऋग्वेद के अनेक सूक्तों में संवाद प्राप्त होते हैं। यथा — 'यम यमी संवाद', पुरूरवा उर्वशी,शर्मा पाणि संवाद,इन्द्रमरूत, इन्द्र इन्द्राणी ,विश्वामित्र नदी आदि प्रमुख संवाद है । यजुर्वेद में अभिनय सामवेद में संगीत और अथर्ववेद में रसों की संस्थिति है। इन्हीं तत्वों से धीरे धीरे रूपको का विकास हुआ।

1•4•2 उद्भव सम्बन्धी पाश्चात्य मत —

संस्कृत नाटकों के उद्भव के सम्बन्ध में पाश्चात्य विचारकों के मत इस प्रकार है।

वीरपूजा सिद्धान्त — पाश्चात्य विद्वान डा0 रिजवे का मत है कि रूपकों के उद्भव में वीर पूजा का भाव मूल कारण है। दिवंगत वीर पुरूषों के प्रति समादर का भाव प्रकट करने की रीति ग्रीस, भारत आदि देशों में अत्यधिक प्राचीन काल से है। दिवंगत आत्माओं की प्रसन्नता के लिए उस समय रूपकों का अभिनय हुआ करता था। परन्तु डा0 रिजवे के इस सिद्धान्त से विद्वान सहमत नहीं हैं।

प्रकृति परिवर्तन सिद्धान्त — डा0 कीथ के मतानुसार प्राकृतिक परिवर्तन को मूर्त रूप में देखने की स्पृहा ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया। इसके प्रबल समर्थक डा0 कीथ प्रकृति परिवर्तन से नाटक की

उत्पत्ति को स्वीकार करते हैं। 'कंसवध' नामक नाटक में हम इसके मूर्त रूप का दर्शन कर सकते हैं। परन्तु डा0 कीथ के इस मत को भी विद्वानों का समर्थन प्राप्त न हो सका।

पुत्तलिका नृत्य सिद्धान्त —जर्मन के प्रसिद्ध् विद्वान डा0 पिशेल संस्कृत नाटक का उद्भव पुत्तलिकाओं के नृत्य तथा अभिनय से मानते हैं। 'सूत्रधार' एवं स्थापक शब्दों का नाटक में प्रयोग हुआ है। इन शब्दों का सम्बन्ध पुत्तलिका नृत्य से है महाभारत, बाल रामायण ,कथासरित्सागर इत्यादि में दारूमयी , पुत्तलिका आदि शब्दों का प्रयोग इस मत को पुष्टता प्रदान करते हैं। परन्तु विद्वानों के मध्य यह मत भी सर्वमान्य न हो सका।

छाया नाटक सिद्धान्त — छाया नाटकों से रूपक की उत्पत्ति एवं विकास का समर्थन करने वाले प्रसिद्ध् विद्वान डा0 लूथर्स एवं क्रोनो है। अपने मत के समर्थन में वे महाभाष्य को प्रगाढ रूप में प्रस्तुत करते हैं। महाभाष्य में शौभिक छाया नाटकों की छाया मूर्तियों के व्याख्याकार थे पर दूतांगद नामक छाया नाटक अधिक प्राचीन नही है। अत: इसे नाटकों की उत्पत्ति का मूलकारण मानना न्यायोचित नहीं। अत: विद्वानों का यह मत भी अधिक मान्य नहीं हुआ।

मेपोलनृत्य सिद्धान्त — इस सिद्धान्त के समर्थक इन्द्रध्वज नामक महोत्सव को नाटक की उत्पत्ति का मूल कारण स्वीकार करते हैं। पाश्चात्य देशों में मई के महीने में लोग वसन्त की शोभा को देखकर एक लम्बा बाँस गाडकर उसके चारों तरफ उछलते कूदते एवं नाचते गाते हैं। यह इन्द्रध्वज जैसा ही महोत्सव है ऐसे ही उत्सवों से शनै: शनै: नाटक की उत्पत्ति हुई। परन्तु दोनो महोत्सवों के समय में पर्याप्त अन्तर है तथा इनके स्वरूप में भी परस्पर भिन्नता है अत: यह सिद्धान्त भी सर्वमान्य नहीं है। उपर्युक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ विद्वान लोकप्रिय स्वांग सिद्धान्त तथा वैदिक अनुष्ठान सिद्धान्त को भी रूपकों की उत्पत्ति का कारण मानते हैं। किन्तु विद्वान इस मत से भी सहमत नहीं हैं। विद्वानों के उपर्युक्त मतों के अनुशीलन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचंते हैं कि रूपकों के उद्भव का विषय अत्यन्त विवादास्पद है। प्राचीन भारतीय परम्परा नाट्यवेद का रचयिता ब्रह्मा को इंगित करती है और लोक प्रचारक के रूप में भरतमुनि को निर्दिष्ट करती है। आधुनिक विद्वान इससे भिन्न मत रखते हैं य़द्यपि यह माना जा सकता है कि इन मतों में से कोई मत नाटक की उत्पत्ति का कारण हो सकता है परन्तु यह कहना अत्यन्त कठिन है कि अमुक मत ही नाटक की उत्पत्ति का मूल कारण है।

1•5 नाटक का विकास –

ऋग्वेद से ही हमें नाट्य के अस्तित्व का पता चलने लगता है। सोम के विक्रय के समय यज्ञ में उपस्थित दर्शकों के मनोरजंन के लिए एक प्रकार का अभिनय होता था। ऋग्वेद के संवाद सूक्त भी नाटकीयता का द्योतन करते हैं। यजुर्वेद में 'शैलूष' शब्द का प्रयोग किया गया है जो नट(अभिनेता) वाची शब्द है। सामवेद में तो संगीत है ही। इस प्रकार नाटक के लिए आवश्यक तत्व गीत, नृत्य,वाद्य सभी का प्रचार वैदिक युग में था। यह निश्चित है कि भारतीय नाट्य परम्परा के मूल उदगम ग्रंथ वेद ही है। आदिकाव्य रामायण में नाट्य तत्त्वों का उल्लेख हुआ है। महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाभारत में भी नट, नर्तक, गायक, सूत्रधार आदि का स्पष्ट उल्लेख है। हरिवंशपुराण में उल्लेख हुआ है कि कोबेररम्भाभिसार नामक नाटक का अभिनय हुआ था जिसमें शूर रावण के रूप में और

मनोवती ने रम्भा का रूप धारण कर रक्खा था। मार्कण्डेय पुराण में भी काव्य संलाप और गीत शब्द के साथ नाटक का भी प्रयोग हुआ है। संस्कृत भाषा के महान वैयाकरण महर्षि पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में नट सूत्रों का स्पष्ट उल्लेख किया है। महर्षि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में 'कंसवध' और 'बलिबन्ध' नामक नाटकों का उल्लेख करते हुए 'शोभनिक' शब्द का प्रयोग किया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नट,नर्तक, गायक एवं कुशीलव शब्दों का प्रयोग हुआ है।भरतमुनि नाट्यशास्त्र के प्रमुख आचार्य माने गये हैं। भरतमुनि ने सुप्रसिद्ध 'नाट्यशास्त्र' की रचना की है। इसमें नाट्य से सम्बन्धित विषयों का विधिवत् विवेचन हुआ है। इन्होनें कोटल शाण्डिल्य, वात्सम, धूर्तिल आदि आचार्यों के नामों का उल्लेख किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनके समय तक अनेक नाटकों की रचना हो चुकी थी और नाट्यकला का विधिवत् विकास हो चुका था। वेदों से लेकर भरतमुनि प्रणीत नाट्यशास्त्र के अनुशीलन से हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत नाटकों की रचना पुरातन काल से होती चली आ रही है परन्तु परिष्कृत नाटकों की रचना ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मानी जाती है। संस्कृत नाटकों में महाकवि भास के नाटक अत्यधिक प्रतिष्ठा को प्राप्त हुए हैं। परिष्कृत रूपक रचनाओं में भास के रूपकों को प्राचीन माना जाता है । भास के पश्चात् शूद्रक, कालिदास,अश्वघोष, हर्ष, भवभूति, विशाखादत्त, मुरारि,शक्तिभद्र, दामोदर मिश्र, राजशेखर, दिंगनाग, कृष्ण मिश्र, जयदेव, वत्सराज आदि आते हैं । इनके उच्चकोटि के नाटकों ने संस्कृत साहित्य की सम्यक् श्री वृद्धि की है। यहाँ पर हम कतिपय कवियों के नाटकों पर प्रकाश डाल रहे हैं -

अभ्यास प्रश्न 1 —

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1* नाट्यशास्त्र के रचयिता का नाम लिखिए।

2* महाभारत के रचयिता का नाम लिखिए।

3* पुत्तलिका नृत्य सिद्धान्त किस विद्वान का मत है।

4* नाटक के उद्भव से सम्बन्धित कौन से दो मुख्य मत है।

अभ्यास प्रश्न 2•

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर हाँ या नहीं में दीजिये।

(क) नाट्य शास्त्र के रचयिता पिगंल ऋषि है।

(ख) कालिदास का जन्म ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में हुआ था।

(ग) अष्टाध्यायी महर्षि पाणिनी की रचना है।

(घ) रघुवंश खण्डकाव्य है।

(ङ) अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक है।

1.5.1 भास

भास के नाटक विषयानुसार ५ श्रेणी में आते हैं –

(क) रामकथाश्रित – १. प्रतिमा तथा २. श्रभिषेक।

(ख) महाभारताश्रित- ३. पन्चरात्र, ४. मध्यम व्यायोग, ५. दूत घटोत्कच, ६. कर्णाभार, ७. दूतवाक्य, ८. उरूभंग।

(ग) भागवताश्रित – ९. बालचरित।

(घ) लोककथात्मक – १०. दरिद्रचारूदत्त और ११. अविमारक।

(ङ) उदयन कथाश्रित – १२. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, १३. स्वप्नवासवदत्त।

इनमें कतिपय नाटक – महाभारताश्रित रूपक – एक ही अंक में समाप्त हैं । अत: उन्हें 'एकांकी रूपक' कहा जा सकता है। इन रूपकों का संक्षिप्त परिचय यहाँ इसी क्रम से प्रस्तुत किया जाता है।

(१) **प्रतिमा नाटक** – राम का वनवास, सीताहरण आदि आयोध्या काणड से लेकर रावणवध तक की घटनाओं का वर्णन इस नाटक में किया गया है। इस नाटक से प्राचीन भारत में कला-विषयक नवीन वृत्तांत का पता लगता है। प्राचीनकाल में राजाओं के देवकुल होते थे जिनमें मृत्यु के अनंतर राजाओं की पत्थर की बड़ी मूर्तियाँ स्थापित की जाती थी। इक्ष्वाकुवंश का भी ऐसा ही देवकुल था जिसमें मृत नरेशों की मूर्तियाँ स्थापित की जाती थी। केकेयदेश से आते समय अयोध्या के समीप देवकुल में स्थापित दशरथ की प्रतिमा को देखकर ही भरत ने उनकी मृत्यु का अनुमान आप ही आप कर लिया। इसी कारण इसका नाम 'प्रतिमा'-नाटक' है।

(२) **अभिषेक नाटक** – इसमें राम के राज्याभिषेक का तथा किष्किधा, सुंदर और लंकाकांड के कथानक का वर्णन किया गया है। इन दोनों नाटकों में बालकांड को छोड़कर रामायण के शेष कांडों की कथाएँ आ गई है।

(३) **पन्चरात्र**- महाभारत की एक घटना को लेकर यह नाटक रचित है। द्रोणा ने दुर्योधनसे पांडवों को आधा राज्य देने के लिये कहा। दुर्योधन ने प्रतिज्ञा की कि पाँच रातों में यदि पांडव मिल जायँगे तो मैं उन्हें राज्य दे दूँगा। द्रोणा के प्रयत्न रकने पर पांडव मिल गये और दुर्योधन ने उन्हें आधा राज्य दे दिया। यह घटना कल्पित है और महाभारत में नहीं मिलती ।

(४) मध्यमव्यायोग

(५) दूतघटोत्कच

(६) कर्णाभार

(७) दूतवाक्य

(८) उरूभंग – ये नाटक महाभारत की विशिष्ट तत्तत् घटनाओं से सम्बद्ध है।

(९) बालचरित – कृष्ण के बालचरित से सम्बद्ध है।

(१०) दरिद्रचारूदत्त – धनहीन परन्तु चरित्रसंपन्न ब्राह्मण चारूदत्त तथा गुणाग्राहिणी वारवनिता

(११) वसंतसेना का आदर्श प्रेम वर्णित है।

(१२) अविमारक – प्राचीन आख्यायिका का नाटकीय रूप है जिसका संकेत कामसूत्र में मिलता

(१३) है। इस नाटक में अविमारक तथा राजा कुंतिभोज की पुत्री कुरंगी के प्रेम का वर्णन किया गया है। प्रणय का चित्रण बहुत ही सुंदर तथा सरस है।

(१४) प्रतिज्ञायौगन्धरायण – कौशाम्बी के आखेट के प्रेमी राजा उदयन को कृत्रिम हाथी के छल से उज्जयिनी-नरेश महासेन ने पकड़ लिया। इस रूपक में उदयन के मन्त्री यौगन्धरायण ने दृढ़ प्रतिज्ञा करके केवल राजा को ही बन्धन से नहीं छुड़या, बल्कि कुमारी वासवदत्त का भी कपट से हरण कराया। मन्त्री की दृढ़-प्रतिज्ञा तथा कुटिलनीति का यह सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है।

(१५) स्वप्नवासवदत्तम् – भास के उपर्युक्त नाटको में स्वप्नवासवदत्तम् सर्वश्रेष्ठ नाट्यकृति है। इसमें उदयन तथा वासवदत्ता की प्रेमकथा का वर्णन है। विशुद्ध प्रेम के वर्णन के अतिरिक्त नाटकीय घटनाओं का अद्भुत संयोजन इस नाटक की अपनी विशेषता है।

1.5.2 कालिदास

विक्रमोर्वशीयम् , मालविकाग्निमित्रम् तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् कालिदास के प्रसिद्ध् नाटक हैं। कथावस्तु, चरित्र चित्रण , कथोपकथन , नाटकीय सन्धि तथा रसपरिपाक की दृष्टि से कालिदास के नाटक अद्वितीय हैं। मालविकाग्निमित्रम् कालिदास का प्रथम नाटक है इसमें अग्निमित्र तथा मालविका की प्रणय कथा का पाँच अंको में वर्णन है। विक्रमोर्वशीयम् पाँच अंको का नाटक है। इसमें पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रणय कथा वर्णित है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् कवि का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। इसमें सात अंक है। इसके सात अंको में दुष्यन्त तथा शकुन्तला के मिलन , वियोग तथा पुनर्मिलन का सुन्दर वर्णन है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् विश्व के सर्वोत्तम नाटकों में गिना जाता है।

1.5.3 शूद्रक

शूद्रक की एकमात्र रचना मृच्छकटिकम् है। इसमें कुल दस अंक है जिसमें सामान्य जनजीवन को आधार बनाकर सामाजिक पृष्ठभूमि का यथार्थ चित्रण किया गया है। इस नाटक के दो प्रमुख विभाग हैं – एक चारूदत्त और वसन्तसेना का प्रेम तथा दूसरा आर्यक की राज्य-प्राप्ति। यह एक चरित्र प्रधान प्रकरण है। इसमें कुल सत्ताइस प्रकार के पात्र है इनमें राजकर्मचारी, चोर, सिपाही, सन्यासी, दासी, वैश्य, गणिका आदि विविध पात्र हैं। यह नाटक तत्कालीन जन-जीवन की सम्पूर्ण झाँकी प्रस्तुत करने में समर्थ है।

1.5 .4 श्रीहर्ष

महाकवि श्रीहर्ष की तीन नाट्य कृतियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं – (1) रत्नावली (2) प्रियदर्शिका (3) नागानन्द। इन तीन नाट्यकृतियों में रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिकाएँ है। इन दोनों में साहित्य में प्रसिद्ध वत्सराज उदयन और वासवदत्ता की प्रेमकथा वर्णित है। इनकी तीसरी नाटयकृति नागानन्द में प्रसिद्ध ब्राह्मणकुमार जीमूतवाहन की करूणापूर्ण दान वृत्ति का गुणगान है। जीमूतवाहन नागों की रक्षा के लिए गरूड़ को अपना शरीर तक समर्पित करते हैं।

1.5.5 भवभूति

भवभूति की प्रसिद्धि उनकी तीन रचनाओं के कारण ही रही है । उनकी उपलब्ध तीन रचनाओं में "महावीर चरित" और उत्तररामचरित" सात-सात अंकों के नाटक हैं और "मालती माधव" दस अंकों का एक प्रकरण । उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

मालती माधव

भवभूति की प्रथम नाट्यकृति मालती माधव है। यह 10 अंको का प्रकरण है। इसमें मालती और माधव के प्रेम की काल्पनिक कथा चित्रित की गई है।

महावीर चरित

यह सात अंकों का नाटक है। इसमें श्री रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का वर्णन है। मालती माधव की अपेक्षा यह नाटक अधिक संगठित है।

उत्तररामचरित

यह भवभूति का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। इसमें कवि ने अपनी कल्पना का प्रयोग करके अद्भुत सृष्टि की है। सात अंकों में निबद्ध इस नाटक में रामचन्द्र जी के उत्तररामचरित का वर्णन है। इसे महावीर चरित का उत्तरभाग ही समझा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त विशाखदत्त का मुद्राराक्षस, भट्टनारायण का वेणीसंहार, मुरारि का अनर्घराघव, जयदेव का प्रसन्नराघव आदि अन्य प्रसिद्ध नाटक है ।

1.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि नाटक किसे कहते हैं । किस प्रकार इसका उद्भव एवं विकास हुआ। इसके उद्भव के सम्बन्ध में भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों का क्या मत है। साथ ही आपने यह भी जाना कि वैदिक काल से से लेकर अब तक नाटकों का विकास हुआ । किन्तु परिष्कृत नाटकों की रचना ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मानी जाती है । संस्कृत नाटकों में महाकवि भास के नाटक अत्यधिक प्रतिष्ठा को प्राप्त हुए हैं । परिष्कृत रूपक रचनाओं में भास के रूपकों को प्राचीन माना जाता है । भास के पश्चात् शूद्रक, कालिदास,अश्वघोष, हर्ष, भवभूति, विशाखादत्त, मुरारि,शक्तिभद्र, दामोदर मिश्र, राजशेखर, दिंगनाग, कृष्ण मिश्र, जयदेव, वत्सराज आदि आते हैं । इनके उच्चकोटि के नाटकों ने संस्कृत साहित्य की सम्यक् श्री वृद्धि की है ।

1.9 शब्दावली

श्रवण	सुनना	
उद्भव	उत्पत्ति	
नाट्य	नाटक दिवंगत	मृत (मरे हुए)
परिवर्तन	बदलाव	
स्पृहा	इच्छा	
विक्रय	बेचना	
शैलूष	अभिनेता (नट)	

प्रसादगुणोपेत	प्रसादगुण से युक्त
कतिपय	कुछ

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 — (1) आचार्य भरतमुनि (2) महर्षि वेदव्यास (3) डा0 पिशेल (4) भारतीय एवं पाश्चात्य मत

अभ्यास प्रश्न 2 — क (नहीं) ख (हाँ) ग (हाँ) घ (नहीं) ङ (हाँ)

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1• शुभंकर प्रणीत ' संगीत दामोदर'श्री शेषराज शर्मा रेग्मी द्वारा सम्पादित चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

2• नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि , चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

3• संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

4• दशरूपक, आचार्य धनंजय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

1.12 सहायक व उपयोगी पुस्तकें

1• संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

2• नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि , चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1• नाट्य साहित्य के उद्भव पर प्रकाश डालिये।

2 नाट्य साहित्य का विकास किस प्रकार हुआ लिखिए।

इकाई 2 – महाकवि शूद्रक का परिचय

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 शूद्रक का जीवन परिचय
2.4 जन्म समय
2.5 मृच्छकटिकम् का सारांश
2.6 शूद्रक की काव्यकला
2.7 शूद्रक की नाट्यकला
2.8 सारांश
2.9 शब्दावली
2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.12 उपयोगी पुस्तके
2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

2. 1 प्रस्तावना

नाट्य शास्त्र से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड़ की दूसरी इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने जाना कि नाटक की उत्पत्ति किस प्रकार हुई तथा वैदिक काल से लेकर अब तक कैसे उसका विकास हुआ। उत्पत्ति से सम्बन्धित भारतीय एवं पाश्चात्य मतों का भी अध्ययन किया।

प्रस्तुत इकाई में आप शूद्रक के विषय में अध्ययन करेंगे कि शूद्रक कौन थे, उनका जन्म कहाँ हुआ था, उनकी रचनायें कौन सी है तथा अनकी काव्यकला एवं नाट्यकला का अध्ययन करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेंगे कि शूद्रक कौन थे। मृच्छकटिकम् के रचयिता शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेघ यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिंहासन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया।

2. 2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- शूद्रक का जीवन परिचय एवं मृच्छकटिकम् की नाटकीय विशेषताओं का परिचय प्राप्त कर सकेगें।
- शूद्रक कौन थे यह बता सकेंगे।
- शूद्रक के जन्म स्थान के विषय में बता सकेगे।
- शूद्रक की मुख्य कृति के विषय में विस्तार से व्याख्या कर सकेंगे।
- मृच्छकटिकम् में किसका वर्णन है यह बता पायेंगे।
- मृच्दकटिकम् रूपक का कौन सा भेद है यह बता सकेंगे।
- शूद्रक की काव्यकला का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 शूद्रक का जीवन परिचय

मृच्छकटिक के रचियता शूद्रक का कुछ परिचय ग्रन्थ के आरम्भ (1। 4. 1। 5) में ही मिलता है। उसके अनुसार शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेघ यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिंहासन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया। वह युद्वप्रेमी थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे। राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर था शोभन , उसकी गति थी मतंग समान नेत्र थे चकोर की तरह, मुख था पूर्ण चन्द्रमाँ की भाँति। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे।

प्रतीत होता है की किसी अन्य लेखक ने यहाँ जान बूझ कर कह दिया है। 'शूद्रकोऽग्नि प्रविष्ट' स्वयं लेखक की लेखनी इस भूतकाल का प्रयोग कैसे कर सकती है। निः संदेह यह अंश प्रक्षेप है।

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्र । सुविग्रहश्च :मुखपरिपूर्णेन्दु :
द्विजमुख्यतम :गाधसत्वशूद्रकं इत्य :कविर्बभूव प्रथित :।।
ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां
ज्ञात्वा शर्वप्रसादाच्चयपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य । :
राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदवेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा
लब्ध्वा आयु दशदिनसहितं शूद्रकोशताब्दं :ऽग्निं प्रविष्ट :।।
समरव्यसनी प्रमादशून्य ।ककुदो वेदविदां तपोधनश्च :
परवारणबाहुयुद्धलुब्ध किल शूद्रको बभूव :क्षितिपाल :।।

शूद्रक नामक राजा की संस्कृत - साहित्य में खूब प्रसिद्धि है। जिस प्रकार विक्रमादित्य के विषय में अनेक दंतकथायें हैं । उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी है। कादम्बरी विदिशा नगरी में कथा-सरित्सागर में शोभावती तथा वेतालपंचविंशति में वर्धमान नामक नगर में शूद्रक के राज्य करने का वर्णन पाया जाता है। कथा सरित्सागर का कथन है। कि किसी ब्राह्मण ने राजा को आसन्नमृत्यु जानकर उसे दीर्घ जीवन की आशा में अपने प्राण निछावर कर दिये थे। हर्षचरित में लिखा है शूद्रक चकोर राजा चन्द्रकेतू का शत्रु था ।

स्कन्दपुराण के अनुसार विक्रमादित्य के सत्ताईस वर्ष पहले शूद्रक ने राज्य किया था। प्रसिद्ध है की कालिदास के पूर्ववती रामिल तथा सोमिल नामक कवियों ने मिलकर 'शूद्रक कथा' नामक कथा लिखी थी। अतः शूद्रक इसके कर्ता नहीं है । बहुत से लोग तो शूद्रक की सत्ता में ही विश्वास नहीं करते। परन्तु ये सब श्रान्त धारणाऐं हैं । तथ्य यह प्रतीत होते है कि विक्रमादित्य के समान ही शूद्रक भी ऐतिहासिक क्षेत्र से उठकर कल्पना जगत के पात्र माने जाने लगे थे । और उसी प्रकार ऐतिहासिक लोग प्रथम शतक में विक्रमादित्य के अस्तित्व के विषय में भी सन्देहशील थे उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी। आधुनिक शोध में दोंनों ही ऐतिहासिक व्यक्ति सिद्ध होते है। ऐसी दशा में शूद्रक को मृच्छकटिक का रचयिता न मानने वाले डासिलवाँ लेवी तथा कीथ मत स्वयं ध्वस्त हो जाता है । विशेल ने जो दण्डी को इसका रचयता होने का श्रेय दिया है । वह भी कालविरोध होने से भ्रान्त प्रतीत होता है। शूद्रक ऐतिहासिक व्यक्ति थे और वे ही मृच्छकटिक के यथार्थ लेखक थे ।

2.4 जन्म समय

पुराणों में आन्ध्रभृत्य - कुल के प्रथम राजा शिमुक का वर्णन मिलता है। अनेक भारतीय विद्वान राजा शिमुक के साथ शुद्रक की अभिन्नता कर अंगीकार कर इनका समय विक्रम की प्रथम शताब्दी में मानते है। यदि यह अभिन्नता सप्रमाण सिद्ध की जा सके तो शूद्रक कालिदास के समकालीन अथवा उनके कुछ पूर्व के ही माने जायेंगे। परन्तु मृच्छकटिक की इतनी प्राचीनता स्वीकार करने में बहुतों को आपत्ति है । वामनाचार्य ने अपनी काव्यालंकार - सूत्र वृति में 'शूद्रकादिरचिषु' प्रबन्धेषु' शूद्रक-विरचित प्रबन्ध का उल्लेख किया और 'द्यूतं हि नाम पुरूषस्य असिंहासनं राज्यम् ' इस मृच्छकटिक के द्यूत - प्रशंसा-परक वाक्य को उद्धृत भी किया है , जिससे हम कह सकते है कि आठवीं शताब्दी के पहले ही मृच्छकटिक की रचना की गई होगी । वामन के पूर्ववर्ती आचार्य दण्डी (सप्तम शतक) ने

भी काव्यादर्श में 'लिम्पतीव तमोऽगांनि' मृच्छकटिक के इस प़द्यांश को अलंकारनिरूपण करते समय उद्धृत किया है। इन बहिरंग प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मृच्छकटिक की रचना सप्तम शताब्दी के पहले ही हुई होगी । समय-निरूपण में मृच्छकटिक के अन्तरंग प्रमाणों से भी बहुत सहायता मिलती है। नवम अंक मे वसन्तसेना की हत्या करने के लिए शकार आर्य चारूदत पर अभियोग लगता है। अधिकरणिक के सामने यह पेश किया जाता है । अन्त में मनु के अनुसार ही धर्माधिकारी निर्णय करता है ।

अयं हि पातकी विप्रो न बध्यो मनुरब्रवीत् ।
राष्ट्रादस्मातु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह ।।

इससे स्पष्ट ही है कि मनु के कथनानुसार अपराधी चारूदत अवध्य सिद्व होता है और धनसम्पति के साथ उसे देश से निकल जाने का दण्ड दिया जाता है। यह निर्णय ठीक मनुस्मृति के अनुरूप है ।

न जातु ब्राहम हन्यात् सर्वपापेष्वपि स्थितम् ।
राष्ट्रादेनं बहिः कुर्यात् समग्रधनमक्षतम् ।।
न ब्राहमणवधाद् भूयानधर्मो विद्यते भुवि ।
तस्मादस्य वधं राजा मनसपि न चिन्तयेत् ।।

अतः मृच्छकटिक की रचना मनुस्मृति के अनन्तर हुई होगी। मनुस्मृति का रचना काल विक्रय से पूर्व द्वितीय शतक माना जाता है जिसके पीछे मृच्छकटिक को मानना होगा। भास कवि के 'दरिद्र चारूदत' तथा शूद्रक के 'मृच्छकटिक' में अत्यन्त समानता पाई जाती है। मृच्छकटिक का कथानक बहुत विस्तीर्ण है, दरिद्रचारूदत का संक्षिप्त। मृच्छकटिक भास के रूपक के अनुकरण पर रचा गया है अतः शूद्रक का समय भास के पीछे चाहिए। मृच्छकटिक के नवम अंक में कवि ने बृहस्पति को अंगारक (अर्थात् मंगल) का विरोधी बतलाया है ।

परन्तु वराहमिहिर ने इन दोनों ग्रहों को मित्र माना है । , प्रसिद्व

अङारकविरूद्वस्य प्रक्षीणस्य बृहस्पतेः
ग्रहोऽयमपरः पार्श्वे धूमकेतुरिवोत्थितः।। (मृच्छ0 9 ।33)

ज्योतिषी वराहमिहिर का सिद्वान्त ही आजकल फलित ज्योतिष में सर्वमान्य है। आज कल भी मंगल तथा बृहस्पति मित्र ही माने जाते है , परन्तु वराहमिहिर के पूर्ववर्ती कोई-कोई आचार्य इन्हें शत्रु मानते थे, जिसका उल्लेख बृहज्जातक में ही पाया जाता है। वराहमिहिर का परवर्तीग्रन्थकार बृहस्पति को मंगल का शुत्र कभी नहीं माना जा सकता। अतः शुद्रक वराहमिहिर से पूर्व के ठहरते है । वराहिमिहिर की मृत्यु 589 ईस्वी में हुई थी , इसीलिए शुद्रक का समय छटी सदी के पहिले होना चाहिये ।

इन सब प्रमाणों का सार यही है कि शूद्रक दण्डी (सप्तम शतक) और वराहमिहिर (षष्ट शतक) के पूर्ववर्ती थे, अर्थात् मृच्छकटिक की रचना पंचम शतक में मानना उचित है । और यह अविर्भावकाल नाटक में वर्णित सामाजिक दशा से पुष्ट होता है ।

2.5 मृच्छकटिकम् का सारांश

मृच्छकटिक में 10 अंक है। पहले अंक का नाम 'अलंकारन्यास' है। इसमें उज्जयिनी की प्रसिद्व वारवनिता वसन्तसेना को राजा का श्यालक शकार वश में करना चाहता है। रास्ते में अँधेरी रात में विट तथा चेट के साथ शकार उसका पीछा कर रहा है। मूर्ख शकार के कथन से वसन्तसेना को पता चलता है कि वह आर्य चारूदत के मकान के पास ही है। अतः उसके घर में घुसती है। विदूषक मैत्रेय शकार को डॉट-डपट कर घर में घुसने से रोकता है। चारूदत से वार्तालाप करने के बाद शकार से बचने के लिये वसन्त-सेना अपना गहना उसके घर पर रख आती है। दूसरें अंक का नाम 'द्युतक-संवाहक' है। दूसरे दिन सवेरे दो घटनाएं घटती हैं। संवाहक पहले चारूदत की सेवा में था , पीछे पक्का जुआरी बन जाता है। वह जुएँ में बहुत सा धन हार जाता है जिससे वह चारूदत के घर भाग आता है। चारूदत उसे ऋण मुक्त कर देते है। संवाहक बौद्व भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में किसी भिक्षुक को कुचलना ही चाहता है कि उसका सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला को उपहार में दे देते हैं। तीसरे अंक का नाम सधिच्छेद है। वसन्तसेना की दासी मदनिका को शर्विलक सेवा से मुक्त करना चाहता है। वह ब्राह्मण है, परन्तु प्रेमपाश में बंधकर आर्य चारूदत के घर में सेंघ मारता है। और वसन्तसेना का गहना चुरा लेता है।

चतुर्थ अंक का नाम '**मदनिका-शर्विलक** ' है जिसके शर्विलक अलकार लेकर वसन्त-सेना के घर जाता है और मदनिका को सेवा-मुक्त कर देता है। चारूदत की पतिव्रता पत्नी धूता अपनी बहुमूल्य रत्नावली उसके बदले में देती है। मैत्रेय रत्नावली लेकर वसन्तसेना के महल में जाता है और जुएँ में हार जाने का बहाना कर रत्नावली देता है। वसन्तसेना सायंकाल चारूदत के घर आने के लिए वादा करती है। पाँचवें अंक का नाम 'दुर्दिन' है। इसमें वर्षा का विस्तृत वर्णन है सुहावने वर्षाकाल में आर्य चारूदत उत्सुकता से वसन्तसेना की प्रतीक्षा में बैठे हैं। चेट वसन्तसेना के आगमन की सूचना देता है। । षष्ठ अंक का नाम 'प्रवहणविपर्यय' है । तथा सप्तम का 'अर्थकापहरण' । प्रातः काल चारूदत पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में गये है। उनसे भेंट करने के लिए वसन्तसेना जाना चाहती है, परन्तु भ्रम से शकार की गाड़ी में, जो समीप में खड़ी थी , जा बैठती है। इधर राजा पालक किसी सिद्व की भविष्यवाणी पर विश्वास कर गोपाल के पुत्र आर्यक को कैदखाने में बन्द कर देता है आर्यक कारागृह से भागकर चारूदत की गाड़ी में चढ़ जाता है। श्रृंखला की आवाज को भूषण की झनझनाहट समझ गाड़ी हाँक देता है। रास्ते में दो सिपाही गाड़ी देखने जाते हैं जिनमें से एक आर्यक को देख उसकी रक्षा करने का वचन देता है और अपने साथी से किसी बहाने झगड़ा कर बैठता है आर्यक बगीचे में चारूदत से भेंट करता है, 'अष्टम अंक' का नाम 'वसन्तसेना' - मोचन' है । जब वसन्तसेना पुष्पकरण्डक उद्यान में पहुँचती है , तब प्राणप्रिय चारूदत के स्थान पर दुष्ट शकार - संस्थानक मिलता है , जो उसकी प्रार्थना न स्वीकार करने से वसन्तसेना का गला घोंट डालता है संवाहक भिक्षु बन गया है। वसन्तसेना को समीप के विहार में ले जाते है और योग्य उपचार से उस पुनरूज्जीवित करता है। नवम अंक में जिनका नाम 'व्यहार ' है, शकार चारूदत्त पर वसन्तसेना के मारने का अभियोग लगता हैं कचहरी में जज के सामने मुकदमा पेश होता है। उसी समय चारूदत का बालक

पुत्र रोहसेन-मृच्छकटिक (मिट्टीकी गाड़ी) लेकर आता है, जिसमें वसन्तसेना के दिये सोने के गहने है। इसी आधार पर चारूदत को फाँसी का हुक्म होता है। 'संहार 'नामक दशम अंक में उसी समय राज्य-परिवर्तन होता है। पालक को मार चारूदत का परम मित्र आर्यक राजा बन जाता है। वह चारूदत को क्षमा ही नहीं कर देता, प्रत्युत मिथ्याभियोग के कारण शकार को फाँसी का हुक्म देता है., परन्तु चारूदत के कहने से क्षमा कर देता है। वसन्तसेना के साथ चारूदत का व्याह सम्पन्न होता है। इसी अन्तिम प्रेम-मिलन के साथ यह रूपक समाप्त होता है। इस प्रकरण के कथावस्तु के दो अंश है -प्रथम भाग चारूदत् तथा वसन्तसेना का प्रेम दूसरा भाग आर्यक की राज्यप्राप्ति। शूद्रक ने पहले अंश को भास के 'दरिद्र-चारूदत् नाट्क से अविकल लिया है। शब्दतः और अर्थतः दोनो प्रकार की अपनी सम्पति प्राचीन ऐतिहासिक घटना के आधार पर लिखा गया मानते है। दोनों अंशों को शूद्रक ने बड़ी सुन्दरता के साथ सम्बद्व किया हैं।

अभ्यास प्रश्न 1 -

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर अतिसंक्षेप में दीजिए।

1-मृच्छकटिकम् के रचयिता कौन है।

2- मृच्छकटिकम् के आरम्भ में किसका वर्णन है

3- मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक का क्या नाम है।

4-शूद्रक किस शास्त्र में प्रवीण थे।

5-वसन्तसेना कौन थी।

6- शकार कौन था।

2.6 शूद्रक की काव्यकला

शुद्रक की शैली बडी़ सरल है। बड़े-बड़े छन्दों का बहुत कम प्रयोग किया गया है। नये-नये भाव स्थान -स्थान पर मिलते थे। इस प्रकरण का मुख्य रस श्रृंगार है। रस की विभिन सामग्री से परिपुष्ट कर श्रृगांर का सुन्दर रुप कवि ने दिखलया है। शुद्रक ने वर्षा का बड़ा विशद वर्णन किया है। इसमें चमत्कार -जनक अनेक सूक्तियाँ है। (9।14)--

चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसलिलं दूर्तामिशोककुलं
पर्यन्तस्थितचारत्रमकंर नागाश्वहिस्त्राश्रयम्।
नानावाशककड़.पक्षिरुचिरं कायस्थसपस्पिदं
नीतिक्षुण्णतयं च राजकरणं हिस्त्रैः समुद्रायते ।।

इस श्लोक में राजकरण कचहरी का खूब सच्चा वर्णन किया गाया है। शूद्रक का कहना है कि कचहरी समुद्र की तरह जान पड़ती है। चिन्तामग्न मंत्री लोग जल है, दूतगण लहर तथा शंख की तरह जान पड़ते है इधर-उधर दूर देशों में घूमने के कारण दोनों की यहॉ समता दी गई है। चारों ओर रहनेवाले चार आजकल के खुफिया पुलिस घड़ियाल है। यह समुद्र हाथियों तथा घोड़ों के रुप में हिंस्त्र पशुओं से युक्त् है। तरह-तरह के ठग तथा पिशुन लोग बगुले है। कायस्थ (मुंशी लोग) जहरीले

सर्प है। नीति से इसका तट टूटा हुआ है। यह प्राचीन काल के राजकरण को वर्णन है; आजकल की कचहरी तो कई अंशों में इससे भी बढकर है। कचहरी में पहले- पहले पैर रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को शूद्रक के वर्णन की सत्यता का अनुभव पद-पद पर होता है।

शर्विलक के चरित्र का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। ये ब्राहाण देवता आर्य चारूदत के घर में रात को सेंध मारने जाते है। पहुँचने पर उन्हें मालूम पड़ता है कि वह अपना मानसूत्र भूल आये है। झटपट गले में पड़े रहनेवाले डोरे की जनेऊ की सुधि उन्हें हो जाती है। बस, आप इसीसे अपना कार्य सम्पादन करते हैं। इस चौर्य-प्रसंग में यज्ञोपवीत की उपयोगिता सुन लीजिये (3।17)--

यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राहाणस्य महदुपकरणद्रव्यम् , विशेषतोऽस्मद्विधस्य ,! कुतः एंतेन मापयति भितिषु कर्ममागनितेन मोचयति भूषणसंप्रयोगान् । उद्धाटको भवति यन्त्रदृढे कपाटे दष्टस्य कीटभुजगैः परिवेष्टनं च ॥

1.हरिश्चन्द्रस्तिमां भाषामपभ्रंश इतीच्छति।

अपभ्रंशो हि विद्वद्भिर्नाटकादौ प्रयुज्यते ॥ (प्राकृतसर्वस्य 16।2)

2.हिमवत्-सिन्धुसौवीरान् येऽन्यदशान् समाश्रिताः।

उकारबहुला तेषु नित्यं भाषां प्रयोजयेत् ॥ (नाटकशास्त्र ।8147)

ब्राहाणों के लिए , जनेऊ बड़े काम कि चीज है, विशेष करके हमारे जैसे (चार)

ब्राहाणों के लिए ,क्योंकि जनेऊ से भीत पर सेंध मारने की जगह को नापते है। आभूषण के बंधन जनेऊ के द्वारा छुडाये जाते है और यदि साँप या कीट काट खाय, तो उसे जनेऊ से बाँध भी सकते है (जिसमें विष न चढे)। ठीक ही है चोर ब्राहाण के लिये जनेऊ का और उपयोग हो ही क्या सकता है ?

2.7 शूद्रक की नाट्यकला

कला की दृष्टि से 'मृच्छकटिक' निःसंदेह एक सुन्दर तथा सफल नाटक है। शूद्रक ने संस्कृत-साहित्य में शायद पहिली बार मध्यम श्रेणी के लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया है। संस्कृत का नाटक उच्च श्रेणी के पात्रों के चित्रण में तथा तदनुकूल कथानक के गुम्फन में अपनी भारती को चरितार्थ मानता है, परन्तु शूद्रक ने इस क्षुण्ण मार्ग का सर्वथा परित्याग कर अपने लिए एक नवीन पंथ का ही अविष्कार किया है। उसके पात्र दिन-प्रतिदिन हमारे सड़कों पर और गलियों में चलने फिरनेवाले , रक्तमांस से निर्मित पात्र है, जिनके काम को जाँचने के लिए न तो कल्पना को दौड़ाना पड़ता है और न जिनके भावों को समझने के लिए मन के दौड़ की जरूरत होती है। मृच्छकटिक की इसीलिए संज्ञा 'संकीर्ण प्रकरण' की है, क्योंकि इसमें लुच्चे-लबारों, चोर-जुआरों; वेश्या-विटों का आकर्षण वायु-मण्डल है, जहाँ घौल-धुपाड़ों की चौकड़ी सदा अपना रंग दिखाया करती है । आख्यान तथा वातावरण की इस यथार्थवादिता और नैसर्गिकता कारण ही मृच्छकटिक पाश्चात्य आलोचकों की विपुल प्रशंसा का भाजन बना हुआ है। यहाँ कथावस्तु की एकता का भंग नहीं है, यद्यपि वर्षाकाल नाटक के व्यापार में शैथिल्य अवश्य ला देता है। शूद्रक का कविहदय स्वयमापतित वर्षाकाल की मनोहरता से रीझ उठता है और वह कथा के सूत्र को छोड़कर उसमें मनोहर वर्णन में जुट जाता है

सिवाय इस वर्णनात्मक विषय के विभित्र घटनाओं के सूत्रों का एकीकरण बड़ी सुन्दरता से किया है। 'दरिद्र-चारूदत' के समान इसमें केवल एकात्मक प्रणयाख्याम नहीं है, प्रत्युत उस के साथ एक राजनैतिक आख्यान का भी पूर्ण सामञ्जस्य अपेक्षित है। शूद्रक ने इन दोनों आख्यानों को एक अन्विति के भीतर रखने का पूर्ण प्रयास किया और इसमें उनमें इन्हें पूर्ण सफलता भी मिली है। पात्रों के विषय में यह भूलना न चाहिए कि वे किसी वर्ग -विशेष के प्रतिनिधि न होकर स्वयं 'व्यक्ति' है। वे 'टाइप' नहीं हैं, प्रत्युत 'व्यक्ति' है। मृच्छकटिक के अमेरिकन भाषान्तरकार डॉ0 राइडर ने ठीक ही कहा है कि इस नाटक के पात्र 'सार्वभौम' (कास्मोपालिटन) है, अर्थात् इस विश्व के किसी भी देश या प्रान्त में उनके समान पात्र आज भी चलते-फिरते नजर आते है। इसके सार्वभौम आकर्षण का यही रहस्य है। यूरोप या अमेरिका की जनता के सामने इस नाटक का अभिनय सदा सफल इसलिए हो पाया है कि वह इसके पात्रों से मुठभेंड़ अपने ही देश में प्रतिदिन किया करती है। इनमें पौरस्त्य चाकचिक्य की झाँकी का अभाव कभी भी इन्हें दूरदेशस्थ पात्रों का आभास भी नहीं प्रदान करता। डाक्टर कीथ भले ही इन्हें पूरे 'भारतीय' होने की राध दें , परन्तु पात्रों के चरित्र में कुछ ऐसा जादू है कि वह दर्शकों के सिर पर चढ़कर बोलने लगता है। आज भी माथुरक जैसे सभिक तथा उसके सहयोगियों का दर्शन कलकता तथा बम्बई की ही गलिया में नहीं होता है, प्रत्युत लंदन के ईस्ट एण्ड़ में भी वे घूमते-घामते घौले-घप्पड़ जमाते नजर आते है, जहाँ का 'जुआड़ियों का अड्डा' (गैम्बलिंग डेन) आज भी पुलिस की नजर बचाकर दिन दहाडे चला करता है। तात्पर्य यह है कि शूद्रक के पात्र मध्यम तथा अधम श्रेणी के रोचक पात्र है, जिनका इतना यथार्थ चित्रण संस्कृत के रूपकों में फिर नहीं हुआ। शूद्रक की नाटककला वस्तुतः श्लाघनीय है स्पृहणीय है।

अभ्यास प्रश्न 2 - बहुविकल्पीय प्रश्न

1. मृच्छकटिकम् का अर्थ है-

(क) लोहे का घोड़ा (ख) सोने का घोड़ा

(ग) मिट्टी का गाड़ी (घ) लकड़ी का गाड़ी

2. मृच्छकटिकम् की मुख्य नायिका है-

(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना

(ग) गौरी (घ) पार्वति

3, मृच्छकटिकम् प्रकरण का नायक है -

(क) शकार (ख) विट

(ग) चारूदत्त (घ) इनमें से कोई नहीं

4. शकार का राजा से सम्बन्ध है-

(क) साला का (ख) मामा का

(ग) चाचा का (घ)पिता का

5- मृच्छकटिकम् क्या है -

(क) कथा (ख) गीतिकाव्य

(ग) प्रकरण (घ) चम्पू काव्य

2.8 सारांश-

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि मृच्छकटिकम् के रचयिता शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेध यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिहांसन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया। शूद्रक युद्वप्रेमी थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे। राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर बहुत सुन्दर था , उनकी चाल हाथी के समान तथा नेत्र चकोर की तरह एवं मुख चन्द्रमा के समान था। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे। इस इकाई के अध्ययन से आप शूद्रक के व्यक्तित्व एवं कृर्तित्व का वर्णन कर सकेंगे।

2.9 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
मृच्छकटिकम्	मिट्टी की गाड़ी
श्लाघनीय	प्रशंसनीय
अनुग्रह	कृपा
समरव्यसनी	युद्धप्रेमी
सुविग्रह:	सुन्दर शरीर वाले
ज्ञात्वा	जानकर
वीक्ष्य	देखकर
शर्वप्रसादात्	शंकर की कृपा से
ककुद:	श्रेष्ठ
किल	निश्चय ही

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) शूद्रक (2) शूद्रक (3) अलंकारन्यास (4) हस्तिशास्त्र (5) उज्जयिनी की गणिका (6) राजा का श्यालक ,अभ्यास प्रश्न 2 – 1-(ग) 2- (ख) 3- (ग) 4- (क) 5- (ग)

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

2, संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक - चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

2.12 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शूद्रक का जीवन परिचय लिखिए।
2. मृच्छकटिकम् का सारांश लिखिए।
3. शूद्रक की काव्यकला एवं नाट्यकला पर प्रकाश डालिए।

इकाई 3 – मृच्छकटिकम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र - चित्रण

इकाई की रूपरेखा
3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पात्र चरित्र – चित्रण
3.3.1 चारूदत्त
3.3.2 वसन्तसेना
3.3.3 शकार
3.3.4 विदूषक
3.3.5 अन्य पात्र
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.8 उपयोगी पुस्तकें
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् के प्रथम खण्ड की यह तृतीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाईयों के अध्ययन से आपने जाना कि नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ तथा महाकवि शूद्रक के जीवन से परिचित हुए। इस इकाई में आप इस प्रकरण के प्रमुख पात्रों का अध्ययन करेगें। मृच्छकटिकम् का प्रमुख पात्र अर्थात् नायक चारूदत्त है जो धीरप्रशान्त है जो अत्यन्त निर्धन है और उसमें नायकोचित समस्त गुण पाये जाते हैं। मृच्छकटिकम् एक ऐसा प्रकरण है जिसमें कुलस्त्री तथा गणिका दो नायिकायें हैं किन्तु इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। विदूषक चारूदत्त का मित्र है। शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है जो राजश्यालक (राजा का साला) और अत्यन्त धूर्त है। शर्विलक जाति का ब्राह्मण है यद्यपि वह चोरी करता है किन्तु वह पेशेवर चोर नहीं है। इनके अतिरिक्त विट, धूता, मदनिका और भिक्षु आदि अन्य पात्र भी हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस प्रकरण के मुख्य पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को बता पायेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- चारूदत्त की चारित्रिक विशेषताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- वसन्तसेना के चरित्र की विशेषताओं को समझा सकेगें।
- शकार के चरित्र का वर्णन कर सकेंगे।
- विदूषक के व्यक्तित्व को समझा सकेंगे।
- शर्विलक कौन था यह बता सकेगें।

3.3 पात्र चरित्र – चित्रण

नाटक में प्रयुक्त पात्रों के विचार कार्यप्रणाली उनके स्वभाव एवं स्वरूप के बारे में वर्णन करना उस पात्र का चरित्र चित्रण कहलाता है। मृच्छकटिकम् चरित्र-चित्रण की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण प्रकरण है इसकी कथावस्तु मध्यवर्ग के जीवन के आधार पर कल्पित की गयी है। शूद्रक चरित्र-चित्रण में खूब सिद्व हस्त है। इनके पात्र जीते-जागते है., सजीवता की मूर्ति हैं। प्रत्येक पात्र में कुछ विशेषता है, सभी पात्रों के कार्य और व्यवहार अपनी अपनी परिस्थिति के आधार पर दिखलाये गये हैं। मृच्द्कटिकम् प्रकरण का नायक चारूदत, नायिका वसन्तसेना, प्रतिनायक शकार तथा विदूषक का चरित्र-चित्रण इस प्रकार हैं।

3.3.1 चारूदत्त - चारूदत्त इस प्रकरण का नायक है। नाट्यशास्त्र के अनुसार किसी रूपक का नायक विनयी, प्रियदर्शन, त्यागी,, प्रियभाषी, लोकप्रिय, पवित्र, वाक् कुशल, उच्चवंशोत्पन्न, स्थिर युवक तथा बुद्धि, उत्साह, स्मृति, प्रज्ञा, कला और स्वाभिमान से युक्त शूरवीर ,दृढ़,तेजस्वी,

शास्त्रानुकूल कार्य करने वाला और धार्मिक होना चाहिए। नायक के चार भेद होते हैं – धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त धीरोद्धत । इन चार प्रकारों में चारूदत्त धीरप्रशान्त नायक है । आचार्य धनंजय दशरूपक में धीरप्रशान्त का लक्षण इस प्रकार बताते हैं – 'सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिक:'। चारूदत्त में सामान्य नायक के प्राय: सभी गुण पाये जाते हैं, और वह जाति का ब्राह्मण भी है।

उदार एवं दानवीर – चारूदत्त उज्जयिनी में रहने वाला एक ब्राह्मण युवक है । अपनी अतिशय उदारता एवं दानशीलता के कारण वह अपनी समस्त सम्पत्ति गरीबों को दे देता है और दरिद्र हो जाता है । इस अवस्था में भी अपनी परोपकार, उदारता एवं शीलता आदि गुणों के कारण नगरवासियों के श्रद्धा के पात्र हैं।

दीनानां कल्प वृक्ष: स्वगुण फलनत: सज्जनानां कुटुम्बी
आदर्श: शिक्षितानां सुचरितनिकष: शीलवेलासमुद्र:। आदि श्लोक प्रथम अंक 48

जब कोई व्यक्ति प्रशंसनीय कार्य करता है या उसे कोई शुभ समाचार सुनाता हे तो वह उसे अवश्य ही पुरस्कार स्वरूप कुछ न कुछ देना चाहता है यह उसकी उदारता और दयालुता ही है । शर्विलक के द्वारा आभूषण चुराये जाने पर भी वह प्रसन्नता का अनुभव करता है जो उसकी अत्यधिक दयालुता को प्रकट करता है। बौद्ध भिक्षु को हाथी से बचाने पर वह कर्णपूरक को अपनी दुशाला पुरस्कार में दे देता है । चारूदत्त सेवकों के प्रति भी दया भाव रखता है इसी कारण वह सोई हुई रदनिका को जगाना नहीं चाहता है। अपनी उदारता के कारण ही वह दरिद्रता को मृत्यु से भी अधिक कष्टदायक समझता है - **एत्तत् मां दहति यद् गृहमस्मदीयं**

क्षीणर्थमित्यतिथय: परिवर्जयन्ति
संशुष्क सान्द्र मदलेखमिव भ्रमन्त:
कालात्यये मधुकरा करिण :कपोलम्।।

विदूषक के द्वारा पूछे जाने पर कि हे मित्र ! मृत्यु और दरिद्रता में से तुम्हे क्या अच्छा लगता है ?तो चारूदत्त कहता है कि दरिद्रता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है दरिद्रता नही । क्योंकि मृत्यु कम कष्टों वाली होती है किन्तु दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु ख है:-

दारिद्रयान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्रयम् ।
अल्पक्लेशं मरणं दारिद्रयमनन्तकं दु खम्:।।

धार्मिक – चारूदत्त धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति है । वह सन्ध्यावन्दन आदि नित्य कर्मों को नियमपूर्वक अनुष्ठान करता है। मैत्रेय को भी वह देवपूजा का महत्व समझाता है -

तपसा मनसा वाग्भि:पूजितां बलिकर्मभि :
तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवता:किं विचारितै :

सत्यनिष्ठ – चारूदत्त सत्यनिष्ठ है। वह दूसरों को कभी भी धोखा देने की बात तक नहीं सोचता है। उसे भिक्षावृत्ति भी स्वीकार्य है किन्तु असत्य और कपट से वह कोसों दूर रहना चाहता है । यदि

वह कभी असत्य बोलता भी है तो उसमें परार्थ, परोपकार आदि ही कारण है । इसी कारण वसन्तसेना के आभूषणों के चोरी हो जाने पर वह उसके बदले में अपनी रत्नावली यह कह कर विदूषक के हाथ भिजवा देता है कि उसके आभूषणों को वह जुएं में हार गया है क्योंकि वह जानता है कि वास्तविकता का पता चलने पर वसन्तसेना रत्नावली नही लेगी ।

आकर्षक व्यक्तित्व – चारूदत्त गुणों के साथ-साथ आकृति से भी सुन्दर है । उसका सौन्दर्य दर्शनीय है । द्वितीय अंक में वसन्तसेना को चारूदत्त का परिचय देते हुए संवाहक कहता है कि – 'यस्तादृश: प्रियदर्शन: प्रियवादी, दत्वा न कीर्तयति, अपकृतं विस्मरति' । सप्तम अंक में आर्यक भी उनके वाह्य व्यक्तित्व की प्रशंसा करता है – 'न केवलं श्रुति रमणीयो दृष्टिरमणीयोऽपि' । चारूदत्त की नासिका उन्नत और उभरी हुई तथा नेत्र विशाल हैं । नवम अंक में चारूदत्त को देखते ही अधिकरणिक कहता है कि – " अयमसौ चारूदत्त: य एष: -

घ्राणोन्नतं मुखमपांगविशालनेत्रं
नैतद्भिभाजनमकारणदूषणानाम् ।
नागेषु गोषु तुरगेषु तथा नरेषु
नह्याकृति: सुसदृशं विजहाति वृत्तम् ।।

वसन्तसेना की माँ भी चारूदत्त के सौन्दर्य को देखकर अकस्मात् कह उठती है – 'अयं स: चारूदत्त:। सुनिश्चितं खलु दारिकया यौवनम् ।

चारित्रिक दृढ़ता – चारूदत्त को अपनी प्रतिष्ठा और चरित्र की उज्जवलता का ध्यान है । इसी कारण वह वसन्तसेना के आभूषणों के चोरी चले जाने पर मूर्च्छित हो जाते हैं और नाना प्रकार की चिन्ता व्यक्त करता है । अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए ही वह वसन्तसेना की धरोहर को लौटाना आवश्यक समझता है । मृत्युदण्ड पाने पर भी उसे भय नहीं है , केवल दु:ख है तो प्रतिष्ठा चले जाने का ।

कला प्रेमी –चारूदत्त कला प्रियव्यक्ति है । वह रेमिल के गीत को सुनकर उसकी प्रशंसा करता है । उसे संगीत का ज्ञान है तभी वह रेमिल के संगीत की ताल-लय, मूर्च्छना इत्यादि का विश्लेषण करते हुए सराहना करता है । शर्विलक की लगाई सेंध को देखकर भी उसकी कलात्मकता की प्रशंसा करता है ।

संयमी – चारूदत्त अपराधी के प्रति भी क्रोध नहीं करता और शरणागत की रक्षा करता है । जिस प्रकार उसे मरणान्तिक वैर की धमकी देता है तब वह 'अज्ञोऽसौ' इतना मात्र कहकर छोड़ देता है जब वह चारूदत्त पर मिथ्याभियोग लगाता है तब भी चारूदत्त क्रुद्ध नहीं होता, विचलित नही होता है । उसका यह धैर्य उस समय चरम सीमा पर पहुँच जाता है जब वह शरणागत शकार को अभयदान देकर क्षमा कर देता है ।

उत्तम पति – गणिका से प्रेम करते हुए भी चारूदत्त में चारित्रिक दृढ़ता है । वह अपनी पत्नी धूता से प्रेम करता हे और उसे पवित्र मानता हुआ उसका आदर करता है । वेश्या के आभूषणों को भी

अभ्यन्तर प्रवेश के योग्य नहीं समझता। वह परनारी पर दृष्टि भी नही डालना चाहता है – 'न युक्तं परकलत्रदर्शनम्'। जब अनजाने में अन्य स्त्री से उसके वस्त्रों का स्पर्श हो जाता है तो वह खिन्न होकर कहता है कि – इयमपरा का -

अविज्ञातावसक्तेन दूषितां मम वाससा।
छादिता शरद्भ्रैणचन्द्रलेखेव दृश्यते॥

अपनी पतिव्रता स्त्री पर वह गर्व करता है और गृहस्थ धर्म का पूर्णतया पालन करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि चारूदत्त उदार, दानी, दयालु, लोकिप्रय, सुन्दर, कलाप्रेमी और धर्मिक प्रवृत्ति का नायक है। उसमें प्रकरण के नायक के सभी गुण विद्यमान है।

3.3.2 वसन्तसेना

मृच्छकटिकम् प्रकरण में दो नायिकायें है कुलस्त्री एवं गणिका। धूता कुलस्त्री है और वसन्तसेना गणिका है। इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। दशरूपककार आचार्य धनंजय ने नायिकाओं के तीन भेद बताये हैं – स्वकीया, परकीया और साधारण स्त्री। साधारण स्त्री को गणिका कहते हैं यह कला, प्रगल्भा और धूर्तता से युक्त होती है।

वैभवसम्पन्न गणिका – वसन्तसेना उज्जयिनी की एक ऐश्वर्यशालिनी गणिका है। उसकी समृद्धि को देखकर विदूषक कह उठता है – 'किं तावद् गणिकागृहम् अथवा कुबेरभवनपरिच्छेद इति'। उसके पास यौवन का अपार वैभव है। कवि ने चतुर्थ अंक में उसके वैभव का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

अनुपम सौन्दर्य – वसन्तसेना का सौन्दर्य अद्भुत है।वह एक सुन्दर तरूणी है, वह अलंकारों को भी अलंकृत करने वाली है। उसे उज्जयिनी नगरी का विभूषण कहा गया है –'बालां स्त्रियं च नगरस्य विभूषणं च'(8/23)। उसकी सुन्दरता पर बड़े से बड़ा अधिकारी अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए उसकी भाव-भ्रंगिमा को देखा करता है।दीपक के मद्धिम प्रकाश में भी उसके सौन्दर्य को देखकर अकस्मात् चारूदत्त के मुख से निकल पड़ता है –'अये, कथं देवतोपस्थानयोग्या युवतिरियम्'। वस्तुत: वह देवताओं के द्वारा आराध्य देवी जैसी लगती है।

उदार हृदय नारी – वसन्तसेना अत्यन्त विशाल हृदय वाली महिला है। माथुर के द्वारा पीछा किये जाते हुए भयभीत संवाहक को अपनी शरण में आने पर अपरिचित होने पर भी वह उसे अभयदान देती है। वह उसे कर्ज से मुक्त कराने के लिए अपना सुवर्णाभूषण भेजती है और कहला देती है कि संवाहक ने ही भेजा है। अपनी इसी उदारता के कारण वह मदनिका को दासता से मुक्त कर देती है तथा चारूदत्त के पुत्र रोहसेन को रोते हुए देखकर वह सोने की गाड़ी बनवाने के लिए अपने आभूषण दे देती है।

विनम्रता – वसन्तसेना स्वभाव से अत्यन्त ही विनम्र है। यही कारण है कि वह चारूदत्त की पत्नी धूता का अपनी बड़ी बहन के समान आदर करती है और अपने आपको उसकी दासी कहने में भी

संकोच नहीं करती है। वसन्तसेना चारूदत्त के पुत्र रोहसेन को अपने पुत्र के समान ही प्यार करती है इसीलिए वह रदनिका को अपने स्वर्णाभूषणों को उतार कर उसकी सोने की गाड़ी बनवाने के लिए दे देती है।

विदुषी नारी – वसन्तसेना एक बुद्धिमती, कला-कुशल तथा विदुषी स्त्री है। वह राजमार्ग पर विट के कथन के गूढ़ अर्थ को समझ लेती है और आभूषण उतार लेती है। वह जानती है कि प्रियतम से कैसे व्यवहार करना चाहिए। वह चित्र रचना में कुशल है और चारूदत्त का चित्र बनाकर मदनिका को दिखलाती है। उसे संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान है पंचम अंक में वह स्वरचित श्लोकों से वर्षा का वर्णन करती है। चतुर्थ अंक में विदूषक के साथ संस्कृत में वार्तालाप करती है।

एकनिष्ठ प्रेम – वसन्तसेना चारूदत्त को सच्चे हृदय से प्रेम करती है। कामदेवायतन में जब वह चारूदत्त को देखती है तभी उसके हृदय में अनुराग उत्पन्न हो जाता है। चारूदत्त के दरिद्र होने पर भी वह उससे प्रेम करती है क्योंकि उसका प्रेम धन के लिए नहीं है अपितु प्रशंसनीय प्रेम है। उसका यह प्रेम उसके हृदय की पवित्रता कोव्यक्तकरता है। इसी कारण वह शकार के दश सहस्र सुवार्णालंकारों के साथ आये हुए प्रणय प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है।चारूदत्त को छोड़कर उसने अपना प्रेम कभी किसी और को समर्पित नहीं किया है। पुष्पकरण्डक उद्यान में शकार के द्वरा मारे जाने के लिए उद्यत होने पर वह चारूदत्त का नाम लेती हुई मरने को तैयार हो जाती है किन्तु शकार को स्वीकार नहीं करती है। वह चारूदत्त के गुणों पर मुग्ध है। अपने इसी उत्कट प्रेम के कारण उसे चारूदत्त की प्रत्येक वस्तु से प्रेम हो जाता है ।संवाहक के मुख से चारूदत्त का नाम लेने पर वह उसका बहुत अधिक सम्मान करती है। विदूषक का वह खड़ी होकर स्वागत करती है। कर्णपूरक से चारूदत्त का दुशाला पाकर वह प्रिय मिलन का सा आनन्द अनुभव करती है।

संक्षेप में कहा जाय तो गणिका होते हुए भी वसन्तसेना का व्यवहार एवं प्रेम एक कुलनारी के समान है। उसने अपने अनन्य प्रेम, उदात्त चरित्र, उदार हृदय एवं अपूर्व त्याग आदि गुणों के कारण अन्त में वह कुलवधू के पद को प्राप्त कर लेती है।

3.3.3 शकार

शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है। दशरूपक के अनुसार प्रतिनायक लोभी, धीरोद्धत,जड़ प्रकृति वाला ,पापी और व्यसनी होता है। शकार इन सभी गुणों से युक्त है वह दुर्गुणों से युक्त है। यह शकारी प्राकृत बोलता है (सकार के स्थान पर शकार जैसे वशन्तशेणा) संभवत: इसी कारण इसका नाम शकार है। यह किसी व्यभिचारिणी का पुत्र है (काणेलीमात:) और राजा की अविवाहिता स्त्री (रखैल) का भाई है।

अभिमानी – शकार को राजश्यालक (राजा का साला) होने का बहुत अधिक अभिमान है इसी कारण वह अपनी मनमानी करता है। न्यायाधीशों को निकलवा देने की धमकी देकर वह उनसे मनमाना न्याय कराना चाहता है। उसे अपने पद और धन का भी अभिमान है अत: वह अपने

आपको देवपुरूष मनुष्य वासुदेव भी कहता है।

जड़ स्वभाव – शकार अत्यन्त मूर्ख प्रकृति का है। उसके कथन अज्ञानता और मूर्खता से युक्त है। शकार द्वारा दी गयी उपमायें इतिहास विरूद्ध हैं जैसे द्रोणपुत्रो जटायु: । उसके अधिकांश कथन हास्यजनक है। शकार पढ़ा लिखा नही है तथा वह बातचीत करने का तरीका भी नही जानता फिर भी उसे अपने ज्ञान पर गर्व है और पुराण तथा इतिहास में वर्णित घटनाओं को वह मनमाने ढंग से कहता है।

क्रूर एवं निर्दयी -शकार अत्यन्त क्रूर,निर्दयी और पापी है तथा पापपूर्ण योजनायें बनाने में निपुण है। विट और चेट को कपटपूर्वक हटाकर वसन्तसेना का गला घोंट देता है। जब विट उसके इस कुकृत्य की भर्त्सना करता है तो उस पर ही वह हत्या का आरोप मढ़ देता है। चेट को बाँध कर डाल देता है और चारूदत्त पर वसन्तसेना की हत्या का अभियोग चलाता है। जब चेट उसके इस षड़यन्त्र का उद्घाटन करता है तो उस पर चोरी का आरोप लगा देता है। चाण्डालों से कहता है कि चारूदत्त को उसके पुत्र सहित मार डालो। उससे बड़ी क्रूरता क्या होगी कि वह एक निर्दोष व्यक्ति और उसके मासूम बच्चे को मरवाना चाहता है।

अस्थिर स्वभाव – वह स्वभाव से अस्थिर, दुराग्रही तथा कायर है। उसके विचार प्रत्येक क्षण परिवर्तित होते रहते हैं। उसके साथी विट और चेट हमेशा सशंकित रहते है कि पता नहीं की वह किस क्षण में क्या कह बैठे या कर बैठे। प्रथम अंक में विट से कहता है कि वसन्तसेना को लिये बिना नहीं चलूँगा ये है उसका दुराग्रह। अष्टम अंक में पहले तो विट को गाड़ी में बैठने के लिए कह देता है फिर तभी उसका अपमान करने लगता है। इसी प्रकार चेट को दीवार पर से गाड़ी लाने का आदेश दे देता है। अपनी गाड़ी में वसन्तसेना को देखकर ही वह भयभीत हो जाता है तथा अन्त में मृत्यु के भय से चारूदत्त की शरण में आकर रक्षा की याचना करता है यह है उसकी कायरता।

संक्षेप में शकार दुर्गुणों की खान है उसके चरित्र में प्राय: सभी दुर्गुण स्पष्ट दिखायी देते हैं। वह केवल स्त्री -लम्पट, मूर्ख और धूर्त ही नहीं अपितु मानव के रूप में दानव ही कहा जा सकता है। प्रतिनायक के रूप में उसका यथार्थ चित्रण किया गया है।

3.3.4 विदूषक

दशरूपक के अनुसार नायक का वह सहायक जो अपने आकार, प्रकार तथा कथन आदि से हंसी उत्पन्न करता है, विदूषक कहलाता है 'हास्याकृच्च विदूषक:' (दश0 2,9) । मृच्छकटिकम् के विदूषक में भी यह सभी गुण विद्यमान है इस प्रकरण में विदूषक का नाम मैत्रेय है और वह जाति का ब्राह्मण है। जिसकी चारित्रिक विशेषताएं इस प्रकार है -

सच्चा मित्र – मैत्रेय चारूदत्त का सच्चा मित्र है। चारूदत्त के निर्धन होने पर भी वह उसका साथ नहीं छोड़ता। येन केन प्रकारेण वह अपनी उदरपूर्ति करता हुआ चारूदत्त की सहायता करता है। इसी कारण चारूदत्त कहता है कि – 'अये, सर्वकालमित्रं मैत्रेयं प्राप्त:'। वह चारूदत्त को सान्त्वना देता रहता है। चारूदत्त को किसी भी प्रकार कष्ट न पहुँचे इसी कारण वह रदनिका से कहता है कि वह अपने अपमान की बात चारूदत्त से न कहे। वह चारूदत्त को गणिका प्रसंग से हटाना चाहता है

क्योंकि वह जानता है कि वेश्या लालची और कुटिल होती है अतएव वह वसन्तसेना को भी घृणा की दृष्टि से देखता है और चारूदत्त से कहता है कि – 'निवर्त्य तामात्माऽस्माद् बहुप्रत्यवायाद् गणिकाप्रसंगात्' । चारूदत्त के प्रति उसे अगाध प्रेम है चारूदत्त पर शकार के द्वारा मिथ्याभियोग लगाये जाने पर वह न्यायालय में शकार से लड़ बैठता है। जब चारूदत्त के मृत्युदण्ड की घोषणा की जाती है तब वह कहता है कि वह चारूदत्त के बिना जीवित नही रहना चाहता।

भीरू तथा क्रोधी – मैत्रेय अत्यन्त क्रोधी तथा डरपोक है। वह अंधेरे में चतुष्पथ पर जाने से डरता है।जब चारूदत्त रात्रि में वसन्तसेना को पहुँचाने के लिए कहता है तो वह बड़ी चतुराई से मना कर देता है।वह शीघ्र ही क्रुद्ध हो जाता है रदनिका के अपमान को देखकर वह शकार और विट को मारने के लिए उद्यत हो जाता है।चारूदत्त की दशा को देखकर वह कहता है कि जब पूजा करने पर भी देवता प्रसन्न नही होते हैं तो ऐसी देवपूजा से क्या लाभ ? चारूदत्त की अत्यधिक उदारता उसे पसन्द नही है आभूषणों के बदले रत्नावली देना उसे अच्छा नही लगता है। विदूषक एक साधारण कोटि का समझदार व्यक्ति है चारूदत्त के उदात्तगुण उसकी समझ से परे हैं ।वह भोजन प्रिय तथा पेटू भी है।वसन्तसेनाके भवन में विविध प्रकार के पकवानों को देखकर वह सोचता है कि वह इन्हें खाकर जायेगा किन्तु वसन्तसेना के द्वारा केवल मौखिक सत्कार के द्वारा बिना खिलाये पिलाये ही विदा कर दिये जाने पर वह सोचता है कि इसने तो पानी को भी नही पूछा। संक्षेप मे हम कह सकते हैं कि विदूषक बुद्धिमान मित्र नही किन्तु चारूदत्त का हितैषी एवं सच्चा मित्र है। यद्यपि उसमें अत्यन्त उच्चकोटि के गुण विद्यमान नही हैं तथापि वह एक व्यावहारिक जन है।

3.3.5 अन्य पात्र

अन्य पुरूष पात्रों में शर्विलक एक प्रेमी हृदय ब्राह्मण है। वह चौर्य कला में निष्णात है किन्तु वह चोरी को अच्छा नही समझता केवल स्वतन्त्र व्यवसाय मानकर ही उसे ग्रहण करता है वह मदनिका को प्राप्त करने के लिए चोरी करता है। वह विपत्ति में मित्र का साथ देने वाला है कठिनता से प्राप्त हुई प्रेमिका मदनिका को छोड़कर अपने मित्र आर्यक को मुक्त कराने चला जाता है।वह षडयन्त्र रचने में कुशल है। संवाहक चारूदत्त के यहाँ नौकरी करने के पश्चात् द्यूतक्रीड़ा से अपनी आजीविका चलाने लगता है।जुयें में हार कर वह वसन्तसेना के द्वारा ऋणमुक्त कराया जाता है और वह विरक्त होकर बौद्ध भिक्षु बन जाता है। वह कृतज्ञ है और उपकार का बदला चुकाने के लिए चिन्तित रहता है अन्त मे वसन्तसेना की प्राण रक्षा करके वह सन्तुष्ट हो जाता है और प्रव्रज्या को ही उत्तम समझने लगता है।अन्य पुरूष पात्रों में विट सहृदय एवं बुद्धिमान है वह वसन्तसेना की सच्ची प्रेम भावना को देखकर उसके प्रेम की प्रशंसा करता है तथा यथाशक्ति उसकी सहायता करता है।वह धर्मभीरू है तथा पाप का विरोध भी करता है इसी कारण वह शकार को छोड़कर चला जाता है। इसके अतिरिक्त चेट, न्यायाधीश, चन्दनक ओर वीरक, सभिक,द्यूतकर,दर्दुरक आदि का भी उल्लेख किया गया है।

स्त्री पात्रों में धूता प्रमुख स्त्री पात्र है जो चारूदत्त की विवाहिता पत्नी है, एक पतिव्रता नारी है जो अपने पति के दु:ख को नही देख सकती और पति की अपकीर्ति से भी डरती है इसी कारण बड़ी चालाकी से रत्नावली विदूषक को दे देती है। वह एक सच्ची भारतीय नारी है। मदनिका वसन्तसेना

की दासी तथा सखी है। उस पर वसन्तसेना बहुत अधिक विश्वास करती है तथा वह भी वसन्तसेना से बहुत स्नेह करती है । इनके अतिरिक्त रदनिका, वसन्तसेना की चेटी तथा वसन्तसेना की माता आदि का भी उल्लेख हुआ है।

अभ्यास प्रश्न 1 -

निम्नलिखित वाक्यों में सत्य असत्य बताइए।

1. मृच्छकटिकम् शूद्रक की रचना है।
2. मृच्छकटिकम् का नायक शकार है।
3. वसन्तसेना शकार से प्रेम करती है।
4. विदूषक का नाम मैत्रेय है।
5. चारूदत्त एक निर्धन ब्राह्मण है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

1. मृच्छकटिकम् की मुख्य नायिका है -
(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना (ग) रदनिका (घ) गौरी

2- मृच्छकटिकम् का सबसे विचित्र नाटकीय पात्र है-
(क) वसन्तसेना (ख) चारूदत्त (ग) मदनिका (घ) शकार

3- शकार का राजा से क्या सम्बन्ध है -
(क) मामा (ख) साला (ग) पिता (घ) भाई

4- मृच्छकटिकम् का नायक है -
(क) विट (ख) चारूदत्त
(ग) शकार (घ) शर्विलक

5- मृच्छकटिकम् क्या है -
(क) नाटक (ख) प्रकरण
(ग) भाण (घ) प्रहसन

3. 4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान चुके हैं कि मृच्छकटिकम् चरित्र-चित्रण की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण प्रकरण है इसकी कथावस्तु मध्यवर्ग के जीवन के आधार पर कल्पित की गयी है । इनके पात्र जीते-जागते है., सजीवता की मूर्ति हैं। प्रत्येक पात्र में कुछ विशेषता है, सभी पात्रों के कार्य और व्यवहार अपनी अपनी परिस्थिति के आधार पर दिखलाये गये हैं । मृच्द्कटिकम् प्रकरण का नायक चारूदत धीर-प्रशान्त ,सदाचारी एवं दीनों के कल्पवृक्ष हैं । उसमें उात्माभिमान की मात्रा खूब है। इस प्रकरण में अवश्य ही चारूदत के रूप में हम आर्दश ' आर्य सज्जन का मनोरम चित्र पाते है। वसन्तसेना उज्जयिनी की एक वेश्या है जो इस प्रकरण की नायिका है। उसके चरित्र में हम अनेक

स्त्रीसुलभ गुणों का सत्रिवेश पाते हैं। वेश्या होने पर भी वह सच्चे प्रेम का मूल्य जानती है। शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है और वह दुर्गुणों की खान है। मृच्छकटिकम् में विदूषक का नाम मैत्रेय है और वह चारूदत्त का किसी भी अवस्था में विचलित न होने वाला मित्र है। इनके अतिरिक्त शर्विलक, विट, धूता, मदनिका और भिक्षु आदि अन्य पात्र हैं।

3.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
द्यूतम्	जुवाँ
दीनानाम्	गरीबो के लिये
कल्पवृक्षः	कल्पवृक्ष
सज्जानानां	सज्जनों का
कुटुम्बी	परिवार के समान
सत्कर्ता	अच्छा कर्म करने वाला
श्लाघ्यः	प्रशंसनीय
हिमवत्	बर्फ के समान
गणिका	वेश्या
अकस्मात्	अचानक
चतुष्पथ	चौराहा
चतुराई	चालाकी
भीरू	डरपोक
अपकीर्ति	अपयश

3.6अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) सत्य (2) असत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2 – (1) ख (2) घ (3) ख (4) ख (5) ख

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1- नाट्यशास्त्र , भरतमुनि आचार्य , चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

2- दशरूपक , आचार्य धनंजय, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

3-मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

3.8 उपयोगी पुस्तकें

1- नाट्यशास्त्र , भरतमुनि आचार्य , चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

2- दशरूपक , आचार्य धनंजय, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

3-मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

3. 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चारूदत्त का चरित्र चित्रण कीजिए।
2. वसन्तसेना का चरित्र चित्रण कीजिए।
3. मृच्छकटिकम् के प्रतिनायक का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. विदूषक का चरित्र-चित्रण कीजिए।

इकाई 4- मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

इकाई की रूपरेखा

4•1 प्रस्तावना

4•2 उद्देश्य

4•3 मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

4•4 सारांश

4•5 शब्दावली

4•6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4•7 सन्दर्भ ग्रन्थ

4•8 उपयोगी पुस्तकें

4•9 निबन्धात्मक प्रश्न

4•1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् के प्रथम खण्ड की यह चतुर्थ इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आप इस प्रकरण के प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं से परिचित हुए। मृच्छकटिकम् का प्रमुख पात्र अर्थात् नायक चारूदत्त है जो धीरप्रशान्त है जो अत्यन्त निर्धन है और उसमें नायकोचित समस्त गुण पाये जाते हैं। मृच्छकटिकम् एक ऐसा प्रकरण है जिसमें कुलस्त्री तथा गणिका दो नायिकायें हैं किन्तु इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। विदूषक चारूदत्त का मित्र है। शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है जो राजश्यालक (राजा का साला) और अत्यन्त धूर्त है।

प्रस्तुत इकाई में आप तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक दशा का अध्ययन करेंगे। मृच्छकटिकम् की कथावस्तु यथार्थ जीवन के आधार पर कल्पित की गई है इसी कारण इसमें तत्कालीन समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता पायेंगे कि उस समय राजा स्वछन्द एवं विलासी था प्रजा में उसके प्रति आक्रोश व्याप्त था। जुआं खेलने की प्रथा बहुत प्रचलित थी। स्त्रियां की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं था। उस समय न्याय व्यवस्था थी न्यायाधीश भी होता था किन्तु अन्तिम निर्णय राजा के ही हाथ में होता था।

4•2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- तत्कालीन समाज की व्याख्या कर सकेंगे।
- राजनैतिक अवस्था का वर्णन कर सकेंगे।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों का वर्णन कर सकेंगें।
- धार्मिक विश्वास एवं मान्यताओं का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

मृच्छकटिकम् की कथावस्तु यथार्थ जीवन के आधार पर कल्पित की गई है इसी कारण इसमें तत्कालीन समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है।

सामाजिक दशा – उस समय समाज व्यवस्थित नहीं था। जाति व्यवस्था कठोर हो चली थी व्यक्ति जिस कुल में जन्म लेता था वही उसकी जाति होती थी और लोगो में जाति के प्रति अभिमान भी उत्पन्न हो गया था। अपने ज्ञान और चरित्र के कारण ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ समझे जाते थे। वे समाज के पूजनीय एवं आदरणीय थे। निमन्त्रण पर जाना और दक्षिणा लेना भी ब्राह्मणों का ही कार्य था।ब्राह्मणों के सुवर्ण आदि को चुराना भी महापातक माना जाता था। उसे समाज में सबसे आगे स्थान

दिया जाता था – "समीहितसिध्यै प्रवृर्त्ते न ब्राह्मणोऽग्रे कर्तव्य:"। वैश्य व्यापार में उच्च स्थान पर थे। कायस्थ के प्रति समाज में अच्छी भावना नहीं थी। फांसी देने का कार्य चाण्डाल करते थे। उनका समाज में स्थान सबसे निम्न कोटि का था। प्राकृत जनों को वेद पढ़ने का अधिकार नही था। उस समय भिन्न-भिन्न जातियां अलग-अलग स्थानों पर निवास करती थी जातियों के नाम पर मोहल्लों के नाम पड़ने लगे थे। समाज में विवाह प्रथा थी। बहुविवाह का भी प्रचलन था। असवर्ण स्त्री से भी विवाह का निषेध नहीं था तभी तो चारूदत्त और शर्विलक जैसे ब्राह्मणों ने वेश्याओं से विवाह किया था। रखेली की प्रथा भी प्रचलित थी। तत्कालीन समाज में पर्दे की प्रथा का सम्भवत: प्रचलन नही था शायद यही कारण है कि धूता बिना पर्दे के ही सबके सामने आती है। स्त्रियां आभूषण पहनती थी और अपने केशों को पुष्पों से सजाती थी जिसका दर्शन शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना के वर्णन में मिलता है - नवीन केले के वृक्ष के समान (भय से) काँपती हुई, वायु के द्वारा चंचल अंचल वाले लाल रेशमी वस्त्र को धारण करती हुई, टाँकी द्वारा काटी जाती हुई मन:शिला की कन्दरा(से निकलने वाली चिंगारियों) के समान (केशों में गुँथे हुए) रक्त कमलों की कलियों को (वेग से दौड़ने के कारण) बिखेरती हुई क्यों जा रही हो ?

किं यासि बालकदलीव विकम्पमाना
रक्तांशुकं पवनलोलदशं वहन्ती।
रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलमुत्सृजन्ती
टंकेर्मन:शिलगुहेव विदार्यमाणा ॥

इससे प्रतीत होता है कि वसन्तसेना ने लाल कमल की कलियों से अपने केशों को सजा रक्खा है।

राजनैतिक व्यवस्था- उस समय राजनैतिक स्थिति अच्छी नहीं थी। राजा स्वेच्छाचारी होता था। वह विलासी होता था तथा राजमहिषियों के अतिरिक्त रखेलियां भी रखता था। राजा पालक के यहां इसी प्रकार की रखेली शकार की बहन थी। राजा के शकार जैसे नीच सम्बन्धी प्रजा पर मनमाना अत्याचार करते थे। राज्य में धूर्तों का बोलबाला था। अनेक प्रकार की व्यवस्था फैली हुई थी। शान्ति और व्यवस्था न थी। रात्रि के आरम्भ में ही सम्भ्रान्त नारियों का राजमार्गों पर निकलना कठिन था। अनेक प्रकार के धूर्त विट चोर तथा वेश्याएं राजमार्गों पर घूमते थे (एतस्यां प्रदोषवेलायां इह राजमार्गे गरिग्रका विटाश्चेटा राजवल्लभाश्च पुरुष। संचरिन्त) । राजा के पदाधिकारी एवं कर्मचारी अपने कर्तव्य-पालन में परस्पर ईर्ष्या का भाव रखते थे। वीरक और चन्दनक का विवाद इसका साक्षी है।राजा के अत्याचारों के प्रति जनता में क्षोभ उत्पन्न हो जाता था। उन अत्याचारों का विरोध किया जाता था। इस विरोध की भावना के कारण ही चन्दनक ने 'आर्यक' को जाने दिया और राजा के

विरूद्ध विद्रोह में सम्मिलित हो गया। इसी भावना के कारण 'विट' शकार से पृथक हो गया और स्थावरक अट्टालिका से कूदकर भी चारुदत्त के वधस्थान पर पहुंच गया। यही भावना संगठित हो जाने पर षड़यन्त्र का रूप धारण कर लेती है। शासन प्रबन्ध के शिथिल होने के कारण कोई षडयन्त्र सहज ही सफल हो सकता था। इन षडयन्त्रों में चोर, जुआरी विद्रोही राजकर्मचारी, असन्तुष्ट पदाधिकारी और राजा द्वारा अपमानित व्यक्ति सम्मिलित हो जाते थे। "ज्ञातीन् विटान् स्वभुजविकमलब्धवर्णान्' ।राजा के ऐसे षडयन्त्रों का सदा भय रहता था और वह षडयन्त्र के सन्देह में किसी भी व्यक्ति को कारागृह में डाल देता था। राजा पालक ने इसी सन्देह में आर्यक को कारागृह में बन्दी बनाया था।

उस समय राजा में ही शासनसत्ता निहित थी। वही न्याय-निर्णय का अन्तिम निश्चय करता था-'निर्णये वयं प्रमाणम् शेषे तु राजा' (अंक 9) तथा वही सेनाध्यक्ष होता था। उसकी सहायता के लिये मन्त्री, न्यायाधीस तथा दण्डाधिकारी और रक्षक होते थे। 'शुल्क' (कर) इकट्ठा करने के लिए राजपुरूष नियुक्त होते थे । इसी प्रकार राज्य का कार्य विविध विभागों में बटा था। मृच्छकटिक के नवम गणक से उस समय की न्याय-व्यवस्था पर विशेष प्रकाश पड़ता है। न्यायालय में एक न्यायाधीश होता था। उसकी सहायता के लिए एक श्रेष्ठी श्रसेसर के रूप में होता था तथा 'कायस्थ' पेशकार क रूप में । न्यायालय की स्वच्छता, व्यवस्था एवं व्यवहारार्थियों को बुलाने आदि के लिये भी एक कर्मचारी नियुक्त था जिसे 'शोधनक' कहते थे। न्यायाधीश निर्णय करने में स्वतन्त्र न था। उस पर राजा और उसके कृपाभाजन जनों का श्रातङ्क था। तभी तो शकार न्यायाधिशों को बुरी तरह धमकाता है। न्यायाधीशों को यह भय बना रहता था कि न जाने किस समय उन्हें इस पद से पृथक् कर दिया जाये। न्यायालय में सम्भ्रान्त जनों को बैठने के लिए शासन दिया जाता था। न्यायाधीश सहानुभूति शिष्टता से व्यवहार करते थे। वादी-प्रतिवादी के कथन को लेखबद्ध कर लिया जाता था और साक्षी का भी ध्यान रक्खा जाता था। न्याय निःशुल्क था और उसमें अधिक समय नहीं लगता था। मृत्युदण्ड जैसे गम्भीर दण्ड का भी तुरन्त निर्णय कर दिया जाता था। किन्तु न्यायाधीश के निर्णय की अन्तिम स्वीकृति राजा ही देता था। प्रायः न्याय-निर्णय मनुस्मृति के आधार पर किया जाता था, यों तो राजा का कथन ही सर्वोपरि विधान था। दण्ड कठोर थे राजनैतिक बन्दियों को बेडीयाँ पहनाई जाती थीं (श्रार्यक) राजकुल में कोई हर्षोत्सव होने के समय अपराधियों को दण्ड-मुक्त कर दिया जाता था- "कदापि राज्ञः पुत्रो भवति" तेन तृद्धिमहोत्सवेन सर्वध्यानां मोक्षो भवति," अपराधियों को अपना अपराध स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जाता था। सच सच न बतलाने पर उन्हें कोड़े लगवाये जाते थे हत्या के अपराध के लिये मृत्युदण्ड दिया जाता था। मृत्युदण्ड देने के लिये अपराधी को चाण्डालों को सौंप दिया जाता था। वे उसे रक्तचन्दन और कनियर की माला आदि से सजाकर

बध्यस्थल को ले जाते थे और तीन बार उसके अपराध तथा दण्ड की घोषणा करते थे। तब शूल पर चढ़ाकर, तलवार से सिर काटकर, कुत्तों से नुचवाकर या आरा से चीरकर उसे प्राणदण्ड दिया जाता था।

अभ्यास प्रश्न 1 -

(क) सत्य/असत्य बताइयें ?

1- उस समय जातियों के आधार पर मोहल्लों का नाम रखा जाता था।

2- संभ्रान्त नारियों का रात्रि के आरम्भ में राजमार्गों पर निकलना कठिन था।

3- न्यायाधीश निर्णय लेने में स्वतन्त्र होता था।

4- स्त्रियाँ आभूषणों को धारण करती थी।

5- शकार स्त्रियों का बहुत सम्मान करता था।

6- उज्जयिनी आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नगरी थी।

अभ्यास प्रश्न 2 -

(ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ?

1- न्यायाधीश के साथ ..... हुआ करता था।

2- स्त्रियाँ अपने बालों को ..... से सजाती थी।

3- उस समय ..... धर्म अधिक प्रचलन में था।

4- राज्य की पूर्ण सत्ता ..... के हाथों में होती थी।

5- फाँसी देने का कार्य ..... करते थे।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पाये कि मृच्छकटिकम् में वर्णित उज्जयिनी राज्य की क्या दशा थी। उस समय देश आर्थिक दृष्टि से समृद्धशाली था। यहां का व्यापार समुन्नत था। उस समय समाज की स्थिति अच्छी नहीं थी। राज्य में धूर्तों का बोलबाला था। राजा स्वेच्छाचारी तथा विलासी होता था। रात्रि के आरम्भ में संभ्रान्त नारियों का राजमार्गों पर निकलना मुश्किल होता था। स्त्रियां की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं था। उस समय न्याय व्यवस्था थी न्यायाधीश भी होता था किन्तु अन्तिम निर्णय राजा के ही हाथ में होता था।

4.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
यथार्थ	वास्तविक

मुश्किल	कठिन
स्वेच्छाचारी	अपनी इच्छा के अनुसार आचरण करने वाला
धूर्त	ठग
समृद्धशाली	सम्पन्न
अभिमान	घमण्ड
महापातक	महापाप
निम्न	नीचा

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 - 1. (सत्य) 2. (असत्य) 3. (असत्य) 4. (सत्य) 5. (असत्य) 6. (सत्य)

अभ्यास प्रश्न 2 - 1. असेसर 2. वेणी 3. बौद्ध 4. राजा 5. चाण्डाल

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.8 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मृच्छकटिकम् में वर्णित तत्कालीन समाज की राजनीतिक अवस्था का चित्रण कीजिण्।
2. मृच्छकटिकम् में वर्णित सामाजिक दशा का वर्णन कीजिए।

इकाई 5 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 10 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
5.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 11 से 20 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
5.9 उपयोगी पुस्तकें
5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् प्रकरण से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड है। इससे पूर्व के खण्ड में आपने जाना कि नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ। इस प्रकरण के रचयिता शूद्रक कौन थे। इसके प्रमुख पात्र कौन हैं तथा तत्कालीन समाज की क्या स्थिति थी।

प्रस्तुत इकाई में आप प्रथम अंक के 1 -20 श्लोकों का अध्ययन करेगें। इस अंक का प्रारम्भ नान्दी पाठ से होता है। सूत्रधार सूचित करता है कि हम मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण का अभिनय करने जा रहे हैं, इसके रचयिता राजा शूद्रक है तथा राजा शूद्रक के गुणों का वर्णन करता है और कहता है कि राजा शूद्रक ने उन दोनों (चारूदत्त और वसन्तसेना) के उत्तम विहार लीला पर आश्रित नीति के आचरण, दुर्जनें के चरित्र, तथा होनहार (भाग्य) इन सभी का वर्णन किया है। इन श्लोकों में चारूदत्त दरिद्रता के दोषों का तथा उससे उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट एवं शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना का वर्णन है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि राजा शूद्रक का व्यक्तित्व कैसा था। इसका नायक चारूदत्त एक गरीब ब्राह्मण है जो दरिद्रता से उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट,शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई भयभीत वसन्तसेना के बारे में बता सकेगें। निर्धनता सबसे बड़ा अभिशाप है दरिद्र व्यक्ति के जीवन में सबकुछ सूना होता है, जीवन के इस वास्तविक सत्य से परिचय करा पायेगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप —

- राजा शूद्रक के विषय में बता पायेगें।
- चारूदत्त कौन था यह बता पायेगें।
- दरिद्र व्यक्ति का जीवन कैसा होता है इसकी व्याख्या कर सकेगें।
- भयभीत वसन्तसेना के मनोभावों का वर्णन कर सकेगें।
- दरिद्रता समस्त आपत्तियों की जड़ है इसकी विवेचना कर पायेगें।

5.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 10 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

प्रथम अंक का प्रारम्भ - **पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानो-**
रन्त: प्राणावरोधव्युपरतसकलज्ञानरूद्धेन्द्रियस्य।
आत्मन्यात्मानमेव व्यपगतकरणं पश्यतस्तत्त्वदृष्टया
शम्भोर्व: पातु शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्न: समाधि: ।। 1 ।।

अन्वय – पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणित भुजगाश्लेष संवीतजानो:, अन्त: प्राणावरोध व्युपरत सकल ज्ञान

रूद्धेन्द्रियस्य , तत्त्वदृष्टया, आत्मनि व्यपगतकरणं आत्मानम्, एव पश्यत: शम्भो: शून्येक्षण घटितलय ब्रह्मलग्न: समाधि: व: पातु: ॥ 1 ॥

अर्थ – पर्यंक नामक योगासन में सन्धि-स्थल पर बांधने से द्विगुणित सर्प के लपेटने से जिस (शिव) के घुटने (जानु) बंधे हुए हैं,(योगबल के द्वारा) प्राण वायु को भीतर ही रोक देने से जिसकी समस्त इन्द्रियां (वाह्य) ज्ञान से विरत तथा संयत (रूद्ध) हो गई है,जिसने यथार्थ ज्ञान के द्वारा इन्द्रिय व्यापार निरोधपूर्वक अपने भीतर आत्मा का दर्शन किया है, उस शिव की समाधि जो निराकार (ब्रह्म) के दर्शन में होने वाली एकाग्रता (लय) के कारण ब्रह्म में लगी हुई है – आप सब (सभासदों) की रक्षा करें ॥ 1 ॥

टिप्पणी- इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

अपि च -

पातुं वो नीलकण्ठस्य कण्ठ: श्यामाम्बुदोपम: ।
गौरीभुजलतां यत्र विद्युल्लेखेव राजते ॥ 2 ॥

अन्वय – यत्र गौरीभुजलता विद्युल्लेखा इव राजते (स:) श्यामाम्बुदोपमा: नीलकण्ठस्य कण्ठ: व: पातु ॥ 2 ।1

अर्थ – जिसके(गले में) पार्वती की (गौरवर्ण) बाहुलता विद्युत पंक्ति के समान सुशोभित होती है, वह काले मेघों के समान शंकरजी का कण्ठ आप सब की रक्षा करे ॥ 2 ॥

टिप्पणी - इस श्लोक में उपमा एवं संसृष्टि अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

(नाद्यन्ते) (नान्दी के अन्त में)

सूत्रधार:- अलमनेन परिषत्कुतूहलविमर्दकारिणा परिश्रमेण । एवमहमार्यमिश्चान्यप्रणिपत्य विज्ञापयामि – यदिदं वयं मृच्छकटिकं नाम प्रकरणं प्रयोक्तुं व्यवसिता: । एतत्कवि: किल: -

सूत्रधार- सभा में उपस्थित लोगो की उत्कण्ठा को भंग करने वाले इस परिश्रम को बन्द करो। इस प्रकार आदरणीय एवं सभ्य आप लोगो को प्रणाम करके मैं सूचित करता हूँ कि – हम लोग मृच्छकटिक नामक इस प्रकरण का अभिनय करने के लिए उद्यत है। नि:सन्देह इसके रचयिता कवि

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्र: परिपूर्णेन्दुमुख: सुविग्रहश्च ।
द्विजमुख्यतम: कविर्बभूव प्रथित: शूद्रकं इत्यगाधसत्व: ॥ 3 ॥

अन्वय – द्विरेन्द्रगति: चकोरनेत्र: परिपूर्णेन्दुमुख: सुविग्रह: च, द्विजमुख्यतम: अगाधसत्व: शूद्रक: प्रथित: कवि: बभूव ॥ 3 ॥

अर्थ – गजराज के समान चाल वाले, चकोर नामक पक्षी के समान नेत्र वाले, पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाले, सुन्दर सुगिठत शरीर वाले, क्षत्रियों में सर्वश्रेष्ठ एवं अगाधबलशाली शूद्रक नामक विख्यात कवि हुए। **टिप्पणी** – इस श्लोक से प्ररोचना प्रारम्भ होती है।

प्ररोचना – 'उन्मुखीकरणं तत्र प्रशंसात: प्रयोजनम्' कवि तथा काव्य की प्रशंसा के द्वारा सभा में स्थित लोगों को काव्य की ओर आकृष्ट करना प्ररोचना कहलाता है। इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा मालभारिणी छन्द है।

अपि च -

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां
ज्ञात्वा शर्वप्रसादाच्चयपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य: ।
राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदवेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा
लब्ध्वा आयु: शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्ट: ।। 4 ।।

अन्वय - ऋग्वेदं सामवेदं गणितम अथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां ज्ञात्वा शर्वप्रसादात् अपगततिमिरे चक्षुषी च उपलभ्य: पुत्रम् राजानं वीक्ष्य परमसमुदवेन अश्वमेधेन च दृष्टवा दशदिनसहितं शताब्दं आयु: च लब्ध्वा शूद्रक: अग्निम् प्रविष्ट: **।। 4 ।।**

अर्थ- और भी -

(इस प्रकरण के रचयिता) शूद्रक कवि ऋग्वेद, सामवेद, गणित,नृत्यगीत आदि चौंसठ कलाओं, नाट्यशास्त्र एवं हस्तिसंचालन की शिक्षा को प्राप्त करके, भगवान शंकर की कृपा से अज्ञान रूपी अन्धकार से रहित (ज्ञानरूपी) नेत्रों को पाकर के, अपने पुत्र को राजा के रूप मे देखकर अर्थात् राजसिंहासन पर बैठाकर परम उन्नति करने वाले अश्वमेध यज्ञ को करके, सौ वर्ष दस दिन की आयु पाकर (अन्त में) अग्नि में प्रविष्ट हो गये।

टिप्पणी – इस श्लोक में स्रग्धरा छन्द है।

अपि च -

समरव्यसनी प्रमादशून्य: ककुदो वेदविदां तपोधनश्च ।
परवारणबाहुयुद्धलुब्ध: क्षितिपाल: किल शूद्रको बभूव ।। 5 ।।

अन्वय- शूद्रक: समरव्यसनी प्रमादशून्य: वेदविदाम् ककुद: तपोधन: च परवारणबाहुयुद्धलुब्ध: क्षितिपाल: बभूव किल **।। 5 ।।**

अर्थ – शूद्रक युद्ध करने के प्रेमी, असावधानी रहित अर्थात् हमेशा सतर्क, वेद को जानने वालों में श्रेष्ठ, तपस्या को ही अपना धन समझने वाले अर्थात् तपस्वी, शत्रुओं के हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने के लालची अर्थात् इच्छुक तथा प्रजापालक राजा है ऐसी प्रसिद्धि है।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालाभरिणी छन्द है।

अस्यां च तत्कृतौ -

अवन्तिपुर्यां द्विजसार्थवाहो युवा दरिद्र: किल चारूदत्त: ।
गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना ।। 6 ।।

अन्वय – अवन्तिपुर्याम् द्विजसार्थवाह: दरिद्र: युवा चारूदत्त: किल यस्य गुणानुरक्ता वसन्तशोभा इव वसन्तसेना गणिका च (आसीत) **।। 6 ।।**

अर्थ – और उनकी इस रचना (मृच्छकटिक) में -

उज्जयिनी नगरी में (पहले) व्यापारी-ब्राह्मण

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपेन्द्रवज्रा छन्द है।

तयोरिदं सत्सुरतोत्सवाश्रयं नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम् ।

खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृप: ।। 7 ।। (परिक्रम्यावलोक्य च)

अये, शून्येयमस्मत्संगीतशाला: क्व तु गता: कुशीलवा: भविष्यन्ति) । (विचिन्त्य) आं, ज्ञातम् ।

अन्वय- इदम् तयो: सत्सुरतोत्सवाश्रयम् (अस्ति) शूद्रको नृप: (अत्र) नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम् खलस्वभावं तथा भवितव्यताम् (एतत्) सर्वम् चकार किल **।। 7 ।।**

अर्थ– (इस मृच्छकटिक नामक प्रकरण में) राजा शूद्रक ने उन दोनों (चारूदत्त और वसन्तसेना) के उत्तम विहार लीला पर आश्रित नीति के आचरण, दुर्जनें के चरित्र, तथा होनहार (भाग्य) इन सभी का वर्णन किया है **।। 7 ।।**

(घूमकर और चारो ओर देखकर) अरे, हमारी सगीतशाला तो खाली है , नट और अन्य अभिनयकर्ता कहाँ गये होगें । (विचारकर) अच्छा समझ गया ।

टिप्पणी – इस श्लोक में समासोक्ति अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है ।

शून्यमपुत्रस्य गृहं चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम् ।
मूर्खस्य दिश: शून्या: सर्व शून्यं दरिद्रस्य ।। 8 ।।

अन्वय – अपुत्रस्य गृहम् शून्यं यस्य सन्मित्रम् न अस्ति (तस्य गृहम्) चिरशून्यम् (अस्ति) मूर्खस्य दिशा: शून्य: (अस्ति) दरिद्रस्य सर्वम् शून्यम् (भवति) **।। 8 ।।**

अर्थ – पुत्रहीन व्यक्ति का घर सूना है ,जिस व्यक्ति के सच्चे मित्र नहीं है उसका भी घर सदा से सूना है , मूर्ख के लिए सभी दिशाएं सूनी है और निर्धन के लिए सब कुछ सूना है ।

टिप्पणी – इस श्लोंक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं आर्या छन्द है ।

चारूदत्त:- (ऊर्ध्वमवलोक्य सनिर्वेदं नि:श्वस्य च)

यासां बलि: सपदि मद् गृहदेहलीनां
हंसैश्च सारसगणेश्च विलुप्तपूर्व: ।
तास्वैव संप्रति विरूढतृणांक रासु
बीजाअञ्जलि: पतति कीटमुखावलीढ: ।। 9 ।।

(इति मन्दं मन्दं परिक्रमोपविशति)

अन्वय – यासाम् मद् गृहदेहलीनां बलि: सपदि हंसै: च सारसगणै: विलुप्तपूर्व: संप्रति विरूढतृणांक रासु एष कीटमुखावलीढ: बीजाअञ्जलि: पतति **।। 9 ।।**

अर्थ – मेरे घर की जिन देहलियों पर रखे गये पूजा के अक्षत हंसो और सारसों के द्वारा समाप्त करदिये जाते थे, आज (निर्धनता की स्थिति में) (धन के अभाव में सफाई आदि न होने से) उगे हुए तृणांकुरों से युक्त उन्ही देहलियों पर कीड़ों के मुख द्वारा खाये हुए बीजों की अंजलि (अर्थात् चावल आदि) गिरती है । (ऐसा कहकर धीरे-धीरे घूम कर बैठ जाता है)

टिप्पणी – इस श्लोक में पर्याय अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है ।

(चारूदत्तो गृहीत्वा सचिन्त: स्थित:)

विदूषक: - भो: ! किमिदं चिन्त्यते ?

विदूषक:- अरे ! अरे क्या सोच रहे हो ?

(चारूदत्त ग्रहण करके चिन्तित हो जाता है)

चारूदत्त:- वयस्य

सुखं हि दु:खान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम् ।

सुखात्तु वो याति नरो दरिद्रतां धृत: शरीरेण मृत: स: जीवति ।। 10 ।।

अन्वय – घनान्धकारेषु दीपदर्शनम् इव दु:खानि अनुभूय सुखम् हि शोभते य: नर: सुखात्तु दरिद्रतां याति स: शरीरेण: धृत: अपि मृत: (इव) जीवति **।। 10 ।।**

अर्थ – चारूदत्त: - मित्र ! गहन अन्धकार में दीपक के प्रकाश की भाँति दु:खों का अनुभव करने के पश्चात् सुख शोभित होता है अर्थात् अच्छा लगता है । किन्तु जो मनुष्य सुख भोग करके दरिद्रता (निर्धनता) को प्राप्त होता है वह शरीर के रहते हुए भी मृत्यु के समान जीवन व्यतीत करता है (अर्थात जीवित होते हुए भी मरे हुए के समान होता है) ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा, अप्रस्तुत प्रशंसा तथा विरोधाभास अलंकार एवं वंशस्थ छन्द है ।

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों का अति संक्षेप में उत्तर दीजिये -

1-मृच्छकटिकम् के रचयिता कौन है ।

2- मृच्छकटिकम् के आरम्भ में किसका वर्णन है ।

3-शूद्रक किस शास्त्र में प्रवीण थे ।

4-चारूदत्त कौन था ।

5.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 11 से 20 तक(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

विदूषक:- भो: वयस्य ! मरणादारिद्र्याद्वा क्वतस्ते रोचते ?

चारूदत्त: - वयस्य !

दारिद्र्यान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्र्यम् ।

अल्पक्लेशं मरणं दारिद्र्यमनन्तकं दु:खम् ।। 11 ।।

अन्वय – दारिद्र्यात् मरणात् वा मम मरणं रोचते, मरणं अल्पक्लेशं (अस्ति) दारिद्र्यम् अनन्तकम् दु:खम् (अस्ति) **।। 11 ।।**

विदूषक- हे मित्र ! मृत्यु और दरिद्रता में से तुम्हे क्या अच्छा लगता है ?

अर्थ- चारूदत्त- मित्र ! दरिद्रता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है दरिद्रता नही । मृत्यु कम कष्टों वाली होती है किन्तु दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु:ख है । अर्थात् दरिद्रता में जीवन पर्यन्त दु:ख भोगना पड़ता हे ।

टिप्पणी – इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार एवं आर्या छन्द है ।

विदूषक - भो: वयस्य ! अलं संतप्तेन प्रणयिजनसंक्रामितविभवस्य सुरजनोपीतशेषस्य प्रतिपचन्द्र:

येव दरिद्रयोऽपि तेऽधिकतरं रमणीय: ।

विदूषक:- हे मित्र ! दु:ख करना व्यर्थ है प्रेमीजनों को सम्पत्ति दे डालने वाले आपकी निर्धनता भी देवों के द्वारा पीने से बचे हुए प्रतिपदा तिथि के चन्द्रमा की (क्षीणता की) भाँति अत्यधिक अच्छी लगती है ।

चारूदत्त:- वयस्य ! न ममार्थान्प्रति दैन्यम् । पश्य –

एत्ततु मां दहति यद् गृहमस्मदीयं
क्षीणार्थंपि अतिथय: परिवर्जयन्ति ।
संशुष्कसान्द्रमदलेखमिव भ्रमन्त:
कालात्यये मधुकरा: करिण: कपोलम् ।। 12 ।।

अन्वय- भ्रमन्त: मधुकर:कालात्यये संशुष्कसान्द्रमदलेखम् करिण: कपोलम् इव अतिथय: क्षीणार्थम् अपि (गृहम्) परिवर्जयन्ति एत्ततु मां दहति ।। 12 ।।

चारूदत्त – मित्र ! धन नष्ट हो जाने के कारण से मुझे दु:ख नही है । देखो - मुझे यह बात व्यथित कर रही है कि हमारे घर को धन से रहित समझ कर अतिथि लोग इसका उसी प्रकार से परित्याग करते है जिस प्रकार (मद बहने के) समय के बीत जाने पर मँडराने वाले वाले भौंरे सूखी हुई गाढ़ी मद की धारा वाले हाथी के गण्डस्थल (कपोल) को त्याग देते हैं ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है ।

विदूषक:- भो: वयस्य ! एते खलु दास्यां पुत्रा: अर्थकल्पवतां वरदाभीत: इव गोपालदारका: अरण्ये यत्र यत्र न खाद्यन्ते तत्र तत्र गच्छन्ति ।

विदूषक- हे मित्र ! दासी के पुत्र, कलेवा (प्रात:कालीन जलपान) की भाँति (तुच्छ) ये धन वन मे बर्रे से डरे हुए ,गायों के चरवाहो की भाँति वहाँ वहाँ जाते हैं जहाँ खायें नहीं जाते ।

चारूदत्त:-

वयस्य !

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता:
भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति ।
एत्ततु मां दहति नष्टधनाश्रयस्य
यत्सौहृदादपि जना: शिथिलीभवन्ति ।। 13 ।।

अन्वय – सत्यम् मे चिन्ता: विभवनाशकृता: न अस्ति हि धनानि भाग्यक्रमेण भवन्ति (तथा) यान्ति तु एतत् माम् दहति यत् जना: नष्ट: धनाश्रयस्य सौहृदात् अपि शिथिलीभवन्ति **।। 13 ।।**

अर्थ - चारूदत्त – मित्र ! वस्तुत: मुझे धन के नष्ट हो जाने की चिन्ता नहीं है, क्योंकि भाग्य के अनुसार धन प्राप्त होता है और चला जाता है किन्तु यह बात मुझे जलाती है कि जिसका धनरूपी आश्रय नष्ट हो जाता है उसकी मित्रता से भी लोग शिथिल हो जाते हैं अर्थात् धनविहीन व्यक्ति के मित्र भी उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं ।

टिप्पणी - इस श्लोक में संकर अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है ।

अपि च -

दारिद्रयाद्ध्रियमेति ह्रीपरिगत: प्रभ्रश्यते तेजसो
निस्तेजा: परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते ।
निर्विण्ण: शुचमेति शोकपिहितो बुद्धया परित्यज्यते
निर्बुद्धि: क्षयमेत्यहो निर्धनतां सर्वापदामास्पदम् ।। 14 ।।

अन्वय – (मनुष्य:) दारिद्रयात् ह्रियम् एति ह्रीपरिगत: तेजस: प्रभ्रश्यते,निस्तेजा: परिभूयते परिभवात् निर्वेदम् आपद्यते, निर्विण्ण: शुचम् एति शोकपिहित: बुद्धया परित्यज्यते निर्बुद्धि: क्षयम् एति अहो, निर्धनता सर्वापदाम् आस्पदम् ।। **14** ।।

अर्थ – और भी (मनुष्य) दरिद्रता से लज्जा को प्राप्त होता है, लज्जित व्यक्ति तेजरहित हो जाता है, निस्तेज तिरस्कृत हो जाता है, तिरस्कार से ग्लानि को प्राप्त होता है, ग्लानियुक्त शोक संतप्त होता है, शोकाकुल व्यक्ति बुद्धि (विवेक) के द्वारा त्याग दिया जाता है, अर्थात् शोकाकुल व्यक्ति विवेक को खो बैठता है और निर्बुद्धि नाश को प्राप्त होता है – अहो ! दरिद्रता समस्त आपत्तियों का जड़ है।

टिप्पणी – इस श्लोक में कारणमाला अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विदूषक:- भो वयस्य ! तमेवार्थकल्पवतं स्मृत्वालं संतापितेन।

विदूषक:- हे मित्र ! कलेवा(प्रात:कालीन जलपान) रूप उसी धन को याद कर दु:ख करना व्यर्थ है।

चारूदत्त:- वयस्य ! दारिद्रयं हि पुरूषस्य -

निवासश्चिन्ताया: परपरिभवो वैरमपरं
जुगुप्सा मित्राणां स्वजनजनविद्वेषकरणम् ।
वनं गन्तुं बुद्धिर्भवति च कलत्रात्परिभवो
हृदिस्थ शोकाग्निर्न च दहति संतापयति च ।। 15 ।।

तद्वयस्य ! कृतो मया गृहदेवताभ्यो बलि:। गच्छ, त्वमपि चतुष्पदे मातृभ्यो बलिमुपहर।

अन्वय – हि दारिद्रयं पुरूषस्य चिन्ताया: निवास: परपरिभव: अपरम् वैरम् मित्राणाम् जुगुप्सा स्वजनजनविद्वेषकरणम् च कलत्रात् परिभव: (भवति अत:) वनम् गन्तुम् बुद्धि: भवति च हृदिस्थ शोकाग्नि: न दहति सन्तापयति च ।। **15** ।।

अर्थ - चारूदत्त – मित्र ! निर्धनता ही पुरूषों की चिन्ता का घर है, दूसरों के द्वारा किये जाने वाले अनादर का कारण है, दूसरी शत्रुता है, मित्रों की घृणा तथा अपने भाई बन्धुओं एवं अन्य लोगों के द्वेष का कारण है, पत्नी के द्वारा भी उसका तिरस्कार होता है। अत: (दरिद्र व्यक्ति की) वन में चले जाने की इच्छा होती है (अधिक क्या कहें) हृदय में स्थित शोकाग्नि एक बार ही जला नहीं डालती किन्तु सन्तप्त करती है (अर्थात् धीरे धीरे जला जला कर मारती है)।।

तो मित्र ! मैंने गृह देवताओं की बलि पूजा दे दी है। जाओ तुम भी चौराहे पर मातृ-देवियों को बलि(पूजा) चढ़ा आओ। **टिप्पणी** – इस श्लोक में संकर अलंकार एवं शिखरिणी छन्द है।

विदूषक: - न गमिष्यामि।

विदूषक: - मैं नहीं जाऊँगा।

चारूदत्त:- किमर्थम् ?

चारूदत्त:- किस लिए ?

विदूषक: - यत एवं पूज्यमानां अपि देवता न ते प्रसीदन्ति तत्कोगुणो देवेष्वर्चितेषु ?

विदूषक:- इस प्रकार विधिवत् पूजा करने पर भी देवता तुम्हारे ऊपर प्रसन्न नहीं होते तो उनकी पूजा करने से क्या लाभ अर्थात् उनमें ऐसा क्या गुण है ?

चारूदत्त:- वयस्य ! मा मैवम्, गृहस्थस्य नित्योऽयं विधि: ।

तपसा मनसा वाग्भि: पूजितां बलिकर्मभि: ।
तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवता: किं विचारितै: ।। 16 ।।

तद् गच्छ , मातृभ्यो: बलिमुपहर ।

अन्वय - तपसा मनसा वाग्भि:, बलिकर्मभि:, पूजिता:, देवता:, शमिनां नित्यं तुष्यन्ति विचारितै: किम् ।। **16** ।।

अर्थ – चारूदत्त – मित्र ! ऐसा मत कहो । गृहस्थाश्रम में रहने वाले व्यक्तियों का यह नित्य कर्म है । तप, मन, वचनों एवं बलिकर्मो के द्वारा पूजित देवता शान्त चित्त वाले व्यक्तियों से हमेशा सन्तुष्ट रहते हैं । इसमें तर्क वितर्क करने से क्या लाभ ? तो जाओ मातृ-देवियों को बलि समर्पित कर दो ।

टिप्पणी – इस श्लोक में अनुष्टुप छन्द है ।

विदूषक:- भो: ! न गमिष्यामि ,अन्य: कोऽपि प्रयुज्यताम् । मम पुनर्ब्राह्मणस्य सर्वमेव विपरीतं परिणमति आदर्शगतेव छाया वामतो दक्षिणा दक्षिणतो वामा: । अन्यश्चैतस्यां प्रदोषवेलायामिह राजमार्गे गणिका विटाश्चेष्टा राजवल्लभाश्च पुरूषा: संचरन्ति । तस्मान्यमण्डूकलुब्धस्य कालसर्पस्य मूषिक इवाभिमुखापतितो वध्य इदानीं भविष्यामि ।त्वमिह उपविष्ट: किं करिष्यसि ?

विदूषक:- जी, मैं नहीं जाऊँगा किसी दूसरे व्यक्ति को भेज दो । जिस प्रकार दर्पण में पड़ने वाले प्रतिबिम्ब बाँयें से दाहिनी ओर तथा दाँयें से बाँई ओर होती है ,उसी प्रकार मुझ बेचारे ब्राह्मण का सब कुछ विपरीत ही फल देता है । और दूसरा कारण यह है कि इस सन्ध्या काल में यहाँ सड़क पर वेश्याऐं,विट, चेट और राजा के स्नेहीजन (राजपाल) घूम रहे हैं । तो मैं, मेढ़क के लोभी काले सर्प के सामने आये हुए चूहे के समान इस समय वध्य हो जाऊँगा । (अर्थात् मार दिया जाऊँगा) तुम यहाँ बैठे हुए क्या करोगे ।

चारूदत्त:- भवतु तिष्ठ, तावत् अहं समाधि निर्वर्तयामि ।

चारूदत्त:- अच्छा , तब तक ठहरो । मैं समाधि समाप्त करता हूँ ।

(नेपथ्ये) (नेपथ्य में) तिष्ठ वसन्तसेने ! तिष्ठ ।(तत: प्रविशति विटशकारचेटैरनुगम्यमाना वसन्तसेना)

अर्थ- रूको वसन्तसेना ! रूको (इसके बाद विट, शकार तथा चेट के द्वारा पीछा की जाती हुई चसन्तसेना प्रवेश करती है)

विट:- वसन्तसेने ! तिष्ठ तिष्ठ,

किं त्वं भयेन परिवर्तितसौकुमार्या
नृत्यप्रयोगविशदौ चरणौ क्षिपन्ती ।

उद्विग्नचंचलकटाक्षविसृष्टदृष्टि

व्याधानुसारचकिता हरिणीव यासि ।। 17 ।।

अन्वय - भयेन परिवर्तितसौकुमार्या नृत्यप्रयोगविशदौ चरणौ क्षिपन्ती उद्विग्नचंचलकटाक्षविसृष्टदृष्टि त्वम् व्याधानुसार चकिता हरिणी इव किम् यासि ? **।। 17 ।।**

अर्थ- विट - वसन्तसेने ! ठहर, ठहर, भय के कारण, सुकुमार, मन्द गति को त्याग देने वाली, नृत्यकला में निपुण चरणों को शीघ्रता से आगे बढ़ाती हुई , व्याकुल एवं चंचल कटाक्षों से दृष्टिपात करती हुई तुम शिकारी के द्वारा पीछा करने से चकित हुयी हरिणी के समान क्यों जा रही हो

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

शकार:- तिष्ठ,वसन्तसैनिके ! तिष्ठ,

किं यासि धावसि पलायसे प्रस्खलन्ती

वासु ! प्रसीद न मरिष्यसि तिष्ठ तावत् ।

कामेन दह्यते खलु मे हृदयम् तपस्वि

अंगारराशिपतितमिव मांसखण्डम् ।। 18 ।।

अन्वय – (हे वसन्तसेने ! प्रस्खलन्ती किम्, यासि, धावसि, पलायसे हे वासु ! प्रसीद न मरिष्यसि तावत् तिष्ठ, अंगारराशिपतितम् मांसखण्डमिव तपस्वि मे हृदयम् कामेन खलु दह्यते।

शकार- वसन्तसेने रूको,रूको। लडखड़ाती हुई क्यों जा रही हो, दौड़ रही हो, भाग रही हो। बाले ! प्रसन्न होओ, मरोगी नहीं तनिक ठहरो, अंगारों के समूह पर गिरे हुए मांस के टुकड़े की भाँति मेरा बेचारा हृदय कामाग्नि के द्वारा जलाया जा रहा है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

चेट:- आर्ये तिष्ठ,तिष्ठ,

उत्त्रासिता गच्छसयन्तिकान्मम संपूर्णपक्षेव ग्रीष्ममयूरी।

अववल्गति स्वामिभट्टारको मम वने गत: कुक्कुटशावक इव ।। 19 ।।

अन्वय- (त्वं) मम् अन्तिकात् सम्पूर्ण पक्षा ग्रीष्ममयूरी इव उत्त्रासिता गच्छसि मम स्वामिभट्टारक: वने गत: कुक्कटशावक: इव अववल्गति।

अर्थ- चेट – आर्ये ! ठहरो, ठहरो, (तुम) मेरे पास से भयभीत हुई सम्पूर्ण पंखो वाली ग्रीष्म काल की मयूरी के समान जा रही हो मेरा स्वामी (शकार) वन में गये हुए मुर्गे के बच्चे के समान (तुम्हारे पीछे-पीछे) उतावली के साथ आ रहा है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

विट: - वसन्तसेने ! तिष्ठ, तिष्ठ ,

यासि बालकदलीव विकम्पमाना

रक्तांशुकं पवनलोलदशं वहन्ती।

रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलमुत्सृजन्ती

टंकेर्मन:शिलगुहेव विदार्यमाणा ।। 20 ।।

अन्वय – हे वसन्तसेने ! बालकदली इव विकम्पमाना पवनलोलदशम् रक्तांशुकम् वहन्ती टंकै: विदार्यमाणा मन:शिलगुहा इव रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलम् उत्सृजन्ती किम् यासि ? **।। 20 ।।**

अर्थ - वसन्तसेने रूको,रूको।

नवीन केले के वृक्ष के समान (भय से) काँपती हुई, वायु के द्वारा चंचल अंचल वाले लाल रेशमी वस्त्र को धारण करती हुई, टाँकी द्वारा काटी जाती हुई मन:शिला की कन्दरा(से निकलने वाली चिंगारियों) के समान (केशों में गुँथे हुए) रक्त कमलों की कलियों को (वेग से दौड़ने के कारण) बिखेरती हुई क्यों जा रही हो ?

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा तथा उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

निम्नलिखित में सत्य असत्य बताइये।

1. धनविहीन व्यक्ति के मित्र भी उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं।
2. दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु:ख है।
3. वसन्तसेना का पीछा चारूदत्त कर रहा था।
4. निर्धन व्यक्ति का पत्नी के द्वारा भी तिरस्कार होता है।
5. विदूषक देवताओं की पूजा करना चाहता है।

5.5 सारांश –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि राजा शूद्रक कौन थे और उनका व्यक्तित्व कैसा था। उन्होने मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण की रचना की। इस प्रकरण का नायक चारूदत्त एक गरीब ब्राह्मण है जो दरिद्रता से उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट,शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई भयभीत वसन्तसेना के बारे में बता सकेगें। निर्धनता सबसे बड़ा अभिशाप है दरिद्र व्यक्ति के जीवन में सबकुछ सूना होता है, जीवन के इस वास्तविक सत्य से परिचित हो पायेगें।

5.6 शब्दावली

शब्द	अर्थ
विद्युल्लेखा	बिजली की रेखा
नीलकण्ठस्य	शिव की
द्विरदेन्द्र	गजराज
वेदविदाम्	वेद के जानने वालों में
अवन्तिपुर्याम्	उज्जयिनी नगरी में
गणिका	वेश्या
अपुत्रस्य	जिसके पुत्र न हो, पुत्रविहीन
विभवनाशकृता	धन के नाश से होने वाली
निर्विण्ण:	ग्लानियुक्त

निर्बुद्धि:	बुद्धिहीन
परिभव:	तिरस्कार
वाग्भि:	वचनों से
विकम्पमाना	काँपती हुई

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) राजा शूद्रक (2)राजा शूद्रक (3) हस्ति शास्त्र में (4)उज्जयिनी का ब्राह्मण

अभ्यास प्रश्न 2 – (1) सत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) असत्य

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

5.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

5.10निबन्धात्मक प्रश्न

1.मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक के 1 से 20 श्लोकों का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2.दरिद्र व्यक्ति के जीवन का वर्णन कीजिये।

इकाई 6 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 40 तक

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 30 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
6.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 31 से 40 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
6.5 सारांश
6.6 शब्दावली
6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
6.9 उपयोगी पुस्तकें
6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के एक से बीस श्लोकों का अध्ययन किया और यह जाना कि चारूदत्त उज्जयिनी में रहने वाला एक गरीब ब्राह्मण है जो अत्यन्त गुणवान एवं दयालु है। उस नगर की गणिका उस के गुणों के कारण उस पर अनुरक्त है। उस वसन्तसेना का पीछा शकार और विट के द्वारा किया जा रहा है।

प्रस्तुत इकाई में आप 21 से 40 श्लोकों का अध्ययन करेगें। इन श्लोकों में शकार और विट से भयभीत भागती हुई वसन्तसेना का विविध उपमाओं के द्वारा सुन्दर चित्रण किया गया है तथा भयाकुल स्त्री की मनोदशा का वर्णन है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि शकार अत्यन्त अभिमानी, दुराग्रही एवं पापी है वह स्त्री का सम्मान नहीं करता है , वह विट से कहता है कि वह बहुत बहादुर है क्योंकि वह सैकड़ों स्त्रियों को मार सकता है। तथा वसन्तसेना की मनोदशा के बारे में बता पायेंगे।

6.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोकों की व्याख्या का सकेंगे।
- गणिका के दस नामों से परिचित हो सकेंगे ।
- शकार के चरित्र की व्याख्या कर सकेंगे।
- विट के चरित्र को समझा पायेगें।
- तत्कालीन समाज में स्त्री की दशा का वर्णन कर सकेंगे।

6.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 30 तक

शकार:- तिष्ठ वसन्तसेने ! तिष्ठ -

मम मदनमनंगम् मन्मथं वर्धयन्ती
निशि च शयनके मम निद्रामाक्षिपन्ती।
प्रसरसि भयभीता प्रस्खलन्ती स्खलन्ती
मम वशमनुयाता रावणस्येव कुन्ती ॥ 21 ॥

अन्वय – मम मदनम्,अनंगम्,मन्मथम् वर्धयन्ती निशि शयनके च मम निद्राम् आक्षिपन्ती, त्वम् भयभीता प्रस्खलन्ती स्खलन्ती प्रसरसि (किन्तु) रावणस्य कुन्ती इव (त्वम्) मम वशम् अनुयाता ॥ 21 ॥

अर्थ – मेरे मदन, अनंग,, मन्मथ (काम) को बढ़ाती हुई और रात्रि में शय्या पर मेरी निद्रा को भंग करती हुई (तुम) भयभीत होकर बार-बार लड़खड़ाती हुई भाग रही हो। किन्तु तुम उसी प्रकार मेरे वश में आ गयी हो जिस प्रकार रावण के वश में कुन्ती (आ गयी थी)।

टिप्पणी – 'रावणस्येव कुन्ती' इस वाक्य में हतोपमा अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

विट: - वसन्तसेने !

किं त्वं पदैर्मम पदानि विशेषयन्ती
व्यालीव यासि पतगेन्द्रभयाभिभूत: ।
वेगादहं प्रविसृत: पवनं न रून्ध्यां
त्वन्निग्रहे तु वरगात्रि ! न मे प्रयत्न: ॥ 22 ॥

अन्वय – हे वसन्तसेने ! पतगेन्द्रभयाभिभूत: व्याली इव पदै: मम पदानि विशेषयन्ती त्वम् किम् यासि ? वेगात् प्रविसृत: अहम् पवनम् न रून्ध्यां ? हे वरगात्रि ! तु त्वन्निग्रहे मे प्रयत्न: न **॥ 22 ॥**

विट- पक्षीराज गरूड़ से भयभीत हुई नागिन के समान अपने पगों से मेरे पगों को अतिक्रान्त करती हुई तुम क्यों जा रही हो ? वेग से दौड़ता हुआ मैं क्या (अत्यन्त तीव्रगामी) वायु को भी नहीं रोक सकता ? अर्थात् अवश्य रोक सकता हूँ। किन्तु हे सुन्दरी ! मेरा प्रयत्न तुमको रोकने का नही है अर्थात् मैं जबरदस्ती तुमको रोकना नहीं चाहता।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

शकार – भाव, भाव -

एषा नाणकमोषिकामकशिका मत्स्याशिका लासिका
निर्नासा कुलनाशिका अवशिका कामस्य मंजूषिका।
एषा वेशवधू: सुवेशनिलया वेशांगना वेशिका
एतान्यस्या दश नामकानि मया कृतान्यद्यापि मां नैच्छति ॥ 23 ॥

अन्वय - एषा , नाणकमोषिकामकशिका मत्स्याशिका लासिका निर्नासा कुलनाशिका अवशिका कामस्य मंजूषिका एषा वेशवधू: सुवेशनिलया वेशांगना वेशिका एतानि अस्या: दश नामकानि मया कृतानि (किन्तु) अद्य अपि (इयम्) माम् न इच्छति **॥ 23 ॥**

शकार - भाव, भाव -उत्तम रत्न आदि चुराने वालों की कामाग्नि को शान्त करने वाली, मछली खाने वाली, नर्तकी, नासिकाहीन, अर्थात् अप्रतिष्ठित, कुल को नष्ट करने वाली, किसी के वश में न होने वाली, काम की पिटारी, वेश्यागामियों की स्त्री, सुन्दर वेश्यालय में निवास करने वाली, वेश्यालय की कामिनी वेश्या, इस प्रकार इसके ये दस नाम मैनें रखे हैं फिर भी यह मुझे नहीं चाहती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विट: - **प्रसरसि भयविक्लवा किमर्थं प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा।**
विटजननखघट्टितेव वीणा जलधरगर्जितभीतसारसीव ॥ 24 ॥

अन्वय- विटजननखघट्टितावीणाइव प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा (त्वम्) जलधरगर्जितभीतसारसी इव भयविक्लवा किमर्थं – प्रसरसि **॥ 24 ॥**

अर्थ – विट – विट जनों के नख से घृष्ट वीणा के समान,हिलने वाले कुण्डलों के बारम्बार स्पर्श से घृष्ट कपोलो वाली तुम बादलों के गर्जन से भयभीत सारसी की भाँति भयातुर होकर किस लिये भागी जा रही हो।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालोपमा अलंकार एवं पुष्पिताग्रा छन्द है।

शकार:-

झणझणमिति बहुभूषणशब्दमिश्रं किं द्रौपदीव पलायसे रामभीता ?
एष हरामि सहसेति यथा हनूमान्विश्वासोर्भगिनीमिव वा सुभद्राम् ।। 25 ।।

अन्वय – रामभीता द्रौपदी इव बहुभूषणशब्दमिश्रम् झणझणम् इति (कुर्वत:) किम् पलायसे यथा हनूमान् विश्वावसो: ताम् भगिनीम् सुभद्राम् इव एष: (अहम्) इति सहसा हरामि **।। 25 ।।**

अर्थ – शकार – राम से डरी हुयी द्रौपदी के समान, विविध आभूषणों के शब्द से मिश्रित झनझनाहट के साथ तुम क्यों भागी जा रही हो ? जिस प्रकार हनुमान ने विश्वावसु की उस (प्रसिद्ध) बहन सुभद्रा का अपहरण किया था, उसी प्रकार यह मैं भी बलपूर्वक तुम्हारा हरण करता हूँ।

टिप्पणी – इस श्लोक में वसन्ततिलका छन्द है।

चेट: - रमय च राजवल्लभं तत: खादिष्यसि मत्स्यमांसकम् ।
एताभ्यां मत्स्यमांसाभ्याम् श्यानो मृतकं न सेव्यते ।। 26 ।।

अन्वय – (हे वसन्तसेने) राजवल्लभम् रमय तत: मत्स्यमांसकम् च खादिष्यसि एताभ्यां मत्स्यमांसाभ्याम् श्यान: मृतकम् न सेव्यते **।। 26 ।।**

अर्थ – **चेट:-** हे वसन्तसेने ! राजा के अत्यन्त प्रिय (शकार) के साथ रमण करो, तब तुम मछली और माँस खाओगी। हम दोनों मछली और माँस के कारण (परितृप्त हुए शकार के) कुत्ते मृतक अर्थात् मरे हुए पशु-पक्षियों के माँस का सेवन नहीं करते हैं।

टिप्पणी – इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार तथा आर्या छन्द है।

विट: - भवति वसन्तसेने !

किं त्वं कटीतटनिवेशितमुद्वहन्ती
ताराविचित्ररूचिरं रशनाकलापम् ।
वक्त्रेण निर्मथितचूर्णमन:शिलेन
त्रस्ताद्भुतं नगरदैवतवत्प्रयासि ।। 27 ।।

अन्वय - त्वं कटीतटनिवेशितम् ताराविचित्ररूचिरं रशनाकलापम् उद्वहन्ती निर्मथितचूर्णमन:शिलेन वक्त्रेण (उपलक्षिता सती) नगरदैवतवत् त्रस्ताद्भुतं किम् प्रयासि **।। 27 ।।**

अर्थ – **विट** – मान्ये वसन्तसेने ! कटि प्रान्त में बँधी हुई मोतियों से अद्भुत अतएव मनोहर मेखला (करधनी) को धारण करती हुई, चूर्ण मनशिला को भी (अपने गुलाबी वर्ण से) तिरस्कृत करने वाले मुख से युक्त तुम नगर देवता की भाँति, भयविह्वलतापूर्वक क्यों भागी जा रही हो ?

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

शकार:- अस्माभिश्चण्डमभिसार्थमाणा वने श्रृगालीव कुक्कुरै: ।
पलायसे शीघ्रं त्वरितं सवेगं सवृन्तं मम हृदये हरन्ती **।। 28 ।।**

अन्वय – वने कुक्कुरै: श्रृगाली इव अस्माभि: चण्डम् अभिसार्थमाणा मम हृदयम् सवृन्तम् हरन्ती शीघ्रम् त्वरितम् सवेगम् पलायसे **।। 28 ।।**

अर्थ - शकार- जंगल में कुत्तों के द्वारा पीछा की जाती हुई श्रृगाली के समान हम लोगों के द्वारा तीव्र गति से पीछा की जाती हुई, मेरे हृदय को समूल हरण करती हुई तुम शीघ्र, तुरन्त और वेगपूर्वक भाग रही हो। **टिप्पणी** – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

वसन्तसेना – पल्लवक पल्लवक ! परभृतिके परभृतिके !

वसन्तसेना – पल्लवक पल्लवक ! परभृतिके परभृतिके !

शकार – (सभयम्) भाव भाव ! मनुष्य: मनुष्य: !

शकार – (भयपूर्वक) भाव ! मनुष्य मनुष्य !

विट:- न भेतव्यम् न भेतव्यम् !

विट:- डरो मत डरो मत !

वसन्तसेना – मालविके मालविके !

वसन्तसेना – मालविके मालविके !

विट:- (सहासम्) मूर्ख ! परिजनोंऽन्विष्यते।

विट:- (हँसीपूर्वक) मूर्ख ! भृत्य को खोज रही है।

शकार – भाव भाव !स्त्रियमन्वेषयति ?

शकार - भाव भाव ! क्या स्त्री को खोज रही है ?

विट:- अथ किम्।

विट – और क्या ?

शकार:- स्त्रीणां शतंमारयामि। शूरोऽहम्।

शकार – स्त्रियाँ तो सैकड़ों मार सकता हूँ। मैं बहादुर हूँ।

वसन्तसेना – (शून्यमवलोक्य) हा धिक् हा धिक् ! कथं परिजनोऽपि परिभ्रष्ट: । अत्र मयात्मा स्वयमेव रक्षितव्य: ।

वसन्तसेना – (सूना देखकर) हाय ! हाय ! क्या सेवक भी छूट गये। यहाँ मुझे स्वयं ही अपनी रक्षा करनी चाहिए।

विट:- अन्विष्यताम् अन्विष्यताम् !

विट:- खोजो खोजो।

शकार:- वसन्तसेनिके ! विलप विलप ! परभृतिका वा पल्लवकं वा सर्व च वसन्तमासम् मयाभिसार्यमाणां त्वां क: परित्रास्यते ?

शकार – वसन्तसेने ! विलाप कर विलाप कर, परभृतिका (कोयल) के लिए,पल्लवक (नूतन पत्ता) के लिए अथवा सम्पूर्ण वसन्त मास के लिए। मेरे द्वारा पीछा की जाती हुई तुमको कौन बचायेगा ?

किं भीमसेनो जमदग्निपुत्र: कुन्तीसुतो वा दशकन्धरो वा।
एषोऽहं गृहीत्वा केशहस्ते दु:शासनस्यानुकृतिं करोमि ।। 29 ।।

ननु प्रेक्षस्व, ननु प्रेक्षस्व -

असि: सुतीक्ष्णो वलितं च मस्तकं कल्पये शीर्षमुत मारयामि वा।

अलं तवैतेन पलायितेन मुमुर्षयों भवति न स खलु जीवति ॥ 30 ॥

अन्वय – किम् जमदग्निपुत्रा भीमसेन वा, कुन्तीसुत: वा दशकन्धर: (त्वाम् रक्षिष्यति) एष: अहम् केशहस्ते (त्वाम्) गृहीत्वा दु:शासनस्य अनुकृतिम् करोमि **॥ 29 ॥**

अन्वय – (मम) असि: सुतीक्ष्ण: (अस्ति) तव मस्तकम् च वलितम् (वर्तते) (अहम् तव) मस्तकम् कल्पये उत मारयामि वा तव एतेन पलायितेन अलम् य: मुमुर्षु: भवति स3 खलु न जीवति **॥ 30 ॥**

अर्थ – क्या जमदग्नि का पुत्र भीमसेन(अथवा कुन्ती का पुत्र अथवा रावण (तुम्हारी रक्षा करेगा)?यह मैं तुम्हारे केशपाश को पकड़कर दु:शासन का अनुकरण करता हूँ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

अर्थ - देखो, देखो – (मेरी) तलवार बहुत तेज है और तुम्हारा मस्तक बड़ा सुन्दर है, मैं तुम्हारा शिर काट डालूँगा अथवा मार डालूँगा। तुम्हारा इस प्रकार भागना व्यर्थ है क्योंकि जो मरने वाला होता है वह निश्चित रूप से जीवित नहीं रहता।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1- सत्य असत्य बताइए -

1. वसन्तसेना का पीछा चारूदत्त कर रहा था।
2. जो मरने वाला होता है वह निश्चित रूप से जीवित नहीं रहता यह कथन शकार का है।
3. वसन्तसेना शकार की पत्नी है।
4. वेश्याओं के दस नाम शकार ने रखे थे।
5. वसन्तसेना शकार और विट से भयभीत होकर भाग रही थी।

6.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 31 से 40 तक(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

वसन्तसेना – आर्य ! अबला खल्वहम्।

वसन्तसेना – आर्य ! मैं तो अबला हूँ।

विट:- अत एव ब्रियते।

विट- इसीलिए जीवित हो।

शकार:- अतएव न मार्यसे।

शकार- इसीलिए तुम नही मारी जा रही हो।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) कथं नु नमोऽप्यस्य भयमुत्पादयति।भवतु एव तावत् (प्रकाशम्) आर्य ! अस्मात्किमप्यलंकरणं तर्क्यते।

वसन्तसेना – (अपने आप) इनकी नम्रता भी कैसा भय उत्पन्न करती है। अच्छा तो ऐसा करूँ। (प्रकट रूप में) आर्य ! आप मुझसे कोई आभूषण लेना चाहते हैं।

विट:-शान्तं पापं शान्तं पापं। भवति वसन्तसेने ! न पश्यमोपनर्हत्युद्यानलता तत्कुतमलंकरणै:।

विट: ऐसा मत कहो। श्रीमति वसन्तसेने ! उद्यान की लता पुष्प तोड़ने के योग्य नही होती। इसलिए

आभूषणों को रहने दो।

वसन्तसेना – तत्किं खल्विदानीम्।

वसन्तसेना – तो इस समय आप मुझसे क्या चाहते हैं ?

शकार – अहं वरपुरूषमनुष्यो वासुदेव: कामयितव्य:।

शकार- मुझ पुरूषश्रेष्ठ मनुष्य वासुदेव की (तुम्हें) कामना करनी चाहिए।

वसन्तसेना – (सक्रोधम्) शान्तं पापं ! अवेहि अनर्हं मन्त्रयसि।

वसन्तसेना – (क्रोधपूर्वक) शान्त शान्त ! दूर हटो अशिष्ट बाते कहते हो।

विट:- (स्वगतम्) अये, कथं शान्तमित्यभिहिते श्रान्त इत्यवगच्छति मूर्ख: ? (प्रकाशम्) वसन्तसेने ! वेशवासविरूद्धमभिहितं भवत्या। पश्य -

तरूणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासो
विगणय गणिका त्वमंमार्गजाता लतेव।
वहसि हि धनहार्यं पुण्यभूतं शरीरं
सममुपचरं भद्रे ! सुप्रियं वाप्रियं वा ।। 31 ।।

अन्वय- वेशवास: तरूणजनसहाय: चिन्त्यताम् त्वं मार्गजाता लता इव गणिका (इति), विगणय हि पुण्यभूतं धनहार्यं शरीरम् वहसि (अत:) हे भद्रे ! सुप्रियम् वा अप्रियम् वा समम् उपचर **।। 31 ।।**

अर्थ – विट:- (अपने आप) अरे ! यह मूर्ख किस प्रकार से 'शान्त' ऐसा कहे जाने पर 'श्रान्त' (थका हुआ) समझ रहा है। (प्रकट रूप से) वसन्तसेने ! आपने यह बात वेश्यालय के जीवन के विरूद्ध कही है (अर्थात् आपने यह बात वेश्याजन के विरूद्ध कही है)। देखो - वेश्यालय के जीवन (वास) को युवकों की सहायता पर आश्रित समझों। सोचो, तुम मार्ग में उत्पन्न हुई लता के समान वेश्या हो। तुम बाजार में बेंची जाने वाली वस्तु के समान, धन के द्वारा ग्रहण करने योग्य शरीर धरण करती हो। अत: हे भद्र स्त्री ! प्रिय और अप्रिय दोनों के साथ समान व्यवहार करो। इस श्लोक में उपमा एवं काव्यलिंग अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

अपि च - **वाप्यां स्नाति विचक्षणो द्विजवरो मूर्खोऽपि वर्णाधम:**
फुल्लां नाम्यति वायसोऽपि हि लतां यानामिता बर्हिणा।
ब्रह्मक्षत्रविशंस्तरन्ति च ययां नावां तयैवेतरे
त्वं वापीव लतैव नौरिव जनं वेश्यासि सर्वं भज ।। 32 ।।

अन्वय – विचक्षण: द्विजवर: वर्णाधम: मूर्ख: अपि वाप्याम् स्नाति या बर्हिणा नामिता फुल्लाम् (ताम्) लताम् वायस: अपि नाम्यति हि यया नावां ब्रह्मक्षत्रविंश: तरन्ति तया एव इतरे च त्वम् वेश्या असि (अत:) वापी इव लता इव नौ: इव सर्वम् जनम् भज **।। 32 ।।**

अर्थ –और भी विद्वान ब्राह्मण तथा नीच जाति वाला मूर्ख भी एक बावली में स्नान करता है। जो लता पहले मयूर के द्वारा बैठकर झुकायी गयी थी उसी फूली हुई लता को (उस पर बैठकर) कौवा भी

झुका देता है।जिस नाव से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य पार उतरते हैं उसी से दूसरे लोग भी(वर्णाधम भी)।तुम वेश्या हो अत: बावली, लता और नाव की भाँति सभी लोगो को एक समान स्वीकार करो।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालोपमा एवं काव्यलिंग अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

वसन्तसेना – गुण: खल्वनुरागस्य कारणम्, न पुनर्बलात्कार: ।

वसन्तसेना – गुण ही अनुराग का कारण होता है, न कि बलात्कार।

शकार – भाव भाव ! एषा गर्भदासी कामदेवायतनोद्यामात्प्रभृति यस्य दरिद्र चारूदत्तस्यानुरक्ता न मां कामयते। वामतस्तस्य गृहम्। यथा तव मम च हस्तान्नैषा परिभ्रश्यति तथा करोतु भाव: ।

शकार – भाव ! भाव! जन्म से ही दासी यह वेश्या कामदेवायतन् उद्यान में जाने से लेकर उस दरिद्र चारूदत्त से प्रेम करने लग गयी है और मुझे नही चाहती है। बाँयी ओर उसका घर है। ऐसा उपाय कीजिए कि जिससे यह हमारे और तुम्हारे हाथ से निकल न जाय।

विट: - (स्वगतम्) यदेव परिहर्तव्यं तदेवोदाहरति मूर्ख: । कथं वसन्तसेनार्यचारूदत्तमनुरक्ता ?सुष्ठु खल्विदमुच्यते – 'रत्नं रत्नेन संगच्छते' इति। तद् गच्छत किमनेन मूर्खेण। (प्रकाशम्) काणेलीमात: ! वामतस्तस्य सार्थवाहस्य गृहम् ?

विट:- (अपने आप) यह मूर्ख वही बात कह रहा है जो नही कहनी चाहिए। क्या वसन्तसेना आर्य चारूदत्त से प्रेम करती है ? वस्तुत: यह ठीक ही कहा गया है कि – 'रत्न रत्न के ही साथ संयुक्त होता है अर्थात् योग्य का मेल योग्य से ही होता है'।तो जाने दो इस मूर्ख से क्या लाभ ? (प्रकट रूप मे) काणेलीपुत्र ! उस सार्थवाह चारूदत्त का घर बाँयी ओर है ?

शकार – अथ किम् ? वामतस्तस्य गृहम् ?

शकार – और क्या ? उसका घर बाँयी ओर है ?

वसन्तसेना - (स्वगतम्) आश्चर्यम् वामतस्तस्य गृहमिति यत्सतयम् अपराध्यतापि दुर्जनेनोपकृतम् , येन प्रियसंगम: प्रापित: ।

वसन्तसेना – (अपने आप) आश्चर्य ! यदि सचमुच बाँयी ओर उसका घर है तो अपराध करते हुए भी इस दुष्ट ने उपकार किया है, जिसने प्रिय के साथ समागम तो प्राप्त कराया है।

शकार - – भाव ! भाव ! बलीयसि खल्वन्धकारे माषराशिप्रविष्टेन मसीगुटिकां दृश्यमानैव प्रनष्टा वसन्तसेना।

शकार - भाव ! भाव ! इस गहन अन्धकार में उड़द की ढेर में गिरी हुई स्याही की टिकिया के समान देखते ही देखते वसन्तसेना अदृश्य हो गयी।

विट: - अहो, बलवानन्धकार: । तथा हि -

आलोकविशाला मे सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना।
उन्मीलितापि दृष्टिर्निमीलितेवान्धकारेण ।। 33 ।। अपि च –

लिम्पतीव तमोऽगांनि वर्षतीवाञ्जनं नभ: ।असत्यपुरूषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता ।। 34 ।।

अन्वय - आलोकविशाला मे दृष्टि: सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना (जाता) उन्मीलितापि (दृष्टि) अन्धकारेण निमीलिता इव (भवति) **।। 33 ।।**

अन्वय – तम: अंगानि लिम्पति इव नभ: अंजनम् वर्षति इव दृष्टि: असत्पुरूषसेवा इव विफलताम् गता **।। 34 ।।**

विट – अहो ! प्रबल अन्धकार है, क्योंकि - प्रकाश में दूर तक देखने वाली मेरी दृष्टि एकाएक अन्धकार में प्रवेश करने से अवरूद्ध हो गयी है। खुली हुई भी मेरी आँखें अन्धकार के द्वारा बन्द सी कर दी गयी है।

और भी - अन्धकार अंगों को लिप्त सा कर रहा है , आकाश मानों काजल की वृष्टि कर रहा है। मेरी दृष्टि दुष्ट मनुष्यों की सेवा की भाँति निष्फल हो गयी है।

टिप्पणी –श्लोक संख्या 33 में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं आर्या छन्द है। श्लोक संख्या 34 में यमक और अनुप्रास तथा उपमा एवं उत्प्रेक्षा की संसृष्टि है तथा अनुष्टुप छन्द है।

शकार – भाव ! भाव ! अन्विषयामि वसन्तसेनिकाम्।

शकार – भाव ! भाव ! वसन्तसेना को खोज रहा हूँ।

विट: - काणेलीमात: ! अस्ति किंचिचिह्नं यदुपलक्षयसि।

विट:- काणेली के पुत्र ! कोई चिह्न है, जिसके सहारे तुम वसन्तसेना को ढूँढ रहे हो ?

शकार – भाव भाव !किमिव ?

शकार – भाव भाव ! कैसा चिह्न ?

विट:- भूषणशब्दं सौरभ्यानुविद्धं माल्यगन्धं वा।

विट:- आभूषणों की खनखनाहट अथवा सुंगन्धित माला की गन्ध ?

शकार:- श्रृणोमि माल्यगन्धं अन्धकारपूरितया पुनर्नासिकाया न सुव्यक्तं पश्यामि भूषणशब्दम्।

शकार - माला की गन्ध तो सुन रहा हूँ किनतु नाक के अन्धकार से पूर्ण हो जाने के कारण आभूषणों के शब्द को स्पष्ट नहीं देख रहा हूँ।

विट:- (जनान्तिकम्) वसन्तसेने !

कामं प्रदोषतिमिरेण दृश्यसे त्वं
सौदामिनीव जलदोदरसंधिलीना।
त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं
गन्धश्च भीरू ! मुखराणि च नूपुराणि ।।35।।

अन्वय- हे वसन्तसेने ! जलदोदरसंधिलीना सौदामिनी इव कामम् त्वम् प्रदोषतिमिरेण न दृश्यसे तु हे भीरू ! माल्यसमुद्भव: अयम् गन्ध: त्वाम् सूचयिष्यति च मुखराणि नूपुराणि च (सूचयिष्यन्ति) ।। 35।।

विट: - (जनान्तिक) हे वसन्तसेने ! बादलो के भीतर सन्धि-स्थल में छिपी हुई बिजली के समान यद्यपि तुम सांयकालीन अन्धकार के कारण नहीं दिखलायी पड़ रही हो,परन्तु हे भीरू ! माला से निकली हुई सुगन्ध तथा शब्द करने वाले नुपुर तुम्हें सूचित कर देगें अर्थात् तुम्हारा पता बता देगें।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

जनान्तिक – जब एक पात्र अपने हाथ की तीन अंगुलियाँ उठाकर तथा अनामिका अंगुली को टेढ़ी

किये हुए अन्य लोगो से छुपाकर किसी एक पात्र से कुछ कहता है, तो वह जनान्तिक कहलाता है।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) श्रुतं गृहीतं च (नाट्येन नूपुरायुत्सर्य माल्यानि चापनीय किंचित्परिक्रम्य हस्तेन परामृश्य)। अहो ! भित्तिपरामर्शसूचितं पंचद्वारकं खल्वेतत्। जानामि च संयोगेन गेहस्य संवृत्तं पञ्चद्वारकं।

वसन्तसेना - (अपने आप) सुना और मतलब भी समझ लिया (अभिनय से नूपुरों को उतार कर और मालाओं को फेंक कर, कुछ घूम कर तथा हाथ से छूकर) अहो ! दीवार के छूने से पता चलता है कि यह अवश्य ही बगल का दरवाजा है, और छूने से लगता हे कि घर का यह पंचद्वार (खिड़की) बन्द है।

चारूदत्त: – वयस्य ! समाप्तजपोऽस्मि। तत्साम्प्रतं गच्छ। मातृभ्यो बलिमुपहर।

चारूदत्त:- मित्र ! मैं जप समाप्त कर चुका। तो अब जाओ, मातृ-देवियों को बलि चढ़ा आओ।

विदूषक:- भो न गमिष्यामि।

विदूषक:- अरे मैं नहीं जाऊँगा।

चारूदत्त:- धिक्कष्टम् -

दारिद्र्यात्पुरूषस्य बान्धवजनो वाक्ये न संतिष्ठते
सुस्निग्धा विमुखीभवन्ति सुहृद: स्फारीभवन्त्यापद: ।
सत्त्वं ह्रासमुपैति शीलशशिन: कान्ति: परिम्लायते
पापं कर्म च यत्परैरपि कृतं तत्तस्य संभाव्यते ।। 36 ।।

अन्वय - दारिद्र्यात् बान्धवजन: पुरूषस्य वाक्ये न संतिष्ठते, सुस्निगधा सुहृद: विमुखी भवन्ति, आपद: स्फारी भवन्ति, सत्त्वं ह्रासं उपैति, शीलशशिन: कान्ति: परिम्लायते, पापम् कर्म परै: अपि कृतम् तत् तस्य संभाव्यते **।। 36 ।।**

अर्थ - दरिद्रता के कारण बन्धु लोग भी निर्धन पुरूष के कहने में नहीं रहते। अत्यन्त स्नेही मित्र भी विमुख हो जाते हैं और आपत्तियाँ बढ़ जाती है। बल क्षीण हो जाता है, चरित्र रूपी चन्द्रमा की कान्ति धुँधली हो जाती है, कहाँ तक कहा जाय, जो दूसरे व्यक्तियों के द्वारा भी किया गया पाप कर्म है वह उसी का किया हुआ समझा जाता है।

टिप्पणी – इस श्लोक में रूपक अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अपि च -

संगं नैव हि कश्चिदस्य कुरूते संभाषते नादरात्
संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिनां सावज्ञमालोक्यते ।
दूरादेव महाजनस्य विहरत्यल्पच्छदो लज्जया
मन्ये निर्धनतां प्रकाममपरं षष्ठं महापातकम् ।। 37 ।।

अन्वय – हि कश्चित् अस्य संगम् न एव कुरूते आदरात् न संभावयते उत्सवेषु धनिनाम् गृहम् सम्प्राप्ता: सावज्ञम् आलोक्यते अल्पच्छद: (दरिद्र:) लज्जया महाजनस्य दूरात् एव विहरति (अत: अहं) मन्ये निर्धनता अपरम् प्रकामम् षष्ठं महापातकम् अस्ति **।। 37 ।।**

अर्थ – और भी - कोई भी व्यक्ति इसका (निर्धन का) साथ नहीं करता है। न आदर से (इसके साथ) बोलता है। उत्सव (विवाह आदि) के अवसर पर (यदि निर्धन) धनिक के घर पहुँच जाता है तो वहाँ भी वह लोगों के द्वारा अनादर की दृष्टि से देखा जाता है। (निर्धन व्यक्ति) अल्प वस्त्र वाला होने के कारण लज्जावश बड़े लोगों से दूर होकर ही चलता है अर्थात् दूर ही रहता है। इसलिए मैं मानता हूँ कि दरिद्रता एक प्रबल छठा महापाप है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है। अपि च -

दारिद्रय ! शोचामि भवन्तमेवमस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा।
विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये ममेति चिन्ता कः गमिष्यसि त्वम् ।। 38 ।।

अन्वय – हे दारिद्रय ! भवन्तम् एवम् शोचामि (यत्) अस्मच्छरीरे सुहृद् इति उषित्वा मयि मन्दभाग्ये विपन्नदेहे (सति) त्वं कः गमिष्यसि इति मम चिन्ता अस्ति **।। 38 ।।**

अर्थ – और भी – हे दारिद्रय ! तुम्हारे विषय में मुझे यही चिन्ता है कि मेरे शरीर में मित्र के समान निवास करके मुझ अभागे के मर जाने पर तुम कहाँ जाओगे।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

विदूषकः-(सवैलक्ष्यम्) भे वयस्य ! यदि मया गन्तव्यम् तदेयापि मम सहायिनी रदनिका भवतु।

विदूषकः- (लज्जापूर्वक)हे मित्र ! यदि मुझे जाना ही है तो यह रदनिका भी मेरे साथ चलें।

चारूदत्तः- रदनिके ! मैत्रेयमनुगच्छ।

चारूदत्तः- रदनिके ! मैत्रेय के साथ जाओ।

चेटी – यदार्य आज्ञापयति।

चेटी – जैसी आर्य की आज्ञा।

विदूषकः- भवति रदनिके ! गृहाण बलिं प्रदीपं च। अहमपावृत्तं पक्षद्वारकं करोमि।

विदूषकः- हे रदनिके ! बलि और दीपक को पकड़ो। मैं पक्षद्वार (खिड़की) को खोलता हूँ।

वसन्तसेना–पटान्तेन निर्वाप्य प्रविष्टा ममाभ्युपपत्तिनिमित्तमिवापावृतं पक्षद्वारकम् । तद्यावत्प्रविशामि।(दृष्टवा) हा धिक् हा धिक्, कथं प्रदीपः।

वसन्तसेना – मानो मुझ पर दया करने के लिए बगल का द्वार (खिड़की) खुल गया है। तो जब तक प्रवेश करती हूँ। (देखकर) हाय हाय, क्या दीपक (जल रहा) है।

चारूदत्तः- मैत्रेय ! किमेतत् ?

चारूदत्तः- मैत्रेय ! यह क्या है ?

विदूषकः- अपावृत्तपक्षद्वारेण निर्वापितः प्रदीपः । भवति रदनिके ! निष्क्रामं त्वं पक्षद्वारकेण । अहमप्यभ्यन्तरचतुःशालातः प्रदीपं प्रज्वाल्यागच्छामि। (इति निष्क्रान्तः)

विदूषकः- पक्षद्वार के खुलते ही हवा के झोंके से दीपक बुझा दिया गया।

हे रदनिके ! तुम पक्षद्वार से बाहर चलो। मैं भी भीतरी चतुःशाला से दीपक जलाकर आ रहा हूँ ।(निकल जाता है) **शकारः-** भाव भाव ! अन्वेष्यामि वसन्तसेनिकाम् ।

शकारः- भाव भाव ! मैं वसन्तसेना को ढूँढ रहा हूँ।

विटः- अन्विष्यतामन्विष्यताम् ।

विटः- ढूँढिये, ढूँढिये ।

शकारः- (तथा कृत्वा) भाव भाव ! गृहीत्वा गृहीत्वा ।

शकारः- (खोजकर) भाव भाव ! पकड़ ली गयी, पकड़ ली गयी ।

विटः- मूर्ख ! नन्वहम् ।

विटः - मूर्ख ! (यह तो) मैं हूँ ।

शकारः- इतस्तावद्भूत्वा एकान्ते भावस्तिष्ठतु । पुनरन्विष्य चेटं गृहीत्वा ,भाव भाव ! गृहीतां गृहीतां ।

शकारः- तो आप इधर होकर एकान्त में खड़े रहे । फिर ढूँढु कर और चेट को पकड़कर, भाव भाव ! पकड़ ली गयी, पकड़ ली गयी ।

चेटः- भट्टारक ! चेटोऽहम् ।

चेटः- स्वामी ! यह तो मैं (चेट) हूँ ।

शकारः- इतो भावः इतश्चेटः । भावश्चेटः चेटो भावः युवां तावदेकान्ते तिष्ठतम् । (पुनरन्विष्य रदनिकां केशेषु गृहीत्वा) भाव भाव ! साम्प्रतं गृहीतां वसन्तसेनिकाम् ।

शकारः- इशर भाव(विट) उधर चेट । भाव-चेट, चेट-भाव । तुम दोनों तो एकान्त में खडे रहो (फिर खोजकर और रदनिका का केश पकड़कर) भाव भाव ! अब वसन्तसेना पकड़ ली गयी ।

अन्धकारे पलायमाना माल्यगान्धेन सूचिता ।
केशवृन्दे परामृष्टां चाणक्येनेव द्रौपदी ।। 39 ।।

अन्वय- अन्धकारे पलायमाना, माल्यगन्धेन सूचिता (वसन्तसेना) चाणक्येन द्रौपदी इव केशवृन्दे परामृष्टां ।

अर्थ- अन्धकार में भागती हुई माला की गन्ध से सूचित 'वसन्तसेना' मेरे द्वारा उसी प्रकार प्रकार केशों से पकड़ ली गयी है जैसे 'चाणक्य' के द्वारा 'द्रौपदी' ।

टिप्पणी – इस श्लोक में हतोपमा अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है ।

विटः- एषासि वयसो दर्पात्कुलपुत्रानुसारिणी ।
केशेषु कुसुमाढयेषु सेवितव्येषु कर्षिता ।। 40 ।।

अन्वय – वयसः दर्पात् कुलपुत्रानुसारिणी एषा त्वम् कुसुमाढयेषु सेवितव्येषु केशेषु कर्षिता असि **।। 40 ।।**

अर्थ- विट- युवावस्था के अहंकार से कुलीन पुत्र (चारूदत्त) का अनुगमन करने वाली यह (तुम) फुलों से सजे हुए सेवा करने के योग्य बालों से पकड़ कर खींची जा रही हो ।

टिप्पणी – इस श्लोक में अनुष्टुप छन्द है ।

अभ्यास प्रश्न 2 - निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए -

1- दारिद्रय ! शोचामि भवन्तमेव
मस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा ।
विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये

ममेति चिन्ता क: गमिष्यसि त्वम् ।।

2- अन्धकारे पलायमाना माल्यगान्धेन सूचिता ।

केशवृन्दे परामृष्टां चाणक्येनेव द्रौपदी ।।

6.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने यह जाना कि किस प्रकार विट एवं शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना भयभीत होकर भागती चली जा रही थी और वह उनसे बचने के लिए अनजाने में चारूदत्त के घर में छिप जाती है । इधर चारूदत्त विदूषक से बलिपूजा करने के लिये कहता है विदूषक के द्वारा पूजा के लिए मना करने पर वह कहता है कि दरिद्रता सबसे बड़ा छठा महापाप है दरिद्र व्यक्ति का कोई साथ नहीं देता है । तब विदूषक रदनिका के साथ पूजा के लिये जाता है और दीपक के बुझ जाने पर रदनिका से कहता है कि रदनिके ! तुम पक्षद्वार से बाहर चलो । मैं भी भीतरी चतु:शाला से दीपक जलाकर आ रहा हूँ । इधर शकार ने वसन्तसेना के भ्रम में एक बार विट,चेट और चारूदत्त की सेविका रदनिका को पकड़ लेता है और प्रसन्न होकर कहता है कि वसन्तसेना पकड़ ली गयी है ।

6.6 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
वेशवास:	वेश्यालय का निवास
द्विजवर:	ब्राह्मण
उन्मीलिता	खुली हुई
निमीलिता	बन्द

तम:	अन्धकार
दारिद्र्यात्	दरिद्रता के कारण
अल्पच्छद:	अल्प वस्त्र वाला
सवैलक्ष्यम्	लज्जापूर्वक
वातेन	वायु से
निर्वासिता:	बुझा दिया गया

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 -

(1) असत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2 - प्रश्न 1 व 2 का उत्तर इकाई में देखें

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

6.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1- मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक के 21 से 40 श्लोकों का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2- भयभीत वसन्तसेना का वर्णन कीजिए।

इकाई 7 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 58 तक

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 50 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
7.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 51 से 58 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
7.5 सारांश
7.6 शब्दावली
7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
7.9 उपयोगी पुस्तकें
7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के 21 से 40 श्लोकों का अध्ययन किया और जाना शकार अत्यन्त अभिमानी, दुराग्रही एवं पापी है वह स्त्री का सम्मान नहीं करता है , वह विट से कहता है कि वह बहुत बहादुर है क्योंकि वह सैकड़ों स्त्रियों को मार सकता है। तथा शकार से भयभीत वसन्तसेना की मनोदशा के बारे में जाना।

प्रस्तुत इकाई में आप 41 से 58 श्लोंको का अध्ययन करेंगे। शकार रदनिका को वसन्तसेना समझ कर पकड़ लेता है और कहता है कि अब तुमको ईश्वर भी नहीं बचा सकेंगे। विट शकार से कहता है कि यह आवाज वसन्तसेना की नहीं है ।इधर विदूषक रदनिका को शकार द्वारा पकड़ा हुआ देखकर कहता है कि अरे राजश्यालक(राजा के साले), नीच मनुष्य ! यह उचित नही है। यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है। जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है। विट यह जानकर कि यह चारूदत्त की सेविका है, वह विदूषक से क्षमा मांग लेता है। वसन्तसेना चारूदत्त से वार्तालाप के पश्चात् शकार से बचने के लिए अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेंगे कि चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है इसीलिए शकार के द्वारा रदनिका को पकड़े जाने पर वह विदूषक से क्षमा माँगता है। वसन्तसेना अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्लोंको में प्रयुक्त अलंकार एवं छन्द का नाम बता सकेगे।
- चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है यह बता सकेंगे।
- वसन्तसेना अपना विश्वास चारूदत्त पर प्रकट करती है और अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है इसकी व्याख्या कर सकेंगे।

7.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 50 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

शकार:- एषासि वासु शिरसि गृहीता केशेषु बालेषु शिरोरूहेषु।

आक्रोश विक्रोश लपाधिच्चण्डं शंभुं शिवं शंकरमीश्वरं वा ॥ **41** ॥

अन्वय – हे वासु ! एषा (त्वम्) शिरसि केशेषु बालेषु शिरोरूहेषु गृहीता असि (सम्प्रति) आक्रोश विक्रोश वा शम्भुम् शिवम् शंकरम् ईश्वरम् अधिचण्डम् लप ॥ **41** ॥

अर्थ – हे बाले ! यह तुम शिर के बालों, केशों, शिरोरूहों के माध्यम से पकड़ ली गयी हो अर्थात् तुम्हारे शिर के बाल पकड़ में आ गये हैं, अब तुम गाली दो चिल्लाओ शम्भु, शिव, शंकर अथवा ईश्वर को जोर से पुकारो (हमें किसी से भय नहीं है)।

टिप्पणी – इस श्लोक में इन्द्रवज्रा छन्द है।

रदनिका – (सभयम्) किमार्यमिश्रैर्व्यवसितम् ?

रदनिका – (भयपूर्वक) आप ने यह क्या किया ?

विट: - काणेलीमात: ! अन्य एवैष स्वरसंयोग:।

विट:- काणेली केपुत्र ! यह स्वर तो दूसरा सा लगता है अर्थात् यह वसन्तसेना की आवाज नहीं है।

शकार:- भाव भाव ! यथा दधिभक्तलुब्धाया: मार्जारकाया: स्वरपरिवृत्तिर्भवति तथा दास्या: पुत्र्या स्वरपरिवृत्ति: कृता।

शकार:- भाव भाव ! जिस प्रकार दही भात की लोभी बिल्ली के स्वर में परिवर्तन हो जाता है उसी प्रकार दासी की पुत्री इस (वसन्तसेना) ने भी स्वर में परिवर्तन कर लिया है।

विट:- कथं स्वरपरिवर्त: कृत: ? अहो चित्रम् अथवा किमत्र चित्रम् ?

इयं रंगप्रवेशेन कलानां चोपशिक्षया।
वञ्चनापण्डितत्वेन स्वरनैपुण्यमाश्रिता ।। 42 ।।

अन्वय – इयम् रंगप्रवेशेन कलानाम् उपशिक्षयावञ्चनापण्डितत्वेन च स्वरनैपुण्यम् आश्रिता **।। 42 ।**

अर्थ – **विट -** क्या स्वर में परिवर्तन कर लिया?अहो आश्चर्य है अथवा इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

इस 'वसन्तसेना' ने नाटयशाला में प्रवेश एवं कलाओं की शिक्षा के द्वारा (दूसरो को) ठगने में कुशलता प्राप्त कर लेने के कारण स्वर (परिवर्तन) में निपुणता प्राप्त कर ली है।

टिप्पणी – इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

विदूषक: - (विटं दृष्टवा)भाव एषोऽपराध्यति।एष खल्वत्रापराध्यति(शकारं दृष्टवा)अरेरे राजश्यालक संस्थानक दुर्जन: दुर्मनुष्य: ! युक्तं नेदम्। यद्यपि नाम तत्रभवानार्यचारूदत्तो दरिद्र: संवृत्त:। तत्किं तस्य गुणैर्नालंकृतोज्जयिनी ? येन तस्य गृहं प्रविश्य परिजनस्येदृश: उपमर्द: क्रियते ?

मा दुर्गत: इति परिभवो नास्ति कृतान्तस्य दुर्गतो नाम।
चारित्र्येण विहीन आढयोऽपि न दुर्गतो भवति ।। 43 ।।

अन्वय – (अयम्) दुर्गत: इति परिभव: मा (कर्तव्य:) कृतान्तस्य (समीपे) दुर्गत: न अस्ति नाम च चारित्र्येण विहीन: आढया: अपि अुर्गत: भवति **।। 43 ।।**

अर्थ – **विदूषक-** (विट को देखकर) यहाँ यह अपराध नहीं कर रहा है। (शकार को देखकर) निश्चय ही यही अपराधी है। अरे राजश्यालक(राजा के साले), संस्थानक (शकार का नाम) दुष्ट, नीच मनुष्य ! यह उचित नही है। यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है। जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है।

अर्थ - (यह) 'निर्धन' हैं इसलिए अपमान मत करें । यमराज के यहाँ निर्धन कोई नही है और चरित्रहीन धनवान् भी दुर्दशा को प्राप्त होता है ।

टिप्पणी – इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार एवं गाथा छन्द है ।

विट:- (सवैलक्ष्यम्) महाब्राह्मण ! मर्षय मर्षय । अन्यजनशंकया खल्विदमनुष्ठितम् , न दर्पात् । पश्य-

सकामान्विष्यतेऽस्माभि: काचित्स्वाधीनयौवना ।
सा नष्टा शंकया तस्या: प्राप्तेयं शीलवञ्चना ।। 44 ।।

अन्वय- अस्माभि: सकामा स्वाधीनयौवना काचित् अन्विष्यते सा नष्टा तस्या: शंकया इयम् शीलवञ्चना प्राप्ता **।। 44 ।।**

विट – (लज्जापूर्वक) महाब्राह्मण क्षमा करो, क्षमा करो । किसी दूसरे व्यक्ति के भ्रम से ऐसा कार्य हो गया , अहंकार से नहीं । देखो - कोई अपने यौवन की स्वामिनी स्त्री (अर्थात् वेश्या) किन्तु वह रमणी तो भाग गयी और उसी के भ्रम में यह चरित्र की हानि हुई (अर्थात् इस प्रकार सदाचार का उल्लंघन हो गया ।

टिप्पणी - इस श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है ।

विट:- एष ते प्रणयो विप्र ! शिरसा धार्यते मया ।
गुणशस्त्रैर्वयं येन शस्त्रवन्तोऽपि निर्जिता: ।। 45 ।।

अन्वय – हे विप्र ! एष: ते प्रणय: मया शिरसा धार्यते , येन शस्त्रवन्त: अपि वयम् गुणशस्त्रै: निर्जिता: **।। 45 ।।**

विट – हे ब्राह्मण ! तुम्हारे इस अनुग्रह को मैं शिरोधार्य करता हूँ। जिन कारणों से शस्त्रधारी होते हुए भी हम लोग आप के गुणरूपी शस्त्र से पराजित कर दिये गये हैं ।

टिप्पणी – इस श्लोक में रूपक अलंकार पथ्यावक्त्र छन्द है ।

शकार:- (सासूयम्) किंनिमित्तं पुनर्भाव ! एतस्य दुष्टबटुकस्य कृपणाञ्जलि कृत्वा पादयोर्निपतित: ।

शकार- (ईर्ष्या) भाव ! विनयपूर्वक हाथ जोड़कर आप इस दुष्ट ब्राह्मण के पैरों पर क्यों गिर रहे ?

विट:- भीतोऽस्मि ।

शकार:- कस्मात्त्वं भीत: ?

शकार – तुम किससे डर गये हो ?

विट:- तस्य चारूदत्तस्य गुणेभ्य: ।

विट – उस चारूदत्त के गुणों से ।

शकार:- के इव तस्य गुणा यस्य गृहं प्रविश्याशितव्यमपि नास्ति ।

शकार – उसके क्या गुण हैं ? जिसके घर में घुसने पर कुछ खाने योग्य भी नही है ।

विट: - मा मैवम् - **सोऽस्मद्विधानां प्रणयै: कृशीकृतो**
न तेन कश्चिद्विभवैर्विमानित: ।

निदाघकालेष्विव सोदको ह्रदो

गुणा स तृष्णामपनीय शुष्कवान्।। 46 ।।

अन्वय - स: अस्मद्विधानां प्रणयै: कृशीकृत: तेन कश्चित् विभवै: न विमानित: नृणाम् तृष्णाम् अपनीय स: निदाघकालेषु सोदक: ह्रद: इव शुष्कवान् ।। 46 ।।

अर्थ – विट- ऐसा मत कहो – यह हम जैसे लोगो की ही प्रेमपूर्ण मांगो से क्षीण (धनहीन) हो गये हैं। उन्होनें किसी को भी धन के गर्व से अपमानित नही किया है। मनुष्यों की धन सम्बन्धी प्यास (तृष्णा) को मिटाकर वे गर्मी के समय में जलयुक्त तालाब के समान सूख गये हैं अर्थात् निर्धन हो गये हैं।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वंशस्थ छन्द है।

शकार: - (सामर्षम्) क: स गर्भदास्या: पुत्र: ?

शूरो विक्रान्त: पाण्डव: श्वेतकेतु: पुत्रो राधाया रावण इन्द्रदत्त: ।

आहो कुन्त्यास्तेन रामेण जात: अश्वत्थामा धर्मपुत्रो जटायु: ।। 47 ।।

अन्वय- विक्रान्त: शूर: (स: किम्) पाण्डव: श्वेतकेतु:, इन्द्रदत्त: राधाया पुत्र: रावण: आहो तेन जात: कुन्त्या: (पुत्र:) अश्वत्थामा (वा) धर्मपुत्र: जटायु: **।। 47 ।।**

अर्थ – शकार – (क्रोधपूर्वक) कौन है यह जन्मदासी का पुत्र ?

क्या यह शूरवीर पाण्डुपुत्र श्वेतकेतु है ? अथवा इन्द्र प्रदत्त राधा का पुत्र रावण है ? अथवा प्रसिद्ध उस राम से उत्पन्न कुन्ती का पुत्र अश्वत्थामा है ? अथवा धर्मपुत्र जटायु है।

टिप्पणी – शकार की उक्ति होने के कारण सभी गलतियाँ क्षम्य हैं। इस श्लोक में वैश्वदेवी छन्द है।

विट: - मूर्ख ! आर्यचारूदत्त: खल्वसौ ,

दीनानां कल्पवृक्ष: स्वगुणफलनत: सज्जनानां कुटुम्बी

आदरो: शिक्षितानां सुचरितनिकष: शीलवेलासमुद्र: ।

सत्कर्ता नावमन्ता पुरूषगुणनिधिर्दक्षिणोदारसत्त्वो

ह्येक: श्लाघ्य: स जीवत्यधिकगुणतया चोच्छवसन्तीव चान्ये ।। 48 ।।

तदितो गच्छाम: ।

अन्वय-दीनानां स्वगुणफलनत:कल्पवृक्ष: सज्जनानाम् कुटुम्बी ,शिक्षितानाम् आदर्श: सुचरितनिकष: शीलवेलासमुद्र: सत्कर्ता न अवमन्ता पुरूषगुणनिधि: दक्षिणोदारसत्त्व: हि अधिकगुणतया श्लाघ्य: एक: स: जीवति अन्ये उच्छवसन्ति इव च **।। 48 ।।**

विट – अरे मूर्ख ! यह तो आर्य 'चारूदत्त' हैं।जो दीनों के (कामनाओं को पूर्ण करने वाले) अपने गुण रूपी फलों से नम्र कल्पवृक्ष हैं। साधुओं के बन्धु, शिक्षितों के आदर्श, सच्चरित्र की कसौटी, सदाचार रूपी मर्यादा के (न लांघने वाले) सागर सत्कार करने वाले, किसी का अनादर न करने वाले,

मनुष्योचित गुणों के खजाना, सरल एवं उदार स्वभाव वाले हैं । गुणों की अधिकता के कारण प्रशंसनीय यह आर्य चारूदत्त ही (यथार्थ रूप में) जीवित हैं और अन्य लोग तो सिसकते ही हैं अर्थात् इनके अतिरिक्त अन्य गुणहीन व्यक्तियों का जीवन निरर्थक है । तो यहाँ से चलें ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उल्लेख अलंकार एवं स्रग्धरा छन्द है

शकार:- अगृहीत्वा वसन्तसेनाम् ?

शकार – वसन्तसेना को बिना पकड़े ही ?

विट: - नष्टा वसन्तसेना ।

विट – वसन्तसेना तो अदृश्य हो गयी ।

शकार:- कथमिव ?

शकार – किस प्रकार ?

विट:- अन्धस्य दृष्टिरिव पुष्टिरिवातुरस्य
मूर्खस्य बुद्धिरिव सिद्धिरिवालसस्य ।
स्वल्पस्मृतेर्व्यसनिन: परमेव विद्या
त्वां प्राप्य सा रतिरिवारिजने प्रनष्टा ।। 49 ।।

अन्वय – सा त्वाम् प्राप्य अन्धस्य दृष्टि: इव आतुरसय पुष्टि: इव मूर्खस्य बुद्धि: इव अलसस्य सिद्धि: इव अल्पस्मृते: व्यसनिन: परमा विद्या इव अरिजने रति: इव प्रनष्टा **।। 49 ।।**

अर्थ – **विट-** वह तुम्हें प्राप्त करके अन्धे की दृष्टि के समान, रोगी के बल के समान, मूर्ख की बुद्धि के समान, आलसी की सफलता की भाँति, कम स्मरण शक्ति वाले दुर्गुणासक्त (व्यक्ति) की उत्कृष्ट विद्या की तरह, शत्रुओं के प्रेम के समान अदृश्य हो गयी है ।

शकार:- अगृहीत्वा वसन्तसेनां न गमिष्यामि ।

शकार – वसन्तसेना को बिना लिये नहीं जाऊँगा ।

विट: - एतदपि न श्रुतं त्वया ?

आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्यासु गृह्यते ।
हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम् ।। 50 ।।

अन्वय – हस्ती आलाने गृह्यते,वाजी वल्यासु गृह्यते, नारी हृदये गृह्यते, यदि इदम् नास्ति (तदा) गम्यताम् **।। 50 ।।**

विट – क्या तुमने यह भी नहीं सुना है ? (कि) - हाथी खम्बे में (बाँध कर) वश में किया जाता है, घोड़ा लगाम से वश में किया जाता है और स्त्री हृदय से (हृदय के प्रेम से) वश में की जाती है । यदि यह (हृदय का प्रेम) नही है तो जाइये ।

टिप्पणी - इस श्लोक में निदर्शना अलंकार और पथ्यावक्त्र छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1 -

सत्य असत्य बताइये -

1. संस्थानक शकार का नाम है।
2. विट राजश्यालक है।
3. चारूदत्त ब्राह्मण है।
4. विदूषक विट का मित्र है।
5. स्त्री हृदय को प्रेम से वश में किया जात है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

श्लोक का अनुवाद करें -

1- मा दुर्गत: इति परिभवो नास्ति कृतान्तस्य दुर्गतो नाम।
चारित्र्येण विहीन आढयोऽपि न दुर्गतो भवति ।।

2.आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्यासु गृह्यते।
हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम् ।।

7.4मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 51 से 58 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

तत्पश्चात् शकार और विदूषक के मध्य वार्तालाप होता है और विदूषक कहता है कि हम भाग्य के द्वारा बैठा दिये गये हैं और पुन: भाग्य के अनुकूल होने पर हम प्रसन्न होगें। तब शकार कहता है कि यह वसन्तसेना हमारे द्वारा बलपूर्वक मनायी जाती हुई तुम्हारे(चारूदत्त के) घर में प्रविष्ट हो गयी है यदि तुम उसे सहर्ष मुझे सौंप दोगे तो तुम्हारे साथ मेरा दृढ़ प्रेम हो जायेगा और न लौटाने पर जीवन भर की शत्रुता हो जायेगी।

शकार:- अपि च प्रेक्षस्व -

कूष्माण्डी गोमत्तलिप्तवृन्ता शाकं च शुष्कं गलितं खलु मांसम् ।

भक्तं च हेमन्तिकारात्रिसिद्धं लीलायां च वेलायां न खलु भवति पूति ।। 51 ।।

अन्वय – गोमत्तलिप्तवृन्ता कूष्माण्डी शुष्कम् शाकम् च गलितम् मांसम् खलु हेमन्तिकारात्रिसिद्धम् भक्तम् च वेलायाम् लीलायाम् च न खलु पूति भवति **।। 51 ।।**

अर्थ – शकार – और भी देखो – गोबर से लिप्त डण्ठल वाली कुम्हड़ी, सूखा हुआ शाक, तला हुआ मांस, हेमन्त ऋतु की रात्रि में पकाया हुआ भात, अधिक काल बीत जाने पर भी विकृत नहीं होते है।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

विदूषक:- भणिष्यामि।

विदूषक – कह दूँगा।

शकार:- (अपवार्य) चेट ! गत: सत्यमेव भाव: ।

शकार – (अलग हट कर) सचमुच ही भाव (विट) चले गये ?

चेट:- अथ किम् ।

चेट – और क्या ।

शकार:- तच्छीगमपक्रमाव: ।

शकार – तो हम दोनों शीघ्र ही चलें ।

चेट:- तद् गृहात्तु भट्टारकोऽसिम् ।

चेट - तो स्वामी तलवार को ग्रहण करें ।

शकार – तदैव हस्ते तिष्ठतु ।

शकार – तुम्हारे ही हाथ में रहे ।

चेट:- एष भट्टारक: ! गृह्णात्वेनं भट्टरकोऽसिम् ।

चेट – स्वामिन् ! यह है आप इस तलवार को ले लें ।

शकार:- (विपरीतं गृहीत्वा)

निर्वल्कलं मूलकवेशीवर्णं स्कन्धेन गृहीत्वा च कोशमुत्तम्

कुक्कुरै: कुक्कुरीभिश्रं बुक्कयमानो यथा श्रृगाल: शरणं प्रयामि ।। 52 ।।

(परिक्रम्य निष्क्रान्तो)

अन्वय - निर्वल्कलम् मूलकवेशीवर्णम् कोशमुत्तम् (असिम्) स्कन्धेन गृहीत्वा च कुक्कुरै: कुक्कुरीभि: च बुक्कयमान: श्रृगाल: यथा शरणम् प्रयामि **।। 52 ।।**

अर्थ – शकार – (उलटी पकड़कर) नंगी तथा मूली के छिलके के समान रंगवाली, कोष (म्यान) में स्थित तलवार को कन्धे पर रखकर मैं कुत्ते और कुतियों के द्वारा भौकें जाते हुए गीदड़ की भांति घर को जाता हूँ। (घूमकर निकल जाते हैं)

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

विदूषक:- भवति रदनिके ! न खलु तेऽयमपमानस्तत्रभवतश्चारूदत्तस्य निवेदयितव्य: । दौर्गत्यपीडितस्य मन्ये द्विगुणतरा पीडा भविष्यति।

विदूषक – अरी रदनिके ! अपने इस अपमान को परम श्रद्धेय आर्य चारूदत्त से मत कहना। दुर्दशा से पीडित उनकी पीड़ा दुगुनी हो जायेगी।

रदनिका – आर्य मैत्रेय ! रदनिका खल्वदं संयतमुखी।

रदनिका - आर्य मैत्रेय ! मैं 'रदनिका' अपने मुख को वश में रखने वाली हूँ।

विदूषक: - एवमिदम्।

विदूषक – ऐसा ही है।

चारूदत्त:- (वसन्तसेनामुद्दिश्य) रदनिके ! मारूताभिलाषी प्रदोषसमयशीतातो रोहसेन: । तत: प्रवेश्यतामभ्यन्तरमयम्। अनेन प्रावारकेण छादवैनम्। (इति प्रावारकं प्रयच्छति)

चारूदत्त: - (वसन्तसेना को लक्ष्य करके) रदनिके ! वायु (सेवन) का इच्छुक 'रोहसेन' (चारूदत्त का पुत्र) रात्रि के प्रथम प्रहर की ठण्ड से पीडित है। इसलिए भीतर ले जाओ और इस उत्तरीय से इसे ढँक दो। (ऐसा कहकर उत्तरीय प्रदान करता है) **वसन्तसेना** – (स्वगतम्) कथं परिजन इति मामवगच्छति । (प्रावारकं गृहीत्वा समाघ्राय च स्वगतम् सस्पृहम्) आश्चर्यम् ,जातीकुसुमवासित: प्रावारक: । अनुदासीनमस्य यौवनं प्रतिभासते । (अपवारितकेनं प्रावृणोति) **वसन्तसेना** – (अपने आप) क्या (भूल से) मुझे अपना परिजन समझ रहे हैं ? (उत्तरीय लेकर के सूँघ कर अपने आप अभिलाषा पूर्वक) अहो ! उत्तरीय जाती-पुष्पों (चमेली के फूलों) से सुवासित है। (अत: अभी) इनका यौवन उपभोग की तृष्णा से उदासीन नही हुआ है। (अलग हटकर अपने आप को ढक लेती है)

चारूदत्त - ननु रदनिके ! रोहसेनं गृहीत्वाभ्यन्तरं प्रविश।

चारूदत्त - हे रदनिके ! रोहसेन को लेकर भीतर चली जाओ।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) मन्दभागिनी खल्वहं तवाभ्यन्तरस्य।

वसन्तसेना – (अपने आप) मैं अभागिनी तुम्हारे घर के भीतर प्रवेश करने के योग्य नही हूँ।

चारूदत्त:- ननु रदनिके ! द्रतिवचनमपि नास्ति। पश्य -

यदा तु भाग्यक्षयपीडितां दशां
नर:कृतान्तोपहितां प्रपद्यते।

तदास्य मित्राण्यपि यान्त्यमित्रतां

चिरानुरक्तोऽपि विरज्यते जनः ।। 53 ।।

अन्वय – यदा तु नरः कृतान्तोपहिताम् भाग्यक्षयपीडिताम् दशाम् प्रपद्यते तदा अस्य मित्राणि अपि अमित्रताम् यान्ति चिरानुरक्तः जनः अपि विरज्यते **।। 53 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - अरी रदनिके ! (तुम्हारे पास) उत्तर भी नही है ? खेद है,

जब मनुष्य क्रुद्धदेव के द्वारा उपस्थित की गयी भाग्यनाश के कारण दलित दशा को प्राप्त हो जाता है तब इस (धनहीन) के मित्र भी शत्रु हो जाते हैं और बहुत दिनों से प्रेम करने वाला व्यक्ति भी विमुख हो जाता है।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

चारूदत्तः- इयं वा रदनिका इयमपरा का ?

अविज्ञातावसक्तेन दूषिता मम वासवा।

छादिता शरदभ्रेण चन्द्रलेखेव दृश्यते ।। 54 ।।

अन्वय – (या) अविज्ञातावसक्तेन मम वाससां दूषिता (तथा) शरदभ्रेण छादिता चन्द्रलेखा इव दृश्यते **।। 54 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – यह रदनिका है तो वह दूसरी (स्त्री) कौन है ?

(जो) अनजाने में स्पर्श किये हुए मेरे वस्त्र से दूषित हो गयी , शरद ऋतु के मेघ से ढकी हुई चन्द्रकला के समान दिखलायी पड़ती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

चारूदत्तः- अये, इयं वसन्तसेना (स्वगतम्)

यया मे जनितः कामः क्षीणे विभवविस्तरे।

क्रोधः कुपुरूषस्येव स्वगात्रेष्वेव सीदति ।। 55 ।।

अन्वय - विभवविस्तरे क्षीणे यया जनितः मे कामः कुपुरूषस्य क्रोधः इव स्वगात्रेषु एव सीदति **।। 55 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – अरे ! यह वसन्तसेना है ?(अपने आप) - प्रचुर धनराशि के क्षीण हो जाने पर जिस (वसन्तसेना) के द्वारा उत्पन्न की गयी मेरी काम वासना, असमर्थ व्यक्ति के क्रोध की भाँति, अपनी देह में ही विनष्ट हो रही है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

चारूदत्तः- (सावज्ञम्) अज्ञोऽसौ। (स्वगतम्) अये, कथं देवतोपस्थानयोग्या युवतिरियम् ? तेन खलु **तस्याम् वेलायाम् -**

प्रविश गृहमिति प्रतोद्यमाना

न चलति भाग्यकृतां दशामवेक्ष्य।

पुरूषपरिचयेन च प्रगल्भं

न वदति यद्यपि भाषते बहूनि ।। 56 ।।

अन्वय – गृहम् प्रविश इति प्रतोद्यमाना भाग्यकृताम् दशाम् अवेक्ष्य न चलति, यद्यपि (इयम्) बहूनि भाषते (तथापि) पुरूषपरिचयेन प्रगल्भम् न च वदति **।। 56 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - (अनादरपूर्वक) यह (शकार) मूर्ख है। (अपने आप) अहो ! कैसी देवता के समान पूजा करने के योग्य यह युवती है। तभी तो उस समय -

(रोहसेन को लेकर) 'घर में प्रवेश करो' इस प्रकार प्रेरित की गयी (भी प्रतिकूल) भाग्य के द्वारा उपस्थित की गयी मेरी दुरवस्था को देखकर (भीतर) नही गयी यद्यपि (वेश्या होने के कारण) बहुत बोलती है तथापि पुरूषों के संसर्ग से (अर्थात् पुरूषों के समक्ष) धृष्टतापूर्वक नहीं बोलती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में पुष्पिताग्रा छन्द है।

तत्पश्चात् आर्य चारूदत्त वसन्तसेना से कहते हैं कि अनजाने में आपके साथ सेवक के समान व्यवहार करने के कारण मैं आपसे सिर झुकाकर क्षमा माँगता हूँ। तब वसन्तसेना कहती है कि मैं आपकी इस पवित्र भूमि में प्रवेश करने के योग्य ही नहीं हूँ इसलिए मैं आपको प्रणाम करके क्षमा चाहती हूँ। वसन्तसेना चारूदत्त से कहती है कि यह शकार आभूषणों के कारण मेरा पीछा कर रहा है अत: आप इन्हे धरोहर के रूप में अपने पास रख लीजिये चारूदत्त कहता है कि मेरा घर धरोहर रखने के लायक नही है। वसन्तसेना के पुन: आग्रह करने पर वह धरोहर रखने को तैयार हो जाता है। वसन्तसेना विदूषक के साथ घर जाने की इच्छा प्रकट करती है तो चारूदत्त विदूषक से कहता है कि इनके साथ घर जाओ। विदूषक चेटी से दीपक जलाने को कहता है तो चेटी कहती है कि तेल के बिना कहीं दीपक जलता है तब चारूदत्त कहता है कि -

चारूदत्त: - मैत्रेय ! भवत: कतं प्रदीपिकानि। पश्य -

उदयति हि शशांक कामिनीगण्डपाण्डु-
र्ग्रहगणपरिवारो राजमार्गंप्रदीप: ।
तिमिरनिकरमध्ये रश्मयो यस्य गौरा:
स्रुतजल इव पंके क्षीरधारा: पतन्ति ।। 57 ।।

(सानुरागं) भवति वसन्तसेने ! इदं भवत्यां पश्यप्रविशतु भवती।

(वसन्तसेना सानुरागमवलोकयन्ती निष्क्रान्ता)

अन्वय - हि कामिनीगण्डपाण्ड: ग्रहगणपरिवार: राजमार्गप्रदीप: शशांक: उदयति यस्य गौरा: रश्मय: स्रुतजले पंके क्षीरधारा: इव तिमिरनिकरमध्ये पतन्ति **।। 57 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - मैत्रेय ! रहने दो , प्रदीपिकाओं की आवश्यकता नहीं है। देखो - सुन्दर युवती के कपोल के समान उज्जवल (गौरवर्ण) नक्षत्रसमूह रूपी परिवार वाला तथा राजमार्ग को प्रकाशित

करने वाला चन्द्रमा उदित हो रहा है। जिसकी श्वेत किरणें सूखे हुए जलवाले कीचड़ में दूध की धाराओं के समान अन्धकार समूह के मध्य में पड़ रही है। (प्रेम के साथ) वसन्तसेने ! यह आपका घर है आप (इसमें) प्रवेश करे। (वसन्तसेना प्रेमपूर्वक देखते हुए निकल जाती है)।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालिनी छन्द है।

चारूदत्त: - वयस्य ! गता वसन्तसेना तदेहि। गृहमेव गच्छाम:।

राजमार्गो हि शून्योऽयं रक्षिण: संचरन्ति च।
वञ्चना परिहर्तव्यां बहुदोषा हि शर्वरी ।। 58 ।।

(परिक्रम्य) इदं च सुवर्णमाण्डं रक्षितव्यं त्वया रात्रौ वर्धमानकेनापि दिवा।

विदूषक:- यथा भवानाज्ञापयति। इति निष्क्रान्तौ

अन्वय – हि अयम् राजमार्ग: शून्य: च रक्षिण: सञ्चरन्ति वञ्चना परिहर्तव्यां हि शर्वरी बहुदोषा (भवति) **।। 58 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – मित्र ! वसन्तसेना गयी तो आओ घर को ही चलें।

यह राजमार्ग सूना है और रक्षक लोग घूम रहे हैं। ठगों (चोरों) से बचना चाहिए। क्योंकि रात वस्तुत: बड़ी दोषपूर्ण होती है। अर्थात् चोरी आदि अपराध रात्रि में ही होते हैं। (घूमकर) इस सोने के पात्र की रक्षा तुमको रात्रि में और 'वर्धमानक' को दिन में करनी चाहिए।

विदूषक – जैसी आपकी आज्ञा। (दोनों निकल जाते हैं)

टिप्पणी – इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार और पथ्यावक्त्र छन्द है ।।

।। **इति मृच्छकटिकेऽलंकारन्यासो नाम प्रथमोअंक: ।।अलंकार – न्यास नामक प्रथम अंक समाप्त हो जाता है ।**

7.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि शकार रदनिका को वसन्तसेना समझ कर पकड़ लेता है और कहता है कि अब तुमको ईश्वर भी नहीं बचा सकेंगे। विट शकार से कहता है कि यह आवाज वसन्तसेना की नहीं है ।इधर विदूषक रदनिका को शकार द्वारा पकड़ा हुआ देखकर कहता है कि अरे राजश्यालक(राजा के साले), नीच मनुष्य ! यह उचित नही है। यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है। जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है। विट शकार को डाँट कर चारूदत्त के घर में प्रवेश करने से रोकता है वह विदूषक से यह जानकर कि रदनिका चारूदत्त की सेविका है क्षमा मांग लेता है। वसन्तसेना चारूदत्त से वार्तालाप के पश्चात् शकार से बचने के लिए अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है और प्रथम अंक समाप्त हो जाता है।

7.6 शब्दावली

शब्द	अर्थ
शिरोरूहेषु	शिर के बालों में
रंगप्रवेशेन	नाट्यशाला में प्रवेश करने से
परिभव:	अपमान
विप्र	ब्राह्मण
विमानित:	अपमानित किया गया
निदाघकालेषु	गर्मी के समयों में
दीनानाम्	दीनों के
शीलवेलासमुद्र:	सदाचार रूपी मर्यादा के सागर
श्लाघ्य:	प्रशंसनीय
हस्ती	हाथी
आलाने	हाथी को बाँधने का खम्भा
वाससा	वस्त्र से
प्रगल्भम्	धृष्टतापूर्वक
रक्षिण:	पहरेदार

7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) सत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) असत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2- 1- उत्तर इकाई में देखें। 2- उत्तर इकाई में देखें।

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

7.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1- इस इकाई के किन्हीं पाँच श्लोको की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।

इकाई 8 – द्वितीय अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

8.4 श्लोक संख्या 11 से 20 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

8.5 सारांश

8.6 शब्दावली

8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.9 उपयोगी पुस्तकें

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के 21 से 58 श्लोंको का अध्ययन किया और जाना कि चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है इसीलिए शकार के द्वारा रदनिका को भ्रमवश वसन्तसेना समझ कर पकड़े जाने पर वह विदूषक से क्षमा माँगता है। वसन्तसेना अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

प्रस्तुत इकाई में आप द्वितीय अंक का अध्ययन करेंगे इस अंक का नाम 'द्युतक-संवाहक' है। वसन्तसेना अपनी चेटी मदनिका के साथ चारूदत्त सम्बन्धी वार्तालाप कर रही है। इसी समय संवाहक आता है। जुआरी और द्यूतकरों का मुखिया (माथुर) उसका पीछा करते हुए आते हैं। वसन्तसेना अपना स्वर्णाभूषण देकर संवाहक को छुड़ाती है। संवाहक विरक्त होकर बौद्व भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में उसे पकड़ कर कुचलना ही चाहता है कि वसन्तसेना का सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। इससे प्रसन्न होकर चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला कर्णपूरक को उपहार में दे देते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेंगे कि किस प्रकार वसन्तसेना संवाहक को छुड़ाती है और संवाहक बौद्ध भिक्षु बन जाता है उन्मत्त हाथी के द्वारा कर्णपूरक उसे बचाता है। निर्धन होने पर भी चारूदत्त उसे पुरस्कृत करता है।

8 .2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- इस अंक के नाम की सार्थकता को सिद्ध कर सकेंगे।
- द्तीय अंक के श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्लोंकों के साहित्यिक वैशिष्ट्य को समझा सकेंगे।
- वसन्तसेना ने संवाहक को माथुर से मुक्त कराया यह बता सकेंगे।

8.3 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवंव्याख्या

चेटी- मात्रार्यासकाशं संदेशेन प्रेषितास्मि। तद्यावत्प्रविश्यार्यासकाशं गच्छामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) एषार्या हृदयेन किमप्यालिखन्ती तिष्ठति। तद्यावदुपसर्पामि। (प्रवेश करके)

अर्थ- चेटी- वसन्तसेना की माताजी के द्वारा सन्देश के साथ आर्या (वसन्तसेना) के पास भेजी गयी हूँ।अत: प्रवेश करके आर्या के समीप चलती हूँ 1 (घूमकर और देखकर) यह आर्या तल्लीनतापूर्वक कुछ सोचती हुई बैठी है। तो तब तक उनके समीप चलती हूँ।

(तत: प्रविशत्यासनस्था सोत्कण्ठा वसन्तसेना मदनिकां च)

वसन्तसेना – चेटि ! ततस्तत:।

(इसके बाद आसन पर बैठी हुई उत्कण्ठित वसन्तसेना तथा मदनिका प्रवेश करती हैं)

वसन्तसेना- चेटि ! इसके बाद।

चेटी- आर्ये न किमपि मन्त्रयसि। किं ततस्तत:।
चेटी- आर्ये कुछ कहती तो हो नही, फिर इसके बाद क्या ?
वसन्तसेना- किं मया भणितम् ?
वसन्तसेना – मैनें क्या कहा ?
चेटी- ततस्तत: इति:।
चेटी- इसके बाद।
वसन्तसेना – (संभ्रूक्षेपम्) आं एवम्। (उपसृत्य)
वसन्तसेना- (भौं घुमाकर) अच्छा इस प्रकार? (समीप जाकर)
प्रथमा चेटी- आर्ये ! माताऽऽदिशति - 'स्नाता भूत्वा देवतानां पूजा निर्वतय' इति।
प्रथमा चेटी- आर्ये ! माताजी का आदेश है कि – 'स्नान कर देवताओं की पूजा कर लो'।
वसन्तसेना- चेटि ! विज्ञापय मातरम् -अद्य न स्नास्यामि । 'तंब्राह्मण एव पूजानिर्वर्तयत्'।
वसन्तसेना- चेटि ! माताजी से कह दो कि – आज मैं स्नान नही करूंगी। अत: ब्राह्मण ही पूजा को निपटायें।
चेटी- यदार्याज्ञापयति। (इति निष्क्रान्ता)
चेटी- जैसी आपकी आज्ञा। (ऐसा कहकर चली जाती है)
मदनिका- आर्ये ! स्नेह: पृच्छति ,न पुरोभागितां ,तत्किं न्विदम्।
मदनिका- आर्ये ! दोष की इच्छा नही किन्तु (मेरा आपके प्रति) प्रेम पूछने को प्रेरित करता है कि यह क्या बात है। (अर्थात् आप की यह दशा क्यों हैं)।
वसन्तसेना- मदनिके ! कीदृशीं मां प्रेक्षसे ?
वसन्तसेना- मदनिके ! तुम मुझको कैसी देख रही हो ?
मदनिका - आर्याया: शून्यहृदयत्वेन जानामि हृदयगतं कमप्यार्याभिलषतीति।
मदनिका – आपके मन की उदासी के कारण यह समझ रही हूँ कि आप अपने हृदय में स्थित किसी (प्रेमी) को चाहती हैं।
वसन्तसेना- सुष्ठु त्वया ज्ञातम्। परहृदयग्रहणपण्डितां मदनिका खलु त्वम्।
वसन्तसेना- तुमने ठीक जाना। दूसरों के हृदय के भावों को समझने में तुम चतुर हो मदनिका।
मदनिका- विद्याविशेषालंकृत: किं कोऽपि ब्राह्मणयुवां काम्यते ?
मदनिका- क्या किसी खास विद्या को जानने वाले ब्राह्मण युवक को आप चाहती हैं ?
वसन्तसेना- पूजनीयो मे ब्राह्मणजन:।
वसन्तसेना- ब्राह्मण लोग तो हमारे पूज्य हैं।
टिप्पणी – इस प्रकार मदनिका के द्वारा बार-बार उस प्रेमी का नाम पूछे जाने पर वसन्तसेना बताती है कि वह आर्य चारूदत्त ही हैं। वह यह भी कहती है कि धन देने में असमर्थ होने के कारण कही उनसे मिलना भी दुर्लभ न हो जाय इसीलिए मैंने अपने आभूषणों को उनके पास धरोहर के रूप में रक्खा है।

वसन्तसेना- चेटी ! सुष्ठु त्वया ज्ञातम् ।

(नेपथ्ये) अरे भट्टारक ! दशसुवर्णस्य रूद्धो द्यूतकर: प्रपला यत: प्रपलायित: । तद् गृहाण गृहाण । तिष्ठ तिष्ठ ,दूरात्प्रदृष्टोऽसि ।

(प्रविश्यापटीक्षेपेण संभ्रान्त:)

अर्थ- वसन्तसेना- चेटी ! तुमने ठीक जाना 1

(नेपथ्य में) अरे स्वामी दश सुवर्ण के लिए बाँधा हुआ जुआरी भाग गया,भाग गया । तो (उसे) पकड़ो पकड़ो । ठहरो ठहरो दूर से ही दिखलायी पड़ गया है ।

(बिना पर्दा उठाए घबराया हुआ प्रवेश करके)

संवाहक:- आश्चर्यम् ,कष्ट एष द्यूतकरभाव: ।

संवाहक:- आश्चर्य है ! यह जुआरीपन बहुत ही कष्टदायक है ।

नवबन्धनमुक्तयेव गर्दभ्या हा ताडितोऽस्मि गर्दभ्या ।
अंगराजमुक्तयेव हा शक्त्या घटोत्कच इव पातितोऽस्मि शक्त्या ।। 1 ।।

अन्वय- हा ! नवबन्धनमुक्तया गर्दभ्या,इव गर्दभ्या ताडित: अस्मि। हा ! अंगराजमुक्तया शक्त्या घटोत्कच: इव शक्त्या पातित: अस्मि ।

अर्थ - हाय ! नवीन बन्धन से खुली हुई गर्दभी (गधी) के समान गर्दभी नामक पासे ने मुझे मार दिया । अंगराज (कर्ण) द्वारा छोड़ी हुई शक्ति से घटोत्कच के समान मैं भी शक्ति (जुएं में कौड़ियों की एक विशेष चाल) के द्वारा मारा गया **।। 1 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार तथा चित्रजाति छन्द है ।

लेखकव्यापृतहृदयं सभिकं दृष्टवा झटिति प्रभ्रष्ट: ।
इदानींमार्गनिपतित: कं तु खलु शरणं प्रपद्ये ।। 2 ।।

अन्वय- लेखकव्यापृतहृदयं सभिकम् दृष्टवा झटिति प्रभ्रष्ट: इदानीम् मार्ग निपतित: (अहम्) तु कम् खलु शरणम् प्रपद्ये **।। 2 ।1**

अर्थ- जुआरियों के अगुआ (सभिक) को कुछ लिखने में उलझा हुआ देखकर जल्दी ही (आँख बचाकर) भाग निकला और अब रास्ते पर आ गया मैं किसकी शरण में जाऊँ ? ।। 2 ।।

टिप्पणी- इस श्लोक में गाथा छन्द हे ।

तद्यावदेतौ सभिकद्यूतकरावन्यतो मामन्विष्यत: तावदहं विपरीताभ्यां पादाभ्यामेतच्छून्यदेवकुलं प्रविश्य देवीभविष्यामि ।(बहुविधं नाट्यं कृत्वा तथा स्थित:)

अर्थ- तो जब तक जुआरियों के अगुआ(सभिक) और जुआरी मुझे दूसरी ओर ढूँढ़ते है तब तक मैं उलटे पैंरों से चलकर (जैसे दक्षिण की ओर जाना हैतो उत्तर की ओर मुँह करके) इस सूने देव मन्दिर में प्रवेश कर देवता की मूर्ति बन जाऊँ। (बहुत प्रकार का अभिनय करके देवता की मूर्ति बन कर बैठ जाता है) । (तत: प्रविशति माथुरो द्यूतकरश्च)

माथुर: - अरे भट्टारक ! दशसुवर्णस्य रूद्धो द्यूतकर: प्रपला यत: प्रपलायित:। तद् गृहाण गृहाण ।

तिष्ठ तिष्ठ ,दूरात्प्रदृष्टोऽसि।

माथुरः- अरे स्वामी दश सुवर्ण के लिए बाँधा हुआ जुआरी भाग गया,भाग गया। तो (उसे) पकड़ो पकड़ो। ठहरो ठहरो दूर से ही दिखलायी पड़ गया है।

द्यूतकरः- यदि व्रजसि पातालमिन्दं शरणं च सांप्रतं यासि।

सभिकं वर्जयित्वैकं रूद्रोऽपि न रक्षितं तरति ॥ 3 ॥

अन्वय – यदि पातालम् व्रजसि इन्द्रम् शरणम् च यासि (किन्तु) एकम् सभिकम् वर्जयित्वा रूद्रः अपि (त्वाम्) रक्षितुं न तरति ॥ 3 ॥

अर्थ- यदि (अपने बचाव के लिए तुम) भूमि से नीचे के लोक (पाताल लोक) में जाते हो अथवा (देवताओं के स्वामी) इन्द्र की शरण में चले जाते हैं तो (भी) इस समय केवल सभिक को छोड़कर शिव भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते ॥ 3 ॥

माथुरः- कुत्र कुत्र सुसभिकविप्रलम्भक !

पलायसे रे भयपरिवेषितांगक !

पदे पदे समविषभं स्खलन्कुलं

यशोऽतिकृष्णं कुर्वन् ।4॥

अन्वय- हे सुसभिकविप्रलम्भक ! भयपरिवेषितांगक ! कुलं यशः अतिकृष्णम् कुर्वन् पदे पदे समविषमम् स्खलन, कुत्र कुत्र पलायसे ॥ 4 ॥

अर्थ- माथुर – अरे (मुझ जैसे) सच्चे और सीधे जुआरियों के अगुआ (सुसभिक) को भी धोखा देने वाले ! डर के मारे काँपते हुए शरीर वाले ! अपने कुल एवं कीर्ति को अत्यन्त काली करते हुए, पग-पग पर ऊँचे-नीचे लड़खड़ाते हुए तू कहाँ-कहाँ भाग रहा है ॥ 4 ॥

टिप्पणी- इस श्लोक में रूचिरा छन्द है।

द्यूतकरः- एष व्रजति। इयं प्रनष्टा पदवी।

द्यूतकरः- जुआरी- (पैरों के चिह्न को देखकर) यह जा रहा है। यहाँ पैर के चिह्न गायब हो गये (अर्थात् जाने के पैर के चिह्न गायब हो गये किन्तु आने के हैं)।

माथुरः- (आलोक्य सवितर्कम्) अरे विप्रतीपौ पादौ प्रतिमाशून्यं देवकुलम् (विचिन्त्य) द्यूतो द्यूतकरो विप्रतीपाभ्यां पादाभ्याम् देवकुलं प्रविष्टः।

माथुरः - (देखकर तर्कपूर्वक) अरे पैर (पैरों के चिह्न) उलटे हैं। देवताओं का यह मन्दिर मूर्ति से रहित है। (सोच कर) ठग जुआरी उलटे पैरों से मन्दिर में घुस गया है।

द्यूतकरः- ततोऽनुसरावः

द्यूतकरः- तो (उसका) पीछा करते हैं।

माथुरः- एवं भवेत्।

माथुरः- ऐसा ही हो। (उभौ देवकुलप्रवेशं निरूपयामः दृष्ट्वाऽन्योन्यं संज्ञाप्य)

द्यूतकर:- कथं काष्ठमयी प्रतिमा: ?

द्यूतकर:- क्या यह काठ की मूर्ति है ?

माथुर:- अरे न खलु ,न खलु शैलप्रतिमा एव भवतु । एहि द्यूतेन क्रीडाव: । (इति बहुविधं द्यूतं क्रीडति)

माथुर:- अरे? नहीं,नहीं पत्थर की मूर्ति है । ऐसा कह कर उसे विविध प्रकार से हिलाता डुलाता है और इशारा करके अच्छा ऐसा हो । आओ जुआ खेलें । ऐसा कह कर बहुत तरह से जुआ खेलता है)

संवाहक- (द्यूतेच्छाविकारसंवरणं बहुविधं कृत्वा, स्वगतम्)

अरे, कत्ताशब्दो निर्माणकस्य हरति हृदयं मनुष्यस्य ।
ढ़क्काशब्द इव नराधिपस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य ।। 5 ।।
जानामि न क्रीडिष्यामि सुमेरूशिखरपतनसंनिभं द्यूतम् ।
तथापि खलु कोकिलमधुर: कत्ताशब्दो मनो हरति ।। 6 ।।

अन्वय- अरे ! कत्ताशब्द: निर्माणकस्य मनुष्यस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य नराधिपस्य ढक्काशब्द: इव हृदयम् हरति **।। 5 ।।** द्यूतम् सुमेरूशिखरपतनसंन्निभम् जानामि (अत:) न क्रीडिष्यामि तथापि कोकिलमधुर: कत्ताशब्द: खलु मन: हरति **।। 6 ।।**

अर्थ – संवाहक – (जुआ खेलने की इच्छा को जैसे तैसे रोक कर अपने आप)

यह कौड़ी अथवा पासा की (खनखनाहट की) आवाज निर्धन (जुआरी) मनुष्य के हृदय को उसी तरह लुभाती है जिस प्रकार हाथ से राज्य निकल जाने वाले किसी राजा को ढक्का अर्थात् भेरी का शब्द (लड़ाई आदि के लिए ललचाता है) **।। 5 ।।**

जुआ (खेलना) सुमेरू पर्वत की चोटी से गिरने के समान (हानिकारक) है (मैं यह) जानता हूँ। अत: नहीं खेलूँगा तथापि कोयल के गले से निकली हुई मीठी कूक के समान कौड़ी की खनखनाहट मन को लुभा ही लेती है **।। 6 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा विपुला छन्द है **।। 5,6 ।।**

इसके पश्चात् संवाहक अपने जुआ खेलने के लोभ को रोक नहीं पाता है और जुआरी और माथुर के सामने आ जाता है । उनके द्वारा पकड़ लिए जाने पर वह कहता है कि उसके पास दश स्वर्ण मुद्रा नही है तो माथुर कहता है कि स्वयं को बेच कर दो वह बाजार में स्वयं को बेचने जाता है किन्तु कोई उसे खरीदने को तैयार नहीं होता है तब वह कहता है कि आर्य चारूदत्त के धनहीन हो जाने के कारण मैं अभागा होकर जी रहा हूँ । माथुर उसे स्वर्ण मुद्रा देने के लिए पुन: कहता है और उसके कहाँ से दूँ कहने पर उसे पकड़ कर घसीटता है ।

(तत: प्रविशति दर्दुरक:)

दर्दुरक- भो: ! द्यूतं हि नाम पुरूषस्यासिंहासनं राज्यम् ।

न गणयति पराभवं कुतश्चित्हरति ददाति च नित्यमर्थजातम् ।

नृपतिरिव निकाममायदर्शी विभववता समुपास्यते जनेन ।। 7 ।।

अन्वय- (द्यूतं) कुतश्चित् पराभवं न गणयति, नित्यम् अर्थजातम् हरति, ददाति च, निकामम् आयदर्शी राजा इव विभावता जनेन समुपास्यते **।। 7 ।।**

अर्थ- (इसके बाद दर्दुरक प्रवेश करता है)

दर्दुरक:- अरे ! जुआ तो मनुष्य का बिना सिंहासन का राज्य हे।

(जुआ) किसी से अपमान की परवाह नहीं करता है। (यह) नित्य ही धन लेता(उत्पन्न) और देता है। राजा की भाँति काफी लाभ दिखलाने वाला जुआ बड़े-बड़े धनी व्यक्तियों के द्वारा भी सेवित होता है (अर्थात् खेला जाता है) **।। 7 ।।**

टिप्पणी- इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं पुष्पिताग्रा छन्द है।

अपि च -

द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव ।

दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव ।। 8 ।।

अन्वय- द्यूतेन एव द्रव्यम् लब्धम् द्यूतेन एव दारा: , मित्रम् (लब्धम्) द्यूतेन एव दत्तम्, भुक्तम् , द्यूतेन एव सर्वम् नष्टम् **।। 8 ।।**]

अर्थ- और भी – जुआ से ही मैंने धन कमाया, स्त्री और मित्र जुएं से ही प्राप्त किया, जुएं से ही (किसी को कुछ) दिया और खाया और जुए से ही (अपना) सब कुछ गवाँ दिया ।। 8 ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में विषम अलंकार एवं विद्युन्माला छन्द है।

अपि च -

त्रेताहृतसर्वस्व: पावरपतनाच्च शोषितशरीर: ।

नर्दितदर्शितमार्ग: कटेन विर्निपातितोयामि ।। 9 ।।

अन्वय- त्रेताहृतसर्वस्व: पावरपतनात् शोषितशरीर:नर्दितदर्शितमार्ग:कटेन विनिपातित: यामि **।। 9 ।।**

अर्थ - और भी – त्रेता ('तीया'नामक एक खास दाँव) के कारण सब कुछ छीन लिया जाने वाला, पावर('दूआ' नामक एक प्रकार का दाँव) के द्वारा सन्न शरीर वाला, नर्दित ('नक्का' नामक एक तरह का दाँव) के द्वारा (घर का रास्ता दिखाया जाने वाला) कट ('पूरा'नामक एक ढंग का दाँव) के द्वारा मारा हुआ (मै) जा रहा हूँ (अर्थात् तोया, दूआ और नक्का के कारण मैं पूर्ण रूप से मिट चुका हूँ) **।। 9 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में त्रेता, पावर, नर्दित और कट ये चार जुए के विशेष दाँव बताये गए हैं। इस श्लोक में आर्या छन्द है।

(अग्रतोऽवलोक्य) अयमस्माकं पूर्वसभिको माथुर इत एवाभिवर्तते। भवतु, अपक्रमितुं न शक्यते। तदवगुण्ठयाभ्यात्मानम्। (बहुविधं नाट्यं कृत्वा स्थित:, उत्तरीयं निरीक्ष्य)

अयं पट: सूत्रदरिद्रतां गतो ह्ययं पटश्छिद्रशतैरलंकृत: ।

अयं पट: प्रावरितु न शक्यते ह्ययं पट: संवृत: एव शोभते ।। 10 ।।

अन्वय- अयम् पट: सूत्रदरिद्रताम् गत: अयम् पट: हि छिद्रशतै: अलंकृत: अयम् पट: प्रावरितुम् न

शक्यते अयम् पट: हि संवृत: एव शोभते ।। **10** ।।

अर्थ- (सामने की ओर देखकर) यह हमारा पहले का सभिक (जुआ कराने वाला) माथुर इसी ओर आ रहा है। अच्छा , भागा तो नही जा सकता। इसलिए अपने शरीर को ढक लेता हूँ।(कई प्रकार से शरीर ढकने का नाटक करके खड़ा हो जाता है, अपने दुप्पटे को देखकर)

यह कपड़ा सूत्रों की जीर्णता को प्राप्त हो गया है, यह वस्त्र निश्चय ही सैकड़ों छेदों से परिपूर्ण है। यह वस्त्र शरीर ढ़कने के लायक नही है। यह कपड़ा लपेटा हुआ रहने पर ही अच्छा लगता है ।। **10** ।।

टिप्पणी- इस श्लोक में वंशस्थ छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित श्लोंको का अनुवाद कीजिए -

1- यदि व्रजसि पातालमिन्दं शरणं च सांप्रतं यासि।
सभिकं वर्जयित्वैकं रूद्रोऽपि न रक्षितं तरति ।।

2- **द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव।**
दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव ।।---

8.4 श्लोक संख्या11से20तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

अथवा किमयं तपस्वी करिष्यति ? यो हि -
पादेनैकेन गगने द्वितीयेन च भूतले।
तिष्ठाभ्युल्लम्बितस्तावद्यावत्तिष्ठति भास्कर: ।। 11 ।।

अन्वय- एकेन पादेन गगने द्वितीयेन च भूतले उल्लम्बित: तावत् तिष्ठाम यावत् भास्कर: तिष्ठति ।। **11** ।।

अर्थ- अथवा यह तुच्छ (माथुर मेरा) कर ही क्या सकता है ? जो कि (मैं) - एक पैर आकाश में करके और दूसरा पैर जमीन पर रख तब तक लटका हुआ रह सकता हूँ जब तक सूरज रहता है। (अर्थात् जब मैं पूरे दिन इतना कठिन कार्य कर सकता हूँ तो माथुर से डरने की क्या आवश्यकता ? वह इससे और कठोर दण्छ क्या देगा।

टिप्पणी – इस श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है ।। ।। ।।

माथुर: - द्वापय द्वापय।

माथुर:- दिलाओ, दिलाओ।

संवाहक:- कुतो दास्यामि ।

संवाहक – कहाँ से दूँ ?

(माथुर: कर्षति) (माथुर घसीटता है)

दर्दुरक: - अये ! किमेतद्ग्रत: ? (आकाशे) किं भवानाहं- अयं द्यूतकर: सभिकेन खलीक्रियते न कश्चिन्मोचयति इति ? नन्वयं दर्दुरो मोचयति । (उपसृत्य) अन्तरमन्तरम् । (दृष्टवा) अये कथं माथुरो धूर्त: ?अयमपि तपस्वी संवाहक: -

अर्थ- दर्दुरक:- अरे ! यह सामने क्या हो रहा है ?(आकाश की ओर) क्या कहा आपने कि 'यह जुआरी जुआ कराने वाले (सभिक) के द्वारा मार-पीट कर अपमानित किया जा रहा है, और कोई छुड़ाता भी नही है' । तो लो यह दर्दुरक छुड़ाता है । (समीप जाकर) बस, बस हटो हटो । (देखकर) अरे क्या यह धूर्त 'माथुर' है ? और यह दूसरा बेचारा 'संवाहक' है -

य: स्तब्धं दिवसान्तमानतशिरा नास्ते समुल्लम्बिती
यस्योद्धर्षणलोष्टकैरपि सदा पृष्ठे न जात: किण: ।
यस्यैतच्च न कुक्कुरैरहरजंघान्तरं चर्व्यते ।
तस्यात्यायतकोमलस्य सततं द्यूत: संगेन किम् ? ।। 12 ।।

अन्वय – य: दिवसान्तम् आनतशिरा: (सन्) स्तब्धम् समुल्लम्बित न आस्ते, यस्य पृष्ठे उद्धर्षणलोष्ठकै: अपि सदा किण: न जात: यस्य च एतत् जंघान्तरम् कुक्कुरै: अह: अह: न चर्व्यते अत्यायतकोमलस्य तस्य सततम् द्यूतप्रसंगेन किम् ? **।। 12 ।।**

अर्थ- जो व्यक्ति (मेरे समान) दिन भर नीचे शिर करके (और ऊपर पैर करके) चुपचाप लटका हुआ नही रह सकता । जिसकी पीठ पर (पैसा न दे सकने पर दूसरे जुआरियों के द्वारा) नित्य घसीटने से ढेलो के द्वारा घट्ठा (चोट का चिह्न) भी नहीं पड़ा है । (पैसा न दे सकने के कारण भागने पर जुआरियों के द्वारा दौड़ाए गये) कुत्तों से जिसकी जांघ का यह भीतरा हिस्सा प्रतिदिन काटा नहीं जाता ऐसे अत्यन्त कोमल व्यक्ति का निरन्तर जुआ खेलने से क्या प्रयोजन ? अर्थात् जुआ खेलना आसान काम नहीं है इसमें कठिन से कठिन दु:ख भोगने पड़ते हैं । अत: कोमल व्यक्तियों को इधर नही आना चाहिए ।

टिप्पणी- इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है ।

दर्दुरक: - अरे मूर्ख ! नन्वहं दशसुवर्णान्कटकरणेन प्रयच्छामि । तत्किं यस्यास्ति धनं स किम्क्रोडे कृत्वा दर्शयति ? अरे -

दुर्वर्णोऽसि विनष्टोऽसि दशस्वर्णस्य कारणात् ।
पञ्चेन्द्रियसमायुक्तो नरो व्यापाद्यते त्वया ।। 13 ।।

अन्वय- (हे माथुर ! त्वम्) दुर्वर्ण: असि, विनष्ट: असि, (यत्) त्वया दशस्वर्णसय कारणात् पञ्चेन्द्रियसमायुक्त: नर: व्यापाद्यते **।। 13 ।।**

अर्थ- दर्दुरक:- अरे मूर्ख ! सोने की दश मोहरें तो मैं एक दाँव से दे सकता हूँ । तो जिसके पास धन होता है तो क्या वह उसको अंक (गोद) में रख कर दिखलाता फिरता है । अरे - माथुर ! तुम

अधम एवं पतित हो (जो कि) सोने की दश मोहरों के कारण से पञ्च इन्द्रियों से युक्त मनुष्य को मार रहे हो ।। **13** ।।

टिप्पणी - इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है।

संवाहक:- (आत्मगतम्) कथं धनिकात्तुलितमस्या भयकारणम् ? सुष्ठु खल्वेवमुच्यते -

य आत्मबलम् ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्य: ।
तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते ।। 14 ।।

अन्वय- य: मनुष्य: आत्मबलम् ज्ञात्वा तुलितं भारं वहति, तस्य स्खलनं न जायते कान्तारगत: च (स:) न विपद्यते ।। **14** ।**1**

अर्थ–संवाहक–(अपने मन में) क्या मेरे ही समान इसको भी धनी व्यक्ति से भय लग रहा है? वास्तव में यह सत्य ही कहा जाता है – जो मनुष्य अपनी सामर्थ्यानुसार (ताकत के अनुसार) बोझ उठाता है वह कभी भी गड्ढे में नहीं गिरता है और न ही दुर्गम मार्ग पर चलने से नष्ट ही होता है। अर्थात् यदि मैंने अपने धन का ख्याल करके जुआ खेला होता तो आज यह स्थिति नही होती ।। **14** ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं आर्या छन्द है।

संवाहक:- **सत्कारधन: खलु सज्जन: कस्य न भवति चलाचलं धनम् ।**
य: पूजविद्रुमपि न जानाति न पूजाविशेषमपि जानाति ।। 15 ।।

अन्वय – सत्कारधन: सज्जन: (भवति) खलु कस्य धनम् चलाचलम् न भवति। य: पूजयितुम् अपि न जानाति अपि य: पूजाविशेषम् जानाति ।। 15 ।।

अर्थ- संवाहक:- दूसरों का सम्मान करना ही सज्जनों का धन होता है। किसका धन चंचल नहीं होता है अर्थात् (सभी लोगो का धन नश्वर होता है)। जो व्यक्ति दूसरों को आदर भी करना नहीं जानता है ,वह क्या आदर के विशेष तरीके को जानता है ? (अर्थात् नहीं जानता है) ।। **15** ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं वैतालीय छन्द है।

माथुर:- **कस्य त्वं तनुमध्ये अधरेण रतदष्टदुर्विनीतेन ।**
जल्पसि मनोहरवचन्मालोकयन्ती कटाक्षेण ।। 16 ।।

अन्वय – हे तनुमध्ये ! कटाकक्षेण आलोकयन्ती त्वम्, रतदष्टदुर्विनीतेन अधरेण मनोहरवचनम् कस्य जल्पसि ।**1 16** ।।

अर्थ- हे क्षीण कटि वाली, कटाक्ष से देखती हुई रतिकाल में क्षत इस धृष्ट ओठ से मनोहर वचन किससे बोल रही हो ।। 16 ।1

टिप्पणी - इस श्लोक में गाथा छन्द है।

संवाहक:- आर्ये ! कृतो निश्चय:,

द्यूतेन तत्कृतं मम यद्विहस्तं जनस्य सर्वस्य ।
इदानीं प्रकटशीर्षो नरेन्द्रमार्गेण विहरिष्यामि ।। 17 ।।

अन्वय- द्यूतेन मम तत् कृतम् यत् सर्वस्य जनस्य (समक्षम्) विहस्तम् इदानीम् प्रकटशीर्ष: नरेन्द्रमार्गेण विहरिष्यामि ।। **17** ।।

अर्थ- संवाहक - आर्य, मैंने निश्चय कर लिया है। (घूम कर) जुएं ने मेरे लिए ऐसा किया कि सब व्यक्तियों से व्याकुल (अपमानित)करा डाला। इस समय खुले सिर राजमार्ग पर घूमूंगा **।। 17 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में आर्या छन्द है।

कर्णपूरक:- **अपनयत बालकजनं त्वरितमारोहत वृक्षप्रासादम्।**
किं न खलु प्रेक्षव्यं पुरतो दुष्ट हस्तीत एति ।। 18 ।।

अपि च - **विचलति नूपुरयुगलं छिद्यन्ते च मेखला मणिखचिता:।**
वलयाश्च सुन्दरतरा रत्नाकुरजालप्रतिबद्धा: ।। 19 ।।

अन्वय- बालकजन: अपनयत, वृक्षप्रासादम् त्वरितम् आरोहत, किम् न खलु प्रेक्षव्यम् पुरत: दुष्ट: हस्ती इत: एति **।। 18 ।।**

अन्वय- नूपुरयुगलं विचलति मणिखचिता: मेखला: रत्नाकुरजालप्रतिबद्धा: सुन्दरतरा वलया: च छिद्यन्ते **।। 19 ।।**

अर्थ – बालकों को (मार्ग से) हटा लो, शीघ्र ही पेड़ों एवं घरों पर चढ़ जाओ। क्या देख नहीं रहे हो कि बदमाश हाथी सामने से इधर ही आ रहा है **।। 18 ।।**

अर्थ - और भी – (हाथी के भय से भागती हुई स्त्रियों के) पायजेब का जोड़ा गिर रहा है, रत्नों से जड़ी हुई करधनियाँ , तथा छोटे-छोटे रत्नों से जड़े हुए सुन्दर-सुन्दर कंगन (भागने से आपसी धक्का-मुक्की के कारण) टूट रहे हैं **।। 19 ।।**

टिप्पणी – श्लोक संख्या 18 एवं 19 में आर्या छन्द है।

नोट - इसके बाद कर्णपूरक वसन्तसेना को यह बताता है कि उस दुष्ट हाथी ने एक सन्यासी को अपनी सूँड़ में लपेट लिया तब मेरे द्वारा उस सन्यासी को हाथी से बचाया गया। यह सुनकर वसन्तसेना कहती है कि तुमनें यह बहुत अच्छा कार्य किया किन्तु उसके बाद क्या हुआ ? तब कर्णपूरक कहता है कि उसके बाद सम्पूर्ण उज्जयिनी की जनता ने मुझे वाह कर्णपूरक वाह ! यह कह कर घेर लिया तब उनमें से एक नागरिक (चारूदत्त) ने अपने आभूषणविहीन अंगों को देख कर लम्बी साँस लेकर यह दुप्पटा मेरे ऊपर फेंक दिया। वसन्तसेना के द्वारा उस दुप्पटे को ओढ लेने पर चेटी और कर्णपूरक कहते हैं कि यह आर्या के शरीर पर अच्छा लग रहा है। वसन्तसेना उस दुप्पटे के बदले में उसे आभूषण देती है और पूँछती है कि आर्य चारूदत्त कहाँ होगें। तब कर्णपूरक कहता है कि इसी मार्ग पर होगें और वसन्तसेना चेटी के साथ छत पर चारूदत्त को देखने चली जाती है।इसी के साथ यह द्यूतकरसंवाहक तामक द्वितीय अंक समाप्त हो जाता है।

।। द्यूतकरसंवाहक नामक द्वितीय अंक समाप्त ।।

अभ्यास प्रश्न 2-

निम्नलिखित वाक्यों में सत्य असत्य बताइये –

1. शकार बौद्ध भिक्षु बन जाता है।
2. इस अंक का नाम अलंकारन्यास है।
3. चारूदत्त कर्णपूरक को अपना दुशाला उपहार स्वरूप देता है।

4. जुआरियों के मुखिया का नाम माथुर है।
5. वसन्तसेना की दासी का नाम मदनिका है।

अभ्यास प्रश्न 3 -

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए -

1- य आत्मबलम् ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्य: ।
तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते ।।

2- सत्कारधन: खलु सज्जन: कस्य न भवति चलाचलं धनम् ।
य: पूजविद्रुमपि न जानाति न पूजाविशेषमपि जानाति ।।

8.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि अंक के प्रारम्भ में मदनिका वसन्तसेना की माताजी का सन्देश लेकर आती है कि वह स्नान करके देवताओं की पूजा कर ले। उसके द्वारा स्नान के लिए मना कर देने पर मदनिका उसके व्यथित होने का कारण पूछती है तब वसन्तसेना अपनी चेटी मदनिका के साथ चारूदत्त सम्बन्धी वार्तालाप करती है। इसी समय संवाहक आता है। जुआरी और द्यूतकरों का मुखिया (माथुर) उसका पीछा करते हुए आते हैं। वसन्तसेना अपना स्वर्णाभूषण देकर संवाहक को छुड़ाती है । संवाहक विरक्त होकर बौद्व भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में उसे पकड़ कर कुचलना ही चाहता है कि वसन्तसेना का सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। इससे प्रसन्न होकर चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला कर्णपूरक को उपहार में दे देते हैं।

8.6 शब्दावली

शब्द	अर्थ
ताडित:	मारा गया

झटिति	जल्दी ही
सभिकम्	जुआरियों के अगुआ को
कत्ताशब्द:	कौड़ी की खनखनाहट
शैलप्रतिमा	पत्थर की मूर्ति
वर्जयित्वा	छोड़कर
अतिकृष्णम्	अत्यन्त काला
शोषितशरीर:	शुष्क शरीर वाला
संवृत:	लपेटा हुआ
आनत शिरा:	नीचे शिरवाला
स्खलनम्	पतन
नुपूरयुगलम्	पायजेब का जोड़ा
पतन	गिरना

8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 का उत्तर इकाई में देखें।

अभ्यास प्रश्न 2 – (1) असत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 3 का उत्तर इकाई में देखें।

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

8.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1- द्वितीय अंक का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2- जुयें में हारे हुए व्यक्ति की क्या दशा होती है।

इकाई 9 – तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 15 तक

इकाई की रूपरेखा

9•1 प्रस्तावना
9•2 उद्देश्य
9•3 श्लोक संख्या 1 से 15 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या
9•4 सारांश
9•5 शब्दावली
9•6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
9•7 सन्दर्भ ग्रन्थ
9•8 उपयोगी पुस्तकें
9•9 निबन्धात्मक प्रश्न

9•1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् प्रकरण के द्वितीय खण्ड की यह अन्तिम इकाई है। इससे पूर्व की इकाई के अध्ययन से आप यह जान चुके हैं कि किस प्रकार वसन्तसेना संवाहक को छुड़ाती है और संवाहक बौद्ध भिक्षु बन जाता है उन्मत्त हाथी के द्वारा कर्णपूरक उसे बचाता है। निर्धन होने पर भी चारूदत्त उसे पुरस्कृत करता है।

प्रस्तुत इकाई में आप तृतीय अंक का अध्ययन करेंगे जिसका नाम सधिच्छेद है। इस अंक के प्रारम्भ मे चारूदत्त और मैत्रेय संगीत सुनकर आते हैं। वे घर में आकर सो जाते हैं। इधर मदनिका को दासता से मुक्त कराने के लिए शर्विलक चसरूदत्त के घर में सेंध लगाता है और वसन्तसेना के आभूषणों को चुरा कर ले जाता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप श्लोको की व्याख्या कर सकेंगे और यह बता सकेंगे कि चारूदत्त भी संगीत प्रेमी हैं इसीलिए वह विदूषक से रेमिल के संगीत की प्रशंसा करता है और उसका संगीत सुनकर रात में वापस घर आकर सो जाते हैं। इसी बीच शर्विलक चारूदत्त के घर में सेध लगा कर वसन्तसेना के आभूषणों को चोरी कर ले जाता है।

9•2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्लोंको के साहित्यिक सौन्दर्य को बता सकेंगे।
- सज्जन व्यक्ति सदैव अपने सेवको के हितों का ध्यान रखते हैं इसकी व्याख्या कर सकेंगे।
- यह समझा सकेंगे कि मनुष्य में जो भी स्वाभाविक दोष होते हैं उन्हें दूर नहीं किया जा सकता।
- संगीत में प्रयुक्त मूर्छना शब्द का क्या अर्थ होता है यह बता सकेंगे।
- विश्लेषित कर सकेंगे कि धनी किन्तु दुष्ट स्वामी से सेवको पर दया करने वाला सज्जन स्वामी निर्धन होने पर भी श्रेष्ठ होता है।

9•3 श्लोक संख्या 1 से 15 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

(तत: प्रविशति चेट:) (उसके बाद चेट प्रवेश करता है)

चेट:- सुजन: खलु भृत्यानुकम्पक: स्वामी निर्धन्कोऽपि शोभते।

पिशुन: पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्कर: खलु परिणामदारूण: ।। 1 ।।

अपि च -

सस्यलम्पटबलीवर्दो न शक्यो वारयितु-

मन्य कलत्र प्रसक्तो न शक्यो वारयितुम् ।

द्यूतप्रसक्तमनुष्यो न शक्यो वारयितुं

योऽपि स्वाभाविकदोषो न शक्यो वारयितुम् ।1 2 ।।

अन्वय- भृत्यानुकम्पक: सुजन: स्वामी निर्धनक: अपि (सन्) खलु शोभते पुन:,द्रव्यगर्वित: पिशुन: दुष्कर: परिणामदारूण: खलु (भवति) **।। 1 ।।**

अपिच–सस्यलम्पटबलीर्वद: वारयितुं न शक्य:, अन्यकलत्रप्रसक्त: वारयितुं न शक्य:,द्यूतप्रसक्तमनुष्य: वारयितुं न शक्य: य: अपि स्वाभाविकदोष: (अस्ति स:)वारयितुम् न शक्य: **।। 2 ।।**

अर्थ – चेट – सेवको पर दया करने वाला सज्जन स्वामी निर्धन होने पर भी सुखदायी (शोभित) होता है। किन्तु धन के अहंकार में चूर दुष्ट स्वामी दु:ख से सेवा करने योग्य तथा अन्त में भंयकर होता है **।। 1 ।।**

और भी – हरे धान का लोभी सांड़, परस्त्री में आसक्त रहने वाला पुरूष, जुआ खेलने का लती मनुष्य इन सब को रोका नहीं जा सकता । और जो भी स्वाभाविक बुराइयां होती है उन्हें भी छोड़ा नहीं जा सकता **।। 2 ।।**

अर्थात् धनी किन्तु अहंकारी मालिक की सेवा करने से तो श्रेष्ठ यह होगा कि किसी निर्धन किन्तु सज्जन व्यक्ति की सेवा करे क्योंकि सज्जन व्यक्ति सदैव अपने सेवको के हितों का ध्यान रखते हैं । श्लोक संख्या 2 का भाव यह है कि मनुष्य में जो भी स्वाभाविक दोष होते हैं उन्हें दूर नहीं किया जा सकता ।

टिप्पणी – श्लोक सेख्या 1 में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा वैतालीय छन्द है तथा श्लोक संख्या 2 में अप्रस्तुतप्रशंसा एवम् दृष्टान्त अलंकार की संसृष्टि है तथा शकरी जाति नामक छन्द है ।

कापि वेलार्यचारूदत्तस्य गान्धर्वं श्रोतुं गतस्य । अतिक्रामत्यर्धरजनी अद्यापि नागच्छति । तद्यावद्बहिर्द्वारशालायां गत्वा स्वप्स्यामि । (इति तथा करोति)

(तत: प्रविशति चारूदत्तो विदूषकश्च)

अर्थ – गीत सुनने के लिए गये हुए आर्य चारूदत्त को कितनी देर हो गई । आधी रात बीत रही है । अब भी नहीं आये । तो तब तक बाहरी दरवाजे वाली कोठरी में सोऊँगा ।(वैसा ही करता है)

(इसके बाद चारूदत्त और विदूषक प्रवेश करते हैं)

चारूदत्त: - अहो अहो ! साधु साधु ,रेमिलेन गीतम् । वीणा हि नामासमुद्रोत्थितं रत्नम् । कुत: -

उत्कण्ठितस्य हृदयानुगुणा वयस्या
संकेतके चिरयति प्रवरो विनोद: ।
संस्थापना प्रियतमा विरहातुराणां
रक्तस्य रागपरिवृद्धिकर: प्रमोद: ।। 3 ।1

अन्वय – (वीणा) उत्कण्ठितस्य , हृदयानुगुणा वयस्या , संकेतके चिरयति प्रवर: विनोद:, विरहातुराणाम् ,प्रियतम: संस्थापना रक्तस्य रागपरिवृद्धिकर: ,प्रमोद: (अस्ति) **।।3।।**

चारूदत्त – वाह वाह ! रेमिल ने बहुत अच्छा गाया। वीणा तो , सही में समुद्र से निकला हुआ रत्न है। क्योकि -

अर्थ – (वीणा) अत्यधिक विरह पीड़ासे व्याकुल व्यक्ति के लिए हृदयानुरूप सखी है। इशारा किये गये स्थान पर आने में प्रेमी के विलम्ब करने पर यह वीणा मनबहलाव का अच्छा साधन है। विरह से पीड़ित को प्रिय ढाढ़स बधाने वाली (प्रेमिका) है। और प्रेमीजनों के राग(दूसरें के प्रति कामपूर्ण प्रेम) को बढ़ाने वाला मनोरंजन है **॥ 3 ॥**

टिप्पणी – इस श्लोक में वीणा का वयस्या ,आदि अनेक रूपों में उल्लेख किया गया है, अत: उल्लेख अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

विदूषक:- भो;एहि !गृहं गच्छाव: ।

अर्थ- विदूषक- अजी, आइए घर चलें।

चारूदत्त:- अहो! सुष्ठु भावरेमिलेन गीतम्।

अर्थ- चारूदत्त- अहा ! 'रेमिल' महोदय ने अच्छा गाया।

विदूषक:- मम तावद्वाभ्यामेव हास्यं जायते। स्त्रियाँ संस्कृतं पठन्त्या, मनुष्येण च काकलीं गायत:। स्त्री तावत्संस्कृतं पठन्ती, दत्तनवनस्येव सृष्टि:, अधिकं सूसूशब्दं करोति। मनुष्योऽपि काकलीं गायन् ,शुष्कसुमनोदामवेष्टितो वृद्धपुरोहितं इव मन्त्रं जपन्,दृढ़ मे न रोचते।

अर्थ- विदूषक – मुझे तो संस्कृत पढ़ती हुई स्त्री तथा धीमी राग (काकली) में गाते हुए मनुष्य,इन दोनों पर ही हँसी आती है। संस्कृत पढ़ती हुई स्त्री पहले पहल ब्याई हुई(प्रसूता) अत: नाक में नाथी गयी गाय के समान बहुत अधिक सू,सू, शब्द करती है। महीन स्वर से गाता हुआ मनुष्य भी ,सूखे फूलों की माला पहने मन्त्र जपते हुए बूढ़े पुरोहित की भाँति मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता।

चारूदत्त:- वयस्य ! सुष्ठुं खल्वद्य गीतं भावरेमिलेन। न च भवान्परितुष्ट:।

रक्तं च नाम मधुरं च समं स्फुटं च
भावान्वितं च ललितं च मनोहरं च।
किंवा प्रसस्तवचनैर्बहुभिर्मदुक्तै:-
रन्तर्हितां यदि भवेदवनितेति मन्ये ॥ 4 ॥

अपि च -

तं तस्य स्वरसंक्रमं मृदुगिर: श्लिष्टं च तन्त्रीस्वनं
वर्णानामपि मूर्च्छनान्तरगतं तारं विरामे मृदुम्।
हेलासंयमितं पुनश्च ललितं रागाद्विरूच्चारितं
यत्सत्यं विरतेऽपि गीतसमये गच्छामि श्रुण्वन्निव ॥ 5 ॥

अन्वय- (गीतम्) नाम रक्तम् च मधुरं च, समम् स्फुटं च, भावान्वितम् च ललितं च, मनोहरं च (आसीत्) वा मदुक्तै: बहुभि:, प्रशस्तवचनै: किम् ?यदि वनिता अन्तर्हिता भवेत् इति मन्ये**॥4 ॥**

अन्वय- सत्यम् यत् ,गीत समये विरते अपि वर्णानाम्, मूर्च्छनान्तर गतम् अपि तारम् विरामे मृदुम् पुन: च हेलासंयमितम् रागद्विरूच्चारितम् , तस्य मधुरगिर: तम् स्वरसंक्रमम् श्लिष्टम्, तन्त्रीस्वनम् च

श्रुण्वन् इव अहम् गच्छामि ।। **5 ।1**

अर्थ- चारूदत्त – मित्र ! रेमिल महोदय ने आज सच में बहुत ही अच्छा गीत गाया फिर भी आप प्रसन्न नहीं हुए।

(रेमिल का यह गीत) निश्चय ही रागपूर्ण,सुनने में मधुर लगने वाला(स्वर तथा लय आदि की) समता वाला, स्पष्ट, भावपूर्ण, ललित एवं मनोहर था । अथवा हमारे बहुत प्रशंसा करने से क्या (लाभ) । मुझे तो ऐसा लगता था कि (रेमिल के रूप में) मानों स्त्री छिपी हुई हो ।। **4** ।।

और भी - यह सत्य है कि गाने का समय बीत जाने पर भी अक्षरों की मूर्च्छना (स्वरों का क्रमश: उतार और चढ़ाव) के अन्तर्गत (चढ़ाने के समय) काफी ऊँचा,विराम के समय कोमल और पुन: लीलापूर्वक नियन्त्रित, रागों में दो बार उच्चारण की हुई उस (रेमिल) की कोमल वाणी की उस स्वरयोजना को तथा (उससे) मिली हुई वीणा की आवाज को, मैं सुनता हुआ सा जा रहा हूँ (अर्थात् सब प्रकार से सुन्दर रेमिल का गाना अब भी हमारे कानों में गूंज रहा है) ।। **5** ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है । ।। **4** ।।

इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है । ।। **5 ।1**

विदूषक:- भो वयस्य ! आपणान्तररथ्याविभागेषु सुखं कुक्कुरा अपि सुप्ता:। तद् गृहं गच्छाव: । (अग्रतोऽवलोक्य) वयस्य ! पश्य पश्य एषोऽप्यन्धकारस्येवावकाशं दद्न्तरिक्षप्रासादादवतरति भगवांश्चन्द्र: ।

अर्थ –विदूषक:- हे मित्र ! बाजार की गलियों में स्थान -स्थान पर कुत्ते भी सुख से सो गये हैं। तो घर चलें । (सामने देखकर) मित्र देखो,देखो । अंधेरे को (फैलने के लिए) जगह (अवकाश)सा देते हुए चन्द्रदेव भी आकाश रूपी महल से उतर रहें हैं ।

चारूदत्त:- सम्यगाह भवान् -

चारूदत्त:- आपने ठीक कहा -

असौ हि दत्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दु: ।
जलावगाढ़स्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणायमिवावशिष्टम् ।। 6 ।।

अन्वय - जलावगाढ़स्य, वनद्विपस्य,अवशिष्टम् तीक्ष्णं विषाणायम् इव हि उन्नतकोटि असौ इन्दु: तिमिरावकाशं दत्त्वा अस्तम् व्रजति ।। **6** ।।

अर्थ- जल में डूबे हुए जंगली हाथी के (जल में डूबने से) बचे हुए दाँत के तीखे अगले हिस्से की तरह उन्नत अग्रभागवाला यह चन्द्रमा अंधेरे को (फैलने के लिए) मौका देकर अस्ताचल को जा रहा है ।। **6** ।।

टिप्पणी – अवगाढ़:- अव+गाढ् +क्त । इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं उपजाति छन्द है ।

विदूषक:- भो:, इदमस्माकं गेहम् । वर्धमानक, वर्धमानक ! उद् घाटय द्वारम् ।

विदूषक:- श्रीमानजी यह हमारा घर है । वर्धमानक,वर्धमानक दरवाजा खोलो ।

चेट:- आर्यमैत्रेयस्य स्वरसंयोग: श्रूयते। आगत आर्यचारूदत्त:। तथावद् द्वारमस्योद्घाटयामि।(तथा कृत्वा) आर्य! वन्दे मैत्रेय ! त्वामपि वन्दे । अत्र विस्तीर्णं आसने निसीदतमार्यो ।(उभौ नाटयेन

प्रविश्योपविशत:)

चेट:- आर्य मैत्रेय की आवाज सुनाई पड़ती है। चारूदत्त आगए। तो अब इनके लिए किवाड़ों को खोल दूँ।(खोलकर) आर्य! प्राणाम करता हूँ। मैत्रेय, तुम्हें भी नमस्कार करता हूँ।इस बिछे हुए आसन पर आप दोनों बैठे।

(दोनों अभिनय के द्वारा प्रवेश करके बैठ जाते हैं)

विदूषक:- वर्धमानक ! रदनिकामाकारय पादौ धावितुम्।

विदूषक:- वर्धमानक ! पैर धुलवाने के लिए रदनिका को बुलवाओ।

चारूदत्त:- (सानुकम्पयम्) अलं सुप्तजनं प्रबोधयितुम्।

चारूदत्त:- (कृपापूर्वक) सोये हुए को मत जगाओ।

चेट:-आर्य मैत्रेय ! अहं पानीयं गृह्णामि। त्वं पादौ धाव।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! मैं पानी लाता हूँ। तुम (चारूदत्त के) पैरों को धोओ।

विदूषक:- (सक्रोधम्) भो वयस्य ! एष इदानीं दास्या: पुत्री भूत्वा: पानीयं गृह्णाति। मां पुनर्ब्राह्मणं पादौ धावयति।

विदूषक:- (क्रोध के साथ) हे मित्र !यह नीच जाति का होकर इस समय पानी लेता है और मुझ ब्राह्मण से पैर धोने के लिए कहता है।

चारूदत्त:- वयस्य मैत्रेय ! त्वमुदकं गृहाण। वर्धमानक पादौ प्रक्षालयतु।

चारूदत्त:- मित्र मैत्रेय ! तुम पानी लो। वर्धमानक पैरों को धोवे।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! देहुदकम्। (विदूषकस्तथा करोति, चेटश्चारूदत्तस्य पादौ प्रक्षाल्यापसरति)।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! जल दीजिए। (विदूषक जल देता है। चेट चारूदत्त का पैर धोकर हट जाता है)।

चारूदत्त:- दीयतां ब्राह्मणस्य पादोदकम्।

चारूदत्त:- इस ब्राह्मण (विदूषक) को पैर धोने के लिए पानी दो।

विदूषक:- किं मम पादोदकै: ? भूम्यामेव मया ताडितगर्दभेनेव पुनरपि लोटितव्यम्।

विदूषक:- मुझे पैर धोने के लिए जल से क्या मतलब ? पीटे गयें गधे की भाँति मुझे तो फिर जमीन पर ही लोटना (सोना) है।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! ब्राह्मण: खलु त्वम्।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! तुम तो ब्राह्मण हो।

विदूषक:- यथा सर्वनागानां मध्ये डुण्डुम: तथा सर्वब्राह्मणानां मध्येऽहं ब्राह्मण:।

विदूषक:- जैसे सभी साँपों में डोडहा (जल में रहने वाला साँप) होता है। उसी प्रकार सब ब्राह्मणों के बीच में मैं भी (नाममात्र का) ब्राह्मण हूँ। अर्थात् साँप की सार्थकता जहरीला होने में है। जहरविहीन डोडहा साँप नाममात्र के लिए साँप है उसी प्रकार विद्या,तप आदि से रहित मैत्रेय भी नाममात्र का ब्राह्मण है।

चेट:- आर्य मैत्रेय ! तथापि धाविष्यामि (तथा कृत्वा)। आर्य मैत्रेय! एतत्तत्सुवर्णमाण्डं मम दिवा,तव

रात्रौ च तद् गृहाण: । (इति दत्त्वा निष्क्रान्त:)

चेट:- आर्य मैत्रेय ! तो भी धुलाऊँगा । (पैर धुलवा कर) आर्य मैत्रेय ! यह सोने के आभूषण का सन्दूक दिन में मेरा और रात में तुम्हारा (है) अर्थात् दिन में मुझे तथा रात्रि में तुमको इसकी रक्षा करनी है । तो लो (देकर चला जाता है) ।

विदूषक:- (गृहीत्वा) अद्याप्येततिष्ठति । किमत्रोज्जयिन्यां चौरोऽपि नास्ति, य एतं दास्या:पुत्रं निद्राचौरं नापहरति । भो वयस्य ! अभ्यन्तरचतु:शालकं प्रवेशयाभ्येनम् ।

विदूषक:- (लेकर के) यह आज भी मौजूद है । क्या इस 'उज्जयिनी' में कोई चोर भी नहीं है जो नींद में बाधा डालने वाले, अधम, सोने के आभूषणों के इस सन्दूक (बक्स) को नहीं चुरा लेता है। हे मित्र ! इसको (सन्दूक को) भीतरी चौपाल में भेजता हूँ ।

चारूदत्त:-

अलं चतु:शालमिमं प्रवेश्य प्रकाशनारीधृत एष यस्मात् ।
तस्मात्स्वयं धारय विप्र: ! तावद्यावन्न तस्या: खलु भो: समर्प्यते ।। 7 ।।

(निद्रां नाटयन्, 'तं तस्य स्वरसंक्रमम्-'(3/5) इति पुन: पठति)

अन्वय- इमम् चतु:शालम्, प्रवेश्य अलम् यस्मात् एष: प्रकाशनारीधृत:, तस्मात् भो विप्र:! तावत् स्वयं धारय यावत् खलु तस्या: (हस्ते) न समपर्यते **।। 7 ।।**

अर्थ- चारूदत्त - इसे (बचाव के लिए) चौपाल में भेजना ठीक नहीं है, क्योंकि यह वेश्या की धरोहर है। इसलिए हे ब्राह्मण ! जब तक यह वसन्तसेना को लौटा नहीं दिया जाता, तब तक इसकी रखवाली तुम स्वयं करो **।। 7 ।।**

(निद्रा का अभिनय करता हुआ, 'उसका वह स्वर का उतार-चढ़ाव (3/5)यह फिर पढ़ता है)

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है ।

विदूषक:- अपि निद्राति भवान् ।

विदूषक:- क्या आप सो रहे हैं ?

चारूदत्त:- अथ किम् ।

इयं हि निद्रा नयनावलम्बिनीं ललाटदेशादुपसर्पतीव माम् ।
अदृश्यरूपा चपला जरेव या मनुष्यसत्त्वं परिभूयं वर्धते ।। 8 ।।

अन्वय- हि ललाटदेशात् नयनावलम्बिनीं इयं निद्रा माम् उपसर्पतीव इव अदृश्यरूपा, चपला, जरा,इव या मनुष्यसत्त्वं परिभूयं वर्धते ।

अर्थ- चारूदत्त:- और क्या ?

मस्तक से आँखों में उतरती हुई यह नींद मेरी ओर आ रही है (अर्थात् धीरे-धीरे मुझे वश में कर रही है) दिखाई न पड़ने वाली चंचल वृद्धावस्था की भाँति यह नींद भी मनुष्यों के बल को अभिभूत(तिरस्कृत) करके बढ़ती है **।। 8 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक के पूर्वार्द्ध में उत्प्रेक्षा एवं उत्तरार्ध में उपमा अलंकार है तथा वंशस्थ छन्द है ।

अभ्यास प्रश्न 1 –

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर अति संक्षेप में दीजिए -

1. जल में रहने वाले साँप का क्या नाम होता है।
2. किस प्रकार का व्यक्ति अपने सेवकों के लिए श्रेष्ठ होता है।
3. चारूदत्त किसके संगीत की प्रशंसा करते है।
4. श्लोक संख्या 6 में कौन सा अलंकार है।
5. वसन्तसेना के आभूषणों की जिम्मेदारी रात्रि में चारूदत्त किसको सौंपता है।

अभ्यास प्रश्न 2 –

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद करें।

1- सुजन: खलु भृत्यानुकम्पक: स्वामी निर्धन्कोऽपि शोभते।
पिशुन: पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्कर: खलु परिणामदारूण: ।।

2- असौ हि दत्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दु:।
जलावगाढ़स्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणायमिवावशिष्टम् ।।

विदूषक – तत्स्वपिव: नाटयेन स्वपिति। (तत: प्रविशति शर्विलक:)

विदूषक:- तो सोते हैं, अभिनय के द्वारा सो जाता है। (इसके बाद शर्विलक प्रवेश करता है)

शर्विलक:- **कृत्वा शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं**
शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम्।
गच्छामि भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्वो
निर्मुच्यमान: इव जीर्णतनुर्भुजंग: ।। 9 ।।

अन्वय:- शिक्षाबलेन च बलेन च शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं ,कर्ममार्गम् कृत्वा भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्वो (सन् अहम्) निर्मुच्यमान: ,जीर्णतनु: भुजंग: इव गच्छामि **।। 9 ।।**

अर्थ- शर्विलक – अपनी शिक्षा के जोर तथा बल के प्रभाव से (अपने) देह की लम्बाई चौड़ाई के सुख से प्रवेश के लायक सेंध लगा करके जमीन पर घिसटने से छिले हुए पार्श्वभागवाला मैं (शर्विलक) केंचुल छोड़ते हुए जर्जर देह वाले साँप के समान सेंध में जाता हूँ **।। 9 ।।**

टिप्पणी- निर्मुच्यमाना – निर्+मुच्+शानच् (कर्मणि) । इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

(नभोऽवलोक्य सहर्षम्) अये, कथमस्तमुपगच्छति स भगवान्मृगांक: ।
(आकाश की ओर देखकर प्रसन्नता के साथ) क्या यह भगवान् चन्द्रमा डूबने जा रहे हैं।
तथा हि -

नृपतिपुरूषशंकितप्रचारं परगृहदूषणनिश्चितैकवीरम् ।
घनपटलतमोनिरूद्धतारा रजनिरियं जननीव संवृणोति ॥ 10 ॥

वृक्षवाटिकापरिसरे सन्धि कृत्वा प्रविष्टोऽस्मि मध्यमकम् । तद्यावदिदानीं चतु:शालकमपि दूष्यामि।
अन्वय–घनपटलतमोनिरूद्धताराइयम्रजनीजननीइवनृपतिपुरूषशंकितप्रचारंरगृहदूषणनिश्चितैकवीरम् (माम्) संवृणोति **॥ 10 ॥**
अर्थ- क्योंकि -बादलों के समूह की भाँति गाढ़े अन्धकार से ताराओं को ढ़कने वाली यह रात माता के समान, राजा के सिपाही जिसके आने-जाने को शंका की दृष्टि से से देखते हैं तथा जो दूसरों के घरों में सेंध लगाने में माना हुआ सबसे बड़ा वीर है। ऐसे मुझको ढ़क रही है। अर्थात् (अंधेरी रात चोरों को छिपाकर उसी प्रकार से उनकी रक्षा करती है, जिस प्रकार माता अपने बालक की) **॥ 10 ।**
बागीचे के पास की चहारदीवारी में सेंध लगाकर (चारूदत्त के) घर में घुस आया हूँ। तो अब इस चौपाल में भी सेंध लगाता हूँ।
टिप्पणी - इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पुष्पिताग्रा छन्द है।

भो:, **कामं नीचमिदं वदन्तु पुरूषा: स्वप्ने च यद्वर्धते**
विश्वस्तेषु च वञ्चनापरिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत् ।
स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं बद्धो न सेवाञ्जलि-
र्मागो ह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना ॥ 11 ॥

तत्कस्मिन्नुदेशे संधिमुत्पादयामि।
अन्वय – यत् स्वप्ने वर्धते विश्वस्तेषु वञ्चनापरिभव: च हि तत् चौर्यं शौर्यं न (अत:) इदम् कामम् नीचम् वदन्तु स्वाधीना वचनीयता अपि हि वरम् बद्ध: सेवाञ्जलि: न हि एष: मार्ग: पूर्वम् द्रौणिना नरेन्द्रसौप्तिकवधे कृत: **॥ 11 ॥**
अर्थ – जो (चोरी) मनुष्यों के सो जाने पर होती है तथा जिसमें (चोरी में) विश्वास के साथ सोये हुए लोगो के धन का छिनना (अपहरण) रूप अपमान होता है वह चोरी है,शूरता नहीं। अत: मनुष्य लोग उस चोरी को भले ही अधम कहें (किन्तु फिर भी मेरा तो यही विचार है कि) किसी के भी अधीन न होने के कारण यह चोरी रूप निन्दित काम भी अच्छा है। किसी की सेवा में हाथ जोड़ना अच्छा नहीं। और यह चोरी का रास्ता तो पहले ही राजा (पाण्डव) के सोये हुए (पुत्रों) की हत्या में 'द्रोणाचार्य' के पुत्र (अश्वत्थामा) ने दिखा दिया है **॥ 11 ॥**
तो किस स्थान पर सेंध लगाऊँ।
टिप्पणी – सौप्तिक = निद्रासम्बन्धी ,स्वप् +क्त =सुप्त: +ड़स् (इक्)।
इस श्लोक में काव्यलिंग एवं अर्थान्तरन्यास अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

देश: को नु जलावसेकशिथिलो यस्मिन्न शब्दो भवे-
द्भित्तीनां च न दर्शनान्तरगत: संधि: करालो भवेत् ।
क्षारक्षीणतया च लोष्टककृशं जीर्णं क हर्म्यं भवे-
कस्मिन्स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत्स्यादर्थसिद्धिश्च मे ।। 12 ।।

अन्वय – क: नु भित्तीनाम् देश: जलावसेकशिथिल: भवेत् यस्मिन्न शब्दा न भवेत् सन्धि: च कराल: भवेत् न च दर्शनान्तरगत: क्व च हर्म्यं क्षारक्षीणतया, लोष्टककृशं, जीर्णम् च भवेत् ,कस्मिन् स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत् मे अर्थसिद्धि: च स्यात् ।। **12** ।।

अर्थ- हमेशा पानी पड़ने से गीला अत: कमजोर हुआ दीवारों का कौन वह ऐसा स्थान होगा, जिसमें (सेंध लगाते समय) आवाज न हो, सेंध बड़ी हो,किन्तु (बगल में भी आने जाने वालों को) दिखलायी न पड़े। और कहाँ की दीवार लोनख(क्षार) लग जाने से पतली हो जाने के कारण कम ईटों वाली एवं जर्जर होगी ? किस जगह (सेंध करने से) स्त्रियों का सामना न होगा और मेरे चोरों के कार्य में सफलता भी मिलेगी ।। **12** ।।

टिप्पणी – जीर्णम् = पुराना – जृ+क्त। इस श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(भित्ति परामृश्य) नित्यादित्यदर्शनोद्कसेचनेन दूषितेयं भूमि: क्षारक्षीणा। मूषिकोत्करश्चेह।

हन्त, सिद्धोऽयमर्थ: । प्रथममेतत्स्कन्दपुत्राणां सिद्धिलक्षणम् । अथ कर्मप्रारम्भे कीदृशमिदानीं संधिमुत्पादयामि । इह खलु भगवता कनकशक्तिना चतुर्विध: संध्युपायो दर्शित: । तद्यथा पकेष्टकानामाकर्षणम् , आमेष्टकानां छेदनम्, पिण्डमयानां वेधनम्, काष्ठमयानां पाटनमिति। तदत्र पकेष्टके इष्टिकाकर्षणम्। तत्र -

अर्थ – (भित्ति को टटोलकर) प्रतिदिन प्रात: सूर्य के दिखलायी पड़ने पर जल देने से यह (भूमि) दीवार गीली एवं लोनल लगने से फटी हुई है। यहाँ चूहों के द्वारा (खने गये छोटे-छोटे मिट्टी के टुकड़ों का) ढेर भी है। वाह ! काम बन गया। 'कार्तिकेय' के पुत्रों (चोरों) का यह (आसानी से सेंध फोड़ने का उपाय मिलना) कार्य सिद्ध होने का प्रथम चिह्न है। अब काम शुरू करने पर यहाँ कैसी सेंध बनाऊँ। वास्तव में तो इस सम्बन्ध में तो भगवान 'कनकशक्ति' (चोरी का उपाय बताने वाले एक आचार्य) ने चार प्रकार का सेंध फोड़ने का उपाय बतलाया है। जैसे कि पक्की ईटों (के मकान में ईटों)का बाहर खींचना,कच्ची ईटों (के घरों में ईटों)का काटना, मिट्टी के पिण्डों (से बनी हुई दीवारों) को पानी से सींचना, काठ(से बनी दीवारों के काठो) को उखाड़ना। तो यहाँ पक्की ईटों (के मकान में ईटों) का खींचना ही ठीक होगा। यहाँ -

पद्मव्याकोशं भास्करं बालचन्द्रं
वापी विस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम् ।
तत्कस्मिन्देशे दर्शयाभ्यात्मशिल्पं
दृष्टवा श्वो यं यद्विस्मयं यान्ति पौरा: ।। 13 ।।

तदत्र पक्वेष्टके पूर्णकुम्भं एव शोभते। तमुत्पादयामि।

अन्वय:- पद्मव्याकोशम्, भास्करं बालचन्द्रं, वापी विस्तीर्णम् स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम् (एते सप्त सन्धिप्रकारा सन्ति) तत् कस्मिन् देशे आत्मशिल्पम् दर्शयामि, यत् यम् दृष्टवा श्व: पौरा: विस्मयम् यान्ति ।। **13** ।।

अर्थ:- खिले हुए कमल, सूर्य(गोल), द्वितीया के चन्द्रमा(अर्द्धचन्द्राकार) ,बावड़ी, विस्तृत स्वस्तिक, पूर्ण घड़ा, (ये सात सेंध के प्रकार हैं)तो किस जगह अपनी (सेंध फोड़ने की) चतुराई दिखलाऊँ । जिसे देखकर प्रात: नगर के लोग आश्चर्यचकित हो जाँय ।। **13** ।।

तो इस पकें ईटों (वाले मकान) में पूर्ण घड़े के आकार की सेंध ही अच्छी लगती है(अत:) उसी को बनाता हूँ।

टिप्पणी- विस्मयम् – आश्चर्य को, वि+स्मि+अच् । इस श्लोक में वैश्वदेवी छन्द है ।

अन्यासु भित्तिषु मया निशि पाटितासु
क्षारक्षतासु विषमासु च कल्पनासु ।
दृष्टवां प्रभातसमये प्रतिवेशिवर्गो
दोषांश्च मे वदति कर्मणि कौशलं च ।। 14 ।।

नमोवरदाय कुमारकार्तिकेयाम्, नम: कनकशक्तये ब्रह्मणदेवाय देवव्रताय ,नमो भास्करनन्दिने, नमोयोगाचार्याय यस्याहं प्रथम: शिष्य: । तेन च परितुष्टेन योगरोचना मे दत्ता ।

अन्वय- निशि अन्यासु क्षारक्षतासु ,भित्तिषु,विषमासु, कल्पनासु, मया पाटितासु प्रभातसमये प्रतिवेशिवर्ग: दृष्टवा मे दोषाम् कर्मणि कौशलम् च वदति ।

अर्थ- रात के समय दूसरी, लोनल से कटी हुई दीवारों के, विचित्र सूझ-बूझ के साथ मेरे द्वारा, फोड़ी जाने पर प्रात:काल पड़ोसी लोग(सेंध को) देखकर मेरे अपराध(दोष)एवं (सेंध बनाने के)काम की चतुराई को कहेगें ।। **14** ।।

वरदानी कुमार कार्तिकेय(शिव के पुत्र) को नमस्कार है । कनकशक्ति, ब्रह्मणयदेव, एवं देवव्रत के लिए नमस्कार है । भास्करनन्दी के लिए नमस्कार है ।योगाचार्य को नमस्कार है जिनका मैं प्रथम शिष्य हूँ ।मुझसे सन्तुष्ट होकर उन्होने योगरोचना (एक ऐसा मलहम जिसके लगा लेने से मनुष्य दिखलाई नहीं पड़ता और न तो शस्त्र आदि के मारने से चोट ही लगती है)मुझे दी है ।

टिप्पणी- इस श्लोक में तुल्ययोगिता अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है ।

अनया हि समालब्धं न मां द्रक्ष्यन्ति रक्षिण: ।
शस्त्रं च पतितं गात्रे रूजं नोत्पादयिष्यति ।। 15 ।।

अन्वय:- अनया समालब्धम् माम् रक्षिण: हि न द्रक्ष्यन्ति (तथा) गात्रे पतितम् शस्त्रम् च रूजम् न उत्पादयिष्यति ।। **15** ।।

अर्थ- (शरीर में) इस (योगरोचना) के लेपन कर लेने पर मुझको पहरों में घूमने वाले सिपाही नहीं देख सकेगें । और शरीर पर पड़ा हुआ शस्त्र पीड़ा नहीं उत्पन्न करेगा ।। **15** ।।

टिप्पणी – समालब्धम् – सम्+आ+लभ्+क्त । इस श्लोक में समुच्चय अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है ।

अभ्यास प्रश्न 3 –

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए –

1- **कृत्वा शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं**
शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम् ।
गच्छामि भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्वो
निर्मुच्यमानः इव जीर्णतनुर्भुजंगः ।।

2- **नृपतिपुरूषशंकितप्रचारं परगृहदूषणनिश्चितैकवीरम् ।**
घनपटलतमोनिरूद्धतारा रजनिरियं जननीव संवृणोति ।।

9.4 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि चारूदत्त और मैत्रेय संगीत सुनकर आते हैं। वे घर में आकर सो जाते हैं। इधर मदनिका को दासता से मुक्त कराने के लिए शर्विलक चारूदत्त के घर में सेंध लगाता है और वसन्तसेना के आभूषणों को चुरा कर ले जाता है।

9.5 शब्दावली -

शब्द	अर्थ
द्यूतप्रसक्तमनुष्यः	जुआं खेलने का लती मनुष्य
भृत्यानुकम्पकः	सेवको पर दया करने वाला
द्रव्यगर्वितः	धन के मद में चूर
सुजनः	सज्जन
स्फुटम्	स्पष्ट
प्रशस्तवचनैः	प्रशंसा के वाक्यों से

जलावगाढ़स्य	जल में डूबे हुए
तीक्ष्णम्	तीखे, नुकीले
इन्दु:	चन्द्रमा
अपसरति	हटता है
चतु:शालम्	चौपाल में
रजनी	रात
हर्म्यम्	महल
सन्धिप्रकारा:	सेंधों के प्रकार
आत्मशिल्पम्	अपनी कला को
भित्तिषु:	दीवारों में

9.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) डोडहा (2) सज्जन व्यक्ति (3) रेमिल (4) उपमा (5) मैत्रेय।
अभ्यास प्रश्न 2 – उत्तर इकाई में देखें।
अभ्यास प्रश्न 3 – उत्तर इकाई में देखें।

9.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

9.8 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

9.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- तृतीय अंक का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

इकाई -10 तृतीय अंक श्लोक 16 से 30,मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 श्लोक संख्या 16 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
10.3.1 श्लोक संख्या 16 से 20 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
10.3.2 श्लोक संख्या 21 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
10.3.3 श्लोक संख्या 26 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
10.4 सारांश
10.5 पारिभाषिक शब्दावली
10.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
10.7 संदर्भग्रन्थ
10.8 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् प्रकरण से सम्बन्धित यह 10 वीं इकाई है इसके पूर्व की इकाईयों में आपने प्रथम अंक से लेकर तृतीय अंक की 9 वीं इकाई में उल्लिखित नाटकीय संवादों का भली प्रकार अध्ययन किया इसके पूर्व के श्लोकों में विदूषक, चारूदत्त , शर्विलक आदि के संवादों का अध्ययन कर तथ्यों से परिचय प्राप्त किया है।

प्रस्तुत इकाई में इन्ही पात्रों से सम्बन्धित संवादों का अध्ययन कराना ही इस इकाई का विषय है। शर्विलक चोरी की विद्या द्वारा अपने शरीर की लम्बाई , चौडाई के अनुपात में सेंध लगाकर बूढे सर्प की भाति सेंध में घुसता है। वह योगाचार्यो को प्रणाम कर उनके द्वारा दी गयी योगरोचना का लेप लगाकर निश्चिन्त हो जाता है कि अब मुझे देख कर भी पहचान नही सकता है। न ही कोई मार सकता है। किन्तु लेप लगाने के पश्चात वह पश्चाताप करते हुए जो कहता है। उसी तथ्य का वर्णन इसी इकाई में श्लोक संख्या 16 से प्रारम्भ है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तृतीय अंक में वर्णित चौर विद्या एवं अन्य तथ्यों से अवगत होकर तृतीय अंक की अन्यान्य विशेषताओं को बता सकेगें।

10.2 उद्देश्य

मृच्छकटिकम तृतीय अंक में नवीं इकाई के वर्णन के पश्चात शेष अंश के अध्ययन की इस दसवीं इकाई में विदूषक, चारूदत्त , शर्विलक आदि से सम्बन्धित संवादों का अध्ययन करने पश्चात् आप –

1. योगरोचना के वैशिष्ट्य को बता सकेगें।
2. सेंध काटने के विधान से परिचित हो सकेगें।
3. शपथ के महत्व को बता सकेगें।
4. गो और ब्राह्मण के सम्बन्ध में ली गयी शपथ का विशेष महत्व होता है यह भी समझा सकेगें।
5. पशुओं, माया ,भाषा ,दीप, पानी आदि के महत्व से परिचित हो सकेगें।

10.3 श्लोक संख्या 16 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

श्लोक संख्या 16 के ठीक पूर्व वर्णित तथ्यों को यहॉ प्रकट करना नितान्त उचित है। शर्विलक चोरी की गयी विद्या में प्रवीण है। वह विदूषक के सो जाने के बाद मंच में प्रवेश करते हुए कहता है -

अपनी चोर विद्या के जोर से तथा अपनी ताकत से, अपनी देह की लम्बाई चौड़ाई के अनुपात में सेंध लगाकर, जमीन पर बराबर सरकने के कारण देह के छिले होने वाले में केंचुल छोडे. बूढे सॉप की तरह सेंध में घुसता है।

(आकाश की ओर देखकर खुशी के साथ)

अरे , क्या भगवान् चन्द्रमा अस्त होने जा रहे है ? उसी प्रकार- राजकीय पहरेदारों की सन्दिग्ध

दृष्टि से देखने वाला, तथा दूसरों के घरों में सेंध लगाने वाला शातिर वीर, मुझे, अपनी सघन अन्धकार में सारे संसार को डुबाने वाली यह रात मॉ की तरह अपनी अन्धकार रूपी स्नेहान्चल से ढॅक रही है। फुलवाड़ी के पास की चहार दीवारी में सेंध लगाकर मैं आहाते के भीतर तो घुस आया हूॅ, अब इस चौपाल में भी सेंध लगा दी लूँ –

लोग चोरी को अधम भले ही कहें , जो लोगों के सो जाने पर ही होती है, तथा जिसमें धोखे से विश्वस्त लोगों का धन अपहृत कर उन्हें अपमानित किया जाता है इसीलिये यह चोरी है, वीरता नहीं। पर मेरी मान्यता कुछ और है- किसी के आगे दास बनकर हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने की अपेक्षा चोरी का यह ध्नधा स्वतन्त्र होने के कारण उत्तम है। यह रोजगार यहॉ बहुत पहले से चला आ रहा है। द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने चोरी से ही युधिष्ठिर के बेटों को मारा था। अत: इस काम में कोई दोष नहीं है।

तो फिर सेंध कहॉ काटी जाये-

(सोचना यह है कि) लगातार पानी गिरने से दीवार को कौन भाग कमजोर होगा, जिसमें सेंध लगाते आवाज नहीं होगी। सेंध बड़ी हो पर अगल –बगल से गुजरने वालों की निगाह से बची हो, साथ ही यह भी देखना होगा कि नोनी लग जाने के कारण दीवार का कौन-सा भाग कमजोर हो गया है और किस जगह सेंध लगाने से औरतों का सामना किये बिना काम में सफलता हासिल होगी।

(दीवार टटोलकर) रोज-रोज सूर्य की उपासना के क्रम में पानी गिरने के कारण यहॉ की मिट्टी गीली बनी है, साथ ही चूहों ने भी यहॉ ही धूल का ढेर लगा दिया है। चलो, हमारा काम तो अपने आप बन गया। क्योंकि, आसानी से सेंध काटने की जगह का मिल जाना चोरों की सफलता का पहला लक्षण है। तो फिर इस चोरी के लिए इस दीवार में कैसी सेंध लगाऊँ ? चोरों के गुरू भगवान् कनक-शक्ति ने सेंध लगाने के चार तरीकें बतलाये हैं, पक्की ईटों से बनी दीवार से ईटों को खीचकर, कच्ची दीवार से ईटों को काटकर, मिट्टी की भीत को पानी से फुला कर तथा काठ की दीवार को चीर कर सेंध लगाना चाहिए। तो फिर, इस पक्की दीवार से ईटों को खींचना चाहिए – खिले कमल की तरह या सूर्य-मण्डल की तरह गोल अथवा दूज के चॉद की तरह टेढी , या विशाल सरोवर की तरह चौकोर अथवा स्वस्तिक की तरह तिकोनी या घड़े की तरह फैली सिकुड़ी कैसी सेंधकाटूँ ? जिसे कल सबेरे देखकर लोग दंग रह जायें।

तो फिर , इस पक्की ईट की दीवार में घडे के आकार की सेंध ही ठीक फबती है, तो वैसी ही सेंध क्यों न काटूँ –रात की इस निस्तब्धता में काई लगी इस सीली दीवार में काटी गई भयंकर सेंध को जब कल सबेरे लोग देखेंगे, तो एक ओर जहॉ मेरे चौर्य कर्म की निन्दा करेंगे, वहीं मेरी सेंध काटने की कला की प्रशंसा भी अवश्य करेंगे। मनोवांछित फलदाता कुमार कार्त्तिकेय को मेरा पहला प्रणाम। फिर प्रभावशाली ब्रह्मण्य देव को नमस्कार। पुन: देवपरायण चौराचार्य कनकशक्ति को नमस्कार। भास्करनन्दी को प्रणाम । प्रणाम योगाचार्य को जिनका मैं पहला चेला हूँ । उन्होंने प्रसंन्न होकर मुझे योगरोचना दी। इस योगरोचना का लेप मैंने अपनी देह

में कर लिया है। फलत: अब न मुझे कोई पहरेदार ही देख सकता है और न तो शस्त्र के आघात से कोई चोट लग सकती है।

इस प्रकार उपर्युक्त वर्णनों के क्रम में वह अपनी योजना के अनुसार जो करता है। उसी का वर्णन अग्रिम श्लोक में प्रदर्शित है-

10.3.1 श्लोक संख्या 16 से 20 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

(तथा करोति)धिक् कष्टम, प्रमाणसूत्रं से विस्मृतम्। (विचिन्त्य) आं, इदं यज्ञोपवीतं प्रमाणसूत्रं भविष्यति। यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राह्मणस्य महदुपकरणद्रव्यम्, विशेषतोऽस्मद्विधस्य। कुत:

एतेन मापयति भित्तिषु कर्ममार्ग-

मेतेन मोचयति भूषणसम्प्रयोगान्।

उद्घाटको भवति यन्त्रदृढे कपाटे

दष्टस्य कीटभुजगै: परिवेषनञ्च ।।16।।

अन्वय:- एतेन , भित्तिषु, कर्ममार्गम्, मापयति, एतेन, भूषणसंयोगान्, मोचयति, यन्त्रदृढे, कपाटे, उद्घाटक:, भवति, कीटभुजगै: दष्टस्य, परिवेष्टनम्, च भवति।

हिन्दी अनुवाद - उसी प्रकार करता है। (देह में लेप लगाकर) हाय, हाय, मैं तो नापने वाली रस्सी ही लाना भूल गया। (कुछ सोचकर) अच्छा तो यह जनेऊ ही नापने का धागा बन जायेगा। ब्राह्मण के लिए तो जनेऊ बड़े काम की वस्तु है। विशेषकर मुझे जैसे ब्राह्मण के लिए तो यह और उपयोगी है क्योंकि –

इससे सेंध काटते समय भीत नापी जाती है। इसक मदद से देह में पहने हुए जेवरों की हुक खोली जाती है। इसकी सहायता से कसकर लगाई गई किवाडों की किल्ली आसानी से खुल जाती है। जहरीले कीड़े या सॉपों के काटने पर इससे मजबूत गॉठ लगाई जाती है।

मापयित्वा कर्म समारभे। (तथा कृत्वा, अवलोक्य च) एकलोष्ठावशेषोऽयं सन्धि:। धिक् कष्टम्। अहिना दष्टोऽस्मि। (यज्ञोपवीतेनाङ्गुलिं वद्ध्वाविषवेगं नाटयति। चिकित्सां कृत्वा) स्वस्थोऽस्मि। (पुन: कर्म कृत्वा, दृष्ट्वा च) अये! ज्वलति प्रदीप:। तथाहि-

शिखा प्रदीपस्य सुवर्णपिञ्जरा

महीतले सन्धिमुखेन निर्गता।

विभाति पर्यन्ततम:समावृता

सुवर्णरेखेव कषे निवेशिता ।। 17 ।।

अन्वय: - सुवर्णपिंजरा, सन्धिमुखेन, महीतले, निर्गता,पर्यन्ततम: समावृता, प्रदीपस्य, शिखा , कषे ,निवेशिता, सुवर्णरेखा, इव, विभाति।

हिन्दी अनुवाद- तो फिर इसी से नाप कर सेंध काटना शुरू कर दूँ। (उसी तरह करके तथा देखकर) अब तो इस सेंध से एक ही ईट निकालना वच गया। हाय राम, मुझे तो सॉप ने काट लिया। (जनेऊ से अँगुली बॉधकर देह में जहर छहरने का अनुभव करताहै; कुछ उपचार करने

के बाद) अब ठीक हो गया। (सेंधलगाने के बचे कामों को पुराकर तथा भीतर झॉंकर) अरे भीतर तो दीप जल रहा है। जैसे – अन्धकार में डूबी काली धरती पर, दीवार से काटी गई सेंध की राह से निकाली दीप की पीली लौ काली कसौटी पर खींच गई स्वर्णरेखा की तरह सुशोभित हो रही है। **१७ ।।**

प्रस्तुत श्लोक में दीपक की पीली लौ को काली कसौटी के ऊपर खीची गयी रेखा के समान बताया गया है अत: यहॉं पर श्रौती उपमा अलंकार है। इस पूरे श्लोक में वंशस्थ छन्द का प्रयोग है। (पुन: कर्म कृत्वा) समाप्तोऽयं सन्धि।भवतु:प्रविशामि । अथवा न तावत् प्रविशामि, प्रतिपुरूषं निवेशयामि । (तथा कृत्वा) अये ! न कश्चित्। नम: कार्त्तिकेयाय। (प्रविश्य, दृष्ट्वा च) अरे ! पुरूषद्वयं सुप्तम्। भवतु, आत्मरक्षार्थद्वारमुद्घाटयामि। कथं जीर्णत्वाद् गृहस्य विरीति कपाटम्। तद् यावत् सलिलमन्वेषयामि । क्व नु खलु सालिलं भविष्यति ?! (इतस्ततो दृष्ट्वा, सलिलं गृहीत्वा क्षिपन्,सशड्कम्)मा तावत् भूमौ पतत् शब्दमुत्पादयेत्। (पृष्ठेन प्रतीक्ष्य कपाटमुद्घाटय) भवतु, एवं तावदिदानीपरोक्षे। किं लक्ष्यसुप्तम्,उत परमार्थसुप्तमिदं द्वयम् ? (त्रासयित्वा, परीक्ष्य च) अये ! परमार्थसुप्तेनानेन भवितव्यम्। तथाहि-

नि:श्वासोऽस्य न शड़्कित: सुविशद: लुल्यान्तरं वर्त्तते
दृष्टिर्गाढनिमीलिता न विकला नाभ्यन्तरे चञ्चला।
गात्रं स्रस्तशरीरसन्धिशिथिलं शय्याप्रमाणाधिकं
दीपञ्चापिन मर्षयेदभिमुखं स्याल्लक्ष्यसुप्तं यदि ।।18।।

अन्वय:- अस्य, नि:श्वास:, शड़्कित:, न सुविशद:, तुल्यान्तरम्, वर्त्तते, दृष्टि:, गाढनिमीलिता, न, विकला, अभ्यन्तरे,न, चञ्चला, गात्रम्, स्रस्तशरीरसन्धिशिथिलम्, शय्याप्रमाणाधिकम्, यदि,लक्ष्यसुप्तम्, स्यात्, अभिमुखम् ,दीपम् चअपि,न , मर्षयेत् ।।18।।

हिन्दी अनुवाद- (फिर सेंध काटकर) सेंध तो अब पूरी कट चुकी है। तो फिर अब इसमें घुस कर देखूँ अथवा पहले स्वयं न घुसकर इस कठपुतले को ही घुसाता हूँ (कठपुतले को घुसाकर) अरे घर में तो कोई नहीं है। अच्छा तो अपने बचाव के लिए किवाड़ तो खेल लूँ । पुराना घर होने के कारण खोलते समय किवाड़ें चरमराती हैं। तो पहले इन्हें ठीक करने के लिए पानी खोजता हूँ ,पर पनी मिलेगा कहॉं ? (इधर-उधर देखते हुए, पानी लेकरऔर उसे छींटकर सन्देह के साथ) पानी गिरने से तो आवाज होगी,अच्छा तो ऐसाकरूँ। (पीठ के सहारे किवाड़ी उतारकर) अब इन्हें भी क्यों न जॉंच लूँ।ये सोने का बहाना किए है अथवा सचमुच सोये हैं। (डरा कर और जॉंचकर) अरे, ये दोनों तो सचमुच सोये हैं। क्योंकि -

ये दोनों नि:शंक रूप से सोये है। इनकी सॉंसे स्वाभाविक रूप से चल रही है। लगातार इसकी सॉंसे समान अन्तर पर चल रही है। ऑंखे अच्छी तरह मूँदी है। उनमें न किसी प्रकार की विकृतियॉं है और न इनकी पुतलियॉं ही चंचल हैं, शरीर के प्रत्येक अंग शिथिल पड़े हैं। बिछावन से हाथ –पैर बाहर लटके रहे हैं। अगर ये सचमुच सोये नही होते तो सामने जलते दीप की रोशनी सहन नहीं कर पाते **।18।**

इस श्लोक में समुच्च तथा अनुमान दो अलंकारों का प्रयोग है। पूरे श्लोक में शार्दूलविक्रीवित्त छन्द है।

(समन्तादवलोक्य) अये ! कथं मृदङ्ग:, अयं दर्दुर:, अयं पणव:, इयमपि बीणा, एते वंशा:, अमी पुस्तका: । कथं नाटयाचार्यस्य गृहमिदम् । अथवा , भवनप्रत्ययात् प्रविष्टोऽस्मि । तत् किं परमार्थदरिद्रोऽयम्? उत राजभयाच्चोरभयाद्वा भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति तन्ममापि नाम शर्विलकस्य भूमिष्ठं द्रव्यम। भवतु बीजं प्रक्षिपामि । (तथा कृत्वा) निक्षिप्तं बीजं न क्वचित् स्फारीभवति। अये ? परमार्थदरिद्रोऽयम् । भवतु गच्छामि ।

हिन्दी अनुवाद- (चारों ओर देखकर) अरे यह मृदंग है, यह पखावज है,ये छोटे ढोल हैं, यह वीणा, ये ऑसूरियॉ, ये पुस्तकें । तो क्या मैं किसी संगीतशिक्षक के घर में घुस आया हूँ। या घर की विशालता के धोखें में घुसा हूँ । तो क्या गृहपति निश्चय ही दरिद्र है ? या राजा और चोर के डर से धन को धरती से गाड़ कर रखता है क्या ? तो धरती के नीचे का गड़ा हुआ धन तो शर्विलक का होता ही है। अच्छा तो इसे जॉचने के लिए सरसों फेंकता हूँ । (सरसों फेंककर) अरे यह तो बढती ही नहीं है। तो क्या ये सचमुच दरिद्र है ? तो यहॉ से मैं चलता हूँ।

विदूषक:- {भो वयस्य ! सन्धिरिव दृश्यसे, चौरमिव पश्यामि , तदृह्यातु भवानिदं सुवर्णभाण्डम् }।

विदूषक:- (सपने में बड़बड़ाता है।) हे मित्र , सेंध दिखलाई पड़ रही है, चोर को मैं देख रहा हूँ । लो , इस गहने की पेटी को अपने पास रक्खो।

शर्विलक:- किं नु खलु अयमिह मां प्रविष्टं ज्ञात्वा दरिद्रोस्मीत्युपअये , जर्जर –स्नानशाटीनिबद्धं दीपप्रभयोद्दीपितं सत्यमेवैतदलङ्करणभाण्डम्। भवतु,गृह्णामि । अथ वा, न युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनंपीडयितुम् । तद् गच्छामि।

शर्विलक- तो क्या मैं यहॉ आया हूँ , यह जानकर मेरी निर्धनता की यह खिल्ली उड़ा रहा है? तो क्या इसे मार डालूँ या कमजोर दिमाग का होने के कारण सपने में बड़बडा रहा है ? (देखकर) फटी पुरानी नहाने की धोती की गॉठ में लपेटा हुआ जेवरों का डिब्बा तो दीप के प्रकाश में सचमुचचमचमा रहा है। अच्छा तो इसे लेता हूँ। अथवा –अपने ही तरह सुवंश में उत्पन्न इस गरीब को सताना क्या उचित होगा ? तो लौट चलूँ।

विदूषक: - {भो वयस्य ! शापितोऽसि गोब्राह्मणकाम्यया,यवि एतत् सुवर्णभाण्डं न गृह्णासि । }

अनुवाद – विदूषक – हे मित्र, तुम्हें गाय और ब्राह्मण की कसम है; यदि इस डिब्बे को तुम न लो।

शर्विलक: - अनतिक्रमणीयाभगवती गोकाम्या, ब्राह्मणकाम्या च। तद् गृह्णामि । अथ वा, ज्वलतिप्रदीप: । अस्ति च, मया प्रदीपनिर्वापणार्थमाग्नेय: कीटो धार्यते। तं तावत् प्रवेशयामि, तस्यायं देशकाल: । एष मुक्ती मया कीटो यात्वेव । तं तावत् प्रवेशयामि, तस्यां देशकाल:। एष कुक्ती पक्षद्वयानिलेन निर्वापितो भद्रपीठेन, धिक् कृतमन्धकारम्। अथ वा, मयापि अस्मद् ब्राह्मकुले नधिक् कृतमन्धकारम्?अहं हि चतुर्वेदविदोऽप्रतिग्राहकस्य पुत्र: शर्विलको नाम ब्राह्मणो

गणिकामदनिकार्थमकार्यमनुतिष्ठामि। इदानीं करोमि ब्राह्मणस्य प्रणयम्। (इति जिघृक्षति।)

अनुवाद –शर्विलक- गो-ब्राह्मण की कसम तो उपेक्षणीय नहीं है। इसीलिए लेता हूँ पर, दीपक जो जल रहा है। तो फिर इसे बुझाने वाले फतिंगे तो मेरे पास हैं ही। लो इसे छोड़ दिया। देखो कैसे विचित्रढंग से यह दीप शिखा पर घूमा रहा है। बस, अपी पॉख की हवा से बुता दिया। धुप अन्धेरा छा गया। मैंने भी तो इस ब्राह्मण के कुल को अन्धकाराच्छन्न कर दिया। मैं भी तो वेदश अप्रतिग्राही ब्राह्मण का बेटा शर्विलक हूँ। फिर भी एक मदनिका नामक वेश्या के लिए मुझे ये अनुचित काम करना पड़ रहा है। फिर मैं अब ब्राह्मण देवता से प्रेम करूँ। (जेवरात लेनाचाहता है।)

विदूषक :- { भो वयस्य ! शीतलस्ते अग्रहस्तः। }

अनुवाद विदूषक- मित्र तुम्हारी अँगुलियॉं तो बड़ी ठंडी हो रही है।

शर्विलकः- धिक् प्रमादः। सलिलसम्पर्कात्शीतलो में अग्रहस्तः। भवतु, कक्षयोर्हस्तं प्रक्षिपामि। (नाटयेन सव्यहस्तमुष्णीकृत्य गृह्णाति।)

अनुवाद शर्विलक: -हाय, हाय, यह तो मेरी असावधानी के कारण ही हुआ है। पानी छूने से मेरी अंगुलियॉं ठंडी हो गयी है। (अंगुलियॉं को कॉंख के नीचे दबाकर गरमाता है। फिर अभिनय पूर्वक जेवर ले लेता है।)

विदूषक :- { गृहीतम् ?}

अनुवाद विदूषक- ले लिया ?

शर्विलकः- अनतिक्रमणीयोयं ब्राह्मणप्रणयः। तद् गृहीतम्।

अनुवाद- इस ब्राह्मण की कसम टाली नहीं नहीं जा सकती, इसलिए ले लिया।

विदूषक :-दाणीं विक्किणिद-पण्णा विअ वाणिओ, अहं सुहंसुविस्सं। इदानीं विक्रीतपण्य इव वाणिजः अहं सुखं स्वप्स्यामि।

विदूषक – अपना समान बेचकर निश्चिन्त होकर सोने वाले बनिए की तरह सुख की नींद सोऊँगा।

शर्विलकः - महाब्रह्मण ! स्वपिहि वर्षशतम्। कष्टस्, एवं मदनिकागणिकार्थे ब्राह्मणकुलं तमसि पातितम्। अथवा, आत्मा पातितः !

शर्विलक- महाब्राह्मण, सौ साल तक अब सोते रहो। मुझे अफसोस केवल यही है कि एक सामान्य वेश्या मदनिका के लिए मैंने अपने एक सगोत्रीय ब्राह्मण को सदा के लिए अन्धकार में डाल दिया, या अपनी आत्मा का पतन कर डाला।

धिगस्तु खलु दारिद्रयमनिवेदितपौरूषम्।
यदेतद्गर्हितं कर्म निन्दामि च करोमि च॥ 19॥

अन्वयः -अनिवेदितपौरूषम्, दारिद्रयम्, धिक्, अस्तु, खलु, यत्, एतत् गर्हितम्, कर्म, निन्दामि, च, करोमि च।

हिन्दी अनुवाद – अप्रदर्शित पुरूषार्थ वाली इस गरीबी को धिक्कार है। जिस काम की मैं स्वयं

निन्दा करता हूँ उसे ही करने के लिए इस गरीबी के कारण विवश भी होता हूँ। 19।।

इस श्लोक में प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत का वर्णन तुलनात्म रूप से किया गया है इस लिए दीपक अलंकार है। पूरे श्लोक अनुष्टुप छन्द का प्रयोग है।

तद्यावत् मदनिकाया निष्क्रयणार्थं वसन्तसेनागृहं गच्छामि।(परिक्रम्य अवलोक्य च) अये ! पदशब्द इव। मा नाम रक्षितण:। भवतु, स्तम्भीभूत्वा तिष्ठामि। अथवा ममापि नाम शर्विलकस्य रक्षिण: ? योऽहम्।

मार्जार: क्रमणे, मृग: प्रसरणे, श्यलेनो ग्रहालुञ्चने
सुप्तासुप्तमनुष्यवीर्यतुलने श्वा, सर्पणे पन्नग:।
माया रूप- शरीर-वेश –रचने ,वाग् देशभाषान्तरे ,
दीपो रात्रिषु, सड्कटेषु डुडुभो, वाजी स्थले , नौर्जले ।।20 ।।

अन्वय: - क्रमणे,मार्जर:, प्रसरणे , मृग:, ग्रहालुञ्चने, श्येन:, सुप्तासुप्तमनुष्यवीर्यतुलने, श्वा:, सर्पणे, पन्नग:, रूपशरीरवेशरचने, माया, देशभाषान्तरे, वाक्, रात्रिषु, दीपक:, सड्कटेषु,डुडुभ:, स्थले, वाजी, जले नौ।

हिन्दी अनुवाद- तो फिर, अब वसन्तसेना के घर चलूँ और जेवर देकर मदनिका को उससे मुक्त करा लूँ। (घूमकर और देखकर) अरे किसी के चलने की आवाज सुनाई पड़ती है। क्या कोई चौकीदार तो नहीं आ गया। तो कुछ देर रूक जाऊँ। या मुझ शर्विलक को इन चौकीदारों से क्या डर ? जो मैं-

कूद कर भागने में बिलाव, तेज दौड़ने में हिरण, झपट्टा मारकर छीनने में बाज सोते-जागते आदिमी की ताकत मापने में कुत्ता, सरककर चलने में सॉप, रूप परिवर्तन में माया , भाषा परिवर्तन में वाणी , रात के लिए दीप ,संकट के समय सियार ,धरती पर घोड़े और पानी में नाव की तरह की तरह हूँ। **।20 ।।** इस श्लोक में एक ही के लिए बहुत प्रकार से वहुधा उल्लेख होने के कारण उल्लेख अलंकार है। समस्त श्लोक शार्दूलविक्रीडित छन्द में है।

10.3.2 श्लोक संख्या 21 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

अपि च –

भुजग इव गतौ,गिरि: स्थिरत्वे,
पतगपते: परिसर्पणे च तुल्य:।
शश इव भुवनावलोकनेऽहं
वृक इव च ग्रहणे बले च सिंह: ।।21।।

अन्वय - अहम् गतौ भुजग इव, स्थिरत्वे, गिरि:, परिसर्पणे , च पतगपते:, तुल्य:, भुवनालोकने, शश:, इव, ग्रहणे, च, वृक, इव बले च, सिंह: ।21।

हिन्दी अनुवाद- और भी – मैं सरकने में सॉप ,धीरज में पहाड़, तेज भागने में गरूड़ , संसार को नाप लेने शशक, पकड़ में भेड़िये और पराक्रम में वनराज की तरह हूँ। ।21।

इस श्लोक में उत्प्रेक्षा के साथ उल्लेख अलंकार का प्रयोग है तथा पुष्पिताग्रा छन्द है।

रदनिका- (प्रविश्य) हद्धी ! हद्धी ! वाहिर-दुआर –सालाए पसुत्तो वड्ढमाणओ, सोवि एत्थ ण दीसइ। भोदु, अज्जमित्तेअं सद्दावेमि। (इति परिक्रामति।) { हा धिक्, हा धिक् ! बिहर्द्वारशालायां प्रसुसो वर्द्धमानकः, सोऽप्यत्र न दृश्यते। भवतु,आर्यमैत्रेयं शब्दापयामि।}

हिन्दी अनुवाद – रदनिका- (प्रवेश कर) हाय रे हाय, बैठके में वर्द्धमान सोया था, वह भी कहीं गायब है? अच्छा, आर्य मैत्रेय को ही पुकारती हूँ। (घूमती है।)

शर्विलकः- (रदनिकां हन्तुमिच्छति। निरूप्य) कथं स्त्री ! भवतु, गच्छामि।(इति निष्क्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक-(रदनिका को मारना चाहता है। देखकर) अरे, यह तो औरत है, तो चलूँ। (चला जाता है।)

रदनिका- (गत्वा सत्रासम्) {हा धिक्, हा धिक् ! अस्मकं गेहे सन्धि कल्पयित्वा चौरो निष्क्रामति। भवतु, मैत्रेयं गत्वा प्रबोध्यामि ,आर्यमैत्रेय ! उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ, अस्माकं गेहे सन्धि कल्पयित्वा चौरो निष्क्रान्तः। }

हिन्दी अनुवाद- (जाकर डरते हुए) हाय, हमारे घर में तो सेंध लगाकर चोर भाग रहा हैं अच्छज्ञ,मैत्रेय को जगाती हूँ। (विदूषक के पास जाकर) आर्य मैत्रेय , उठो, घर में चोर सेंध लगाकर भाग गया।

विदूषकः- (उत्थाय।) आः दासीए धीए ! किं भणासि 'चोरं कप्पिअ सन्धी णिक्कन्तो ?'। {आः दास्याः पुत्रि ! किं भणसि 'चोरं कल्पयित्वा सन्धि निष्कान्तः ?' }

विदूषक – (उठकर) क्या कहा रे दासी पुत्री ,चोर काटकर सेंध निकल गई।

रदनिका –{हताश! अलं परिहासेन। किं न प्रेक्षसे एनम् ?!}

रदनिका- अरे शरारती, तुम्हें मजाक सूझता है। इसे देखते नहीं क्या ?

विदूषकः -{आः वास्याः पुत्रि ! किं भणसि ? द्वितीयमिव द्वारकम् उद्घाटितमिति। भो वयस्य ! चारूदत्तः उत्तिष्ठ।अस्माकं गेहे सन्धि दत्वा चौरो निष्क्रान्तः। }

विदूषकः - अरी छोकरी, क्या बोलती हो- 'दूसरा दरवाजा ही खोल दिया है।' मित्र चारूदत्त, उठो-उठो, हमारे घर में सेंध लगाकर चोर भाग गया है।

चारूदत्त: - भवतु। भोः ! अलं परिहासेन।

चारूदत्त- अच्छा, मजाक क्यों करते हो ?

विदूषकः - { भोः ! न परिहासः प्रेक्षतां भवान्।}

विदूषक- मजाक नहीं करता दोस्त, जरा इधर देखो तो सही।

चारूदत्तः - कस्मिन्नुद्देशे ?।

चारूदत्त- तो फिर कहाँ सेंध लगाया है ?

विदूषक : - भोः एषः।

विदूषक – ये क्या है ?

चारूदत्तः- (विलोक्य) अहो ! दर्शनीयोऽयं सन्धिः।

उपरितलनिपातितेष्ट कोऽयं
शिरसि तनुर्विपुलश्च माध्यदेशें।
असदृश जन-सम्प्रयोगभीरो –
र्हृदयमिव स्फुटितं महागृहस्य ।। 22 ।।

अन्वय:-उपरितलनिपातितेष्टक,शिरसि, तनु:मध्यदेशे,विपुल:,च,अयम् असदृशजनसम्प्रयोगभीरो: , महागृहस्य, स्फुटितम्, हृदयम्, इव **।। 22 ।।**

हिन्दी अनुवाद-- (देखकर) अहा, यह सेंध तो देखने लायक है।

ऊपर की ईटें खिसकाकर संकरे मुँह और बड़े पेट वाली सेंध काटी गई है। लगता है घर में नीच चोर के घुसने से इस विशाल भवन की छाती ही फट गई हो।।22।।

हृदय की तरफ महागृह के फट जाने की बात कहकर उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया गया है। तथा पूरे श्लोक में पुष्पिताग्रा छन्द है। तो क्या सेंध काटने में भी चतुराई होती है क्या?

विदूषक: - भो वयस्य ! एष सन्धिर्द्वाभ्यामेव दत्तो भवेत्। अथवा आगन्तुकेन शिक्षितुकामेन वा। अन्यथा इह उज्जयिन्यां क: आस्माकं गृहविभवं नजानाति ?

विदूषक- निश्चय ही सेंध काटने वाला चोर कोई बाहर का होगा या नीसिखुआ। अन्यथा इस उज्जयिनी में कौन ऐसा आदमी है जो इस घर की गरीबी को नहीं जानता ?

चारूदत्त: -

वैदेश्येन कृतो भवेन्मम गृहे व्यापारमभ्यस्यता
नासौ वेदितवान् धनैविरहितं विस्रब्धसुप्तं जनम्।
दृष्ट्वा प्राड्महतीं निवासरचनामस्माकमाशान्वित:,
सन्धिच्छेदनखिन्न एव सुचिरं पश्चान्निराशो गत: ।।23।।

अन्वय: - वैदेश्येन , व्यापारम्, अभ्यस्यता, सम, गृहे ,कृत:, भवेत्, असौ , धनै:, विरहितम्, विश्रब्धसुप्तम्, जनम्, न, वेदितवान्, प्राक्, महतीम्, अस्माकम्, निवासरचनाम्, दृष्ट्वा, आशान्वित:, सुचिरम्, सन्धिच्छेदखिन्न, पश्चात्, निराश:, एव, गत: ।।23।।

चारूदत्त- अनजाने ही किसी विदेशी ने अथवा नौसिखुए चोर ने यह सेंध लगाई होगी। गरीबी के कारण निश्चिन्त सोने वाले मुझे वह जान ही नहीं सका। घर की विशालता के भ्रम से इतनी मेहनत से उसने सेंध लगाई और भीतर कुछ हाथ नहीं लगने पर निराश होकर लौट जाना पड़ा होगा **।।23।।**

इस श्लोक में विपरीत सम्बन्ध स्थापित करने के कारण अनुमान अलंकार है।

विदूषक:- भो: ! कथं तमेव चौरहतकमनुशोचसि। तेन चिन्तितम्- महदेतद्गेहम् इतो रत्नभाण्डं सुबर्णभाण्डं वा निष्कामयिष्यामि। कृत्र तत् सुवर्णभाण्डकम् ? भो वयस्य ! त्वं सर्वकालं भणसि –'मूर्खोमैत्रेय:अपण्डितो मैत्रय:' इति । सुष्ठु मया कृतं तत् सुवर्णभाण्डं भवतो हस्ते समर्पयता। अन्थया दास्या: पुत्रेण हपहृतं भवेत्।

विदूषक- हाय, तुम तो उस नीच के बारे में सोचने लगे, जिसने सोचा होगा कि यह तो विशाल

भवन है, निश्चय ही इस घर में मणिमन्जूषा या सोने के जेबरात निकाल लूँगा। (कुछ यादकर, दु:खी होते हुए , अपने आप) अच्छा तो वह जेवर वाला बक्सा कहाँ है? (फिर कुछ याद कर, सुनाकर) मित्र, तुम तो हर समय मैत्रेय को मूर्ख और बुद्धू ही कहते हो, पर सोचो वसन्तसेना के जेवरों के उस डिब्बे को तुम्हारे हाथों में देकर मैने कितना अच्छा काम किया, अन्यथा यह अधम चोर तो हमसे चुरा ही लिये होता।

विदूषक:- भो: ! यथा नाम अहं मूर्ख:, तत् किं परिहासस्यापि देशकालंन जानामि?

विदूषक- अरे, मैं मूर्ख तो हूँ , पर क्या हँसी और मजाक करने की जगह और समय भी नहीं जानता क्या?

चारूदत्त:- कस्यां वेलायाम्?

चारूदत्त – तुमने कब दिया ?

विदूषक:- भो: यदा त्वं मया भणितोऽसि - शीतलस्ते अग्रहस्त:।

विदूषक-जिस समय मैंने कहा था- 'आपकी अँगुलियॉ तो बड़ी ठंडी है।'

विदूषक:- समाश्चसितु भवन्। यदि न्यासश्चौरेणापहृत:, त्वं किं मोहमुपगत: ?

क: श्रद्धास्यति भूतार्थ सर्वो मां तुलयिष्यति।
शड्कनीया हि लोकेस्मिन निष्प्रतापा दरिद्रता।। 24 ।।
भो: ! कष्टम्।
यदि तावत् कृतान्तेन प्रणयोर्थेषु में कृत:।
किमिदानीं नृशंसेन चारित्रमपि दूषितम्।। 25।।

अन्वय: -क:, भूतार्थम्, श्रद्धास्यति, सर्व:, माम्, तूलयिष्यति, ही , अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शड्कनीया ।।24।।

अन्वय: - यदि, तावत्, कृतान्तेन, में,अर्थेषु, प्रणय:, कृत:, नृशंसेन, इदानीम्, चारित्रम्, अपि दूषितम् ।।25।।

हिन्दी अनुवाद- - अरे , आप धीरज तो रक्खें ,यदि धरोहर को चोरों ने चुरा लिया तो फिर इसके लिए आप मूच्छित क्यों हो रहे हैं ?

भला सच्ची बात पर कौन विश्वास करेगा? लोग तो मुझ पर ही उल्टे सन्देह करेंगे। क्योकि , इस संसार में अपनी प्रभावहीनता के कारण गरीबी ही सारे शक का कारण होती है **।।24।।** हाय कितनी तकलीफ है-

यदि भाग्य ने मेरा विभव छीन ही लिया तो क्या अब इस निष्ठुर ने मेरे चरित्र पर भी धब्बा लगाकर ही छोड़ा **।।25।।**

10.3.3 श्लोक संख्या 26 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

विदूषक : - अहं खलु अपलपिष्यामि, केन दत्तम्? केन गृहीतम्? को वा साक्षी? इति।

विदूषक- मैं झूठे ही कह दूँ गा कि – किसने दिया? और इसका गवाह कौन है ?

चारूदत्त:- अहममिदानीमनृतमभिधास्ये ?

चारूदत्त- तो अब क्या मैं झूठ भी बोलूँगा।

भैक्ष्येणाप्यर्जयिष्यामि पुनन्यसिप्रतिक्रियाम्।

अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारणम् ।।26।।

अन्वयः - भैक्ष्येन, अपि , न्यासप्रतिक्रयाम्, पुनः, अर्जयिष्यामि , चारित्रभ्रंशकारणम्, अनृतम्, नैव, अभिधाष्यमि ॥ 26 ॥

हिन्दी अनुवाद- मैं भीख मॉगकर भी वंसतसेना का धरोहर लौटा दँगा किन्तु , झूठ बोलकर किसी भी स्थिति में चरित्र की हत्या नहीं करूँगा ॥26 ॥

रदनिका- तद्यावत् आर्याधूतायैगत्वा निवेदयामि।

रदनिका – तो चलकर मान्य धूता को क्यों न सारी बातें बतला दूँ। (यह कहकर सभी बाहर चले गये।) (तदनन्तर दासी के साथ धूता की मंच पर उपस्थिति।)

वधूः- अयि ! सत्यम् अपरिक्षतशरीर आर्यपुत्र आर्यमैत्रेयेण सह?

वधूः - (घबराहटपूर्वक) क्या सचमुच, आर्य मैत्रेय के साथ स्वामी सकुशल है?

चेटी- किन्तु यः स वेश्याजनस्य अलंकारकः सोऽपहृतः।

चेटी- स्वामिनि, मालिक तो ठीक हैं ही, पर उस गणिका के आभूषणों को चोरों ने चुरा लिया।

चेटी-समाश्चसित्वार्या धूता।

चेटी- (वधू मूर्च्छित होने का अभिनय करती है।) आर्या धूता,आप धीरज तो धारण करें।

वधूः - किं भणसि –'अपरिक्षतशरीरः आर्यपुत्रः' इति । वरमिदानी स शरीरेण परिक्षतः न पुनश्चारित्रेण। साम्प्रतमुज्जयिन्यांजन एवंमन्त्रयिष्यति- 'दरिद्रतया आर्यपुत्रेणैव ईदृशमकार्यमनुष्ठितम् । भगवन् ! कृतान्त ! पुष्करपत्रपतितजलबिन्दुचञ्चलैः क्रीडसिदरिद्रपुरूषभागधेयैः। इयञ्च में एका मातृगृहलब्धा रत्नावली तिष्ठति। एतामपि अतिशौण्डीरतया आर्यपुत्रो न ग्रहीष्यति । हञ्जे। आर्यमैत्रेयं तावत् शब्दापय।

वधू- (सॉस लेकर) चेटी कया कह रही हो कि , उनकी देह में कोई चोट नहीं लगी है। धरोहर अपहरण का जो अब उन पर कलंक जायेगा, इसमें अच्छा होता उनकी देह घायल हो जाती, पर चोरी नहीं होती ।अब तो उज्जयिनि के लोग यही कहेंगे कि गरीबी के कारण चारूदत्त ने धरोहर पचा लिया है। (ऊपर की ओर देखतेहुए, लम्बी सॉस लेकर) हाय रे दै, कमल के पत्तों पर पड़ी हुई पानी के बूँदों की तरह गरीबों के भाग्य से खिलवाड़ करते हो। मुझे नैहर में एक रत्नहार मिला है; अगर मैं इसे देना भी चाहूँगी तो अतिउदार होने के कारण स्वामी इसे भी लेंगे। दासी, आर्य मैत्रेय को तो जरा बुलाओ।

चेटी- यदार्या धूता आज्ञापयति। आर्यमैत्रेय ! धूता त्वां शब्दापयति।

चेट – जैसी आपकी आज्ञा।(विदूषक के पास जाकर) आर्य मैत्रेय,आपको धूता बुला रही है।

विदूषकः- कस्मिन्सा ?

विदूषकः - वे कहा है?

चेटी- एषा तिष्ठति । उपसर्प।

चेट-यहॉ है , आप चलिए तो।

विदूषक: - स्वस्ति भवत्ये।

विदूषक –(पास जाकर) आपका कल्याण हो।

वधू:- आर्य! वन्दे। आर्य पुरस्तान्मुखो भव।

वधू- आर्य, प्रणाम करती हूँ ,जरा आप पूरब की ओर मुँ ह तो करें।

विदूषक: - एष भवति! पुस्तान्मुख: संवृत्तोऽस्मि।

विदूषक- लीजिए श्रीमति, मैं पूर्वाभिमुख हो गया।

वधू:- आर्य ! प्रतीच्छ इमाम्।

वधू:- आर्य इसे स्वीकार करें।

विदूषक :- किं न्वेतत्?

विदूषक – यह क्या है ?

वधू: - अहं खल् रत्नषष्टीमुपोषिता आसम्।तस्मिन् यथाविभवानुसारेण ब्रह्मण: प्रतिग्राहयितव्य:। स च न प्रतिग्राहित:। तत् तस्य कृते प्रतीच्छ इमां रत्नमालिकाम्।

वधू- आर्य, मैंने रत्नषष्ठी व्रत किया है। इस व्रत में अपने विभव के अनुसार ब्राह्मण को दान दिया जाता है। मैंने वह दान नहीं दिया है। अत: आप इस रत्नावली को स्वीकार करें।

विदूषक:- स्वस्ति। गामिष्यामि। प्रियवयस्यस्य निवेदयामि।

विदूषक- (लेकर) कल्याण हो। चलूं मैं मित्र चारूदत्त को इसकी सूचना दे दूँ।

वधू:- आर्य मैत्रेय ! मा खलु मां लज्जय।

वधू- आर्य मैत्रेय, मुझे अधिक न लजाओ। (कहकर निकल जाती है।)

विदूषक: - अहो। अस्या महानुभावता।

विदूषक- (अचम्भा के साथ) इस औरत की उदारता कमाल है।

विदूषक:- एषोऽसिम गृहाण एताम्।

विदूषक- (पास आकर) अभी आया, इसे लो। (रत्नाहार दिखलाता है।)

विदूषक: - भो: यत् ते सदृशदारसङ्ग्रहस्य फलम्।

विदूषक- अपनी सुयोग्य पत्नी पाने का परिणाम।

आत्मभाग्यक्षतद्रव्य: स्त्रीद्रव्येणानुकम्पित:।

अर्थत: पुरूषो नारी, या नारी सार्थत: पुमान् ।।27।।

अन्वय:- आत्मभाग्यक्षतद्रव्य:, स्त्रीद्रव्येण, अनुकम्पित:, पुरूष:, अर्थत:, नारी, या, नारी, सा अर्थत:, पुमान् **।।27।।**

हिन्दी अनुवाद - अपने खराब भाग्य के कारण अब मैं अपनी पत्नी के धन पर पलने वाला बन गया हूँ । अपने काम से ही पुरूष कभी औरत बन जाता है और अपने काम से ही औरत मर्द बन जाती है **।।27 ।।**

धन के दान से धूता पुरूषत्व का आचरण करती है अत: वह नारी की पदवी को धारण कर सहायक बनती है। इस लिए परिणाम अलंकार है।

अथवा, नाहं दरिद्र:। यस्य मम-

अथवा, मैं दरिद्र नहीं हूँ। क्योंकि मेरे,

विभवानुगता भार्या सुखद:सुहृद्भवान्।

सत्यच न परिभ्रष्टं यद्दरिद्रेषु दुर्लभम्।।28।।

अन्वय:- भार्या, विभवानुगता, भावन् सुखद:खसुहृत्, दरिद्रषु, यत्, दुर्लभम्, सत्यमृ, च, न, परिभ्रष्टम्।।**28।।**

हिन्दी में अनुवाद - विभव के अनुसार निर्वाह करने वाली पत्नी , सुख –दु:ख में साथ निभाने वाला तुम्हारे जैसे मित्र और सच्चाई का पल्ला थामे रहना भला किस गरीब को नसीब है पर, मेरे पास तो ये सारी चीजें मौजूद है।।**28।।**

इस श्लोक में निश्चिन्ता के लिए सभी कारण उल्लिखित है अत: समुच्च अलंकार है।

विदूषक:- मा तावत् अखादितस्य अभुक्तस्य अल्पमूल्यस्य चौरैरपहृतस्य कारणात् चतु:समुद्रसारभूत रत्नावली दीयते।

विदूषक –नही, नहीं, जिसे तुमने खाया नहीं, अपने किसी काम में लाया नहीं, जो इसकी अपेक्षा कम कीमत की चीज है, जिसे चोरों ने चुरा लिया, उसके बदले इतनी कीमती रत्नावली मत दो।

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोस्मासु तया कृत:।

तस्यैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते।।29।।

अन्वय: - तया, यम्, विश्वासम्, समालम्ब्य, अस्मासु, न्यास:, कृत:, तस्य, महत:, प्रत्ययस्य, एव, एतत् मूल्यम्, दीयते।।29।।

हिन्दी अनुवाद- वसन्तसेना ने जिस विश्वास के साथ हमारे पास धरोहर रक्खी है, उसी बड़े विश्वास की यह कीमत दी जा रही है ।।29।।

इसमें सिद्धत्व का अध्यवसाय बताया गया है अत: अतिशयोक्ति अलंकार है।

तद्वयस्य ! अस्मच्छरीरस्पृष्टिकया शापितोसि , नैनामग्रायित्वा अत्रागन्तव्यम्। वर्द्धमानक !इसलिए हे मित्र, तुम्हें मेरी सौगन्ध है यदि तुम इसे उसको बिना दिये लौट आयेा अरे ओ वर्द्धमानक,

एताभिरिष्टिकाभि: सन्धि : क्रियातां सुसंहत: शीघ्रम्।

परिवाद-बहलदोषान्न यस्य रक्षा परिहरामि ।।30।।

अन्वय: - एताभि:, इष्टिकाभि:, सन्धि:, शीघ्रम्, सुसंहत:, क्रियताम् ! परिवादबहलदोषात्, यस्य, रक्षाम्, न, परिहरामि।।30।।

हिन्दी में अनुवाद – इन बिखरी ईटों से सेंध को शीघ्र भर दो। लोग जान लेंगे तो बड़ी निन्दा होगी। क्योंकि निन्दा बड़ी तेजी से फैलती है।।**30।।**

निन्दा के विस्तार का प्रख्यापन करने से इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार है। इस पूरे श्लोक में

आर्या छन्द है।

विदूषक:- भो: ! दरिद्र: किम् अकृपणं मन्त्रयति ?

विदूषक-हाय, क्या कोई गरीब भी निडर होकर कुछ कह सकता है ?

अभ्यास प्रश्न -

1.एक शब्द में उत्तर दिजिए-

(क) शर्विलक ने किस वस्तु का लेपन किया था ?

(ख) चोरी के कर्म में सर्वाधिक उपयोगी वस्तु कौन है ?

(ग) अँगुली बाधने का काम किससे किया जाता है ?

(घ) शर्विलक ने किवाड़ को किसके सहारे उतारा ?

(ड़) शर्विलक कौन है ?

(च) धरती के भीतर धन की जॉच हेतु किस वस्तु का प्रयोग किया गया ?

2. निम्नलिखित में सही उत्तर छॉटकर लिखिए ?

(1) विदूषक का मित्र है ?

(क) राजा (ख) द्वारपाल (ग) शर्विलक (घ) कोई नहीं

(2) निम्नलिखित में सामान्य वेश्या है ?

(क) रदनिका (ख) मदनिका (ग) धीरा (घ) कोई नहीं

(3) महाब्राह्मण है?

(क) राजा (ख) द्वारपाल (ग) शर्विलक (घ) विदूषक

(4) विदूषक रत्नाहार को किसके पास लेकर गया ?

(क) चेटी (ख) धूता (ग) शर्विलक (घ) वसन्तसेना

10.4 सारांश

शर्विलक चोरी विद्या में प्रवीण है उसका मित्र विदूषक है शर्विलक के लिए गो तथा ब्राह्मण की शपथ उपेक्षा के योग्य नही है। यद्यपि वह चोर है। योगरोचना का लेपन करने से चोरी करते समय उसे किसी का भय नहीं है। वह भागनेमें विलाव जैसे, दौड़ने में हिरण जैसा, धैर्य में पहाड़ जैसा है। वह औरत को नही मारता। चारूदत्त कटी हुई सेंधको देखकर विदूषक से कहता है कि कोई अनाड़ी ही इस कार्य को किया होगा क्योंकि उज्जयिनि में ऐसा कौन है जो इस घर की गरीबी को न जानता हो। मैं तो गरीबी के कारण निश्चिन्त सोया हुआ था। विशाल घर देखने के बाद भ्रम में पड़ कर चोर खाली हाथ लौट गया। चारूदत्त कहता है कि प्रभावहीनता के कारण गरीबी समस्त संदेह का कारण बन जाती है। मैं वसन्तसेना का धरोहर लौटा दूगॉ नहीं तो उज्जयिनि के लोग यही कहेंगे कि गरीबी के कारण उसने धरोहर पचा ली है। वह रत्नहार को लेकर वसन्तसेना के पास विदूषक को शपथ दे कर भेजता है। अन्त में चारूदत्त कहता है कि मैं गरीब नहीं हूँ क्योंकि मेरे पास विभव के अनुसार चलने वाली पत्नी है। तृतीय अंक के संवादपरक इस

चौरकर्म के दृष्टान्त के अध्ययन के पश्चात आप यह अवश्य बता सकेगें की सम्पन्नता और गरीबी में क्या अन्तर होता है। तत्कालीन समय में घृणित कर्म करने वाला व्यक्ति भी इस प्रकार सैद्धान्तिक है।

10.5 पारिभाषिक शब्दावली

सुवर्णपिञ्जरा= कनकवत्पिड़गलवर्णा, परमार्थसुप्तम्= यथार्थत: शयितम् , परमार्थसुप्तेन =यथार्थत: शयितेन, ब्राह्मणकाम्या= द्विजाभिलाषा,आग्नेय: =दीपशिखासम्बन्धी, गणिकामदनिकार्थम्= मदनिकानामकवेश्यानिमित्तकम्, महाब्राह्मण=परिहाससूचकं सम्बोधनम्, अनिवेदितापौरूषम् =अप्रदर्शितपुरूषार्थम्, खलु= निश्चयेन, गहितम् =निन्दितम्, निष्क्रयणार्थम् =दासीभावात् उपरितलनिपातितेष्टका: =ऊर्ध्वभागाकृष्टेष्टका:,

पत्नी- सेवादासी, रतौ वेश्या, भोजने जननीसमा।

विपत्कालेपरं मित्रं सा भार्या भुवि दुर्लभा॥

10.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(1) (क) योगरोचना (ख) जनेऊँ (ग) जनेऊँ (घ) सरसों (ड़) चोर (च) पीठ के सहारे (2) 1.(घ) 2. (ख) 3. (घ) 4. (ग)

10.7 संदर्भग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् – हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ0 रमा शंकर मिश्र –चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम - हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ0 जगदीशचन्द्र मिश्र- चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

10.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रस्तुत इकाई के आधार पर शर्विलक का चरित्र निरूपित कीजिए ?
2. चारूदत्त के सैद्धान्तिक पक्ष निरूपण कीजिए ?
3. विदूषक और चारूदत्त के संवादो की विशेषता लिखिए ?

इकाई -11 चतुर्थ अंक श्लोक 1 से 17 मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 श्लोक संख्या 1 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    11.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    11.3.2 श्लोक संख्या 6 से 12 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    11.3.3 श्लोक संख्या 13 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
11.4 सारांश
11.5 पारिभाषिक शब्दावली
11.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
11.7 संदर्भग्रन्थ
11.8 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण ग्रंथ के चतुर्थ अंक से सम्बन्धित अध्ययन हेतु यह 11वीं इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप तृतीय अंक की कथा समाप्ति के पश्चात मंच पर चेटी के प्रवेश करने के बाद के सम्वादों एवं श्लोकों का अध्ययन कर उनका तात्पर्य जानेगें।

प्रस्तुत इकाई में चेटी के द्वारा प्रवेश करने पर मदनिका, वसन्तसेना एवं अन्य शर्विलक आदि पात्रों के संवादों में भिन्न-भिन्न प्रकार की विशेषताओं एवं परिवेशों का अध्ययन करते हुए इस प्रकरण नाटक के चतुर्थ अंक की संपूर्ण वर्णन शैली से परिचित होगें।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानेगें कि चोरी की विद्या में निपुण शर्विलक अपनी चोरी का कथन किस प्रकार करता है तथा उसके संवादों में धन एवं स्त्री की गतिविधियां तथा उनकी मर्यादाएं किस सीमा तक कार्य करती हैं।

11.2 उद्देश्य

चेटी , मदनिका, वसन्तसेना, एवं शर्विलक तथा विदूषक के संवादों से परिपूर्ण चतुर्थ अंक की इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप बता सकेगें कि –

- चारूदत्त की आकृति की प्रशंसा मदनिका और वसन्तसेना ने किस प्रकार की।
- उसने कितनी स्वर्ण मुद्रा से बनी रत्न मालायें भेजी थी।
- शर्विलक मदनिका के रूप को देखकर किस प्रकार आकृष्ट होता है।
- प्रेम के वश में होकर चोरी किस प्रकार की जाती है।
- रूप सौन्दर्य के आकर्षण में कुलीन होते हुए भी शर्विलक क्यों चोरी का कार्य करता है।

11.3 श्लोक संख्या 1 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चतुर्थअंक में श्लोक संख्या 1 से लेकर17 तक के वर्णनों में भिन्न प्रकार की जीवनोपयोगी , व्यवहारोपयोगी और जीवन बोध से संबन्धित शिक्षाएं पात्रों के संवादों में भरी पड़ी हैं। यद्यपि वर्णन क्रम घटनाओं के अनुरूप है तथापि उनमें विभिन्न प्रकार कि मार्गदर्शक बातें निहित हैं। इस इकाई के सम्यक् अध्ययन हेतु वर्ण्य विषय को पांच-पांच श्लोकों में विभक्त कर सुगमता बोध हेतु वर्णन प्रस्तुत किया गया हैं।

11.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चेटी- आज्ञप्ताऽस्मि मात्रा आर्यायाः सकाशं गन्तुम्। एषा आर्य्या त्रफलकनिषण्णदृष्टिर्मदनिकया सह किमपि मन्त्रयन्ती तिष्ठति। तद्यावदुपसर्पामि।

हिन्दी –चेटी - वसन्तसेना की मॉ ने मुझे उनके पास भेजा है। ये अपनी ऑखे चित्र में गड़ाए मदनिका से कुछ बातें कर रही हैं। तो क्यों न उनके पास ही चलूं।

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टा वसन्तसेना मदनिका च।)

(मचं पर पूर्वनिर्दिष्ट मदनिका और वसन्तसेना का प्रवेश।)

वसन्तसेना- हञ्जे मदनिके ! अपि सुसदृशी इयं चित्राकृति: आर्यचारूदत्तस्य?

हिन्दी-- अरी मदनिके, आर्य चारूदत्त की यह चित्राकृति दर्शनीय एवं अनुरूप है ?

मदनिका- सुसदृशी।

मदनिका- हॉं, अनुरूप आकृति है।

वसन्तसेना- कथम् त्वं जानासि ?

वसन्तसेना-तुमने कैसे जाना ?

मदनिका- येन आर्याया: सुस्निग्धा दृष्टिरनुलग्ना।

मदनिका- क्योंकि , आपकी ऑंखे उसमें रम-सी गई है।

वसन्तसेना- हञ्जे ! किं वेशवासदाक्षिण्येन मदनिके ! एवं भणसि ?

वसन्तसेना- अरी मदनिके, वेश्या के घर में रहने के कारण ही बोलने में तुम इतनी चतुरा हो गई हो क्या?

मदनिका- आर्ये ! किं य एव जनो वेशे प्रतिवसति, स एव अलीकदक्षिणे भवति ?

मदनिका- मान्ये, क्या जो वेश्या के घर में रहती है झूठ बोलने में वही पटु होती है क्या ?

वसन्तसेना- हञ्जे ! नानापुरूषसङ्गेन वेश्याजन: अलीकदक्षिणो भवति।

वसन्तसेना- हॉं रे, अनेक लोगों के सम्पर्क में आने के कारण वह झूठ बोलने में निश्चय ही पटु हो जाती है।

मदनिका- यतस्तावद्आर्याया दृष्टिरिह अभिरमते हृदयञ्च, तस्य कारणं किं पृच्छयते ऽत्र ?

मदनिका- जब आपकी ऑंखे और आपका हृदय इसमें रमे हैं तो फिर उसका अलग से कारण क्यों पूछ रही हैं ?

वसन्तसेना- हञ्जे ! सखीजनादुपहसनीयतां रक्षामि।

वसन्तसेना- अरी सखियॉं , मजाक उड़ायेंगी , इससे बचना चाहती हूँ।

मदनिका- आर्ये ! एवं नेदम्। सखीजनचित्तानुवर्त्ती अबलाजनो भवति।

मदनिका- आर्ये, ऐसी बात नहीं है; अबलाऍं तो इस क्षेत्र में एक दूसरे के प्रति हमदर्दी ही दिखलाती है।

प्रथमा चेटी-आर्ये ! माता आज्ञापयति-'गृहीतावगुण्ठनं पक्षद्वारे सज्जं प्रवहणम्। तद्गच्छ' इति।

पहली चेटी- (पास आकर) आर्ये माता जी ने कहा कि बगल वाले दरवाजे पर पर्दा लगी गाड़ी खड़ी है उससे आप जायें।

वसन्तसेना - हञ्जे ! किम् आर्य चारूदत्तो मां नेष्यति ?

वसन्तसेना - अरी, आर्य चारूदत्त मुझे लिवाने आये है क्या ?

चेटी- आर्ये ! येन प्रवहणेन सह सुवर्ण-दशसाहस्रिकोऽलङ्कार: अनुप्रेषित:।

चेटी- जिसने गाड़ी के साथ इस हजार स्वर्ण मुद्रा की रत्नमाला भेजी है।

वसन्तसेना - क: पुन: स: ?

वसन्तसेना - वह कौन है ?

चेटी - एष एव राजाश्याल: संस्थानक: ।

चेटी - वह राजा का साला 'संस्थानक'है ।

वसन्तसेना - अपेहि । मा पुनरेवं भणिष्यसि ।

वसन्तसेना - (गुस्सा कर) यहॉ से भाग जाओ, फिर ऐसी बात मुँह से मत निकालना ।

चेटी- प्रसीदतु, प्रसीदतु आर्या। सन्देशेनास्मि प्रेषिता ।

चेटी- आर्ये कृपा करें । मैं तो केवल संदेशवाहिका हूँ । इसमें मेरा क्या कसूर ?

वसन्तसेना- अहं सन्देशस्यैव कुप्यामि ।

वसन्तसेना- मेरा गुस्सा भी तो ऐसे सन्देश पर ही है ।

चेटी- तत् किमिति मातरं विज्ञापयिष्यामि ?

चेटी- तब मैं माता जी से लौटकर क्या कहूँ ?

वसन्तसेना- एवं विज्ञापयितव्या -यदि मां जीवन्तीमिच्छसि,तदा एवं न पुनरहं मात्रा आज्ञापयितव्या ।

वसन्तसेना-जाकर यही से लौटकर क्या कहूँ ?

चेटी- यथा ते रोचते ।

चटी –जैसी आपकी आज्ञा चली जाती है ।

शर्विलक - (प्रविश्य)

दत्वा निशाया वचनीयदोषं निद्राञ्च जित्वा नृपतेश्च रक्ष्यान् ।
स एष सूर्योदयमन्दरश्मि: क्षपाक्ष्याच्चन्द्र इवास्मिजात: ॥ 1॥

अपि च- **य: कश्चत्वरितगतिर्निरीक्षतेमां**
सम्भ्रान्तं द्रुतमुपसर्पति स्थितं वा ।
तं सर्व तुलयति दूषितोऽन्तरात्मा
स्वैर्दोषैर्भवति हि शङ्कितो मनुष्य: ॥2॥

शर्विलक: - (प्रविश्य = रंगे समागत्य ।)

अन्वय: - निशाया:, वचनीयदोषम्, दत्वा, निद्राम्, नृपते:, रक्ष्यान् , च, जित्वा, स, एष:, क्षपाक्षयात् , सूर्योदयमन्दरश्मि:, चन्द्र:, इव, जात: ,अस्मि **॥1॥**

अन्वय: - य:, कश्चित्, त्वरितगति:, सम्भ्रान्तम्, माम्, निरीक्षते, वा, स्थितम्, द्रुतम्, उपसर्पति, दूषित:, अन्तरात्मा, तम्, सर्वम्, तुलयति, हि, मनुष्य:, स्वै:, दोषै:, शङ्कित:, भवति **॥2॥**

हिन्दीअनुवाद- (प्रवेश कर)-रात को दोषवती बताकर नींद तथा सिपाहियों को जीतकर, इस समय रात के बीत जाने पर, सूर्योदय के कारण फीके पड़े चॉद की तरह मैं भी असहाय हो गया हूँ **।1 ॥**

हिन्दी में अनुवाद – तेज चलने वाला कोई आदमी यदि डरा हुआ देखता है या जब मैं कहीं खड़ा रहता हूँ तो जल्दी में मेरी ओर आता है तो उन्हें देखकर मेरा मन सन्दिग्ध हो उठता है । मनुष्य सचमुच अपने कृत अपराध के कारण ही सन्दिग्ध होता **है ॥2॥**

मया खलु मदनिकाया: कृते साहसमनुष्ठितम् ।

परिजनकथासक्तः कश्चिन्नरः समुपेक्षितः

क्वचिदपि गृहं नारीनाथं निरीक्ष्य विवर्जितम् ।

नरपतिबले पार्श्वायाते स्थितं गृहदारूवद्

वसितशतैरेवंप्रायैर्निशा दिवसीकृता ।।3।।

मया= शर्विलकेन, मदनिकाया: कृते = मदनिकार्थम्, साहसम् =अपकर्मम्, अनुष्ठितम् = कृतमिति ।

अन्वयः- परिजनककथासक्त, कश्चित्, नरः, समुपेक्षितः, क्वचिदपि, गृहम्, नारीनाथम्, निरीक्ष्य, विवर्जितम्, नरपतिबले,पार्श्वायते, गृहदारूवत् । स्थितम्, एवम् –प्रायैः, व्यवसितशतैः, निशा, दिवसीकृता **।।3।।**

हिन्दी में अनुवाद- मैनें मदनिका के कारण ही यह चोरी की है ।

किसी घर में चोरी इसलिए नहीं की कि उस घर में औरतें ही औरतें थी । कहीं पहरेदार पास आ गया तो काठ के खंभे की तरह खडा रहकर समय काट दिया। इस तरह सैकड़ो काम से मैंनं रात को दिन बना दिया **।।3।।**(इति परिक्रामति ।)

वसन्तसेना- हञ्जे ! इदं तावत् चित्रफलकं मम शयनीये स्थापयित्वा तालवृन्तर्क गृहीत्वा लघु आगच्छ । (घूमता है) ।

वसन्तसेना-अरी इस फोटो को मेरे विछावन पर रखकर शीघ्र पंखा लेकर लौट आओ ।

मदनिका – इति फलकं गृहीत्वा निष्क्रान्ता । (यदार्य्या आज्ञापयति) ।

मदनिका - जैसी आपकी आज्ञा (चित्रपट लेकर चली जाती है ।)

शर्विलकः- इदं वसन्तसेनाया गृहम् । तद्यावत् प्रविशामि। (प्रतिश्य ।) क्व नु मया मदनिका द्रष्टव्या ?

शर्विलक - यही तो वसन्तसेना का भवन है, तो भीतर चलूँ । (भीतर जाकर) किधर खोजूँ ?

(ततः व्रचिशति तालावृन्तहस्ता मदनिका)

(इसी बीच पंखा लेकर आती हुई मदनिका का प्रवेश ।)

शर्विलकः - (द्रष्ट्वा) अये इयं मदनिका-

शर्विलक - (देखकर) अरे यही तो मदनिका है -

मदनमपि गुणैर्विशेषयन्ती

रतिरिव मूर्तिमती विभाति येयम् ।

मम हृदयमनङ्गवह्नितप्तं

भृशमिव चन्दनशीतलं करोति ।।4।।

अन्वयः - गुणैः, मदनमपि, विशेषयन्ती , मूर्तिमती, रतिः, इव, विभाति । या, इयम्, अनङ्गवह्नितप्तम्, मम, हृदयम्, भृशम्, चन्दनशीतलम्, करोति , इव, ।।4।।

हिन्दी में अनुवाद - अपने गुणों से कामदेव को मोहित कर यह साक्षात् रति तरह शोभ रही है । कामाग्नि में जलते हुए मेरे हृदय पर तो मानो यह चन्दन का लेप ही है ।।4।।

मदनिका – अहो ! कथं शर्विलक: शर्विलक ! स्वागतं ते। कस्मिन् त्वम् ?

मदनिका-(देखकर) अरे शर्विलक, 'स्वागतम्' कहॉ से आ रहे हो ?

शर्विलक:- कथयिष्यामि।

बतलाऊँगा। (एक दूसरे को प्रेमपूर्वक देखते हैं) ।

वसन्तसेना- चिरयति मदनिका ।तत् कस्मिन् नु खलु सा। कथमेषा केनापि पुरूषकेन सह मन्त्रयन्ती तिष्ठति।

यथा अतिस्निग्धया निश्चलदृष्या आपिबन्तीव एतं निध्यायति, तथा तर्कयामि- एष स जन एनाभिच्छति अभुजिष्यां कर्तु म्। तत् रमतांम्। मा कस्यापि प्रीतिच्छेदो भवतु। न खलु शब्दापयिष्यामि।

वसन्तसेना - मदनिका बड़ी देर कर रही है। तो फिर कहॉ चली गई । (खिड़की से झॉककर) अरे यह तो किसी मर्द के साथ बातचीत कर रही है। दोनों ही एक दूसरे को ऑखों ही ऑखो में पी रहे हैं इससे अनुमान करतीहूँ कि यह वही पुरूष है जो मदनिका को हमारे घर के बन्धन से मुक्त कराने आया है। अच्छा तो जी भर कर रमण करों। इनके प्रेम में हम बाधक नहीं बनेंगे। इन्हें अब पुकारूँगी नहीं।

मदनिका- शर्विलक ! कथम।

(शर्विलक: सशंक दिशोऽवलोकयति।)

मदनिका- शर्विलक, कहो कैसे जाना हुआ ?

(शर्विलक डरते हुए चारों ओर देखता है।)

मदनिका- शर्विलक ! किन्विदम् ? सशङ्क इव लक्ष्यसे।

मदनिका- शर्विलक,पता नहीं तुम क्यों भयभीत- से लग रहे हो।

शर्विलक:- वक्ष्ये त्वां किञ्चित् रहस्यम् तद्विविक्तमिदम् ?

शर्विलक:- तुमसे कुछ गोपनीय बातें कहनी है। क्या यह जगह निरापद है ?

मदनिका- अथ किम् ?

मदनिका- हॉ , है।

वसन्तसेना- कथं परमरहस्यम्। तत् नश्रोष्यामि।

वसन्तसेना - अतिगोपनीय, तो नहीं सुनूँगी।

शर्विलक: - मदनिके ! किं वसन्तसेना मोक्ष्यति त्वां निष्क्रयेण ?

शर्विलक: - मदनिके, धारक-धन लौटा देने पर क्या वसन्तसेना तुम्हें मुक्त कर देगी ?

वसन्तसेना - कथं मम सम्बन्धिनी कथा। तत् श्रोष्यामि अनेन गवाक्षेण अपवारितशरीरा।

वसन्तसेना - यह तो मेरे सम्बन्ध की ही बातें हैं, तब तो छिपकर झरोखे से अवश्य ही सुनूँगी।

मदनिका – शर्विलक ! भणिता मया आर्य्या, ततो भणति:, यदि मम स्वच्छन्द : तदा बिना अर्थ सर्व परिजनमभुजिष्यं करिष्यामि । अथ शर्विलक ! कुतस्ते एतावान् विभव:? येन मामार्य्यासकाशात् मोचयिष्यति।

मदनिका- शर्विलक, मैंने वसन्तसेना से इस सम्बन्ध में बातें की हैं। उनका कहना है कि इस सन्दर्भ में उनका वश चलता तो वे सारे सेवकों को यों ही मुक्त कर देती। पर, तुम्हारे पास इतने पैसे कहॉ से आये कि तुम मुझे उनसे पैसे देकर छुड़ा लोगें ?

शर्विलक:-

दारिद्रयेणाभिभूतेन त्वत्स्नेहानुगतेन च।

अद्य रात्रौ मया भीरू ! त्वदर्थे साहसं कृतम् ।।5।1

अन्वय: - हे भीरू, दारिद्रयेण, अभिभूतेन, च, त्वत्स्नेहानुगतेन, मया अद्य, रात्रौ त्वदर्थे ,साहसम्, कृतम् ।।5।।

हिन्दी में अनुवाद- शर्विलक-अरी डरपोक, गरीब होते हुए भी तुम्हारे प्रेम के वशीभूत होकर आज रात मैंने चोरी की है **।।5।।**

अभ्यास प्रश्न 1.

निम्नलिखित कथनों में सत्य और असत्य का निर्धारण कीजिए।

1. वेश्या के घर में रहने वाली स्त्री झूठ बोलने में पटु होती है।
2. चारूदत्त ने दस हजार स्वर्ण मुद्रा की रत्न माला भेजी थी।
3. मनुष्य अपने किये हुए अपराधों के कारण संदिग्ध नहीं रहता है।
4. शर्विलक ने गरीब और डरपोक होते हुए भी चोरी किया।
5. मदनिका को शर्विलक भयभीत नहीं लगता है।
6. चतुर्थ अंक में अपने गुणों से काम देव को भी मोहित करने की बात कहीं गयी है।

11.3.2 श्लोक संख्या 6 से 12 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वसन्तसेना- प्रसन्ना अस्य आकृति:, साहसकर्मतया पुनरूद्वेजनीया।

वसन्तसेना- इसका चेहरा तो खुश नजर आता है, पर चोरी करने के कारण भीतर से डरा है।

मदनिका- शवर्लिक ! स्त्रीकल्यवर्त्तस्य कारणेन उभयमपि संशाये विनिक्षिप्तम।

मदनिका- शर्विलक, क्षणिकऔरत –सुख के लिए तुमने दोनों गेंगाये।

शर्विलक:- किं किम् ?

शर्विलक-कौन दोनों ?

मदनिका- शरीरं चारित्रञ्च।

मदनिका- देह और चरित्र को।

शर्विलक:- अपण्डिते ! साहसे श्री: प्रतिवसति।

शर्विलक –सूर्खे, साहस में लक्ष्मी का निवास है।

मदनिका- शर्विलक ! अखण्डितचारित्रोऽसि, तत् खलु त्वया मम कारणात् साहसं कुर्वता अत्यन्तविरूद्धमाचरितम्।

मदनिका- हॉ शर्विलक, तुम्हारा चरित्र निर्दोष है। पर, मेरे लिए चोरी करके तुमने अपने आचरण के विरूद्ध काम किया।

शर्विलक:-

नो मुश्णाम्यबलां विभूषणवतीं फुल्लामिवाहं लतां
विप्रस्वं न हरामि काञ्चनमथो यज्ञार्थमभ्युद्धृतम् ।
धात्र्युत्सड़्गतमं हरामि न तथा बालं धनार्थी क्वचित्
कार्य्याकर्य्यविचारिणी मम मतिश्चौर्य्याऽपि नित्यं स्थिता ।।6।।

अन्वय:- धनार्थी , अहम्, फूल्लाम्, लताम् इव, विभूषणवतीम्, अबलाम्, नो, मुष्णामि, विप्रस्वम्, अथो, यज्ञार्थम् , अभ्युद्धृतम्, काञ्चनम्, न, हरामि, तथा, क्वचित्, धत्र्युत्सड़्गगतम्, बालम् , न, हरामि, चौर्ये, अपि, मम, मति, नित्यम्, कार्याकार्यविचारिणी, स्थिता ।।6।।

हिन्दी अनुवाद - शर्विलक- धनलिप्सु होकर भी मैंने कभी फूलों से लदी लता की तरह जेवरों से सजी औरतों को कभी नहीं लूटा है, ब्राह्मणों का धन एवं यज्ञ के लिए संचित सोना भी कभी नहीं चुराया है, किसी धाय की गोद से भी कभी किसी बच्चे का अपहरण नहीं कियाहै,चोरी में भी मेरीबुद्धि उचितानुचित का विचार करती है **।।6।।**

तद्विज्ञाप्यतां वसन्तसेना-

अयं तव शरीरस्य प्रमाणादिव निर्मित:।
अप्रकाश्यं ह्यलड़्कार: मत्स्नेहाद्धार्य्यतामिति ।।7।।

अन्वय: - अयम्, अलंकाड़्कार :, तव, शरीरस्य, प्रमाणात् इव, निर्मित:, अप्रकाश:, हि, मत्स्नेहात् धार्यताम् इति **।।7।।**

हिन्दी में अनुवाद- तो जाकर वसन्तसेना से कहो-
ये जेवर आपके ही प्रमाण का बना है, कृपया मेरे स्नेह से इसे आप छिपाकर पहन लें ।।7।।

मदनिका- शर्विलक! अप्रकाश्यम् अलड़्कारक: इति द्वयमपि न पुज्यते । तदुपनय तावत् प्रेक्षे एतमलंकारकम् ।

मदनिका- खुले आम नहीं पहनने लायक ये जेवर हम लोगों जैसी पहनने वाली, इन दोनों बातों की संगति ठीक से नहीं बैठती ।फिर भी दो, देखूँ जेवर कैसे हैं ?

शर्विलक: - इदमलड़्करणम्। (इति साशड़्क समर्पयति।)

शर्विलक- ये रहे जेवर।(कुछ डरते हुए देता है।)

मदनिका- दृष्टपूर्ण इवायमलड़्कार: । तद्भ्रण कुतसते एष: ?

मदनिका- (देखकर) ये जेवर तो पहले के देखे हुए लगतेहै। फिर भी बतलाओंतुम्हें ये कहॉ मिले ?

शर्विलक:- मदनिके ! किं तब अनेन ! गृह्यताम् ।

शर्विलक- मदनिके, तुम्हें इससे क्या मतलब ? इसे तुम रख लो ।

मदनिका - यदि से प्रत्ययं नगच्छसि, तत् किं निमित्तं मां निष्कीणासि ?

मदनिका -(गुस्सा कर)यदि तुम मुझ पर भरोसा नहीं करते हो, तो फिर छुड़ाना ही क्या चाहते हो ?

शर्विलक:- अयि ! प्रभाते मया श्रुतं श्रेष्ठिचत्वरे- यथा सार्थवाहस्य चारूदत्तसय इति ।

(वसन्तसेना मदनिका च मूर्च्छा नाटयत: ।)

शर्विलक-अरी, आज सबेरे मैंने सुना है कि ये जेबर सेठों के मुहल्ले में रहने वाले सार्थवाह चारूदत्त के हैं। (वसन्तसेना और मदनिका दोनों बेहोश होने का अभिनय करती है।)

शर्विलक:- मदनिके ! समाश्वसिहि। किमिदानीत्व-

शर्विलक- मदनिके , धीरज धरो। इस समय तुम क्यो-

विषादस्रस्तसर्वाङ्गी सम्भ्रमभ्रान्तलोचना।

नीयमानाऽभुजिष्यात्वं कम्पसे नानुकम्पसे ।।8।।

अन्वय:-अभुजिष्यात्वम्, नीयमाना, विषादस्रस्तसर्वाङ्गी, सम्भ्रान्तलोचना, कम्पसे , न, अनुकम्पसे

हिन्दी - मुझ पर खुश होने के बदले डर से थर-थर कॉप रही हो ? घबडाहट के मारे तुम्हारी ऑखे चंचल हो रही हैं। मै तुम्हें बन्धनमुक्त करवा रहा हूँ और तुम नाराज हो रही हो ।।8।।

मदनिका- साहसिक ! न खलु त्वया मम कारणादिदमकार्य्य कुर्वता तस्मिन गेहे कोऽपि व्यापादित: परिक्षतो वा?

मदनिका- (किसी तरह धैर्यधारण करके) अरे ओ दु:साहसी, मेरे लिए यह कुकर्म करते हुए उस घर में तुमने किसी की जान तो नहीं ली, अथवा किसी को घायल तो नहीं किया?

शर्विलक: -मदनिके भीते सुप्ते न शर्विलक: प्रहरति। तन्मया न कश्चिद् व्यापादितो नापि परिक्षत:।

शर्विलक- डरे हुए और सोये हुए पर शर्विलक कभी प्रहार नहीं करता। अत: उस घर में न तो कोई मरा है और घयल ही हुआ है।

मदनिका- सच्चं ? (सत्यम् ?)

मदनिका- क्या सच है ?

शर्विलक:- सत्यम्।

शर्विलक- हॉ सच कहता हूँ।

वसन्तसेना- अहो, प्रत्युपजीवितास्मि।

वसन्तसेना- (होश मे आकर) हाय, जान बची।

मदनिका:- पिअम्। (प्रियम्।)

मदनिका- मेरा प्रिय ही हुआ।

शर्विलक:- (सेर्ष्यम्) मदनिके ! किं नाम प्रियमिति ?

शर्विलक- (ईर्ष्या के साथ) मदनिके, क्या प्रिय हुआ ?

त्वत्स्नेहबद्धहृदयो हि करोम्यकार्य,

सद्वृत्तपुरूषेऽपि कुले प्रसूत:।

रक्षामि मन्मथविपन्नगुणोऽपि मानं,

मित्रञ्च मां व्यपदिशस्यपरञ्च यासि।।9।।(साकुतम्)

अन्वय: - सद्वृत्तपूर्वपुरूषे , कुले , प्रसुत: अपि,त्वत्, स्नेहबद्धहृदय:, हि, आकार्यकरोमि, मन्मथविपन्नगुण:, अपि मानम्, रक्षामि, माम्, मित्रम्, व्यपदिशति, च, अपरम्, च, यासि ।।9।।

हिन्दी में अनुवाद- ऊँचे खानदान में जन्म लेने के बावजूद तुम्हारे प्रेम में फँसकर मैं बुराकाम

करता हूँ ! तुमने मेरी मर्यादा ही नष्ट कर दी है फिर भी मैं अपने मान की रक्षा करता हूँ। और तुम तो सामने मुझे बल्लभ बतलाती हो पर मन से किसी दूसरे से इश्क लड़ाती हो **॥9॥**

(कुछ मतलब के साथ उदास होकर)

इह सव्रस्वफलिन: कुलपुत्रमहाद्रुमा: ।

निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्याविहगभक्षिता: ॥10॥

अन्वय: -इह,सर्वस्वफलिन:,कुलपुत्रमहादुरमा:, वेश्याविहगभक्षिता:,अलम् निष्फलत्वं,यान्ति ॥10॥

हिन्दी अनुवाद- इस संसार में अपना सारा विभवही जिनका फल होता है, ऐसे कुलीन पुत्र रूपी बड़े पेड़ वेश्यारूपी चिड़ियों के द्वारा खाये जाकर एकदम फलहीन बना दिया जाते है ॥10॥

अयञ्च सुरतज्वाल: कामाग्नि: प्रणयेन्धन: ।

नाराणां यत्र हयन्ते योवनानि धनानि च ॥ 11॥

अन्वय:- सुरतज्वाल:, प्रणयेन्धन:,अयम् कामाग्नि:, यत्र, नराणाम् यौवनानि, धनानि, हूयन्ते ॥11॥

हिन्दी अनुवाद – संभोग जिनकी ज्वाला है तथा प्रेम जिसका ईधन है वह काम रूपी अग्नि प्रज्ज्वलित हो रही है जिस आग में मनुष्य अपनी जवानी और सम्पत्ति को होम कर देता है ॥11॥

वसन्तसेना-(सस्मितम्) अहो ! से अत्थाणे आवेओ ! (अहो ! अस्य अस्थाने आवेग:।)

वसन्तसेना – (मुसकुराकर)अरे, इसका गुस्सा गलत जगह पर है।

शर्विलक:- सर्वथा-

शर्विलक -हर प्रकार से-

अपण्डितास्ते पुरूषा मता मे ये स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति ।

श्रियो हि कुर्वन्ति तथैव नार्य्यो भजड़गकन्यापरिसर्पणानि ॥12॥

अन्वय:-ये, पुरूषा:, स्त्रीषु च, श्रीषु,च, विश्वसन्ति, ते, अपण्डिता:, में मता हि, श्रिय:, तथैव, नार्य:, भुजड़्गकन्यापरिसर्पणार्नि, कुर्वन्ति ॥12॥

हिन्दी -मेरी समझ में जो औरत और धन पर भरोसा करते है, वे मूर्ख है। धन और औरत सॉपिन की तरह हमेशा टेढी चाल ही चलती **हैं ॥12॥**

अभ्यास प्रश्न – 2

निम्नलिखित के एक शब्द में उत्तर दीजिए।

1. लक्ष्मी का निवास किसमें होता है।
2. शर्विलक ने किसका धन कभी नही चुराया।
3. चारूदत्त किस मुहल्ले में रहता है।
4. शर्विलक किस पर प्रहार नहीं करता है।
5. स्त्रियां किसके लिए हंसती तथा रोती हैं ।
6. क्षणिक अनुराग वाली वेश्यायें किसका हरण करना चाहती हैं।

11.3.3 श्लोक संख्या 13 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

स्त्रीषु न राग: कार्यो रक्तं पुरूषं स्त्रिय: परिभवन्ति ।
रक्तैव हि रन्तव्या विरक्तभावा तु हातव्या ।।13।।

अन्वय: -स्त्रीषु, राग:, न, कार्य:, स्त्रिय:, रक्तम्, पुरूषम्,परिभवन्ति,हि, रक्ता:, एवं, रन्तव्या, विरक्तभावा, तु, हातव्या, **।।13।।**

हिन्दी अनुवाद-औरतो की अधिक प्यार नहीं देना चाहिए, औरतें, आसक्त पुरूष को सदैव अपमानित करती है । अपने पर आसक्त औरतों से ही प्रेम करना चाहिये, अदासीन औरतों की शीघ्र उपेक्षा कर देनी चाहिये **।।13।।**

सुष्ठु खल्विदमुच्यते-

एता हसन्ति च रूदन्ति च वित्तहेतो-
विश्वासयन्ति पुरूषं च वित्तहेतो-
विश्वासयन्ति पुरूषं न तु विश्वसन्ति ।
तस्मान्नरेणकुलशीलसमन्वितेन
वेश्या: श्मशानसुमना इव वर्जनीया: ।।14।।

अन्वय: -एता:, वित्तहेतो:, हसन्ति, च, रूदन्ति च, पुरूषम् विश्वासयन्ति,तु न, विश्वासन्ति तस्मात्, कुलशीलसमन्वितेन, नरेण,श्मशानसुमना:, इव, वेश्या, वर्जनीया: **।।14।।**

हिन्दी अनुवाद - यह ठीक ही कहा गया है कि –

ये औरतें धन के लिए ही हँसती हैं, धन केलिए ही रोती है । पुरूष को अपने विश्वास में लाती है और स्वयं पुरूष का विश्वास नहीं करती है । अत: कुलशील व्यक्ति को श्मशान घाट की माला की तरह इन वेश्याओं का मोह छोड़ देना चाहिए **।।14।।**

अपि च-

समुदीवीचीव चलस्वभाव: सन्ध्याभ्रलेखेव मुहूर्त्तरागा:।
स्त्रियो हृतार्था: पुरूषं निरर्थं निष्पीडितालक्तकवत् तयजन्ति ।।15।।

अन्वय: -समुद्रवीची इव, चलस्वभाव:, सन्ध्याभ्रलेखा इव, मुहूर्त्तरागा:, स्त्रिय: हृतार्था:, निरर्थम्, पुरूषम् , निष्पीडितालक्तकवत्, त्यजन्ति **।।15।।**

हिन्दी अनुवाद- और भी- सागर की लहरों के समान चपल स्वभाव वाली, सायंकालीन मेघ की तरह क्षणिक अनुराग वाली वेश्याएँ केवल धन हरण करना जानती है। धन छीन लेने के बाद अपने गरीब प्रेमी को निचौड़े गये महावर की तरह छोड़ देती है **।।15।।**

अन्यं मनुष्यं हृदयेन कृत्वा ह्यन्यं ततो दृष्टिभिराह्वयन्ती ।
अन्यत्र मुञ्चन्ति मदप्रसेकमन्यं शरीरेण च कामयन्ते ।।16।।

अन्वय: -हृदयेन, अन्यम्, मनुष्यम्, कृत्वा, तत:, अन्यम्, दृष्टिभि:, आह्वयन्ति, अन्यत्र, मदप्रसेकम्, मुञ्चन्ति, शरीरेण, अन्यम् ,च, कामयन्ते **।।16।।**

हिन्दी अनुवाद – औरतें बडी चंचल होती है-

वे मन से किसी और को चाहती है और इशारे से किसी और को बुलाती है। अपनी जवानी की रवानी में किसी को फॉसती है तो देह से किसी और के साथ उपभोग करती है **।।16।।**

सूक्तं खलु कस्यापि-

न पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति न गर्दभा वाजिधुरं वहन्ति ।।

यवा: प्रकीर्णा न भवन्ति शालयो न वेशजाता: शुचयस्तथाऽङ्गना ।। 17।।

अन्वय:- पर्वताग्रे, नलिनी , न प्ररोहति, गर्दभा:, वाजिधुरम् न, वहन्ति, प्रकीर्ण :, यवा: शलय:, न, भवन्ति, तथा वेशजाता:, अंगना, शुचय: न **।।17।।**

हिन्दी अनुवाद- किसी ने बड़ा अच्छा कहा है-

पर्वत की चोटी पर पद्यिनी नहीं जमती, गदहे घोड़े की गाड़ी नही खीचते, खेत में बोए गये जौ धान नहीं बन जाते, उसी तरह वेश्या के घर में पैदा हुई औरतें पवित्र नहीं होती ।।17।।

(इति कतिचित् पदानि गच्छति।)

मदनिका- अइ असम्बद्धभासक ! असम्भावनीये कुप्यसि।

शर्विलका- कथमसम्भावनीयं नाम !

मदिनका- एष खल्वलंगर: आर्यासम्बन्धी।

अभ्यास प्रश्न -3

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिएं।

1. डाली पीटकर उसे पत्तों से रहित किसने किया।

(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना (ग) शर्विलक (घ) कोई नहीं

2. समाश्रित:पद का अर्थ होगा।

(क) आश्रितवान् (ख) नि:श्रितवान् (ग) गतवान् (घ) कोई नहीं

3. पद्यमिनी किसकी चोटी पर नहीं उगती।

(क) पर्वत (ख) वृक्ष (ग) मकान (घ) महल

4. हृदयेन में कौन सी विभक्ति हैं।

(क) प्रथमा (ख) तृतीया (ग) चतुर्थी (घ) द्वतीया

5. कृत्वा में कौन सा प्रत्यय है।

(क) ल्यप् (ख) क्त्वा (ग) शानच् (घ) कोई नहीं

6. वेश्या: श्मशानसुमना इव वर्जनीया: का अर्थ है।

(क) श्मशान घाट की माला की तरह वेश्याये त्याज्य हैं।

(ख) श्मशान घाट की तरह त्याज्य हैं।

(ग) श्मशान की लहरोंकी तरह वर्जित है

(घ) कोई नहीं

11.4 सारांश

चतुर्थ अंक की इस अंक में आपने लगभग चार से अधिक स्त्री एवं पुरूष पात्रों के संवादों का अध्ययन कर यह जाना की चेटी ने प्रवेश कर मदनिका और वसन्तसेना से चारूदत्त के बारे में क्या बताया पुन: वसन्तसेना के द्वारा मदनिका को वेश्या के घर में रहने के कारण बोलने में चतुर होने का सम्वाद उपस्थित होने के पश्चात तीनों में चारूदत्त से संबन्धित अन्य सम्वाद चित्रित किये गये है। आगे शर्विलक प्रवेश करके अपनी चोरी का प्रख्यापन करता है और कहता है कि मैंने जगे होने के कारण किसी के घर में चोरी नहीं की तो किसी के घर को औरतों के करण छोड़ दिया और कहीं पहरेदारों के नाते भी चोरी नहीं की। पुन: वसन्तसेना चारूदत्त के चित्र को अपने विस्तर पर रखती है इस प्रकार शर्विलक मदनिका को देखने के बाद उससे अकृष्ठ होता है , मदनिका उसका स्वागत भी करती है। इसमें विलम्ब होने के कारण वसन्तसेना अनेकप्रकार के कथन करती है। पुन: शर्विलक अपनी चोरी का वर्णनकरते हुए स्त्रियों की अनेक प्रकार की गतिविधियों और मर्यादाओं से सम्बन्धित तथ्यों का कथन करने लगता है। इन्हीं सब सम्वादों का प्रणयन् श्लोक संख्या 1 से 17 तक किया है अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप मदनिका और शर्विलक के प्रेम - प्रसंग को बताते हुए इसकी चोरी एवं स्त्रियों की गतिविधियों का वर्णन कर सकेगें।

11.5 पारिभाषिक शब्दावली

मूर्त्तिमतीम् – शरीर धारण करने वाली , अनंगवह्निसन्तप्तम् -काम की अग्नि से जलते हुए , **मन्त्रयती** – गुप्तमालपन्ती, - एकान्त में बात करती हुई, अखण्डितचारित्रोऽसि- जिसका चरित्र कभी खण्डित न हुआ हो, मुष्णामि-हरामि -चोरी करूगां , तर्कवितर्केन तव- भवत्या:-तर्क वितर्क के द्वारा तुम्हारा।

11.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 -1.सत्य 2. सत्य 3.असत्य 4. सत्य 5.असत्य 6. सत्य

अभ्यास प्रश्न 2- 1. साहस 2. ब्रह्मण 3. सेठों के 4.सोते हुए पर 5. धन 6. धन

अभ्यास 3- 1. (ग) शर्विलक 2. (क) आश्रितवान् 3.**(क) पर्वत** 4. **(ख) तृतीया**
5. **(ख) क्त्वा** 6. **(क) श्मशान घाट की माला की तरह वेश्यायें त्याज्य हैं।**

11.7 संदर्भग्रन्थ

1. डॉ0 कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. डॉ0 उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

11.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चतुर्थ अंक के प्रथम और द्वितीय श्लोक की व्याख्या कीजिए।
2. शर्विलक की चोर विद्या का वर्णन कीजिए।

इकाई -12 श्लोक संख्या 18 से 32 मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 श्लोक संख्या 18 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    12.3.1 श्लोक संख्या18 से 23तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    12.3.2 श्लोक संख्या 24 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    12.3.3 श्लोक संख्या 31 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
12.4 सारांश
12.5 पारिभाषिक शब्दावली
12.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
12.7 संदर्भग्रन्थ
12.8 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् के चतुर्थ अंक में श्लोक संख्या 1 से 17 तक के वर्णनों के पश्चात् 18 से 32 तक के श्लोकों में वर्णन किये गये तथ्यों से संबन्धित यह 12 वीं इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप शर्विलक द्वारा बताये गये स्त्रियों के विभिन्न प्रकार के आचरणों का अध्ययन करते हुए उसके द्वारा की गयी चोरी एवं प्रणय लीलाओं का अध्ययन करेगें।

वसन्तसेना का कथन है कि चारूदत्त ने जेवर पहुचाने वाले को उसकी मदनिका देने के लिए कहा है। शर्विलक के कथन में मनुष्यों के सद्गुणों का वर्णन करते हुए उसकी प्रिय एवं अप्रिय वस्तुओ का प्रख्यापन करके रत्नावली नाटिका का स्मरण भी किया गया है। 25वें श्लोक के बाद रावण की चर्चा भी की गयी है पाकशाला का वर्णन करते हुए विदूषक के द्वारा अन्यानय परिहास भी प्रसतुत किये गये हैं।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप बतायेगें कि इस अध्ययन यात्रा में स्त्री पुरूष के किन सम्वादों में भिन्न –भिन्न प्रकार की कितनी शिक्षाएं प्राप्त होती है।

12.2 उद्देश्य

श्लोक संख्या 18 से लेकर 32 तक के सम्यक अध्ययन हेतु लिखित इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि।

- विदुषक ने कितने परिहास किये है।
- वह अपनी धूर्तता की प्रशंसा किस प्रकार करता है।
- सार्थवाह कौन है।
- वसन्तसेना व शर्विलक के सम्वादों में क्या विशेषता है।
- हिरण्यकश्यप कौन था।

12.3 श्लोक संख्या 18 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वर्णन के इस अंश में चतुर्थ अंक के 18वें श्लोक से सम्वादों के साथ क्रमश: 32 वें श्लोक के सम्पूर्ण वर्णन उल्लिखित है। सर्वप्रथम प्रस्तुत अंश में शर्विलक के कथन से लेकर पुन: 23 वें श्लोक तक शर्विलक के ही कथन पर ही वर्णन समाप्त है। पुनश्च आगे के अंशों अन्य वर्णन किये जायेगें।

12.3.1 श्लोक संख्या18 से 23तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

मदनिका- (कपड़े का छोर पकड़कर)अरे, ओ उटपटांग बोलने वाले, तुम तो बेकार ही गुस्सा कर रहे हो।

शर्विलक- यह असंभव कैसे हो सकता है।

मदनिका- ये जेवर बसन्तसेना के ही है।

शर्विलक: तत: किम्?

शर्विलक -इससे क्या?

मदनिका -स च तस्स अज्जस्स हत्थे विणि क्खित्तो। (स च तस्य आर्यस्य हसते विनिक्षिस: ।)

मदनिका-यह आभूषण उन्होंने चारूदत्त के घर धरोहर के रूप में रक्खा था।

शर्विलक: - किमर्थम्?

शर्विलक- यह क्यों ?

मदनिका- एवमिव।

मदनिका- (कान में कुछ कहती है) इसलिए।

शर्विलक: (सर्वलक्ष्यम्) भो: ! कष्टम्।

शर्विलक- (लज्जा के साथ) बड़े दु:ख की बात है।

छायार्थ ग्रीष्मसन्तप्तो यामे वाहं समाश्रित:।

अजानता मया सैव पत्रै: शाखावियोजिता ।।18।।

अन्वय:- ग्रीष्मसन्तप्त:, अहम्, छायार्थम। याम् एव, समाश्रित:, अजानता मया, सा, एवं, शाखा, पत्रै:, वियोजिता **।। 18।।**

हिन्दी अनुवाद - गर्मी से परेशान मैंने जिस डाली का सहारा लिया, उसी को अनजाने ही पीट कर मैंने पत्तों से रहित कर दिया **।।18।।**

वसन्तसेना- कथमेषोऽपि एव। तदजानता एतेन एवमनुष्ठितम्।

वसन्तसेना- क्या यह पछता रहा है? इसने तो अनजान में ही चोरी की है।

शर्विलक:- मदनिके ! किमिदानी युक्तम् ?

शर्विलक- मदनिके , तू ही बता, अब क्या करना चाहिए।

मदनिका- अत्र त्वमेव पण्डित:।

मदनिका- मैं क्या कहूँ? इस विषय में तो तू ही चालाक है।

शर्विलक:- नैवम्। पश्य -

शर्विलक- ऐसी बात नहीं है। देखो-

स्त्रियो हि नाम खल्वेता निसर्गादेव पण्डित:।

पुरूषाणान्तु पाण्त्यं शास्त्रैरेवोपदिश्यते ।।19।।

अन्वय: - एता:, स्त्रिय:, हि, निसर्गात् एव, पण्डिता:, खलु, नाम, तु, पुरूषाणाम्, पाण्डित्यम्, शास्त्रै:, एव, उपदिश्यते **।।19।।**

हिन्दी अनुवाद- व्यावहारिक क्षेत्र में पुरूषो की अपेक्षा औरतें अधिक चतुर होती हैं। क्योंकि पुरूषों की चतुराई तो शास्त्रोपदेश से होती **है ।।19।।**

मदनिका -शर्विलक ! यदि मम वचनं श्रूयते, तत तस्यैव महानुभावस्य प्रतिनिर्यातय।

मदनिका- शर्विलक, अगर मेरी बात सुनो तो मैं कहूँगी कि ये सारे आभूषण आर्य चारूदत्त को ही लौटा दो।

शर्विलक:- मदनिके ! यद्यसौ राजकुले मां कथयति ?

शर्विलक-वाह री मदनिके, और अगर वह कचहरी में नालिश कर दे तब?

मदनिका- न चन्द्रादातपो भवति।

मदनिका- चॉद से कभी गर्मी नहीं होती है।

वसन्तसेना- साधु मदनिके ! साधु।

वसन्तसेना- वहा, मदनिके, खूब।

शर्विलक:- मदनिके !

शर्विलक- मदनिके,

न खलु मम वषाद: साहसेऽस्मिन् भयं वा
कथयसि हि किमर्थं तस्य साधोर्गुणांस्त्वम्।
जनयति मम वेदं कुत्सितं कर्म लज्जां
नृपतिरिह शठानां मादृशां किं नु कुर्यात् ?॥20॥

अन्वय:- अस्मिन्, साहसे, मम, विषाद:, वा भयम्,न, खलु, त्वम्, तस्य, साधो:, गुणान् किमर्थम्, कथयसि? हि , इदम्, कुत्सितम्, कर्मम्,वा, मम, लज्जाम्, जनयति, इह, नृपति:, मादृशाम्, शठानाम्, किम् कुर्यात्?॥**20॥**

हिन्दी अनुवाद- मैनें हिम्मत के साथ यह चोरी की है। सच पूछो तो इसके लिए नतो मुझे पछतावा है और न कचहरी से सजा पाने का डर। ऐसी स्थिति में तुम चारूदत्त की भल मनसाहत का बखान क्यों कर रही हो? मुझे मेरा अपना बुरा काम ही लजा रहा है। मेरे जैसे धूर्त्त का राजा क्या बिगाड़ लेगा **?॥20॥**

तथापि नीतिविरूद्धमेतत्। अन्य उपायश्चिन्त्यताम्।

फिर भी यह चोर नीति के विरूद्ध है। कोई दूसरा तरीका निकालो।

मदनिका- सोऽयमपर उपाय:।

मदनिका – दूसरा तरीका भला क्या हो सकता है?

वसन्तसेना-क: खलु अपर उपायो भविष्यति।

वसन्तसेना- दूसरा तरीका भला क्या हो सकता है?

मदनिका-तस्यैव आर्यस्य सम्बन्धी भूत्वा, एतमलङ्कारमार्याया उपनय।

मदनिका-चारूदत्त का सम्बन्धी बनकर आर्या वसन्तसेना को ये जेवरात सौप दो।

शर्विलक:- नन्वतिसाहसमेतत्।

शर्विलक- ऐसा करने से क्या होगा?

मदनिका- त्वं तावदचौर:, सोऽपि आर्य: अनृण:, आर्य्याया: स्वक: अलंकारक उपगतो भवति।

मदनिका- तुम चोर नहीं समझे जाओगे, चारूदत्त न्यायमुक्त हो जायेगा, वसन्तसेना को उनका आभूषण मिल जायेगा।

शर्विलक: - नन्वतिसाहसमेतत्।

शर्विलक- लेकिन, यह तो बड़ी हिम्मत का काम है।

मदनिका- अयि! उपनय अन्यथा अतिसाहसम्।

मदनिका- चलो, उठाओ जेवर। ऐसा नहीं करना ही दु:साहस है।

वसन्तसेना- साधु मदनिके ! साधु। अभुजिष्ययेव मन्त्रितम्।

वसन्तसेना- वाह मदनिके, विवाहिता पत्नी की तरह ही तुमने सलाह दी है।

शर्विलक:-

मयाप्ता महती बुद्धिर्भवतीमनुगच्छता।

निशायं नष्टचन्द्रायां दुर्लभो मार्गदर्शक: ।।21।।

अन्वय: - भवतीम् अनुगच्दता, मया, महती, बुद्धि, आप्ता, नष्टचन्द्रायाम्, निशायाम्, मार्गदर्शक: ।।21।।

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक- तुम्हारे कथनानुसार चलकर मैंने भी बड़ी बुद्धि पा ली है। अमावस के अन्धकार में पथभ्रष्ट पथिक को कठिनाई से मार्गदर्शक मिलता है ।।21।।

मदनिका- तेन हि त्वमस्मिन् कामदेवगेहे मुहुर्त्तकं तिष्ठ, यावदार्यायै तवागमनं निवेदयामि।

मदनिका-अच्छा तो इस काममन्दिर में तुम कुछ देर रूको, जब तक मान्या वसन्तसेना को मैं तुम्हारे आगमन की सूचना दे दूँ।

शर्विलक:- एवं भवतु।

शर्विलक - जाओ, ऐसा ही करो।

मदनिका- आर्ये ! एष खलु चारूदत्तस्य सकाशाद् ब्राह्मण: आगत:।

मदनिका- (पास जाकर) आर्ये,मान्य चायदत्त ने एक ब्रह्मण को भेजा है।

वसन्तसेना- हञ्जे ! तस्य सम्बन्धीति कथं त्वं जानासि ?

वसन्तसेना- अरी तुम कैसे जानती हो कि यह उनका सम्बन्धी है ?

मदनिका- आर्ये ! आत्मसम्बन्धिनमपि न जानामि ?

मदनिका- आर्ये, क्या अपने सम्बन्धियों को भी नहीं पहचान सकूँगी।

वसन्तसेना - युज्यते। प्रविशतु।

वसन्तसेना- (मन ही मन, सिर हिलाकर, हँसती हुई) ठीक है। (प्रकट) उन्हें बुलाओ।

मदनिका- यदार्या आज्ञापयति। प्रविशतु शर्विलक:।

मदनिका- जो आज्ञा (जाकर) शर्विलक, भीतर चलो।

शर्विलक:- (उासृत्य, सवैलक्ष्यम्) स्वस्ति भवत्यै।

शर्विलक- (पास जाकर, घबड़ाये हुए) आर्ये,कल्याण हो।

वसन्तसेना- आर्य ! वन्दे। उपविशतु आर्य:।

वसन्तसेना- आर्य, वसन्तसेना प्रणाम करती है। आइए,विराजिये।

शर्विलक:- सार्थवाहस्त्वां विज्ञापयति –जर्जरत्वाद् गृहस्य दूरक्ष्यमिदं भाण्डम्, तद् गृह्यताम्। (इति मदनिकाया:समर्प्य प्रस्थित:।)

शर्विलक- सार्थवाह ने आपसे निवेदन किया है कि- घर के जर्जरहोने से आभूषणों की रक्षा करना कठिन है। अत: आप इन्हें ग्रहण करें।(मदनिकाकी आभूषण देकर जाने लगता है।

वसन्तसेना- आर्य! ममापि तावत् प्रतिसन्देशं तत्रार्य्यो नयतु।

वसन्तसेना- आर्य ! आप मेरा उत्तर भी लेते जायें।

शर्विलक: (स्वागतम्) कसतत्र यास्यति? (प्रकाशम्) क: प्रतिसन्देश: ?

शर्विलक-(मन ही मन) हाय,वहॉ जायेगा कौन? (प्रकट) क्या जबाब पहूँचाना है ?

वसन्तसेना- प्रतीच्छतु आर्यो मदनिकाम्।

वसन्तसेना- आप मदनिका को स्वीकार करें।(यही जबात है।)

शर्विलक:- भवति ! न खल्ववगच्छामि।

शर्विलक-आर्ये, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ ?

वसन्तसेना- अहमवगच्छामि।

वसन्तसेना- मैं समझा रही हूँ।

शर्विलक:- कथमिव?

शर्विलक- इसका मतलब?

वसन्तसेना- अहमार्यचारूदत्तेन भणिता-'य इममलंकारकं समर्पयिष्यति, तस्य त्वया मदनिका दातव्या।' तत् स एव एतां ददातीति एवमार्येणअवगन्तव्यम्।

वसन्तसेना- चारूदत्त ने मुझसे कहा है-'जेवर पहुँचाने वाले को तुम अपनी मदनिका सौप देना'। इसलिए आप चारूदत्त द्वारा प्रदत्त इस मदनिका को समझें।

शर्विलक:- (स्वगतम्)अये ! विज्ञातोऽहमनया। (प्रकाशम्) साधु आर्यचारूदत्त ! साधु।

शर्विलक-(मन ही मन) तो क्या इसने सब बात जान ली है ? (प्रकट) धन्य हो, आर्य चारूदत्त।

गुणेष्वेव हि कर्त्तव्य: प्रयत्न: पुरूषै: सदा।

गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणै:सम: ।।22।।

अन्वय: - पुरूषै:, सदा, गुणेषु, एव, प्रयत्न:, कर्त्तव्य:, हि, गुणयुक्त:, दरिद्र:, अपि, अगुणै:, ईश्वरै:, सम:, न **।।22।।**

हिन्दी अनुवाद- मनुष्यों को हमेशा अच्छे गुणों को अपनाना चाहिए। क्योंकि गुणी दरिद्र निर्गुण धनी से बढकर होता है **।।22।।**

अपि च-

गुणेषु यत्न: पुरूषेण कार्यो न किञ्चिदप्राप्यतमं गुणानाम्।

गुणप्रकर्षादुडुपेन शम्भोरलङ्घयमुल्लङ्घितमुत्तमाङ्गम् ।।23।।

वसन्तसेना- कोऽत्र प्रवहणिक:?

अन्वय- पुरूषेण, गुणेषु, यत्न: , कार्य:, गुणानाम्, किञ्चिदपि , अप्राप्यतमम्, न, उडुपेन, गगुणप्रकर्षात्, अलङ्घयम्, शम्भो: , उत्तमांगम्, उल्लेङ्घितम्।।23।।

हिन्दी अनुवाद- और भी- मनुष्य को हमेशा सद्गुणों के प्रयत्नशील होना चाहिए।क्योंकि गुणवानों

के लिए संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं है। अपने गुण के कारण ही भगवान् शंकर के दुर्लङ्घ्य मस्तक पर चन्द्रमा सुशोभित होता है **।।23।।**

12.3.2 श्लोक संख्या 24 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वसन्तसेना- यहाँ कौन गाडीवान है ?

चेट:- आर्ये ! सज्जं प्रवहणम् ।

(गाडी के साथ प्रवेश कर)

चेट- आर्ये, गाड़ी तैयार है ।

वसन्तसेना- हञ्जे मदनिके ! सुदृष्टां मां कुरू । दत्तऽसि । आरोह प्रवहणम् ! स्मरसि माम्।

वसन्तसेना- अरी ओ मदनिके , जरा ऑख भर देख लेने दो, आज से तो तुम पराई हो गई हो । आओ गाड़ी पर बैठो ।मुझे भूल मत जाना ।

मदनिका- (रूदती) परित्यक्ताऽस्मि आर्याया ।

मदनिका- (रोती हुई) आर्या ने मुझे छोड़ दिया । (ऐसा कहकर वसन्तसेना के पैरों पर गिरतीहै।)

वसन्तसेना- साम्प्रतं त्वमेव वन्दनीया संवृत्ता । तद् गच्छ । आरोह प्रवहणम्। स्मरसि माम्।

वसन्तसेना- अरी, अब तो तुम मेरे लिए पूजनीय हो गई हो । आओ , गाडी पर बैठो । मुझे याद रखना ।

शर्विलक:- स्वस्ति भवत्यै । मदनिके !

सुदृष्ट: क्रियतामेष शिरसा वन्द्यतां जन: ।

यत्र ते दुर्लभं प्राप्तं वधूशब्दावगुण्ठनम् ।।24।।

अन्वय:-एष , जन:, सुदृश्ट:, क्रियताम्, शिरसा, वन्द्यताम् , यत्, दुर्लभम्, वधु , शब्दावगुण्ठनम्, ते, प्राप्तम् **।।24।।**

हिन्दी अनुवाद-शर्विलक- आपका कल्याण हो । मदनिके-

वसन्तसेना को भर ऑख देख लो और विनय भाव से इन्हें प्रमाण करो । क्योकि इन्हीं की कृपा से वेश्यालय में रहकर भी तुमने 'वधू' का घूँघट पाया है **।।24।।**

(इति मदनिकया सह प्रवहणमारूह्य गन्तुं प्रवृत्त: ।)

शर्विलक:- (आकर्ण्य) कथं राज्ञा पालकेन प्रियसुहृदार्यको मे बद्ध:। कलत्रवांश्चास्मि संवृत्त: । आ:, कष्टम् । अथवा -

द्वयमिदमतीव लोके प्रियं नराणां सुहृच्च वनिता च ।

सम्प्रति तु सुन्दरीणां शतादपि सुहृद्विशिटतम: ।।25।।

अन्वय: - लोके, सुहृद्, वनिता, च , इदम्, द्वयम्, नराणाम्, अतीव, प्रियम्, तु, सम्प्रति , सुन्दरीणाम्, शतात्, अपि, सुहृद्, विशिष्टतम**: ।।25।।**

हिन्दी अनुवाद- (इस प्रकार मदनिका के साथ गाड़ी पर चढकर जाने को प्रस्तुत होताहै।) (नेपथ्य मे) यहाँ कौन है? राजपुरूष का आदेश है- 'यह अहीर का बेटा आर्यक राजा होगा' इस प्रकार किसी सिद्धपुरूष के कहने पर डरे हुए राजा पालक ने उसे मड़ई से पकडकर कठोर कारागार में बन्द

कर दिया है।

शर्विलक - (सुनकर) राजा पालक ने मेरे मित्र आर्यक को पकड़ लिया है। इधर मैं स्त्री वाला हो गया हूँ । खेद है-

संसार में मनुष्य को स्त्री और मित्र दो ही प्रिय हैं। किन्तु इस समय सैकड़ों सुन्दरियों की अपेक्षा मित्र बढकर है**। ।।25।।**

भवतु, अवतरामि। (इत्यवतरित ।) अच्छा उतरता हूँ। (गाड़ी से उतरता है ।)

मदनिका-एवमेतत्। तत्परं नयतु मामार्यपुत्र: समीपं गुरूजनानाम् ।

मदनिका-(ऑखो में ऑसू भरकर , हाथ जोडकर) आपका विचार ठीक है; पर मुझे गुरूजनों से पास पहूँचा दें।

चेट:- अथ किम् ?

चेट- क्यों नहीं।

शर्विलक:- तत्र प्रापय प्रियाम्।

शर्विलक- वहॉ ही इन्हें पहुँचा दो।

चेट:- यदार्य आज्ञापयति ।

चेट- आपकी जैसी आज्ञा।

मदनिका- यथा आर्यपुत्रो भणति, अप्रमत्तेन तावदार्यपुत्रेण भवितव्यम् । (इति निष्क्रान्ता ।)

मदनिका- आप जैसा विचार कर रहे हैं , ऐसे काम में आपको भी सावधान रहना चाहिए। (यह कहकर निकल जाती है।)

शर्विलक:- अहमिदानीम् –

ज्ञातीन् विटान् स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान्
राजापमानकुपितांश्व नरेन्द्रभृत्यान् ।
उत्तेजयामि सुहृद: परिमोक्षणाय
यौगन्धरायण इवोदयनस्य राज्ञ: ।।26।।

अन्वय: -उदयनस्य, राज्ञ:, यौगन्धरायण:, इव, सुहृद:, परिमोक्षणाय, ज्ञातीन्, विटान्, स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान् राजापमानकुपितान्, नरेन्द्रभृत्यान् च उत्तेजयामि ।

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक- इस समय मुझे-

जैसे राजा उदयन की रक्षा के लिए यौगन्धरायण ने प्रयास किया था, उसी प्रकार अपने मित्र की रक्षा के लिए प्रयन्तनशील होना है। उसके उद्धार के लिए - धूर्तो, राजा के निरादर से क्रुद्ध उनके कुटुम्बियों, सचिवों एवं अपने बाहुबल के लिए विख्यातवीरों को उकसाता हूँ **।।26।।**

अपि च – प्रियसुहृदमकारणे गृहीतं
रिपुभिरसाधुभिराहितात्मशड्कै: ।
सरभसमभिपत्य मोचयामि -
स्थितमिव राहुमुखे शशाड्कबिम्बम् ।।27।।

(इति निष्क्रान्तः ।)

अन्वयः- आहितात्मशङ्कै, असाधुभिः, रिपुभिः, अकारणे, गृहीतम्, राहुमुखेस्थितम्, शशाङ्कबिम्बम् , इव, प्रियसुहृदम्, सरभसम्, अभिपत्य, मोचयामि, ॥27॥

हिन्दी अनुवाद- और भी अपने मन की शंका से भयभीत होकर अकारण ही इस दुष्ट ने मेरे मित्र को जेल में डाल दिया है। राहु के मुँह में पड़े चन्द्रमण्डल की तरह अपने मित्र का मैं चलकर उद्धारकरता **हूँ ॥27॥**

(चला जाता है)

चेटी – आर्ये ! दुष्टया वर्द्धसे आर्यचारूदेत्तसय सकाशात् ब्राह्मण आगतः।

चेटी-(मंच पर उपस्थित होकर) आर्ये ! शुभ समाचार है। आर्य चारूदत्त के यहॉ से एक ब्राह्मण आया है ।

वसन्तसेना- अहो ! रमणीयता अद्य दिवसस्य । तत् हञ्जे ! सादरं, बन्धुलेण समं प्रवेशयएनम् ।

वसन्तसेना- आह ! आज मेरा दिन ब ड़ा ही सुखद है। चेटी, बन्धुल के साथ ससम्मान उन्हें भीतर ले आओ ।

चेटी –(इति निष्क्रान्ता ।) यदार्या आज्ञापयति । (विदूषको बन्धुलेन सह प्रविशति ।)

चेटी- जैसे आज्ञा । (कहकर निकल जाती है ।)

(बन्धुल के साथ विदूषक का प्रवेश)

विदूषकः -ही ही भोः !तपश्वरक्लेशविनिर्जितेन राक्षसराजो रावणः पुष्पकेण विमानेन गच्छति; अहं पुनर्ब्रा ह्मणोऽकृततपश्चरणक्लेशोऽपि नरनारीजनेन गच्छामि ।

विदूषक- अरे,आश्चर्य है । राक्षसराज रावण ने उग्रतपस्या कीथी,जिसके फलस्वरूप पुष्पक विमान से घूमा करता था और मैं ब्राह्मण बिना तपस्या किये ही नरनारी रूप विमान से चलता हूँ ।

चेटी- प्रेक्षयामार्य अस्दीयं गेहद्वारम् ।

चेटी- मान्यवर, आप हमारे घर का दरवाजा देखें ।

विदूषकः - (अवलोक्य, सविस्मयम्) अम्मो ! सलिल-सित्त- मज्जिद-किदहरिदोवलेवणस्स, (अहो ! सलिल-सिक्तमार्जित-कृत-हरितोपलेपनस्य, विविध-सुगन्तिकुसुमोपहार-चित्रलिखितभूमि-भागस्य, गगनतलालोकन-कौतूहलदूरोन्नमितशीर्षस्य,दोलायमानावलम्बितैरावण-हस्त-भ्रमायित-मल्लिकादामगुणालङ्कृतसय, समुच्छितदन्तिदन्ततोरणावभासितस्य, महारत्नोपरागोपशोभिना पवनबलान्दोलना-ललच्चञ्चलाग्रहस्तेन 'इत एहि' इति व्याहरतेव मां सौभाग्यपताकानिवहेनोपशोभितस्य, तोरणधरणस्तम्भवेदिका-निक्षिप्तसमुल्लसद्धरित-चूतपल्लामस्फटिकमङ्गलकलशाभिरामो –भयपार्श्वस्य, हमासुर-वक्षः स्थल-दुर्भेद्य-वज्र-निरन्तरप्रतिबद्ध-कनक-कपाटस्य दुर्गतजन-मनोरथायास्करसय, वसन्तसेनाभवनद्वरस्य सश्रीकता। यत् सत्यं मध्यसथस्यापि जनस्य बलाद् दृपृष्टिमाकारयति ।

विदूषक- (देखकर, आश्वर्य के साथ) पानी छिड़क कर, झाडू लगाकर गोबर से लीप गया है।

अनेक तरह के फूलों के उपहार चढाने के कारण यहॉ की जमीन चित्र की तरह बन गई है। अपना ऊपरी हिस्सारूपी माथा उठाकर मानों आकाश छूने की स्पर्द्धा कर रहा है। इसमें लटकी मल्लिकाकी माला हाथी के सूँड की भ्रान्ति पैदा कर रही है। इसके तोरण हाथी दॉत के बने हैं। इसमें चन्द्रकान्तमणि जैसे गहँगे रत्न जड़े हैं। हवा के झोके से ये हिल रहे हैं। लगता है, ये हाथ से हमें ही बुला रहे हैं। दोनों ओर तोरण बॉधने के लिए स्तम्भ शुभसूचक पताकाओं से सुशोभित हैं। हरे-हरे आम के पल्लवों से ये सजे हैं। इन पर स्फटिक पत्थर के बने मांगलिक कलश रक्खे हैं। हिरण्यकशिपु की कठोर छाती की तरह इनमें लोग दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। वसन्तसेना के इस दरवाजे की शोभा अपूर्व है। इन्हें देखने के लिए नि:स्पृहों की ऑखे भी सहसासस्पृह हो जाती हैं।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमं प्रथमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी - आइए , यह पहला कमरा है। इसमें प्रवेश कीजिए।

विदूषक: (प्रविश्यावलोक्य च) ही ही भो: ! इतोऽपि प्रथमे प्रकोष्ठे शशि-शङ्खमृणालसच्छाया:, विनिहितचुर्णमुष्टिपाण्डुरा: विविध-रत्न-प्रतिबद्धकाञ्चन-सोपान-शोभिता:, प्रासादपङ्क्तय:, अवलम्बितमुक्तादामभि: स्फटिकवातायनमुखचन्द्रैर्निंध्यायन्तीव उज्जयिनिम्। श्रोत्रिय इव सुखोपविष्टो निद्राति दौवारिक: । सदध्ना क्लमोदनेन प्रलोभिता न भक्षयन्ति वायसा बलिं सुधासवर्णतया। आदिशतु भवति।

विदूषक- (प्रवेश कर और देखकर) पहले प्रकोष्ठ में भी चन्द्रमा, शंख एवं भिसांड की तरह श्वेत चूर्ण से सुशोभित, रत्नजटित सोने की सीढियों से आकर्षक, महलों की कतारें झूलती मोती की मालाओं से तथा स्फटिक से बने झरोखे रूपी मुखचनद्र से मानो उज्जयिनि की शोभा देख रही हैं। दरवाजे पर बैठा द्वारपाल वेदपाठी ब्राह्मण की तरह निश्चिन्त नीद ले रहा है। दही के साथ अगहनी चावल के भात से लुभाये जाने पर भी ये कौवे सुधातुल्य शुभ्र वलि को चूने के भय से नहीं ख रहे हैं। हॉ श्रीमती जी अब आगे की राह बताएँ।

चेटी- एतु एतु आर्य: । इमं द्वितीयं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य: ।

चेटी – आइये श्रीमान् इस दूसरे कमरे में प्रवेश कीजिये।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि द्वितीये प्रकोष्ठे पर्यन्तोपनीत-यवस-बुस-कवलसुपुष्टास्तैलाभ्यक्तविषाणा बद्धा: प्रवहणबलीवर्दा: ।अयमन्यतर: अवमानित इव कुलीनो दीर्घ नि:श्वसिति सैरिभ:। इतश्व अपनीतयुद्धस्य मल्लस्येव मर्द्यते ग्रीवा मेषस्य। इत इत: अपरेषामश्वानां केशकल्पना क्रियते। अयमपर: पाटच्चर इव दृढबद्धो मन्दूरायां शाखामृग: । इतश्च कूर-च्युत-तैल-मिश्रं पिण्डं हस्ती प्रतिग्राह्यते मात्रपुरूषै: ।आदिशतु भवित।

विदूषक- (प्रवेशकर और देखकर) सामने डाली गई घास और भूसे खाने से तगड़े तेल लगे सींध वाले गाडी के बैल बँधे है। यह एक भैसा, खानदानी अपमानित आदमी की तरह लंबी सॉसे खीच रहा है।दूसरी ओर लड़कर आये पहलवान की तरह भेड़ो की गर्दन मली जा रही है। इधन घोडों की बाल छॉटे जा रहे हैं , उधर चोर की तरह वानर को घुड़साल में बॉधकर रक्खा गया है।

(दूसरी ओर देखकर) इधर तेल टपकते हुए गोल-गोल पिण्डों को महावत हाथी को खिला रहा है। अब श्रीमती आगे की राह बतलाएँ।

चेटी- एदु एदु अज्जो। इमं तइअं पओट्ठंपविसदु अज्जो। एतु एतु आर्य:। इमं तृतीयं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी-आइए, इस तीसरे घर में आप प्रवेश करें।

विदूषक:- ही ही भो:! इतोऽपि तृतीये प्रकोष्ठे तिष्ठति पुसतकम्। एतच्च मणिमय-सारिका-सहितं पाशकपीठम्। इमे च अपरे मदन-सन्धि-विग्रह-चतुरा विविध-वर्णिका-विलिप्त-चित्रफल-काग्रहस्ता इतस्तत: परिभ्रमन्ति गणिका वृद्धविटाश्च। आदिशतु भवती।

विदूषक –(प्रवेशकर और देखकर) अरे आश्चर्य है, भद्र लोगों को बैठने लायक उपस्कर सजाये गये हैं। आधी पढी हुई पुस्तक पाशा खेलने की चौकी पर पड़ी है। पाशाके कोष्ठक भी कीमती पाशे से भरे हैं। एक ओर प्रेम-मिलन एवं प्रणय-कलह कराने में चतुर वश्याएँ एवं दूसरी ओर वृद्ध विट हाथों में अनेक आकर्षक चित्र लिए इधर-उधर घूम रहे हैं। आप आगे की राह बतलायें।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमं चतुर्थ प्रकोष्ठ प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए, यह रहा चौथा प्रकोष्ठ , इसमें आप प्रवेश करें।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि चतुर्थे प्रकोष्ठे युवति- कर – ताडिता जलधरा इव गम्भीरं नदन्ति मृदङ्गा:। क्षीणपुण्या इव गगनात्तरका निपतन्ति कांस्यताला:। मधुकर-विरूत-मधुर वाद्यते वंश:। इयमपरा ईर्श्या- प्रणयकुपितकामिनीव अङ्कारोपिता कररूहपरामर्शेन सार्यते वीणा। इमा अपराश्च कुसुमरसमत्ता एव मधुर्य्य: अतिमधुरं प्रगीता गणिकादारिका: नर्त्यन्ते , नाट्यं पाठयन्ते सश्रृङ्गारम्। अपवल्गिता गवाक्षेषु बातं गृह्णन्ति सलिलगर्गर्य: भवती।

विदूषक: - (प्रवेशकर और देखकर) अरे आश्चर्य है , इस घर में युवतियॉ मृदंग बजा रही है। पुण्यक्षीण होने पर आकाश से गिरे तारे की तरह करताल भी बज रहे हैं। भौरों की गुंजार की तरह बांसुरी भी बज रही है। ईर्ष्या के कारण प्रणकुपित युवती की तरह गोद में वीणा को रखकर उसके तारों को साधा जा रहा है। पुष्परस पीकर मदमत्त भौरो की तरह वेश्या-वालिकाओ को अभिनय सिखाये जा रहे है। झरोखे पर रक्खी जलपूर्ण गगरियॉ हवा में ठंडी हो रही है। आगे बढें, श्रीमती जी।

चेटी- एतु एतु आर्य: । इमं पञ्चमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी-यह पॉचवॉ घर है, इसमें प्रवेश करें श्रीमान्।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि पञ्चमें प्रकोष्ठे अयं दरिद्रजनलोभोत्पादनकरम् आहरति उपचितो हिङ्गुतैलगन्ध:। विविध –सुरभि –धूमोद्गारै: नित्यं सन्ताप्यमानं नि:श्वसितीव महानसं द्वारमुखै:। अधिकमुत्सुकायते मां साध्यमानबहुविध-भक्ष्य-भोजनगन्ध:। अयमपर: पच्चरमिव पेशिं धावति रूपिदारक:। बहुविधाहार-विकारमुपसाधयति सुपकार:। बध्यन्ते मोदका। पच्यन्ते च पूपका:। अपि इदानीमहं वर्द्धितं भुङ्क्ष्व इति पादोदकं लप्स्ये?इह गन्धर्वाप्सरोगणैरिव

विविधालङ्कारशोभितै: गणिकाजनै: बन्धुलैश्च यत्सत्यं स्वर्गायते इदं गेहम् । भो: ! के यूयं बन्धुला नाम?

विदूषक- (भीतर जाकर और देखकर) इस घर में गरीबों को लुभाने वाले पाकशाला से हींग की सुगन्ध आ रही है। ये पाकशाला अपने दरवाजे से धुएँ के साथ अनेक तरह की सुगंध सॉस की तरह बाहर निकाल रहे हैं। अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थो की सुगन्ध मुझे खीच रहे हैं। यह बूचर बालक पुराने वस्त्र की तरह पशु के ऑच को धो रहे हैं। रसोइया अनेक प्रकार के आकर्षक भोजन तैयार कर रहे हैं। कहीं लड्डू बॉधे जा रहे हैं। कहीं पूए बन रहे हैं। (मन ही मन) तो क्या यहॉ पैर धोने के लिए पानी कहीं मिलेगा। (दूसरी ओर देखकर) यहॉ गन्धर्वो एवं अप्सराओं के झुण्डों की तरह अनेक जेवरों वाली अप्सराओं के घूमने से यह घर स्वर्ग की तरह लग रहा है। ये बन्धुल कौन हैं ?

बन्धुला: -वयं खलु-

परगृहललिता: परान्नपुष्टा:

परपुरूषैर्जनिता: पराङ्गनासु ।

परधननिरता गुणेष्ववाच्या

गजकलभा इव बन्धुला ललाम: ।।28।।

अन्वय: - परगृहललिता:, परान्नपुष्टा:, परपुरूषै: पराङ्गनासु, जनिता:, परधननिरता:, गुणेषु: अवाच्या , बन्धुला:, गजकलभा:, इव, ललाम**:, ।।28।।**

हिन्दी अनुवाद- बन्धुल- हम लोक तो-

दूसरों के घरों में सुख से रहने वाले, दूसरों के दाने पर पले हुए, अन्य पुरूषों के द्वारा दूसरों की स्त्रियों में पैदा किए गये, पराये धन को मौज से उड़ाने वाले, गुणहीन हम बन्धुल लोग हाथियों के बच्चों की तरह बिहार करते है **।।28।।**

विदूषक:- आदिशतु भवती ।

विदूषक- अब आप आगे की राह दिखलाएँ ।

चेटी- एतु एतु आर्य: । इमं षष्ठं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी-आइए श्रीमान, अब आप इस छठे घर में प्रवेश करें।

विदूषक:- ही ही भो: इतोऽपि षष्ठे प्रकोश्ठे अमूनि तावत् सुवर्णरत्नानां कर्मतोरणानि नील – रत्न-विनिक्षिप्तानिइन्द्रायुधस्थानमिव दर्शयन्ति । वैदूर्य-मौक्तिक-प्रवाल-पुष्परागेन्द्रनील-कर्केतरकपद्मराग-मरकतप्रभतीन् रत्नविशेषान् अन्योन्यं विचारयन्ति शिल्पिन। वध्यन्ते जातरूपैर्माणिक्यानि, घटयन्ते सुवर्णालङ्कारारक्तमूत्रेण, ग्रथ्यन्ते मोक्तिकाभरणानि, घृष्यन्ते धीरं वैदूर्याणि , छियन्ते शङ्खा:, शाण्यन्ते प्रबालका, शोष्यन्ते आर्द्रकुङ्कुमप्रस्तरा: सार्य्यते कसतूरिका, विशेषेण घृष्यते चन्दनरस:, संयोज्यन्ते गन्धयुक्तय:, दीयते गणिकाकामुकयो:, सकर्पूरं ताम्बूलम्, अवलोक्यते सकटाक्षम्, प्रवर्त्तते हास:, पीयतेचअनवरतं ससीत्कारं मदिरा। इमे चेटा:, इमाश्चेटिका:, इमें अपरेअवधीरितपुत्रदारवित्ता मनुष्या: करकासहितपीतमदिरैर्गणिकाजनैर्ये मुक्ता

आसवा: तान् पिबन्ति। आदिशतु भवती।

विदूषक- (भीतर घुसकर और देखकर) अहा, इस छठे कक्ष की छटा भी तो निराली है। मरकतमणिजटित सोने और कीमती पत्थरों से बने ये तोरण इन्द्रधनुष की शोभा से सम्पन्न है। जौहरी लोग आपस में मिलकर हीरे, मोती, मूँगे, मणिक, पन्ना, पुखराज और लहसूनियॉ जैसे रत्नों को परख रहे है। कहीं मणियों को सोने में जड़ा जा रहा है कहीं सोने के आभूषणों को लाल डोरे में गूँथा जा रहा है, कहीं मोतियों की मालाएँ बनायी जा रही है, कही कस्तूरी इकट्ठी की जा रही है, कहीं चन्दन घिसे उनके प्रेमियों को पान के बीड़े दिये जा रहे है, कही तिरछी निगाहें चल रही हैं,तो कहीं हँसी –मजाक चल रहे है, कही सी-सी करके लोग शराब पी रहे हैं, कही चेट है तो कहीं चेटिकाऐं अपना पुत्र पत्नी और सर्वस्व छोड़करआने वाले लोग वेश्याओं के द्वारा पीकर छोडी गई शराब शिकोरों में पी रहे हैं। अच्छा तो अब चेटीजी आगे की राह दिखलाओ।

चेटी- एतु एतु आर्य: इमं सप्तमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए महाशय, अब इस सातवें कक्ष में प्रवेश कीजिए।

विदूषक:- ही ही भो:! इतोऽपि सप्तमे प्रकोष्ठे। सुश्लिष्ट –विहङ्गवादी-सुखनिषण्णानि अन्योन्य-चुम्बनपराणि सुखमनुभवन्तिपारावतमिथुनानि। दधिभक्तपूरितोदरो ब्राह्मण इव सूक्तं पठति पञ्जरशुक:। इयमपरा स्धामिसम्माननालब्धप्रसरा गृहदासी इव अधिकं कुरकुरायते मदनसारिका। अनेक फलरसास्वादप्रतुष्टकण्ठा कुम्भदासीव कूजति परपुष्टा । आलम्बिता नागदन्तेषु पञ्जरपरम्परा: । इतस्ततो विविधमणिचित्रित इवायं सहर्ष नृत्यन् रविकिरण सन्तप्तं पक्षोत्क्षेपैर्विधुवतीव प्रासादं गृहमयूर: । इत: विण्डीकृता इव चन्द्रपादा: एदगतिं शिक्षणणानीव कामिनीनां पश्चात्परिभ्रमन्ति राजहंसमिथुनानि। एतेऽपरे वृद्धमहल्लिका इव इतस्तत: सञ्चरन्ति गृहसारसा:। ही ही भो:! प्रसारणं। कृतं गणिकया नानापक्षिसमूहै:। यत्सत्यं नन्दनवनमिव में गणिकागृहं प्रतिभासते। आदिशतु भवती।

विदूषक – (भीतर जाकर और देखकर) अहा, सातवें कक्ष की छटा भी तो निराली है। कपोतपालिका में ये कबूतर के जोड़े परस्पर एक दूसरे को चूमते हुए सुख का अनुभवकर रहे हैं। दही-भात से संतुश्ट ब्राह्मणों की तरह पिंजरबद्ध ये सुग्गे सूक्तपाठ कर रहें हैं। नायक से समादूत प्रभावशाली गृहदासी की तरह ये मैनाऍं कुर-कुरा रही हैं। अनेक तरह के फलों का आस्वादन लेने के कारण आकर्षक कण्ठवाली कुट्टिनी की तरह ये कोयल कूक रही हैं। खूटियों पर अनेक पिंजरे लटक रहे हैं। कहीं लावक चिडियॉ लड़ाईजारही हैं। तो कहीं तीतर बोल रहें हैं ।कही कबूतरों को उडाकर निर्दिष्ट स्थान पर भेजा जा रहा है तो कहीं गृहपालित मयूर इध-उधर घूम रहे हैं। लगता है सूर्य तप्त किरणों से संतप्त इस महल को अपने मणि चित्रित आकर्षक पंखों को उठाकर हवा झल रहे हैं। (दूसरी ओर देखकर) इकट्ठी की गई बहुत सारी चॉंदनी की तरह अतिश्वेत राजहंसो के जोड़े हंसगमनाओं के पीछे-पीछे चलते हुए ऐसे प्रतीत होते है मानों इनसे ये मन्द गमन की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। घर के बड़े बूढों की तरह ये गृहसारस इधर-उधर घूम रहे हैं। वसन्त सेना

ने सारे घरों को अनेक तरह के पक्षियों से भर डाला है। सच पूछा जाये तो ये वेश्या का घर होते हुए भी मुझे नन्दनवन की तरह प्रतीत हो रहा है। अच्छा तो अब आप आगे की राह दिखलायें।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमम् अष्टमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए, अब इस आठवे प्रकोष्ठ में प्रवेश करें।

विदूषक:- भवति ! क एष पट्टप्रावारकप्रावृत अधिकतरसत्यद्भुत्पुनरूक्तालड़कारालड्कृत:, अड्गभड्गै: परिस्खन्नितस्तत: परिभ्रमति ?

विदूषक- (भीतर जाकर और देखकर) मान्ये, यह कौन है ? देह में रेशमी चादर लपेटे एक ही तरह के कई जेवर पहने, विचित्र वेशभूषा में सजे,देह लचकाकर गिरते-पड़ते घूम रहा है।

चेटी-आर्य ! एष आर्याया भ्राता भवति।

चेटी- मान्यवर, ये आर्या वसन्तसेना के भाई है।

विदूषक:- कियत् तपश्चरणं कृत्वा वसन्तसेनाया भ्राता भवति।अथवा मा तावत्, यद्यपि एष उज्ज्वल: स्निग्धश्व तथापि श्मशानवीथ्यां जात इव चम्पकवृक्ष: अनभिगमनीयो लोकस्य। भवति ! एषा पुन- का पुष्पप्रावारकप्रावृतोपानद्युगलनिक्षिप्त-तैल-चिक्कणाभ्यां पादाभ्यामुच्चासनोपविष्ठा तिष्ठति ?

विदूषक- कितनी अधिक तपस्या के फलस्वरूप यह वसन्तसेना का भाई बना है। अथवा ऐसी बात नहीं है; सुन्दर, स्निग्ध, कोमल एवं सुगन्धित होने के बावजूद श्मशान की राह में उत्पन्न् होने वाले चम्पक वृक्ष की तरह यह संसार के लिए अस्पृश्य है। (दूसरी ओर देखकर)अरे यह कौन है? इसकी सारी देह फैले वस्त्र से ढकी है। जूतो में तैल लगे रहने के कारण इसके दोनों पैर अत्यन्त स्वच्छ एवं कोमल बने है। यह एक ऊँचे आसन पर बैठी है।

चेटी- आर्य एषा खल्वस्माकम् आर्याया माता।

चेटी- मान्यवर, यह आर्या वसन्तसेना की मॉ है।

विदूषक:- अहो ! अपवित्रडाकिन्या उदरविस्तार:। तत् किम् एतां प्रवेश्य महादेवमिव द्वारशोभा इह गृहे निर्मिता ?

विदूषक-अरे, इस कलुष डाकिनी का पेट कितना बड़ा है ? तो क्या इसे घर में घुसाकर भगवान शंकर की तरह स्थापित कर द्वारशोभा बढाई गई है ?

चेटी- हताश ? मैवमुपहस अस्माकं मातरम्। एषा खलु चातुर्थिकेन पीड़यते।

चेटी- अरे ओ निराश, इस तरह हमारी मॉ का मजाक मत उड़ाओ। ये चातुर्थिक ज्वर से पीड़ित है।

विदूषक:- भगवन् चातुर्थिक! एतेनोपचारेण मामपि ब्राह्मणमालोकय।

विदूषक- (परिहास करते हुए) भगवन चातुर्थिक! कृपया इसी उपचारसे मुझ ब्राह्मण की ओर भी ऑख फेरो।

चेटी- हताश ! मरिष्यसि।

चेटी- रे पापी, मरोगे।

विदूषक:- दास्या: पुत्रि ! वरम् ईदृश: शूनपीनजठरो मृत एव।

सीधु-सुरासव-मत्तिआ भोदि सिआल-सहस्स- जत्तिआ।।29 ।।

(सीधुसुरासवमत्ता एतावदवस्थां गता हि माता।

यदि म्रियतेऽत्र माता भवति श्रृगालसहस्रयात्रा ।।)

भवति कि युष्माकं यानपात्राणि वहन्ति?

अन्वय: सीधुसुरासवमत्ता, माता, एतादवस्थाम् , गता, हि। अत्र, माता यदि, म्रियते, श्रगालसहस्रयात्रा भवति।

हिन्दी अनुवाद- कच्ची, पक्की तीनों तरह की शराब पीकर वसन्तसेना की मॉ इस तरह मोटी हो गई है। यदि इस समय मरे तो हजारों सियारों का महाभोज हो जाये **।।29।।**

अजी, क्या आप लोग , व्यापारिक गाड़ियॉ चलाती हैं ?

चेटी- आर्य! नहि नहि ।

चेटी- नहीं श्रीमान्, ऐसी बातें नहीं है ।

विदूषक:- किंम वा अत्र पृच्छयते ? युष्माकं खलु प्रेमनिर्मलजले मदनसमुद्रे स्तननितम्बजघनान्येव यानपात्राणि मनोहराणि । एवं वसन्तसेनाया बहुवृत्तान्तम् अष्टप्रकोष्ठं भवनं प्रेक्ष्य, यत् सतयं जानामि; एकस्थमिव त्रिविष्टपं दृष्टम्। प्रशंसिकतुं नास्ति मे वाचाविभव: । किं तावत् गणिकागृहम्? अथवा कुवेरभवनपरिच्छेद: ? इति कस्मिन् युष्माकमार्या ?

विदूषक – अरे, इन गाड़ियों के बारे में क्या पूछना है? कामदेव रूपी सागर के निर्मल जल के कुच, नितम्ब और जंघा ही आप सबों की गाड़ियॉ है । अनेक तरह के पशु –पक्षी और मानवों से भरे आठ कमरे वाले वसन्तसेना के महल को देखकर मुझे तो विश्वास हो गया कि एक ही जगह स्थित स्वर्ग्य, मर्त्य और पाताल लोकमय त्रिभुवन को ही मैंने देख लियाहै। इस महल की प्रशंसा करनेकी शक्ति मेरी वाणी में नहींहै। मैं यह निश्चय ही नहीं कर पाता हूँ । अच्छा तो आपकी आर्या,वसन्तसेना कहॉ है ?

चेटी-आर्य? एषा वृक्षवाटिकायं तिष्ठति। तत् प्रविशतु आर्य: ।

चेटी- आर्य, मान्या वसन्तसेनाइस उद्यान में बैठी हैं। आप इधर आयें ।

विदूषक:- ही ही भो: ! अहो वृक्षवाटिकाया: सश्रीकता । अच्छरीतिकुसुमप्रस्तारा:, रोपिता अनेकपादपा:, निरन्तर-पाद पतल-निर्मिता युवति-जन-जघनप्रमाणा पट्टदोला, सुवर्णयूथिका – शेफालिका-मालती-मल्लिका- नवमल्लिका-कुरबकातिमुक्तक-प्रभृतिकुसुमै: स्वयं निपतितैर्यत्सत्यं लघुकरोतीव नन्दनवनस्य सश्रीकताम्। इतश्व उदयत्सूर-समप्रभै: कमलरक्तोत्पलै: सन्ध्यायते इव दीर्घिका ।

विदूषक:- (भीतर जाकर और देखकर) अहा, इस उद्यान की छटा ही निराली है। स्वच्छ एवं विकासोन्मुख फूलों की कतारें लगी हैं । अनेक तरह के पेड़ लगाये गये हैं। युवतियों की कमर की ऊँचाई के अनुसार डाल में रस्सी डालकर झूले डाले गये हैं । सोनजूही ,हरसिंगार, , मालती, बेला, चमेली,सदाबहार या कटसरैया एवं माधवी-लता के फूलों की बहार, सचमुच नन्दनवन की शोभा को ठुकरा रही है। (दूसरी ओर देखकर) अहा,उगते हुए सूरज की तरह लाल-लाल फूलों से

भरे सरोवर की शोभा तो सन्ध्या की तरह हो रही है।

अपि च

एसो असोअबुच्छो णवणिग्गम-कुसुम-पल्लवो भादि।
सुभडो व्व समरमज्झे घण –लोहिद-पंक-चच्चिक्को ।।30।।

एषोऽशोकवृक्षो नवनिर्गतकुसुमपल्लवो भाति।
सुभट इव समरमध्ये घनलोहितपड्कचर्चित: ।।

भवतु, तत् कस्मिन् युष्माकमायार् ?

चेटी-आर्य ! अवनमयदृष्टिम्, प्रेक्षस्व आर्याम्।

विदूषक:- (दृष्ट्वा, उपसृत्य) सोत्थि भोदिए। (स्वस्ति भवत्यै)

वसन्तसेना- (संस्कृतमाश्रित्य) अये ! मैत्रेय:। (उत्थाय) स्वागतम्। इदमासनम्, अत्रौपविश्यताम्।

और भी - रणाड्गन में सघनरक्तपड्क से लिप्त योद्धा की तरह नये निकले फूल पत्तियों वाला यह अशोक का पेड़ सुशोभित हो रहा है।।30।।

अच्छा तो आपकी आर्या वसन्तसेना कहॉं हैं ?

12.3.3 श्लोक संख्या 31 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चेटी- आर्य, जरा अपनी निगाह तो नीचे कीजिए, आर्या को देखिए।

विदूषक - (देखकर और पास जाकर) आपका कल्याण हो।

वसन्तसेना- अरे, मैत्रेय हैं।(उठकर) स्वागत हो , यह रहा आसन यहॉं विराजिए।

विदूषक:- उपविशतु भवति।

विदूषक- आप भी बैठिए। (दोनों बैठते है।)

वसन्तसेना:- अपि कुशलं सार्थवाहपुत्रस्य ?

वसन्तसेना- आर्य चारूदत्त तो सकुशल हैं ?

विदूषक:- भवति ! कुशलम्।

विदूषक- हॉं, श्रीमति, वे सकुशल हैं।

वसन्तसेना- आर्य मैत्रेय ! अपीदानीम्-

वसन्तसेना- आर्य मैत्रेय, क्या इस समय-

गुणप्रवालं विनयप्रशाखं विस्रम्भमूलं महनीयपुष्पम।
तं साधुवृक्षं स्वगुणै: फलाढ्यं सुहृद्विहड्गा: सुखमाश्रयन्ति ।।31।।

अन्वय:- गुणप्रवालम् , विनयप्रशाखम्, विश्वम्भमूलम्, महनीयपुष्पम्, स्वगुणै:, फलाढयम्, तम्, साधुवृक्षम्, सुहृद्विहड्गा:, सुखम्, आश्रयन्ति।

हिन्दी अनुवाद- जिनके गुण ही कोपल हैं, विनम्रता ही डाली है, विश्वास ही जड़ है, महानता ही फूल हैं, ऐसे अपने गुणों द्वारा फलपरिपूर्ण उस सज्जन चारूदत्त रूपी पेड़ पर मित्र रूपी पक्षी सुखपूर्वक निवास करते हैं ।।31।।

विदूषक:- सुष्ठु उपलक्षितं दुष्टविलासिन्या। अथ किम् ?

विदूषक- (मन ही मन) इस दुष्ट वेश्या ने ठीक ही अनुमान किया है (प्रकट) और क्या?

वसन्तसेना- अये ? किमागमनप्रयोजनम् ?

वसन्तसेना- अच्छा, तो श्रीमान् के यहॉं आने का कारण क्या हैं ?

विदूषक:- श्रृणोतु भवती। तत्रभवान् चारूदत्त: शीर्षे अञ्जलिं कृत्वा भवतीं विज्ञापयति।

विदूषक- तो सुनिए, समादरणीय आर्य चारूदत्त ने हाथ जोड़कर आपसे निवेदन किया है।

वसन्तसेना- (अञ्जलिं बद्ध्वा) किमाज्ञायति ?

वसन्तसेना- (हाथ जोड़कर) आर्य की आज्ञा क्या हैं?

विदूषक:- मया तत् सुवर्णभाण्डं विस्रम्भादात्मीयमिति कृत्वा द्यूते हारितम्। स च सभिको राजवार्ताहारी न ज्ञायते कुत्र गत इति।

विदूषक- आपने जो उनके पास आभूषणों का बक्सा धरोहर के रूप में हार गये। इसी बीच जुए का सभाध्यक्ष वह राजदूत पता नहीं कहॉं चला गया।

चेटी- आर्ये ! दिष्टया वर्द्धसे। आर्यो द्युतकर: संवृत्त:।

चेटी- आर्ये, भाग्य से ही बढ़ रही हो, लो, आर्य चारूदत्त जुआड़ी हो गये।

वसन्तसेना- कथं चौरेणापहृतमपि शौण्डरतया द्यूते हारितमिति भणति। भणति। अत एव काम्यते।

वसन्तसेना – (मन में ही) चोर ने जिन आभूषणों को चुरा लिया, अपनी उदारता के कारण वे कहते हैं- उन्हें मैं जुए में हार गया। इसी लिए मैं उन्हें इतना चाहती हूँ।

विदूषक:- तत् तस्य कारणात् गृह्णातु भवती इमां रत्नावलीम्।

विदूषक:- तो फिर, उसके बदले आप इस रत्नमाला को स्वीकार करें।

विदूषक:- किमन्यत् तस्मिन् गत्वा ग्रहीष्यति। भवति ! भणामि, निवर्त्तातामसमाद् णिकाप्रसङ्गात् इति।

विदूषक- तो क्या आप यह रत्नहार स्वीकार नहीं कर रही हैं ?

वसन्तसेना- हञ्जे ! गेण्ह एदं अलङ्कारम्, चायदत्तमभिरन्तुं गच्छाम:।

वसन्तसेना- चेटी , इस रत्नावली को रक्खो। हमलोग चारूदत्त के साथ रमण करने चलती हैं।

चेटी - आर्ये ! प्रेक्षस्य, प्रेक्षस्व। उन्नमति अकालदुर्द्दिनम्।

चेटी- आर्ये, देखिये। बिना समय के उमड़ते हुए बादलों को।

वसन्तसेना- उदयन्तु नाम मेघा: भवतु निशा वर्षमविरतं पततु।
गणयामि नैव सर्वं दयिताभिमुखेन हृदयेन ।।32।।

हञ्जे ! हारं गृहीत्वा लघु आगच्छ। इति निष्क्रान्ता: सर्वे।

अन्वय:- मेघा:, उदयन्तु, नाम, निशा, भवतु अविरंतम्, पततु, दयिताभिमुखेन, हृदयेन, सर्वम्, नैव, गणयामि।

हिन्दी अनुवाद- वसन्तसेना – बादल उठें (घिर आयें), रात हो जाये , घनघोर वर्षा आ जाये, फिर भी हृदय से प्रियतम की ओर अभिमुख मैं इन सबकी परवाह नहीं करती हूँ।

चेटी! हार लेकर शीघ्र आओ।

(सब चले जाते है।) इति मदनिका-शर्विलकको नाम चतुर्थोऽङ्क: समाप्त:। चतुर्थ अंक समाप्त हुआ।

अभ्यास प्रश्न-

निम्नलिखित में सही उत्तर चुनकर लिखिये।

1. व्यवहारिक क्षेत्रों में पुरूषो की अपेक्षा कौन चतुर है।

(क) मदनिका (ख)वसन्तसेना (ग) स्त्रियां (घ) कोई नहीं

2. कौन ऐसा धुर्त है जिसका राजा भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

(क) मदनिका (ख)वसन्तसेना (ग) शर्विलक (घ) चेटी

3. किससे कभी गर्मी नहीं होती।

(क) प्रकृति (ख) सूर्य (ग) चन्द्रमा (घ) कोई नहीं

4. वेश्यालय में रह कर भी वधू का घूंघट किसने पाया।

(क) मदनिका (ख)वसन्तसेना (ग) शर्विलक (घ) कोई नहीं

5. उग्र तपस्या किसने की थी।

(क) मदनिका (ख)वसन्तसेना (ग) शर्विलक (घ) रावण

6. खानदानी अपमानित आदमी की तरह लम्बी सांसे कौन खींचता है।

(क) शर्विलक (ख)वसन्तसेना (ग) मदनिका (घ) भैंसा

7. वसन्तसेना की मॉ कितनेप्रकार की शराब पीती है।

(क) एक प्रकार (ख) तीन प्रकार (ग) चार प्रकार (घ) कोई नहीं

12.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपको पता चला कि यदि घर कमजोर और जर्जर तो धन की रक्षा करना कठिन होता है। वेश्याये भी विवाहिता पत्नी की भाँति सलाह दे सकती है। वसन्तसेना की कृपा से मदनिका ने वेश्यालय में रहकर भी वधू जैसा रहन –सहन पाया। संसार में मनुष्य को स्त्री और मित्र दोनों प्रिय होते है किन्तु सुन्दरीयों की अपेक्षा मित्र अधिक प्रिय है यह कथन शर्विलक का है। राक्षस राज रावण ने घोर तप किया था। और उसीके परिणामस्वरूप वह पुष्पक विमान से घूमता था किन्तु मैं ब्राह्मण होकर भी बिना तपस्या के नर नारी रूपी विमान से चलता हूँ। यह कथन विदूषक का था। दूसरों के घरों में सुख से रहने वाले, दूसरों के दाने पर पले हुए, अन्य पुरूषों के द्वारा दूसरों की स्त्रियों में पैदा किए गये, पराये धन को मौज से उड़ाने वाले, गुणहीन हम बन्धुल लोग हाथियों के बच्चों की तरह बिहार करते है यह कथन बन्दुल का है। कच्ची, पक्की तीनों तरह की शराब पीकर वसन्तसेना की मॉ इस तरह मोटी हो गई है। यदि इस समय मरे तो हजारों सियारों का महाभोज हो जाये यह कथन विदूषक का परिहासपूर्ण है किन्तु वसन्तसेना के कथनों में कुछ उतकृष्टताये भी हैं। जैसे-जिनके गुण ही कोपल हैं, विनम्रता ही डाली है, विश्वास ही जड़ है, महानता ही फूल हैं, ऐसे अपने गुणों द्वारा फलपरिपूर्ण उस सज्जन चारूदत्त रूपी

पेड़ पर मित्र रूपी पक्षी सुखपूर्वक निवास करते हैं। इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप अनेक कथनों के द्वारा न केवल अर्थपदार्थ को जानेगें बल्कि जीवन बोध से भी परिचित होगें।

12.5 पारिभाषिक शब्दावली

ग्रीष्मसन्तप्त:- निदाघपीडित:, अजानता- अनभिज्ञेन, निसर्गात् – स्वभावत्, पुंसाम्, पाण्डित्यम् - प्रवीणत्वम्, असौ- चारूदत्त:, राजकुले –न्यायालये, अभुजिष्यया इव- स्वामिनी इव, परित्यक्ताऽस्मि – उत्सर्गिताऽसिम

12.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.**(ग) स्त्रियां** 2.**(ग) शर्विलक** 3. **(ग) चन्द्रमा** 4. (क) **मदनिका** 5.**(घ) रावण 6.(घ) भैंसा** 7. **(ख)तीन प्रकार**

12.7 संदर्भग्रन्थ

1. डॉ0 कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. डॉ0 उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

12.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्लोक संख्या 24 और 25 का संन्दर्भ प्रसंग सहित तात्पर्य लिखिये ?
2. श्लोक संख्या 28 का तात्पर्य बताते हुए उकसे पश्चात के प्रमुख सम्वादों का उल्लेख कीजिए?

इकाई -13पंचम अंक श्लोक संख्य 1से25तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13. 3श्लोक संख्या1 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
13.3. 1 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
13.3. 2 श्लोक संख्या 11 से 18 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
13.3. 3 श्लोक संख्या 19 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
13. 4 सारांश
13. 5 पारिभाषिक शब्दावली
13. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
13. 7 संदर्भग्रन्थ
13. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

13. 1 प्रस्तावना

चतुर्थ अंक के अन्त में वसन्तसेना के द्वारा चेटी से हार माँगने के कथन की समाप्ति के पश्चात् आसन पर बैठे हुए चारूदत्त का पंचम् अंक के प्रारम्भ में प्रवेश होता है। उसी के विभिन्न स्वरूप के वर्णन से इस इकाई का प्रारम्भ होता है। मृच्छकटिकम् के अध्ययन की पंचम् अंक से संबन्धित यह 13 वीं इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप चारूदत्त और विदूषक के, चेट एवं विदूषक प्रमुख सम्वादों का अध्ययन करेगें।

चारूदत्त के आरम्भिक कथन में विरह वेदना तथा मेघ के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया गया है। विदूषक के कथनों में वसन्तसेना की लालच तथा उदार न होने की बात कही गयी है। चारूदत्त वेश्याओं की निन्दा नही करना चाहता किन्तु इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार की बातें भी पात्रों के सम्वादो में परिलक्षित हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पंचम अंक के श्लोक संख्या 1से 25 तक के वैशिष्ट्य को बता सकेंगे।

13. 2 उद्देश्य

पंचम् अंक के प्रारम्भिक अंश के वर्णन से संबन्धित इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझा सकेगें कि

- चारूदत्त विरह वेदना का वर्णन कितनी गहराई से कर रहा है।
- मेघ की छटा का वर्णन नितान्त साहित्यक कथनों में किस प्रकार है।
- दुर्योधन का वर्णन किस प्रकार का है।
- वर्षा काल का वर्णन मनोहर है।
- वेश्याओं की निन्दा क्यों नहीं करनी चाहिए।

13. 3 श्लोक संख्या 1 से 25तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

13 .3. 1श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

तत :प्रविशति आसनस्थ :सोत्कण्ठश्चयदत्त:।

चारूदत्त ऊद्ध्मवलोक्य (उन्नमत्यकालंदुर्दिनम्। यदेतत् -

आलोकितं गृहशिखण्डिभिरूत्लापै-

हैसैयियासुभिरपाकृतमुन्मनस्कै :।

आकालिकं सपदि दुर्दिनमन्तरीक्ष-

मुत्कण्ठितस्य हृदयञ्च समं रूणद्धि ।।1।।

अपि च -

मेघो जलार्द्रमहिषोदरभृङ्गनीलो

विद्युत्प्रभा-रचित-पीत-पटोत्तरीय :।

आभाति संहतबलाक-गृहीतशड्ख:

खं केशवोऽपर इवाक्रमितं प्रवृत्त:

अन्वय- :उत्कलापै:, गृहशिखण्डिभि :,आलोकितम्, यियासुभि:, उन्मनस्कै:, हंसै:, अपाकृतम् आकालिकम्, दुर्दिनम्, सपदि, अन्तरिक्षम् उत्कण्ठितस्य, हृदयम्, च समम् रूणद्धि। ।।1।।

अन्वय -:जलार्द्रमहिषोदरभृड्गनील:, विद्युत्प्रभारचितपीतपटोत्तरीय:, संहतबलाकगृहीतशड्ख:, अपर:, केशव:, इव, खम् आक्रमितुम्, प्रवृत्त:, मेघ:, आभाति ।।।2।।

हिन्दी अनुवाद -इसके बाद आसन पर बैठे हुए उत्कण्ठितचारूदत्त का प्रवेश

चारूदत्त -ऊपर की ओर देखकर(यह असमय में ही काली घटाएँ उमड़ रही हैं। ऊपर की ओर पॉखें फैलायें जिसे पालतु मयूरों ने देखा, गमनोन्मुख खिन्न् मन हंसों ने जिसे उपेक्षा की दृष्टि से देखा, वह अकालदुर्दिन आकाश और विरही के हृदय को एक साथ ढँक रहा है ।।1।।

और भी -पानी से भीगे पेट वाले भैसे और काले भौरों की तरह नीले मेघ, विद्युत्कान्ति से निर्मित पीताम्बर धारण कर साथ में बकपंक्तिरूपी शंख धारण कर भगवान् विष्णु की तरह सम्पूर्ण आकाश को घेर रहा है **।।2।**

अपि च -

केशवगात्रश्याम:, कुटिल –बबलाकाबली-रचित-शड्ख:।

विद्युद्गुणकौशेयश्चक्रधर इवोन्नतो मेघ :।।3।।

एता निषिक्तरजतद्रवसन्निकाशा धारा जवेन पतिता जलदोदरेभ्य :।

विद्युत्प्रदीपशिखया क्षणनष्टदृष्टाश्छिन्ना इवाम्बरपटस्य दशा :पतन्ति ।।4।।

अन्वय :केशवगात्रश्याम:, कुटिलंबलाकावलीरचितशड्,ख , विद्युद्गुणकौशेय :मेघ :चक्रधर:, इव,उन्नत :।।3।।

अन्वय :निषिक्तरजद्रवसन्निकाशा:, जलदोदरेभ्य :, पतिता :एता, धारा:, विद्युत्प्रदीपशिखया, क्षणनष्टदृष्टा, अम्बरपटस्य छिन्ना:, दशा:, इव , जवेन, पतन्ति। **।।4।।**और भी – भगवान् श्रीकृष्ण की मूर्तिकी तरह श्यामवर्ण, वक्रबकपंकित् से निर्मित शंख तथा बिजली के सूत्र से निर्मित पीताम्बर धारण कर यह मेघ सम्पूर्ण आकाश के आयाम को घेर रहा है ।।3।।

चॉंदी के घोल की तरह बादल के पेट से जल की धारा बड़े वेग से गिर रही है, बिजलीरूपी दीपशिखा के द्वारा कभर तो ये दृष्टिगोचर होती है और कभी अदृश्य हो जाती है ये जलधाराएँ ऐसी प्रतीत होती है मनो आकाश रूपी फटे कपड़े से धागें टूट टूटकर गिर रहे हों **।।4।।**

संसक्तैरिव चक्रवाकमिथुनैहैसै :प्रडीनैरिव

व्यविद्धैरिव मीनचक्रमकरैर्हर्म्यैरिव प्रोच्छितै:।

तैस्तैराकृतिविस्तरैरनुगतैर्मेघै :समभ्युन्नतै:

पत्रच्छेद्यमिवेह भाति गगनं विश्लेषितैर्वायुना।।5।।

एतत्तद्भृतराष्ट्रचक्रसदृशं मेघान्धकारं नभो

हृष्टो गर्जति चातिदर्पितबलो दुर्योधने वा शिखी।
अक्षद्यूतजितो युधिष्ठिर इवाध्वानं गत :कोकिलो
हंसा :सम्प्रतिपाण्डवा इव वनादज्ञातचर्या गता:।।6।

विचिन्त्य (चिरं खलु कालो मैत्रेयस्य वसन्तसेनाया :सकाशं गतसय, नाद्यापि आगच्छति।

अन्वय :वायुना, विश्लेषितैः, संसक्तैः, चक्रवाकमिथुनै :इव, प्रडीनैः, हंसैः, इव, व्याविद्धैः, मीनचक्रमकरैः, इव, प्रोच्छ्रितै :हर्म्यैः, इव, तैः, तैः, आकृतिविसतरै :अनुगतैः, समभ्युन्नतैः, मेघैः, गगनम्, इह, पत्रच्छेद्यम् इव, भाति ॥5॥

अन्वय :सम्प्रति ,मेघान्धकारम् एतत् नभः, तद्भूतराश्ट्रचक्रसदृशम्, हृष्टः, अतिदर्पितबलः, दुर्योधनः, वा, शिख, गर्जन्ति, कोकिलः, अक्षद्यूतजितः, इव युधिष्ठिरः, अध्वानम्, गता :पाण्डवाः, इव, हंसाः, वनात, अज्ञातचर्याम् गताः।

हिन्दी अनुवाद -परम्पर एक– दूसरे से मिले चकवा-चकई के जोड़े की तरह आकाश में उड़ते हंसो की तरह , समुद्र –मंथन की समय इधर-उधर फेंके गये मत्सयों एवं मगरोंकी तरह, ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं की तरह, वायु-संचालित अनेक आकार वाले बादलों से चित्रपट की तरह आकाश सुशोभित हो रहा है **।।5।।**

आगे के इस श्लोक में दुर्योधन के राज्य तथा वर्षाकाल का वर्णन एक साथ किया गया है असंयमित दुर्योधन के राज्य की तरह इस अकाल जलद से सम्पूर्ण आकाश अन्धकाराच्छन्न हो गया है। अतिदर्प के साथ दुर्योधन मेघपक्ष में मयूर (संतोष के साथ गरज रहे हैं। जुए में हारे युधिष्ठिर की तरह कोयल वनपथ की ओर बढ गई है। हंस भी पाण्डवों की तरह मानसरोवर की ओर अज्ञातवास में चले गये है ॥6। कुछ सोचते हुए वसन्तसेना के पास मैत्रेय को गये बहुत देर हो रही है , अब तक लौटे नहीं।

विदूषक -:अहो गणिकाया लोभ :अदक्षिणता च, यतो न कथाऽपि कृता अन्या। अनादरेणैव अभणित्वा किमपि एवमेव गृहीता रत्नावली। एतावत्या ऋद्धया न तया अहं भणितः, आर्यमैत्रेय ! विश्वम्यवाम् मल्लकेन पानीयमपि पीत्वा गम्यतामिर्ति।तत् मा तावत् दास्या :पुत्र्यागणिकाया मुखमपि प्रेक्षिष्ये। सुष्ठु खलु उच्यते – 'अकन्दसमुत्थिता पद्मिनी, अवञ्चको बणिक् अचौर :सुवर्णकारः, अकलहो ग्रामसमागमः, अलुब्धा गणिका' इति ,दुष्करमेते सम्भाव्यते। तत् प्रियवयस्यं गत्वा अस्मात् गणिकाप्रसङ्गात् निवर्त्तयामि। कथं प्रियवयस्यो वृक्षवाटिकायामुपविष्टस्तिष्ठति; तद्यावदुपसर्पामि। स्वस्ति भवेत, वर्द्धतां भवान्।

विदूषक -आकर अरे, वेश्या वसन्तसेना का लालच और उसकी अनुदारता तो देखो, जेवरके सिवा उसने कोई दूसरी बात नहीं की। बिना कुछ बोले अनादरपूर्वक उसने रत्नहार ले लिया। इतने अपार वैभव के रहते हुए भी उसने एक बार भी नहीं कहा -आर्य मैत्रेय ,थोड़ा विश्राम कर लो या एक गिलास पानी ही पीकर जाओ। अत: ऐसी नीच वेश्या का तो मुँह भी नहीं देखना चाहिए। दु:खी होकर (ठीक ही कहा है -बिना झगड़े की ग्रामपंचायत, लोभरहित वेश्या –इनका मिलना मुश्किल है, तो चलकर अपने प्रियमित्र चारूदत्त को सर्वप्रथम इस वेश्या के संसर्ग से

अलग हटाता हूँ। घूमकर और देखकर (क्या मित्रवरउद्यान में बैठे हैं, तो क्यों न उनके पास ही चलूँ। समीप जाकर(आपका कल्याण हो, आपकी उन्नति हो।

चारूदत्त - :विलोक्य (अये! सुहृन्मे मैत्रेय :प्राप्त :। वयस्य! स्वागतम्, आस्यताम्।

चारूदत्त- देखकर (अरे, मेरे मित्र मैत्रेय तो आ गए। मित्र स्वागत है। आओ, बैठो।

विदूषक -:उपविष्टोऽस्मि।

विदूषक -मित्र बैठ गया हूँ ।

चारूदत्त -:वयस्य! कथय तत् कार्यम्।

चारूदत्त - मित्र, जिस काम के लिए तुम गये थे, उसके बारे में बतलाओ।

विदूषक -:तत् खलु कार्य विनष्टम्।

विदूषक -भाई ,वह काम तो बिगड़ गया।

चारूदत्त -:किं तया न गृहीता रत्नावली ?

चारूदत्त -क्या उसने रत्नहार स्वीकार नहीं किया?

विदूषक -:कुत :अस्माकमेतावद् भागधेयम्? नव नलिनकोमलमञ्जलिं मस्तके कृता प्रतीष्टा।

विदूषक -नहीं भाई , हम लोगों का इतना बड़ा भाग्य कहॉ ? नये कमल की तरह कोमल हथेलियों को माथे से लगाकर रत्नहार स्वीकार कर लिया।

चारूदत्त -:तत् किं ब्रवीषि विनष्टमिति ?

चारूदत्त -तो फिर ऐसा क्यों कहते हो कि काम बिगड़ गया ?

विदूषक -:भो कधं न विनष्टम् ? यत् अभुक्तस्य अपीतस्य चोरैरपहृतसय अल्पमूल्यस्य सुवर्णभाण्डकसय कारणात् चतु:समुद्रसारभूता रत्नमाला हारिता ।

विदूषक -अजी, बिगड़ा क्यों नहीं? जो बिना खाये-पीये गये, चोरों द्वारा चुराये गये, कम कीमत वाले सोने के आभूषणों के बदले चारों समुद्र के सारभूत कीमती रत्नाहार खो दिया।

चारूदत्त - :वयस्य! मैवम्।

चारूदत्त -मित्र, ऐसी बात मत कहो?

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोऽस्मातसु तया कृत :।
तसयैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते ।। 7।।

अन्वय :तया, यम्, विश्वासम्, समालम्ब्य , अस्मासु, न्यास:, कृत:, तस्य, महत:, प्रत्ययस्य , एव, एतत्, मूल्यम् प्रदीयते।

हिन्दी अनुवाद-उसने जिस विश्वास के साथ हमारे पास धरोहर रक्खा था, उस विश्वास की यह कीमत चुकायी गई है, न कि स्वर्णाभूषणों की **।।7।**

विदूषक :भो वयस्य! एतदपि में द्वितीयं सन्तापकारणम्, यत् सखीजनदत्त-संज्ञयापटान्तापवारितं मुखं कृत्वा अहमुपहसित:। तदहं ब्राह्मणो भूत्वा इदानी भवन्तं शीर्षेण पतित्वा विज्ञापयामि निवर्त्यतामात्मा अस्मात् बहुप्रत्यवायाद् गणिकाप्रसङ्गत्। गणिका, हस्ती कायस्थ:, भिक्षु:, चाट:, रासभश्च यत्रैते निवसन्त, तत्र दुष्टा अपि न जायन्ते।

विदूषक -:हे मेरे मित्र , हमारे दु:ख का दूसरा कारण यह भी है कि अपनी सखियों को इशारे से कुछ कहकर ताथा अपने ऑंचल से मुख ढँक कर उसने हमारी खिल्ली भी उड़ाई है। इसलिए ब्राह्मण होने के बावजूद मैं तुम्हारे चरणों में माथा टेककर विनती करता हूँ -अति संकटमयी इस वेश्या की संगति से विमुख हो जाओं। वेश्या तो जूते में घूसे उस कंकरकी तरह है जो घूसने के बाद बडी मुश्किल से निकाले जा सकते हैं। हे मित्र, याद रक्खों – वेश्या,हाथी, कायस्थ, भिखारी,शठ और गधे जहॉ रहते हैं, वहॉ भले लोगों की बात क्या ,दुष्ट भी नहीं फटकते ।

चारूदत्त -: वयस्य! अलमिदानीं सर्व परिवादमुक्त्वा:, अवस्थयैवास्मि निवारित:। पश्य -

चारूदत्त - वेश्याओं की निन्दा से भला क्या लाभ ? इस समय तो मैं अपनी गरीबी के कारण स्वत :उनसे दूर हूँ। देखो-

वेगं करोति तुरगस्त्वरितं प्रयातुं
प्राणव्ययान्न चरणास्तु तथा वहन्ति।
सर्वत्र यान्ति पुरूषस्य चला :स्वभावा:
खिन्नास्ततो हृदयमेव पुनर्विशन्ति।।8।।
अपि च, वयस्य!
यस्यार्थास्तस्य सा कान्ता, धनहार्यो ह्यसौ जन:।
स्वागतम् न, गुणहार्यो ह्यसौ जन :प्रकाशम्(
वयमर्थै :परित्यक्ता:, ननु त्यक्तैव सा मया।।9।।

अन्वय - :तुरग:, त्वरितम्, प्रयातुम्, वेगम्, करोति, तु, प्राणव्ययात्, चरणा :तथा, न, वहन्ति, पुरूषस्य , चला:, स्वभावा:, सर्वत्र , यान्ति, तत:, खिन्ना:, पुन :हृदयम्, एव, विशन्ति ।।8।।

अन्वय -:यस्य अर्था: सन्ति तस्य, सा, कान्ता अस् हि, असौ, जन:, धनहार्य) :अस्ति वयम्, अर्थै: परित्यक्ता: अत: ननु, सा, मया, त्यक्ता एव ।।9।।

हिन्दी में अनुवाद -घोड़े तेज भागने के लिए अकुलाते हैं किन्तु, थके रहने पर वे वेग से दौड़ नहीं पाते, मनुष्य के चंचल मन चारों ओर दौड़ते हैं किन्तु साधनहीन होने पर भीतर ही भीतरविलीन हो जाते हैं **।।8।।**

और भी हे मित्र जिसके पास धन है, उसी की वसन्तसेना हैं। क्योंकि, वेश्या तो धन से ही वश में आती है। मन ही मन नहीं वह तो गुण से भी वश में आ सकती है। प्रकट हम दरिद्र हैं, इसलिए वह स्वत :मुझसे परित्यक्ता है **।।9।।**

विदूषक -:यंथा एष ऊद्र्ध्व प्रेक्ष्य दीर्घ नि:श्वसिति, तथा तर्कयामि -मया विनिवार्यमाणस्य वयस्य। भणितञ्च तया 'भण चारूदत्तम् -अद्यप्रदोषे मया अत्र आगन्तव्यम्' इति। तत् तर्कयामि रत्नावल्या अपरितुष्टा अपरं मार्गयितुमागमिष्यतोति।

विदूषक -:नीचे देखकर, मन ही मन (यह ऊपर की ओर देखते हैं, लम्बी सॉस खीचते हैं। लगता है -मेरे मना करने पर इनकी उत्कण्ठा और बढ गई है। यह ठीक ही कहा गया है -आर्य

चारूदत्त से निवेदन कर देना, आज सूर्यास्त के बाद मैं उनसे मिल रही हूँ । मैं सोचता हूँ रत्नाहार से उसे सन्तोष नहीं हुआ, वह कुछ और लेने आयेगी।

चारूदत्त -वयस्य! आगच्छतु, परितुष्टा यासयति।

चारूदत्त -आने तो दो प्यारे , खुश होकर लौटेंगी।

चेट -:प्रविश्य (अवेध माणहे।) अवेत मानवा :

चेट -मंच पर आकर (अरे मानवों, मेरी बातें सुनो।

यथा यथा वर्षति अभ्रखण्डम्, तथा तथा तिम्यति पृष्ठचर्म।

यथा यथा लगति शीतवातस्तथा तथा वेपते मे हृदयम्।।10

अन्वय -:यथा, यथा अभ्रखण्डम्, वर्षति, तथा, तथा, पृष्टचर्म, तिम्यति, यथा यथा शीतवात:, लगति, तथा तथा, में, हृदयं वेपते।।10।।

हिन्दी अनुवाद -जैसे– जैसे मेघ बरसता है, मेरी पीठ की खाल भीगती है और जैसे –जैसे ठंढी हवा बहती है, वैसे-वैसे मेरा दिल कॉपता है।।10।।

13.3. 2 श्लोक संख्या 11से 18 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

प्रहस्य

वंश वादयामि सप्तच्छिद्रं सुशब्दम्, वीणां वादयामि सप्ततन्त्रीं नदन्तीम्।

गीतं गायामि गर्द्दभसयानुरूपं को मे गाने तुम्बुरूर्नारदो वा।। 11

अन्वय -:सप्तच्छिद्रम्, सुशब्दम्, वंशं वादयामि, सप्ततन्त्रीम्, नदन्तीम्, वीणाम्, वादयामि, गर्दभस्य, अनुरूपम्, गीतम्, गायामि, मे, गाने, तुम्बुरू:, वा, नारद :क :?।।11।।

आज्ञप्तोऽस्मि आर्यया वसन्तसेनया -'कुम्भीलक ! गच्छ त्वम्, मम, आगमनम् आर्यचारूदस्य निवेदय' इति । तद् यावत् आर्यचायदत्तस्य गेहं गच्छामि। एष चारूदत्तो वृक्षवाटिकायां तिष्ठति एषोऽपि स दुश्टवटुक:। तद्यावदुपसर्पामि। कथमाच्छादितं द्वारं वृक्षवाटिकाया:। भवतु,एतस्य दुष्टवटुकस्य संज्ञांददामि।

हँसकर (सात छेदवाली बॉसुरी से मीठी धुन बजाता हूँ सात तारों से बजने वाला सितार भी बजाता हूँ गदहे की तरह गीत भी गाता हूँ, मेरे गाने के सामने प्रसिद्ध गन्धर्व गायक तुम्बुरू तथा देवर्षि गायक नारद भी तुच्छ है।।11।।

आर्या वसन्तसेना ने कहा है -कुम्भीकल जाकर आर्य चारूदत्त को मेरे आगमन की सूचना दे दो। अत :मान्य चारूदत्त के घर चलता हूँ घूमकर तथा किवाड़ के छेद से झॉंककर (यह आर्य चारूदत्त उद्यान में बैठे हैं और साथ में दुष्ट ब्राह्मण विदूषक भी है। तो फिर उनके पास ही चलता हूँ। कंकर फेंकताहै।

विदूषक -:अये! क इदानीमेष प्राकारवेष्टितमिव कपित्थं मां लोष्टकैस्ताडयति ?

विदूषक -अरे चहारदिवारी से घिरे रहने के बावजूद मेरे माथे पर कैथ की तरह कंकर से कौन मारता है ?

चारूदत्त -:आराम-प्रासाद-वेदिकायां क्रीडद्भ् :पारावतै :पातितं भवेत्।

चारूदत्त -उपवन के महल की छत पर बनी कपोतपालिका पर खेल रहे कबूतरों ने यह गिराया होगा ?

विदूषक -:दास्या :पुत्र! दुश्टपारावत ! तिष्ठ तिष्ठं, यावदेतेन दण्उकाष्ठेन सुपक्वमिव चूतफलम् अस्मात् प्रासादाद् भूमौ पातयिष्यामि।

विदूषक -अरे , नीचे दुष्ट कबूतर, ठहर, डंडा मारकर तुम्हें पके आम की तरह कपोतपालिका से नीचे गिराता हूँ डंडा उठाता है और बढता है।

चारूदत्त -:यज्ञोपतीतेन आकृष्ठ वयस्य! उपविश। किमनेन। तिष्ठतु दयितासहितस्तपस्वी पारावत:।

चारूदत्त जनेऊ पकड़ कर खीचता है मित्र, बैठो, इससे भला क्या लाभ होगा ?अपनी प्रिया के साथ इस गरीब कबूतर को बैठने तो दो।

चेट -:कथं पारवतं प्रेक्षते, मां न प्रेक्षते। भवतु , अपरया लोश्टगुटिकयापुनरपि ताडयिष्यामि।

चेट -ये कबूतर को देखते हैं पर, मुझे नहीं देखते। अच्छा तो फिर इन्हें कंकर मारता हूँ। कंकर फेंकता है।

विदूषक -:कथं कुम्भोलक! तद् यावदुपसर्पामि। अरे कुम्भीलक! प्रविश! स्वागतं ते ?

विदूषक -चारो ओर देखकर अरे, कुम्भीलक, अच्छा तो इसके पास जाता हूँ)आगे बढकर और दरवाजा खोलकर आओ जी कुम्भीलक आओ, तुम्हारा स्वागत है।

चेट -:प्रविश्य अज्ज! वन्दामि। आर्य! वन्दे।

चेट -भीतर आकर आर्य, प्रणाम करता हूँ।

विदूषक -:अरे! कस्मिन् त्वमीद्दशे दुर्दिने अन्धकारे आगत:।

विदूषक-अरे , अन्धकाराच्छन्न इस दुर्दिन में तुम्हारा आना कैसे हुआ?

चेट -:अरे एषा सा।

चेट -अरे, वह यह है।

विदूषक -:का एषा का ?

विदूषक -कौन यह कौन है ?

चेट -:एषा सा।

चेट -अरे, वह यह है।

विदूषक -:किमिदानीं दास्या :पुत्र!: दुर्भिक्षकाले वृद्धरंक इव ऊद्र्ध्वकं श्वसायसे 'एषा सा सा' इति ।

विदूषक-दासी के बच्चे, अकाल के समय भिखारी बूढे की तरह ऊपर की ओर लम्बी सॉस 'सा सा' क्यों कर रहे हो ?

चेट -:अरे! त्वमपीदानीमिन्द्रमखकामुक इव सुष्ठु किं काफायसे 'का का' इति ?

चेट – अरे, तुम भी तो इस समय इन्द्रबलि के लोभी कौए की तरह 'का का' कर रहे हो।

विदूषक -: तत् कथम।

विदूषक -तो फिर कहो।

चेट -:भवतु, एवं भणिष्यामि। अरे ! प्रश्नं ते दास्यामि।

चेट -मन ही मन (तो फिर इस तरह कहूँगा।) प्रकट(अरे तुमसे एक सवाल पूछता हूँ।

विदूषक -:अहं! ते मुण्डे पादं दास्यामि।

विदूषक -मैं तुम्हारे माथे पर पैर रक्खूँगा।

चेट -:अरे। जानीहि तावत् तेन हि कस्मिन्काले चूता मुकुलयन्ति ?

चेट -अच्छा तो बतलाओ तो आम कब बौराते हैं ?

विदूषक -:अरे! दास्या :पुत्र! ग्रीष्मे।

विदूषक -रे नीच, गर्मी में।

चेट -:अरे! नहि नहि।

चेट -उपहास करते हुए (ऐसा नही हो सकता?

विदूषक -:किमिदानीमत्र कथयिष्यामि ? भवतु चारूदत्तं गत्वा प्रक्ष्यामि । अरे ! मुहूर्तकं तिष्ठ । भो वयस्य ! पक्ष्यामि तावत् कस्मिन् काले चूता मुकुलयन्ति ?

विदूषक -मन ही मन (तो क्या उत्तर होगा) सोचकर (अच्छा तो चल कर चारूदत्त से ही पूछता हूँ । प्रकट (क्षणभर रूको) चारूदत्त के पास जाकर (मित्र, आम कब बौराते हैं ?

चारूदत्त -:मूर्ख! वसन्ते।

चारूदत्त -मूर्ख, वसन्त में।

विदूषक -:मूर्ख! वसन्ते।

विदूषक -चेट के पास जाकर (मूर्ख! वसन्त में।

चेट -:द्वितीयं ते प्रश्नं दास्यामि। सुममृद्धानां ग्रामाणां का रक्षां करोति ?

चेट- अब रहा मेरा यह दूसरा प्रश्न -सम्पन्न नगरों की रक्षा कौन करता है ?

विदूषक-:अरे! रथ्या।

विदूषक -अरे गली।

चेट -:अरे! नहि नहि।

चेट –हँस कर नहीं नहीं।

विदूषक -:भवतु संशये पतितोऽस्मि। भवतु, चारूदत्तं पुनरपि प्रक्ष्यामि।

विदूषक -मैं तो संशय में पड़ गया हूँ) कुछ सोचकर(अच्छा तो फिर चारूदत्त से ही पूछता हूँ। पुन :चारूदत्त के पास आकर पूछता है।

चारूदत्त -:वयस्य! सेना।

चारूदत्त -मित्र, सेना।

विदूषक -:अरे! दास्या :पुत्र! सेना।

विदूषक -चेट के पास पहूँचकर (अरे दासी पुत्र, सेना।

चेट -:अरे द्वे अपि एकस्मिन् कृत्वा शीघ्रं भण।

चेट -तो दोनों उत्तरों को मिलाकर जल्दी से एक साथ उच्चारण करों।

विदूषक -:सेनावसन्ते।

विदूषक -सेनावसन्त।

चेट -:ननू परिवर्त्य भण।

चेट -अरे, उलट कर कहो।

विदूषक-:सेनावसन्ते।

विदूषक -देह घुमाकर सेनावसन्त।

चेट -:अरे मूर्खा बटुक! पदे परिवर्त्तय।

चेट -रे मूर्ख ब्राह्मण, पदपरिवर्तन कर बोलो।

विदूषक -:सेनावसन्ते।

विदूषक -कुछ सोचकर 'वसन्तसेना'।

चेट -:अरे मूर्ख! अक्षरपदे परिवर्त्तय।

चेट -रे मूर्ख, ब्राह्मण, पदपरिवर्त्तन कर बोले।

विदूषक -:वसन्तसेना।

विदूषक-कुछ सोचकर 'सेनावसन्त।'

चेट -:एषा सा आगता।

चेट -हॉं वही वसन्तसेना आई है।

विदूषक -:तद् यावत् चारूदत्तस्य निवेदयामि। भो चारूदत्त! धनिकस्ते ! आगत:।

विदूषक -तो फिर , मित्र चारूदत्त से कहता हूँ। पास जाकर मित्र, आपके महाजन आये है।

चारूदत्त -:कुतोऽस्मत्कुले धनिक:?

चारूदत्त -हमारे खानदान में महाजन कहॉं से आया ?

विदूषक -:यदि कुले नास्ति, तद्द्वारे अस्ति। एषा वसन्तसेना आगता।

विदूषक – अरे, खानदान में नहीं है तो मत रहें , दरवाजे पर तो हैं ही। वसन्तसेना आई है।

चारूदत्त -:वयस्य! किं मां प्रतारयसि ?

चारूदत्त -मित्र, क्यों मुझे ठगते हो?

विदूषक -:यदि मे वचने न प्रत्ययसे, तदिमं कुम्भीलकं पृच्छ। अरे दास्या :पुत्र! कुम्भीलक ! उपसर्प।

विदूषक -यदि मेरी बात का विश्वास नहीं है तो इस कुम्भीलक से ही पूछ लो न। अरे ओ, दासी का बेटा, जरा इधर तो आओ।

चेट -:आर्य! वन्दे।

चेट :पास जाकर आर्य, प्रणाम करता हूँ।

चारूदत्त -:भद्र! स्वागतम्। कथय, सत्यं प्राप्ता वसन्तसेना ?

चारूदत्त -भ्रद, स्वागत है, कहो क्या सचमुच वसन्तसेना आई है?

चेट -:एषा सा आगता वसन्तसेना।

चेट -हॉ जी, वसन्तसेना ही तो आई है।

चारूदत्त -:सहर्षम् भद्र! न कदाचित् प्रियवचनं निष्फलीक़तं मया। तद्गृह्यातां पारितोषिकम्। इत्युत्तरीयं प्रयच्छति।

चारूदत्त -खुशी के साथ मैंने किसी तरह की खुशखबरी सुनने के बाद किसी को भी यों ही लौटने नहीं दिया है। इसलिए इनाम लेकर ही जाओ चादर देता है।

चेट -:यावदार्यायै निवेदयामि।

चेट -लेकर प्रणाम कर, सन्तोष के साथ (तब तक चलकर आर्या वसन्तसेना से कहता हूँ। चला जाता है।

विदूषक -:भो! : अपि जानासि :किं निमित्तमीदृशे दुर्दिने आगतेति ?

विदूषक -मित्र, जानते हो ऐसे दुर्दिन में यह क्यों आई है।

चारूदत्त -:वयस्य! न सम्यगवधारयामि।

चारूदत्त-नहीं तो मेरी समझ में बात ठीक से जम नहीं पाती।

विदूषक -:मया ज्ञातम्। अल्पमूल्या रत्नावली , बहुमूल्यं सुवर्णभाण्डकम् इति न परितुष्टा, अपरं मार्गयितुमागता।

विदूषक -मैं जानता हूँ। रत्नावली कुछ कम कीमत की है और इसका स्वर्णभूषणम का डिब्बा अधिक कीमती है, ऐसा सोचकर, असन्तोष की स्थिति में कुछ और मॉगने आई है।

चारूदत्त -: स्वगतम् परितुष्टा यास्यति।

तत : प्रविशति उज्ज्वलाभिसारिकावेशेन वसन्तसेना, सोत्कण्ठा छत्रधारिणी विटश्च । **विट :** वसन्तसेनामुद्दिश्य

अपद्मा श्रीरेषा प्रहरणमनङ्ग:स्य ललितं
कुलस्त्रीध्ससं शोको मदनवरवृक्षस्य कुसुमम्।
सलीलं गच्छन्ती रतिसमयलज्जाप्रणयिनी
रतिक्षेत्रे रङ्गे प्रियपथिकसार्थैरनुगता ।।12।।

अन्वय :रतिसमयलज्जाप्रणयिनी, प्रियपथिकसार्थै :अनुगता :रङ्गे) इव (रतिक्षेत्रे, सलीलम् गच्छन्ती, एषा, अपद्मा, श्री :, अनङ्गस्य ललितम्, प्रहरणम्, कुलस्त्रीणाम् , शोक : ,मदनवरवृक्षस्य, कुसुमम्, अस्ति **।।12।।**

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त - मन ही मन (अब यहॉ से सन्तुष्ट होकर जायेगी।

इसके बाद शुभ्र अभिसारिका के रूप में उत्कण्ठित वसन्तसेना, छत्रधारिणी दासी एवं विट का प्रवेश

विट -वसन्तसेना को उद्देश्य करके सुरत के समय सलज्जा, पथिकों के समूह से पीछा की गई, राग रंग बढाने वाली , संकेतित स्थान के लिए सर्विलास आगे बढने वाली, यह वसन्तसेना, बिना कमल के ही लक्ष्मी है, कामदेव का सुकुमार आयुध है, कुलीन ललनाओ का शोक है,

कामरूपी सुन्दर वृक्ष का मनोरम फूल है ।।12।।

वसन्तसेने ! पश्य , पश्य -

गर्जन्ति शैलशिखरेषु विलम्बिबिम्बा

मेघा वियुक्तवनिताहृदयानुकारा:।

येषां रवेण सहसोत्पतितै र्मयूरै:

खं वीज्यते मणिमयैरिव तालवृन्तै :।।13।।

अपि च-

पङ्कक्लिन्नमुखा :पिबन्ति सलिलं धाराहृता दर्दुरा:

कण्ठं मुञ्चति बर्हिण :समदनो नीप :प्रदीपायते।

संन्यास :कुलदूषणैरिव जनैर्मेघैर्वृतश्चन्द्रमा

विद्युन्नीचकुलोद्गतेव युवतिर्नैकत्र सन्तिष्टते ।।14।।

अन्वय -:वियुक्तवनिताहृदयानुकारा:, शैलशिखरेषु, विलम्बिविम्बा:, मेघा:, गर्जन्ति येषाम्, रवेण, सहसा, उत्पतितै:, मयूरै:, मणिमयै:, तालवृन्तै:, खम्, वीज्यते , इव।।13।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेने देखो-देखो- वियोगिनी कामिनियों के हृदय की तरह मलिन, पहाड़ की चोटियों पर लटके हुए मेघमण्डल गरज रहे हैं, जिसकी आवाज से घबड़ा कर उड़ते हुए मयूर अपने मणिमय पंखो से लगता है जैसे आकाश को हवा कर रहें हैं **।।13।।**

और भी -वर्षा की जलधारा से ताड़ित एवं कीचड़ से लतपथ मुँहवाले मेढक पानी पी रहे हैं। कामातुर मयूर अपनी मीठी आवाज में बोल रहे हैं। अपने सफेद फूँलो के कारण खिले कदम्ब के पेड़ जलते दीप की तरह लग रहे हैं। नीच खानदान में जन्म लेने वाली औरत की तरह बिजली कहीं एक जगह स्थिर नहीं रह पाती है। कुल को कलंकित करने वाले संन्यासी की तरह तरह चन्द्रमा मेघों से घिरे रहा है **।।14।।**

वसन्तसेना – भाव ! सुट्ठु दे भणिदं। भाव! सुष्ठु ते भणितम्।

मूढे ! निरन्तरपयोधरया मयैव

कान्त :सहाभिरमते यदि किं तवात्र।

मां गर्जितैरपि मुहूर्विनिवारयन्ती ।।15।।

अन्वय -कुपिता, सपत्नी , इव, निशा हे मूढे, निरन्तरपयोधरया, मया, सह, एव, कान्त:, यदि, अभिरमते , तदा (अत्र, तव किम्,) इदृशै: गर्जितै :अपि, मुहु:, विनिवारयन्ती , मम मार्गम्, रूणद्धि **।।15।।**

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -विद्वन्, आपने ठीक ही कहा है। यह तो-

सौतिन की तरह ये कालीरात बार-बार गरज कर हमारी राह रोकती है। यह कहती है -री मूर्खे , निविड़ मेघोसे घिरी हुई या सघन कुचों वाली मेरी तरह प्रियतम चारूदत्त से रमण करती हो तो इसमें तुम्हें लाभ होगा ?**।।15।।**

विट -:भवतु एवं तावत्, उपालभ्यतां तावदियम्। **हिन्दी अनुवाद** -विट- तो ठीक है, तुम इस रात

को बैठकर कोसो।

वसन्तसेना -भाव! किमनया स्त्री-स्वभाव-दुर्विदग्धया उपालब्धया। पश्यतु भाव -:

मेघा वर्षन्तु गर्जन्तु मुचन्त्वशनिमेव वा।

गणयन्ति न शीतोष्णं रमणाभिमुखा :स्त्रिय :।।16।।

अन्वय -:मेघा:, गर्जन्तु, वर्षन्तु, वा, अनिशम्, एव, मुञ्चन्तु, रमणाभिमुखा:, स्त्रिय:, शीतोष्णम्, न, गणयन्ति।।16।।

वसन्तसेना -महाशय, नारी स्वभाव से ईर्ष्यालु होती है, तो फिर इस रात को कोसने से भला क्या लाभ ? देखिए-

मेघ चाहे बरसे या वज्र गिराये, रमणोत्सुक रमणी प्रियतम के पास जाने में शीत या ताप की चिन्ता नहीं करती **।।16।।**

विट -:वसन्तसेने! पश्य ! अयमपर-:

पवन-चपल-वेग :सथूलधारा-शरौघ:

स्तनित-पटह-नाद :स्पष्टविद्युत्पताक:।

हरति करसमूहं खे शशाङ्कस्य मेघो

नृप इव पुरमध्ये मन्दवीर्यस्य शत्रो:।।17।।

अन्वय -:पवनचपलवेग:, स्थूलधाराशरौघ:, स्तनितपटहनाद:, स्पष्टविद्युत्पताक:, मेघ:, पुरमध्ये, मन्दवीर्यस्य, शत्रो:, नृप इव खे शशाङ्कस्य, करसमूहं, **हरति ।।17।।**

विट-देखो, वसन्तसेने, यह दूसरा देखो -

यहॉ मेघ का वर्णन एक विजेता राजा की तरह किया गया है (पानी की प्रबल धारायें ही जिनके बाण समूह हैं, जिनका गरजना ही नगाड़े की आवाज है, चंचल चपलाही जिनकी पताकाहै, ऐसा मेघ आकाश में चन्द्रकिरणों को उसी प्रकार छीन रहा है जैसे एक विजेता राजा हवा की भॉति वेग वाला, सशक्त बाणसमूह वाला, गड़गडाते नगाडे वाला, बिजली की तरह चमकती पताका वाला अपने पराजित शत्रुओं की राजधानी में घुसकर उनसे कर वसूल करता है **।।17।।**

वसन्तसेना -एवमेतत्। तत् कथमेष :अपर-:

एतैरेव यदा गजेन्द्रमलिनैराध्मातलम्बोदरै-

र्गर्जद्भ :सतडिद्बलाकशबलैर्मेघै :सशल्यं मन :।

तत् किं प्रोषित-भर्तृ-वध्य-पटहो हा हा हतोशो बक:

प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति शठधी: क्षारं क्षते प्रक्षिपन् ।।18।।

अन्वय -:गजेन्द्रमलिनै:, आध्मातलम्बोदरै:, गर्जद्भि:, सतडिद्बलै:, एतै:, एव, मेघै :मन:, शल्यम्, तत् प्रोषितभर्तृवध्यपटह:, हताश:, शठधी:, बक:, क्षते क्षारम्, प्रक्षिपन्, इव, हा-हा किम् प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति**?।।18।।**

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -यह तो ठीक है, तब दूसरे -मत्त गजराज की तरह नीले वर्ण वाले, जल से भरे रहने के कारण विराट पेट वाले, बिजली और बकपंक्तियों के संयोग से चित्रित एवं

गरजते हुए मेघों से अब विरहियों के हृदय में कॉटे चुभ रहे हैं। हाय, परदेश में रहने वाले विरही पतियों के बधकालीन नगाड़े की आवाज की तरह ये मूर्ख बगुले घाव पर नमक छिड़कने की तरह 'वर्षा वर्षा' क्यों रट रहे है?**।।18।।**

13.3. 3श्लोक संख्या 19 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

विट -:वसन्तसेने! एवमेतत्। इदमपरं पश्य -

बलाका-पाण्डुरोष्णीषं विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्।

मत्त-वारण-सारूप्यं कर्त्तुकाममिवाम्बरम् ।।19 ।।

अन्वय :बलाकापाण्डुरोष्णीषम्,विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्,अम्बरम्,मत्तवारणसारूप्यम्,कर्त्तुकमम्, इव,प्रतिभाति ।।19।।

हिन्दी अनुवाद -विट -यह तो ठी है। तब यह दूसरा -वकपंक्ति रूपी श्वेत पगड़ी, पहनकर, बिजली रूपी चंचल चामकर लेकर यह आकाश मंडल मतवाले गजराज की समानता करने को उत्सुक हो रहा है ।।19।।

वसन्तसेना -भाव! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्य।

एतैरार्द्र-तमालपत्र-मलिनैरापीतसूर्य नभो

वल्मीका :शरताडिता इव गजा :सीदन्ति धाराहता :।

विद्युत्काञ्च नदीपिकेव रचिता प्रासादसञ्चारिणी

ज्योत्स्ना दुर्बलभत्तुकेव बनिता प्रोत्सार्य मेघैर्हृता ।।20।।

अन्वय :आर्द्रतमालपत्रमलिनै:, एतै:, मेघै:, आपीतसूर्यम्, नभ :धाराहता वल्मीका:, शरताडिता, गजा, एव, सीदन्ति विद्युत, प्रासादसञ्चारिणी, काञ्चनदीपिका, इव, रचिता, ज्योत्स्ना, दुर्बलभर्तृका, इव, प्रोत्सायं , हृता **।।20।।**

वसन्तसेना -मान्यवर देखिए - भीगे आबनूस के पत्तो की तरह काले बादलो से सूर्यहीन आकाश ढंक रहा है, वर्षा की धारा से बाण से बिंधे हाथियों की तरह ये दीमक विनष्ट हो रहे है। सोने के दीप की तरह गगनचुम्बी अट्टालिकाओं में ये बिजलियॉ चमक रही है। बलहीन व्यक्ति की सुन्दर पत्नी को जैसे लम्पट छीन लेते है वैसे ही इन बादलों ने चॉद की चाँदनी को छीन लिया है **।।20।।**

विट -: वसन्तसेने! पश्य पश्य –

एते हि विद्युद्गुण –बद्ध-कक्षा गजा इवान्योन्यमभिद्रवन्त :।

शक्राज्ञयावारिधरा :सधारा गां रूप्यरज्ज्वेव समुदद्वधरन्ति ।।21।।

अपि च। पश्य -महावाताध्मातैर्महिश-कुल-नीलैर्जलधरै-

श्चलैर्विद्युत्पक्षैर्जलधिभिरिवान्त :प्रचलितै :।

इयं गन्धोद्दामा नव-हरित-शष्पाङ्कुरवती धरा धारापातैर्मणिमयशरैर्भिद्यत इव।।22।।

अन्वय -:विद्युद्गुणबद्धकक्षा:, अन्योऽन्यम्, अभिद्रवन्त:, गजा:, इव सधारा:, एते, वारिधरा:,

शक्रज्ञया, गाम्, रूप्यरज्ज्वा, इव, समुद्धरन्ति॥21॥

अन्वय-: महावाताध्मातै:, महिषकुलनीलै:, विद्युत्पक्षै :अन्त :प्रचलितै:, जलधिभि:, इव, चलै:, जलधरै:, नवहरितशष्पाङ्कुरवती, गन्धोद्दामा, इयम्, धरा, धारापतै:, मणिमयशरै:, भिद्यते, इव॥22॥

विट -देखो, वसन्तसेने, देखो-

विललीरूपी रस्सी से कमी वाले, आपस में एक दूसरे को ध्क्का देते हुए हाथियों की तरह ये बादल मानों देवराज इन्द्र की आज्ञा से श्वेत जलधारा रूपी चॉदी की रस्सियों से बॉध कर धरती को ऊपर की ओर खीच रहे हैं **॥21॥** और भी देखो -विसफूर्जित सागर की तरह, झंझावात के आघात के आघात से चंचल, भौसों के झूंड के समान काले, चंचल बिजली वाले, जल से भरे ये बादल नई नई हरी घासों के अड़कुरवाली तथा सोंधी महक वाली इस धरती को धारापात रूपी मणिमय बाणों से वेध रहा है **॥22॥**

वसन्तसेना -भाव! एष अपर:।

एह्येहीति शिखण्डिनां पटुतरं केकाभिराक्रन्दित :
प्रोड्डीयेव बलाकया सरभसं सोत्कण्ठमालिङ्गित:।
हंसैरूज्झितपङ्कजैरतितरां सोद्वेगमुद्वीक्षित :
कुर्वन्नञ्जनमेचका इव दिशो मेघ :समुत्तिष्ठति ॥23॥

अन्वय -:शिखण्डिनाम्, केकाभि:, एहि एहि, इति पटुतरम्, आक्रन्दित:, बलाकया, सरभसं, प्रोड्डीय, सोत्कण्ठम्, आलिङ्गित:, इव, उज्झितपङ्कजै :हंसै:, अतितराम्, सोद्वेगम्, उद्वीक्षित:, मेघ:, दिश:, अञ्जनमेचका:, कुर्बन्,इव, समुत्तिष्ठति **॥23॥**

वसन्तसेना - महाशय, यह भी देखिए -

मयूर स्पष्ट शब्दों में 'आओ-आओ' कहकर इन बादलों को बुला रहा है साभिलाप बगुलों की पातियॉ मानो दौडकर इन्हें गले लगा रहीं हैं। कमलवनों को छोडते हुए उद्विग्न से ये हंस इन्हें घृणा की दृष्टि से देख रहे है और ये मेघ दिशाओं को काजल पोतता हुआ मौज से आकाश में घूम रहा है **॥23॥**

विट -:एवमेतत्। तथाहि पश्य –

निष्पन्दीकृत-पद्मषण्ड-नयनं नष्ट– क्षपा-वासरं
विद्युद्धि :क्षण-नष्ट-दृष्ट तिमिरं प्रच्छादिताशामुखम्।
निश्चेष्टं स्वपितीव सम्प्रति पयोधारा-गृहान्तर्गतं
सफीताम्भोधर-धाम-नैक-जलद-च्छत्रापिधानं जगत॥24॥

अन्वय -:निष्पन्दीकृतपद्मपण्डनयनम्, नष्टक्षपावासरम्, विद्युद्भ:, क्षणनष्टदृष्टतिमिरम्, प्रच्छादिताशामुखम्, सफीताम्भोधरधामनैकजलदच्छत्रापिधानम्, पयोधारागृहान्तर्गतम्, जगत् सम्प्रति, निश्चेष्टम्, स्वपिति, इव **॥24॥**

हिन्दी अनुवाद -विट -तुम्हारा कहना ठीक ही है देखो न-

कमलरूपी ऑखें बन्दकर, रात दिन का भेद मिटाकर कभी सघन अन्धकार में छिपकर तो

कभी बिजली के प्रकाश में प्रकट होकर ऑखे मिचौनी करते हुए दिशारूपी मुँह ढँककर जलधारारूपी घर में , बहुरंगे बादल के छाते लगाकर आकाश में यह संसार निश्चिन्त होकर सो रहा है **।।24।।**

गता नाशं तारा उपकृतमसाधाविव जाने
वियुक्ता कान्तेन स्त्रिय इव न राजन्ति ककुभ :।
प्रकामान्तस्तप्तं त्रिदशपति-शस्त्रस्य शिखिना
द्रवीभूतं मन्ये पतति जलरूपेण गगनम् ।।25।।

अन्वय -:असाधौ, जने, उपकृतम्, इव, तारा:, नाशम्, गता:, कान्तेन, वियुक्ता स्त्रिय:, इव, ककुभ:, न, राजन्ति , त्रिदशपतिशस्त्रस्य, शिखिना, प्रकामम्, अन्तस्तप्तम्, द्रवीभूतम्, गगनम्, जलरूपेण, पतति , इति अहं मन्ये ।।25।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना-महाशय, आपका कहना विल्कुल ठी है। और भी देखिए-

दुष्टलोगों के लिए किये गये उपकार की तरह ये आकाश के तारे खो गये है। पतिहीन वियोगिनी की तरह दिशाएँ श्रीहत हो गई हैं। इन्द्र के हथियार से निकलने वाली आग से झुलसा आकाश मानो पिघलकर पानी के रूप में गिर रहा **है ।।25।।**

इसके बाद शुभ्र अभिसारिका के रूप में उत्कण्ठित वसन्तसेना, छत्रधारिणी दासी एवं विट का प्रवेश

विट -वसन्तसेना को उद्देश्य करके सुरत के समय सलज्जा, पथिकों के समूह से पीछा की गई, राग रङ्ग (बढाने वाली , संकेतित स्थान के लिए सर्विलास आगे बढने वाली, यह वसन्तसेना, बिना कमल के ही लक्ष्मी है, कामदेव का सुकुमार आयुध है, कुलीन ललनाओ का शोक है, कामरूपी सुन्दर वृक्ष का मनोरम फूल है । महाशय, आपका कहना विल्कुल ठी है। और भी **देखिए** -दुष्टलोगों के लिए किये गये उपकार की तरह ये आकाश के तारे खो गये है। पतिहीन वियोगिनी की तरह दिशाएँ श्रीहत हो गई हैं । इन्द्र के हथियार से निकलने वाली आग से झुलसा आकाश मानो पिघलकर पानी के रूप में गिर रहा है ।

अभ्यास प्रश्न -

निम्नलिखित के एक शब्द में उत्तर दीजिए।

1. पालतू मयूरों ने किसे देखा ?
2. हंसों ने उपेक्षकृत दृष्टि से किसे देखा ?
3. चारूदत्त के कथन में शंख किससे निर्मित है ?
4. लालच और उदारता से हीन हो है?
5. सदा प्रतिकूल कौन है ?
6. वेश्या किसके वश में होती है ?
7. चेट किस तरह गीत गाता है ?
8. सुरत किसे कहते है ?

9. विट के कथन में कामदेवका सुकुमार अयुध कौन है ?

13.4 सारांश

इस इकाई में चारूदत्त के प्रारम्भिक कथनों से आपने जाना कि इसके बाद आसन पर बैठे हुए उत्कण्ठितचारूदत्त का प्रवेश चारूदत्त -ऊपर की ओर देखकर(यह असमय में ही काली घटाएँ उमड़ रही हैं। ऊपर की ओर पॉखें फैलायें जिसे पालतू मयूरों ने देखा, गमनोन्मुख खिन्न् मन हंसों ने जिसे उपेक्षा की दृष्टि से देखा, वह अकालदुर्दिन आकाश और विरही के हृदय को एक साथ ढँक रहा है। और भी -पानी से भीगे पेट वाले भैसे और काले भौरों की तरह नीले मेघ, विद्युत्कान्ति से निर्मित पीताम्बर धारण कर साथ में बकपंक्तिरूपी शंख धारण कर भगवान् विष्णु की तरह सम्पूर्ण आकाश को घेर रहा है। चारूदत्त) -मन ही मन (अब यहॉ से सन्तुष्ट होकर जायेगी। अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप चारूदत्त एवं चेट तथा विदूषक के विभिन्न कथनों में विभिन्न प्रकार की शिक्षाओं को ग्रहण कर पंचम् अंक के श्लोक संख्या 1से 25 तक की सम्पूर्ण विशेषताओं को बतायेगें।

13. 5 पारिभाषिक शब्दावली

उत्कलापै -:गृहशिखण्डिभि:, दुर्दिनम् -मेघाच्छन्नदिनम्, निषिक्ता- :तरलीकृता , विश्लेषितै -:भेदं गतै :, विस्तरै -:विस्तृतै :, अनुगतै -:पश्चाच्चलितै:, चक्रतुल्यम्-राज्यतुल्यम् , अतिदर्पितबल -: अतिदर्पितम्, अस्मासु –मादृशधनरहितेषु, यत् सखीजनेषु -आलीसमूहेषु, अपवारितम् -आच्छादितम्, लेष्टका -लघुकठोरमृत्तिकाखण्ड:, रासभश्च-गर्दभश्च,

13. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मेघ 2. मेघ 3. बक्कपंक्ति 4. वसन्तसेना 5. काम 6. धन 7. गधे की तरह 8. कामदेव 9. वसन्तसेना

13. संदर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् –हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

13.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंचम् अंक के श्लोक संख्या 2, 3 ,5 का संदर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. प्रस्तुत इकाई में चारूदत्त के कथनों की समीक्षा कीजिए।
3. श्लोक संख्या 6, 8, का सप्रसंग अनुवाद कीजिए।

इकाई -14 पंचम अंक श्लोक संख्या 26 से 52 तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14. 3श्लोक संख्या 26 से 52तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
14.3.1. श्लोक संख्या 26 से 36 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
14.3. 2 श्लोक संख्या 37से 45 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
14.3.3 श्लोक संख्या 46 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
14. 4 सारांश
14. 5 पारिभाषिक शब्दावली
14. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
14. 7 संदर्भग्रन्थ
14. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

14. 1 प्रस्तावना

पंचम् अंक के25 वें श्लोक में वसन्तसेना का कथन समाप्त हो जाने के पश्चात26 वे श्लोक से प्रारम्भ होने वाली इस इकाई में आप पुन :उन्हीं पात्रों के सम्वादों का अध्ययन करेगें जिनका इसके पूर्व की इकाई में कर चुके है। प्रस्तुत इकाई में भी वसन्तसेना के कथन के द्वितीय भाग से होने वाला वर्णन प्रारम्भ है जिसमें आरम्भ में विट और वसन्तसेना का सम्वाद है उसमें गौतम की पत्नी अहिल्या की चर्चा की गयी है। विद्युत की गर्जना एवं विट के सम्पूर्ण कलाओं के पारंगत होने में तथा छलकपट एवं माया के भण्डार होने की बात कहते हुए शुष्कवृक्ष् वाटिका आदि कथनों से सम्वादों में जीवन्तता आई है इसके आगे चारूदत्त विदूषक चेटी आदि पात्रों के सम्वादोंकाउल्लेख है जिसमें सुवर्ण भाण्ड आदि की चर्चा करते हुए ब्रह्मणत्व को बताते हुए गरीबों की ओर संकेत करते हुए सम्वाद यात्रा मेघ वर्णन को प्राप्त होती हुई चारूदत्त के कथन में वर्षावर्णन के साथ समाप्त हुई है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप 26से 52 तक श्लोकों एवं सम्वादों से परिचित होकर साहित्यक सामाजिक एवं अन्य विशेषताओं को बता सकेगें।

14.2 उद्देश्य

पंचम् अंक की शेष भाग की इस 14वीं इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह बता सकेंगें कि -

- चारूदत्त की विरह अवस्था क्या है।
- वसन्तसेना मेघ को क्यों निर्लज्ज कहती है।
- मयूर किस प्रकार बादलों को बुलाते है।
- आसमान बिजलीयों से किस प्रकार जल रहा है।
- मेघ का संगम क्या है इत्यादि।

14. 3श्लोक संख्या 26 से 52तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

14.3. 1श्लोक संख्या 26 से 36 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

अपि च, पश्य -

उन्नमति नमति वर्षति गर्जति मेघ :करोति तिमिरौघरम्।

प्रथमश्रीरिव पुरूष :करोति रूपाण्यनेकानि।।26।।

अन्वय -:मेघः, उन्नमति , नमति, वर्षति, गर्जति, तिमिरौघम्, करोति, प्रथमश्रीः, पुरूषः, इव, अनेकानि, रूपाणि, करोति **।।26।।**

हिन्दी अनुवाद -और भी देखिये -पहले पहल सम्पत्तिपाये पुरूष की तरह ये बादल अनेक रूप धारण कर रहा है। कभी तो ऊपर उठकर सारे आकाश को घेर लेता है और कभी नीचे की ओर झुककर फैल जाताहै। कभी वरसता है तो कभी गरजताहै। कभी घोर अन्धकार से सम्पूर्ण

आकाश के आयाम को ढँक लेताहै **।।26।।**

विट -:एवमेतत्

विद्युद्भिर्ज्वलतीव संविहसतीवोच्चैर्बलाकाशतै -

महेन्द्रेण विवल्गतीव धनुषा धाराशरोद्गारिणा।

विसपष्टाशनि-निस्वनेन रसतीवाघूर्णवानिलै-

नीलै :सान्द्रमिवाहिभिर्जलधरैर्धूपायतीवाम्बरम्।।27 ।।

वसन्तसेना -

जलधर ! निर्लज्जस्त्वं यन्मां दयित्स्य वेश्म गच्छन्तीम्।

स्तनितेन भीषयित्वा धाराहसतै :परामृशसि।।28।।

अन्वय -:अम्बरम्, विद्युद्भि:, ज्वलति, इव, बलाकाशतै:, उच्चै:, संविहसति, इव, धाराशरोद्गारिणा, माहेन्द्रेण, धनुषा, विवल्गति, इव, विस्पष्टाशनिनिस्वनेन, रसति, इव, अनिलै:, आघूर्णति, इव, अहिभि:, इव, नीलै:, जलधरै:, सान्द्रम्, धूपायति, इव **।।27।।**

हिन्दी अनुवाद -विट -बात तो ऐसी ही है -

आकाश, मानो विजलियों से जल रहा है; बगुलों की सैकड़ो पॉतों से खिलखिलाकर हंस रहा है, धारारूपी बाणों को वर्षाकर इन्द्रधनुष उठाये पैतरा बदल रहा है, बज्रनिर्घोष से सिंहनाद कर रहा है, वायु के रूप में क्रुद्धहोकर घूम रहा है, करैत सॉप की तरह काले बादलों से कृष्ण धूम सेवन कर रहा है **।।27।।**

वसन्तसेना -रे मेघ, तुम बड़े ही निर्लज्ज हो, मैं अपने प्रियतम के घर जा रही हूँ और तुम मुझे गरज कर डरा रहे हो, इतना ही नही अपने जलधारारूपी हाथों से मेरा स्पर्श भी कर रहे है **।।28।।**

भो :शक्र!

किं ते ह्यहं पूर्वरतिप्रसक्ता यत्त्वं नदस्यम्बुद-सिंहनादै:।

न युक्तमेतत् प्रियकाङ्क्षिताया मार्ग निरोद्धुं मम वर्षपातै :।।29।।

अपि च -

यद्वदहल्याहेतोर्मृषा वदसि शक्र ! गौतमोऽस्मीति ।

तद्वन्ममापि दु:खं निरवेक्ष्य निवार्यतां जलद :।।30।।

अन्वय -:अहम्, किम्, ते पूर्वरतिप्रसक्ता)आसम् (यत्, त्वम् आम्बुदसिंहनादै:, नदसि, प्रियकांक्षिताया:, मम, मार्गम्, वर्षपातै:, निरोद्धुम् एतत् न, युक्तम् **।।29।।**

अन्वय - :हे शक्र, यद्वत्, अहल्याहेतो:, गौतम:, असिम्, इति,) त्वम् (मृषा, वदसि, मम्, अपि, दु:खम्, निरवेक्ष्य तद्वत्, जलद:, निवार्यताम् **।।30।।**

हिन्दी अनुवाद -हे इन्द्र! मैने पहले कभी तुमसे प्रेम भी किया था कि तुम्हारा मेघ सिंह की तरह गरज कर मेरी राह रोकना चाहता है और तुम भी मेघ बरसा कर मुझ विरहिणी की राह रोक रहे हो, क्या यह तुम्हारे लिए उचित है ? **।।29।।**

और भी -ओ देवराज, मुनिपत्नी अहिल्या पर एक बार आसक्त होकर तुमने कैसे झूठ कह दिया

था 'मैं गौतम हूँ'। क्या तुम मुझ विरहिणी के दु:ख को समझ कर मेरी राह के बाधक अपने मेघ को रोक नहीं सकते?**।।30।।**

अपि च

गर्ज वा वर्ष वा शक्र मुञ्च वा शतशोऽशनिम्।
न शक्या हि स्त्रियो रोद्धु प्रसिथता दयितं प्रति ।।31।।
यदि गर्जति बारिधरो गर्जतु तन्नाम निश्ठुरा :पुरूषा :।
अयि विद्युत् ! प्रमदानां त्वमपि च दु:खं न जानासि ?।।32।।

विट -:भवति! अलमलमुपालम्भेन। उपकारिणी एवेयम्।

ऐरावतोरसि चलेव सुवर्णज्जु :
शैलस्य मूर्ध्नि निहितेव सिता पाताका।
आखण्डलस्य भवनोदरदीपिकेयम्
आख्याति ते प्रियतमस्य हि सन्निवेशम् ।।33।।

अन्वय :हे शक्र, गर्ज, वा, वर्ष , वा शतश:, अशनिम्, मुञ्च,) किन्तु (दयितम्, प्रतिप्रस्थिता:, स्त्रिय:, रोद्धम्, न, शक्या:, **हि ।।31।।**

अन्वय -यदि, वारिधर :, गर्जति, तद्, गर्जतु, नाम)यत(: पुरूषा:, निष्ठुरा) :भवन्ति, किन्तु (अयि,विद्युत, त्वमपि,च, प्रमदानाम् दुखम्, न जानासि **।।32।।**

अन्वय :ऐरावतोरसि, चला, सुवर्णरज्जु:, इव, शैलसय, मूर्धिनि, निहिता, सिता, पताका, इव, आखण्डलस्य, भवनोदरदीपका,इव, ते, प्रियतमसय, सन्निवेशम्, आख्याति, हि **।।33।।**

हिन्दी अनुवाद -और भी– अरे ओ देवराज, चाहे तुम वरसो ,या गरजो, अथवा एक ही साथ सैकड़ौ वज्र ही क्यों न गिरा दो, पर प्रियतम से मिलने के लिए जाती हुई कामिनी को तुम नहीं रोक सकते **।।31।।**

यदि मेघ गरजता है तो उसे गरजने दो, क्योंकि पुरूष तो कठोर होते ही हैं। किन्तु अरी ओ बिजलीतुम नारी होकर भी एक नारी की पीड़ा नहीं जान पायी **।।32।।**

विट -अरी ओ श्रीमती, बिजली की निन्दा तो वेकार ही कर रही हो , यह विचारी तो चमक कर तुम्हें राह दिखला रही है।

ऐरावत हाथी की छाती वा झूलती सोने की चंचल सिकड़ी की तरह, अथवा ऊँचे पहाड़ की चोटी पर गाड़ी गई पताका की तरह या देवराज के घर में जलती प्रकाश रेखा की तरह यह बिजली तुम्हारे प्रियतम के घर की राह तुम्हें दिखला रही हैं **।।33।।**

वसन्तसेना- भाव! एव्वं, तं ज्जेव एदं गेहं।)भाव! एवम्, तदेव एतद् गेहम्।

विट -:सकल-कलाभिज्ञाया न किञ्चिदिह तवोपदेष्टव्यमस्ति। तथापि स्नेह :प्रलापयति। अत्र प्रविश्य कोपोऽत्यन्तं न कर्त्तव्य :।

यदि कुप्यसि नास्ति रति :कोपेन विनाऽथवा कुत :काम:।
कुप्य च कोपय च त्वं प्रसीद च त्वं प्रसादय चकान्तम् ।।34।।

अन्वय -:यदि, कुप्यसि, रति :नास्ति, अथवा कोपेन, विना, कुत:, काम:, त्वम्, कुप्य च कोपय च, त्वम् प्रसीद्च, कान्तम्, प्रसादयच ।।34।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -मान्यवर, आप ठीक ही कहते हैं, यह उन्हीं का घर है।

विट -यद्यपि सम्पूर्ण कलाओं में तुम स्वयं पारंगत हो, तुम्हें कुछ भी सीखाना उचित नही हैं, फिर भी तुम्हारा स्नेह मुझे कुछ कहने को विवश कर रहा है। चारूदत्त के घर में घुस कर तुम्हें अधिक क्रोध नहीं करना चाहिए।

यदि ज्यादा गुस्सा करोगी तो अनुराग ही नहीं जगेगा अथवा विना कुछ गुस्साये रति का आनन्द कहॉ मिलेगा? पहले अपने प्रेमी को थोड़ा क्रुद्ध कर दो, पुन :स्वयं मुँह फुलाओ, फिर मान मनौअल कर खुद खुश हो जाओ और बाद में उन्हें भी प्रसन्न कर दो **।।34।।**

भवतु, एवं तावत्! भो भो! : निवेद्यतामार्य्य चारूदत्तय -

एषा फुल्ल -कदम्ब-नीप-सुरभौ काले घनोद्भासिते
कान्तस्यालयमागता समदना हृष्टा जलाद्रलिका।
विद्युद्वारिदगर्जितै :सचकिता त्वद्दर्शनाकांक्षिणी
पादौ नूपुर-लग्न-कर्दम-धरौ प्रखालयन्ती स्थिता ।।35।।

चारूदत्त -:आकर्ण्य (वयस्य! ज्ञायतां किमेतदिति।

अन्वय :समदना, हृष्टा , जलार्द्रालका, विद्युद्वारिदगर्जितै:, सचकिता :त्वद्वर्शना, कांक्षिणी, एषा, फुल्लकदम्बनीपसुरभौ, घनोद्भासिते, काले, कान्तस्य, आलयम्, आगता, नूपुरलग्नकर्दमधरौ, पादौ, प्रक्षालयन्ती , स्थिता **।।35।।**

हिन्दी अनुवाद-अच्छा, यह तो हुआ, अब आर्य चारूदत्त को भी तो सूचित कर दो -

खिले कदम्ब और नीपतरू की सुगन्ध से तर, बादलों से घिरे इस वर्षाकाल में, कामपीड़िता, प्रसन्नवदना वर्षा में भीगें बाल वाली वसन्तसेना अपने प्रियतम के घर आई है। किन्तु बिजली की चमक और बादलों की गर्जन से आक्रान्त प्रिय मिलन के लिए उत्सुक अपने पायलों में लगे कीचड़ को धोती हुई दरवाजे पर खड़ी है **।।35।।**

चारूदत्त –सुनकर (मित्र; पता तो लगाओ, कैसी आवाज आ रही है ?

विदूषक -:यद्भवानाज्ञापयति। त्वस्ति भवत्यै।

वसन्तसेना -आर्य वन्दे। स्वागतमार्यस्य। भाव! एषा छात्रधारिकाभावस्यैव भवतु।

विट -:स्वागतम् अनेनोपायेन निपुणं प्रेषितोऽस्मि।)प्रकाशम् एवं भवतु। भवति! वसन्तसेने।

साटोप-कूट -कपटानृतजन्मभूमे:
शाठयात्मकस्य रति-केलिकृतालयस्य।
वेश्यापणस्य सुरतोत्सवसङ्ग्रहसय
दाक्षिण्यपण्य-सुख-निष्क्रय-सिद्धिरस्तु ।।36।।

अन्वय -:साटापकुटकपटानृतजन्मभूमे:, शाठयात्मकस्य, रतिकेलिकृतालयस्य सुरतोत्सवसङ्ग्रहस्य, वेश्यापणस्य, दाक्षिण्यपण्यसुखनिष्क्रियसिद्धि:, अस्तु **।।36।।**

विदूषक -जैसी आप की आज्ञा वसन्तसेना के पास जाकर, सम्मानपूर्वक श्रीमती का कल्याण हो।

वसन्तसेना -आर्य को प्रणाम है। मैं आपका अभिनन्दन करती हूँ विट को महाशय, यह चेटी अब आपकों सौपती हूँ।

विट -मन मे बड़ी चतुराई के साथ इसने घर लौट जाने को कह दिया सुनकर ठीक है, देवि,छल, कपट और माया के सगर्व उत्पन्न होने की भूमि, जिसकी आत्मा ही धूर्त्तता है, काम क्रीड़ा ही जिसका घर है, संभोग सुख ही जिसका संचय है -उस वेश्या रूपी बाजार की विक्रय वस्तु जवानी का उदारता पूर्वक आदान– प्रदान करो और वह मूल्य दान ही तुम्हारी सिद्धि हो **॥36॥**

14.3. 2 श्लोक संख्या 37 से 45 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

इति निष्क्रान्तो विट :

वसन्तसेना -आर्य मैत्रेय! कस्मिन् युष्माकं द्यूतकर :?

वसन्तसेना -आर्य मैत्रेय,आपके जुआड़ी महाराज कहॉ है ?

विदूषक -:ही ही भो! : द्यूतकर इति भणन्त्या अलंकृत :प्रियवयसय :। भवति! एष खलु शुष्कवृक्ष-वाटिकायाम्।

विदूषक -मन ही मन (वाह, जुआड़ी शब्द से इसने मित्र चारूदत्त को अच्छा अलंकृत कर दिया है। सुनाकर (अरी श्रीमती जी, वे शुष्कवृक्षवाटिका में बैठे है।

वसन्तसेना -आर्य! का युष्माकं शुष्क-वृक्ष-वाटिका उच्यते ?

वसन्तसेना -आर्य, आप शुष्कवृक्षवाटिका किसे कहते है ?

विदूषक -:भवति! यस्मिन् न खाद्यते न पीयते।

हिन्दी अनुवाद -अरी ओ श्रीमती , जहॉ न कुछ खाया जाता है और न पिया ही जाता है।

वसन्तसेना मुस्कराती है

विट का प्रस्थान

विदूषक -:तत्प्रविशतुभवती।

विदुषक -तो फिर, चलिए भीतर।

वसन्तसेना -अत्र प्रविश्य किं मया भणितव्यम् ?

वसन्तसेना -मुँह फेरकर (हाय, तो उनके सामने जाकर क्या कहूँगी ?

चेटी -द्यूतकर! अपि सुखस्ते प्रदोष:? इति।

चेटी -जुआड़ी जी, आप की यह शाम सुखद तो है ?

विदूषक -: प्रविशतु भवती।

विदूषक -पहले आप भीतर आयें।

वसन्तसेना -अयि द्युतकर! अपि सुखस्ते प्रदोष ?

वसन्तसेना -क्या ऐसा कह पाऊँगी ?

चेटी- समय ही आप से कहवा देगा।

चारूदत्त -अवलोक्य (अये वसन्तसेना प्राप्ता।) सहर्षमुत्थाय अयि प्रिये!

सदा प्रदोषो मम याति जाग्रतः
सदा च मे निःश्वसतो गता निशा।
त्वया समेतस्य विशाललोचने !
ममाद्य शोकान्तकर :प्रदोषक :।।37 ।।

अन्वय -:सदा, जाग्रतः, च, मम, प्रदोषः, याति, यउस, च, निश्वसतः, मे, निशा गता, विशाललोचने, अद्य, त्वया, समेतस्य, मम, प्रदोषकः, शोकान्तकरः, ।।37।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -भीतर आकर, चारूदत्त पर फूल फेककर (ओ जुआड़ी जी, आपकी यह शाम तो सुखद है ?

चारूदत्त– देखकर अरे वसन्तसेना आ गई खुश होकर और उठकर आओ प्रिये आओ।

अरी ओ विशाललोचने, मेरी हर शाम आह भरते और हर रात उसॉस काटते ही बीतती है; पर आज की शाम तुम्हारे साथ रहने से जरूर रंगीन रहेगी **।।37।।**

तत्स्वागतं भवत्यै। इदामासनम, अत्रोपविश्यताम्।

विदूषक -:इदमासनम्, उपविशतु भवती।

विदूषक -बैठिए, श्रीमतीजी, इस आसन पर बैठिए।

वसन्तसेना आसीना। तत :सर्वे उपविशन्ति

आओ, स्वागत है। लो विराजो इस आसन पर ।

वसन्तसेना के बैठने के बाद सभी यथास्थान बैठ जाते है।

चारूदत्त -वयस्य! पश्य पश्य -

वर्षोदकमुद्गिरताश्रवणान्तविलम्बिना कदम्बेन।
एक :स्तनोभिषिक्तो नृपसुत इव यौवराज्यस्थ :।।38।।

अन्वय -:वर्षोदकम्, उद्गिरता, श्रवणान्तविलम्बिना, कदम्बेन, एकः, स्तनः, यौवराज्यस्थः, नृपसुतः, इव, - अभिषिक्त :**।।38।।**

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त् -मित्र, देखो तो -कान में लगे कदम्ब के फूल से टपककर ये वर्षा की बूँदे वसन्तसेना के एक स्तन को ठीक उसी तरह अभिषिक्त कर रही हैं, जैसे राजसिंहासन पर बैठने के लिए किसी युवराज को अभिषिक्त किया जा रहा हो **।।38।।**

वद्वयस्य क्लिन्ने वाससी वसन्तसेनाया :। अन्ये प्रधानवाससी मसुपनीय-तामिति।

तो मित्र , देखो न, वसन्तसेना के सारे कपड़े भीग गये हैं। जाओ, कोई इनके लायक अन्य परिधान ले आओ

विदूषक -यद्भवानाज्ञापयति।

विदूषक -जैसी आपकी आज्ञा।

चेटी -आर्य मैत्रेय। तिष्ठ त्वम्, अहमेवार्या शुश्रूषयिष्यामि।

तथा चेटी -आर्य मैत्रेय, आप रहने दें। मैं ही इनकी परिचर्या करती हूँ।

करोति। वैसा ही करती है

विदूषक -:भो वयस्य! पृच्छामि तावत्तत्रभवती किमपि।

हिन्दी अनुवाद - धीरे से (मित्र, मैं इनसे कुछ पूछना चाहता हूँ ।

चारूदत्त -:एवं क्रियताम्।

चारूदत्त -पूछो।

विदूषक -:अथ किंनिमित्तं पुनरीद्दशे प्रनष्टचन्द्रालोके दुर्दिनान्धकारे आगता भवती ?

विदूषक -सुनाकर चॉंदनी रहित सघनमेघ से घिरी इस अकाल वेला में आपका आना कैसे हुआ ?

चेटी -आर्ये! ऋजुको ब्राह्मण:।

चेटी -आर्ये, ये बड़े सीधे ब्राह्मण है।

वसन्तसेना -ननु निपुण इति भण।

वसन्तसेना -सीधे नहीं, चालाक कहो।

चेटी – एषा खलु आर्या एवं प्रष्टुमागता-'कियत्तस्य रत्नावल्या मूल्यम्' इति।

चेटी -आपने जो रत्नावली दी है , उसकी कीमत क्या है। यही जानने को आर्या यहॉं आई है।

विदूषक -: भो! : भणितं मया -यथा अल्पमूल्या रत्नावली, बहुमूल्यं सुवर्णभाण्डकम्, न परितुष्टा, अपरं मार्गयितुमागता।

विदूषक) -धीरे से अजी, मैने तो पहले ही कहा था कि रत्नहार की कीमत इसके आभूषण से कम है, वही वसूलने को यह आई है।

चेटी -सा खलु आर्यया आत्मीयेति भणित्वा द्यूते हारिता स च सभिको राजवार्त्ताहारी न ज्ञायते कुत्र गत इति।

चेटी -उस रत्नहार को अपना समझकर वसन्तसेना जुए में उसे हार गई। उस जुए का सभाध्यक्ष पता नहीं कहॉं चला गया।

विदूषक -भवति! मन्त्रितमेव मन्त्र्यते।

विदूषक सोचता है।

चेटी -यावत् सोऽन्विष्यते, तावदिदमेव गृहाण सुवर्णभाण्डकम्।

चेटी -जब तक उस सभाध्यक्ष को खोजा जा रहा है तब तक आप इस सुवर्ण भाण्ड को ही अपने पास रख लें। सुवर्णभाण्ड दिखलाती है।

चेटी -अतिमात्रमार्यो निष्यायति, तत् किं दृष्टपूर्व ते ?

चेटी -आप इसे बहुत दृष्टि गड़ाकर देख रहे है, क्या पहले भी कभी आपने इसे देखा है ?

विदूषक -श्रीमती जी, रत्नहार देते समय मैंने जो कुछ कहा है, आप उसे ही दुहरा रही है।

विदूषक -:भवति! शिल्पकुशलतया अवबध्नाति दृष्टिम्।

हिन्दी अनुवाद -विदूषक -अरी महरानी ,मैं तो इसकी कारीगरी को देख रहा हूँ ।

चेटी -आर्य ! वक ञ्चितोऽसि दृष्टया। तदेवैतत् सुवर्णभाण्डकम्।

चेटी -आर्य, आपकी ऑंखे धोखा दे रही है। यह वही सुवर्णभाण्ड है।

विदूषक -:भो वयस्य! तदेवैतत् सुवर्णभाण्डम्, यदस्माकं गेहे चौरैरपहृतम्।

विदूषक - खुशी के साथ (हे मित्र, यह वही सुवर्णभाण्ड है, जिसे हमारे घर से चोरों ने चुरा लिया था।

चारूदत्त -वयस्य!

योऽस्माभिश्चिन्तितो व्याज :कर्त्तुं न्यासप्रतिक्रियाम्।
स एव प्रस्तुतोऽस्माकं किन्तु सत्यं विडम्बना ।।39।।

अन्वय -:न्यासप्रतिक्रियाम्, अस्माभि:, य:, व्याज:, चिन्तित:, असमाकम्, स :एव व्याज:, प्रस्तुत :किन्तु, विडम्बना इति सत्यम् **।।39।।**

चारूदत्त -मित्र!

सुवर्णभाण्ड धरोहर के लिए हमने जो कपट किया था; रत्नहार के सम्ब्न्ध में इसने भी यही उपस्थित किया है। किन्तु यह एक छलावा है सच नहीं **।।39।।**

विदूषक -:भो वयस्य! सत्यं, शपे ब्राह्मण्येन।

विदूषक -हे मित्र , मैं ब्राह्मणत्व की शपथ खाकर कहता हूँ यह वही आभूषण है।

चारूदत्त -:प्रियं न :प्रियम्

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त -यह तो खुश खबरी है।

विदूषक -:भो! : पृच्छामि ननु कुत इदं समासादितमिति ?

विदूषक -कान में (मैं इससे पूछता हूँ – 'इसने इसे कहॉ पाया।'

चारूदत्त -:को दोष :?

चारूदत्त -इसमें भला क्या हर्ज है ?

विदूषक -:एवमिव।

विदूषक - चेटी के कान में (ऐसी बात है) हमारे घर से चुरा कर किसी ने उन्हें दे दिया

चेटी -एवमिव।

चेटी -विदूषक के कान में (हॉ, भई बात कुछ वैसी ही है।

चारूदत्त -: किमिदं कथ्यते ?। किं वयं बाह्या :?

चारूदत्त -आप दोनों कानाफूसी क्यों कर रहे हैं ? क्या हम पराये है ?

विदूषक -: एवमि व।

विदूषक -चारूदत्त् के कान में बात ऐसी ही है।

चारूदत्त -: भद्रे! सत्यं तदेवेदं सुवर्णभाण्डम् ?

चारूदत्त -क्यों कल्याणि, यही बात है।

चेटी -आर्य! अथ किम् ?

चेटी -हॉ, महाशय यह वही आभूषण है।

चारूदत्त -:भद्रे! न कदाचित् प्रियनिवेदनं प्रियनिवेदनं निष्फलीकृतं मया। तदृह्यतां पारितोषिकमिदमङ्गुलीयम्।

इत्यनङ्गुलीयकं इस्तमवलोक्य लज्जां नाटयति

चारूदत्त -भद्रे, मैंने कभी किसी के प्रियवचन खाली नहीं जाने दिया, लो यह अँगूठी तुम्हारा पुरस्कार है। हाथ में अँगूठी नहीं देखकर लज्जा का अभिनय करता है।

वसन्तसेना -अत एव काम्यसे।

वसन्तसेना -मन ही मन तुम्हारी इसी अदा पर तो फिदा हूँ।

चारूदत्त -:जनान्तिकम् भो! : कष्टम्।

धनैर्वियुक्तसय नरस्य लोके किं जीवितेनादित एव तावत्।
यस्य प्रतीकारनिरर्थकत्वात् कोपप्रसादा विफलीभवन्ति ।।40।।

अपि च -

पक्षविकलश्च पक्षी, शष्कश्च तरू :सरश्च जलहीनम्।
सर्पश्चोद्धृतदंष्ट्रस्तुल्यं लोके दरिद्रश्च ।।41।।

अन्वय:- लोके, धनैः, वियुक्तस्य , नरस्य ,आदित, एव, जीवितेन, किम् , तावत्, प्रतीकारनिरर्थकत्वात्, यस्य, कोपप्रसादाः, विफलीभवन्ति **।।40।।**

अन्वय -:पक्षविकलः, पक्षी, च, शुष्कः, तरूः, च, जलहीनम्, सरः, च, उद्धृतदंष्ट्रः, सर्पः, दरिद्र :च, लोके, तुल्यम्, **भवति ।।41।।**

चारूदत्त -धीरे से (खेद है-

संसार में गरीबों का जन्म ही बेकार है। क्योंकि , वह किसी पर न तो खुश होकर कुछ दे ही सकता है और न बिगड़ कर कुछ बिगाड़ ही सकता है।।40।।

और भी -संसार में गरीबों की जिन्दगी, पंखहीन पखेरू, सूखे पेड़, सूखे तालाब एवं विषदन्त विहीन सॉप की तरह बेकाम है **।।41।।**

अपि च-

शून्यैर्गृ है :खलु समा :पुरूषा दरिद्रा :
कूपैश्च तोयरहितैस्तयभिश्च शीर्णे :।
यद् कृष्टपूर्व-जन-सङ्गम -विस्मृताना-
मेवं भवन्ति विफला :परितोषकाला :।।42।।

अन्वय : शूनयैः, गृहैः, तोयरहितैः, कूपैः, शीर्णैः, तरूभिश्च, समा :दरिद्रा :पुरूषा :खलु, यद्, दृष्टपूजनसङ्गमविसमृतानाम्, परितोषकालाः, एवं विफला :भवन्ति ।।42।।

हिन्दी अनुवाद -और भी - गरीब आदमी तो सूने घर, सूखे पेड़ , जलहीन कुँए की तरह बेकार हैं जिन्हें पूर्वपरिचित लोग भी पहचान नही पाते। खुश होकर भी वे किसी को कुछ दे नहीं पाते **।।42।।**

विदूषक -:भो! : अलमतिमात्रं सन्तापितेन। भवति ! समर्प्यतां मम स्नानशाटिका।

विदूषक -भाई बककार पछताने से अब क्या फायदा ? सबको सुनाकर, हँसते हुए श्रीमति जी, अब तो हमारी स्नान साड़ी लौटा दीजिए।

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त! युक्तं नेदम् अनया रत्नावल्या इमं जनं तूलयितुम्।

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त, रत्नहार भेजकर अपने जो मुझे तौलने की चेष्टा की, वह उचित नहीं है।

चारूदत्त -सविलक्षस्मितम् वसन्तसेने! पश्य पश्य –

क :श्रद्धास्यति भूतार्थ सर्वो मां तूलयिष्यति।

शड्कनीया हि लोकेऽस्मिन् निष्प्रतापा दरिद्रता ।।43।।

अन्वय - :क:, भूतार्थम्, श्रद्धास्यति , सर्व:, माम्, तूलयिष्यति, हि, अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शड्कनीया **।।43।।**

हिन्दी अनुवाद-चारूदत्त-लजाते हुए, मुस्कुराकर देखो, वसन्तसेने।

हमारी बात पर भला विश्वास ही कौन करता ? सभी तो मुझे ही बेइमान समझते। क्योंकि, इस संसार में गरीबी सबके सन्देह का घर **है ।।43।।**

विदूषक -:हञ्जे किं भवत्या इहैव स्वप्तव्यम् ?

विदूषक -चेटी जी, आपकी श्रीमती वसन्तसेना रात में यही सोयेगी क्या ?

चेटी-आर्य मैत्रेय! अतिमात्रमिदानीम् ऋजुमात्मानं दर्शयसि।

चेटी -हंसकर आर्यमैत्रेय, इतने भोले-भाले क्यों बन रहे हो ?

विदूषक -:भो वयस्य! एष खलु अपसारयन्निव सुखोपविष्टं जनं पुनरपि विस्तारिवारि-धाराभि : प्रविष्ट :पर्जन्य :।

विदूषक -मित्र, देखते नहीं , सुख से बैठे लोगों को हटाते हुए ये बादल अपनी बढती हुई जलधारा के साथ घिर आये हैं।

चारूदत्त -सम्यगाह भवान्।

चारूदत्त -ठीक कहते हो, मित्र!

अमूर्हि भित्वा जलदान्तराणि पड्कान्तराणीव मृणालसूच्य :।

पतन्ति चन्द्रव्यसनाद्विमुक्ता दिवोऽश्रुधारा इव वारिधारा :।।44।।

अपि च -

धाराभिरार्यजनचित्तसुनिर्म्मलाभि -

श्चण्डाभिरर्जुन-शर-प्रतिकर्कशाभि-:

मेघा :स्रवन्ति बलदेव-पट-प्रकाशा :

शक्रस्य मौक्तिकनिधानमिवोद्गिरन्त :।।45।।

अन्वय -हि, अमू:, वारिधारा:, मृणालसूच्य :पड्कान्तराणि,इव, जलदान्तराणि, भित्वा, चन्द्रव्यसनात्, विमुक्ता:, दिव:, अश्रुधारा :इव पतन्ति **।।44।।**

अन्वय -:बलदेवपटप्रकाशा:, मेघा :आर्यजनचित्तसुनिर्मलाभि:, अर्जुनशरप्रतिकर्कशाभि:, चण्डाभि:, धाराभि:, शक्रस्य, मौक्तिकनिधानम्, उदगिरन्त:, इव, स्रवन्ति **।।45।।**

हिन्दी अनुवाद -निश्चय ही कीचड़ को चीरकर निकली कमललता की जड़ के अंकुर की तरह बादल के पेट को चीरकर निकली ये जलधाराएँ आकाश की ऑंखों से चूते मानो ऑंसू की

धारा है अपने प्रेमी चन्द्रमा पर आई विपत्ति के कारण ही उसने ऐसा किया है ।।44।।

हिन्दी अनुवाद – और भी बलदेवजी के नीले वस्त्रों की कान्ति की तरह ये मेघ सज्जनों के चित्त की तरह निर्मल तथा अर्जुन के प्रचण्डबाणों की तरह कठोर एवं तीखी धाराओं से मानों इन्द्र के मोतियों के खजाने को लुटा रहा है ।।45।।

14.3. 3श्लोक संख्या 46 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

प्रिये ! पश्य पश्य -

एतै :पिष्ट-तमाल-वर्णकनिभैरालिप्तमम्भोधरै :
संसक्तैरूपवीजितं सुरभिभि :शीतै :प्रदोषानिलै:।
एषाऽम्भोद-समागम-प्रणयिनी स्वच्छन्दमभ्यागता
रक्ता कान्तमिवाम्बरं प्रियतमा विद्युत् समालिङ्गित ।।46।।

वसन्तसेना श्रृङ्गारभावं नाटयन्ती चारूदत्तमालिङ्गति। (चारूदत्त्) -:स्पर्श नाटयन्, प्रत्यलिङ्गय

भो मेघ ! गम्भीरतरं नद त्वं तव प्रसादात् स्मरपीडितं मे ।
संस्पर्शरोमाचितजातरागं कदम्बपुष्पत्वमुपैति गात्रय् ।।47।।

अन्वय– : अम्भोदसमागमप्रणयिनी, स्वच्छन्दम्, अभ्यागता, रक्ता, प्रियतमा, इव, एषा, विद्युत्, पिष्टतमालवर्णकनिभै:, एतै:, अम्भोधरै:, आलिप्तम्, संसक्तै :सुरभिभि:, शीतै:, प्रदोषानिलै:, उपवीजितम्, च, कान्तम्, इव, अम्बराम् समालिङ्गति ।। 46।।

अन्वय-:भो मेघ , त्वम्, गम्भीरतरम्,नद । तव, प्रसादात्, स्मरपीडितम्, में, गात्रम्, संस्पर्शरोमाञ्चितजातरागम्, कदम्बपुष्पत्वम् उपैति ।।47।।

हिन्दी अनुवाद -प्रिये, देखो देखो -मेघ के संगम की प्रबल इच्छावाली, अपनी इच्छा से आई हुई, अनुरक्ता यह विजली रूपी प्रियतमा, पत्थरों पर कूटे तमालपत्र की तरह काले मेघों से अनुलिप्त तथा एकीभूत सुरभित, शीतल सान्ध्यपवन से पंखा झले जाते हुए आकाशरूपी प्रियतम का आलिंगन कर रही है ।।46।।

वसन्तसेना कामुक भावना प्रदर्शित करती हुई चारूदत्त का आलिंगन करती है

चारूदत्त् -स्पर्श का अनुभव करते हुए आलिंगन करता है

हे मेघ, तुम और जोर से गरजो। तुम्हारी कृपा से काम पीडित मेरी देह वसन्तसेना के सम्पर्क से रोमांचित एवं पुलकित हो उठी है, लगता है जैसे कदम्बवृक्ष विकसित फूलों से लदा है ।47।।

वर्षशतमस्तु दुर्दिनमविरतधारं शतह्रदा स्फुरतु।
अस्मद्विधदुर्लभया यदहं प्रियया परिष्वक्त :।।48।।

अपि च -वयस्य !

धन्यानि तेषां खलु जीवितानि ये कामिनीनां गृहमागतानाम्।
आर्द्राणि मेधोदकशीलानि गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति ।।49।।

अन्वय -:अविरतधारम्, दुर्दिनम्, वर्षशतम् अस्तु, शतह्रदा, स्फुरतु, यत्, अहम्, अस्मद्विधदुर्लभ्या, प्रियया, परिष्वक्ता :**॥48॥**

अन्वय - :तेषाम्, जीवितानि, खलु, धन्यानि, ये गृहम्, आगतानाम्, कामिनीनाम्, मेघोदकशीतलानि, गात्राणि , गात्रेणि, गात्रेषु, परिष्वजन्ति **॥49॥**

हिन्दी में अनुवाद -लगातार मेघ सैकड़ों साल तक बरसते रहें , विजलियॉं चमकती रहें, क्योंकि , मेरे जैसे गरीब के लिए दुर्लभकामिनी वसन्तसेना ने इसी दुर्दिन के कारण मुझे आलिंगित किया है **॥48॥**

और भी मित्र -!उन्हीं लोगों का जीवन धन्य है जिसके दरवाजे पर वर्षा में भीगकर अपनी इच्छा से कोई कामिनी उपस्थित हो तथा भीगी और ठंडी अपनी देह को बाहों में जकड़कर गर्मी पहुँचाने का उन्हें मौका दे ॥49॥

विदूषक -:दास्या :पुत्र! दुर्दिन ! अनार्य इदानीमसि त्वम्, यदत्र भवती विद्युता भाययसि।

विदूषक-अरे दासीपुत्र दुर्दिन, तुम बड़े दुष्ट हो , अपनी बिजली से अकारण श्रीमती वसन्तसेना को डरा रहे हो।

चारूदत्त -:वयस्य! नार्हस्युपालब्धुम्

चारूदत्त – मित्र , इस तरह इस मेघ को नहीं कोसना चाहिए।

प्रिय ! वसन्तसेने !

स्तम्भेषु प्रचलित-वेदि -सञ्चयान्तं
शीर्णत्वात् कथमपि धार्यते वितानम्।
एषा च स्फुटित -सुधा-द्रवानुलेपात्
संक्लिन्ना सलिल-भरेण चित्रभित्ति:॥50॥

ऊद्र्ध्वमवलोक्य अये! इन्द्रधनु :। प्रिये! पश्य पश्य –

विद्युज्जिह्वेनेदं महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभजेन।
जलधर-विवृद्ध-हनुना विजृम्भितमिवान्तरीक्षेण ॥51॥

अन्वय -:प्रचलितवेदिसञ्चयान्तम्, वितानम्, शीर्णत्वात्, स्तम्भेषु, कथमपि, धार्यते, एषा, चित्रभित्ति:, च, स्फुटितसुधाद्रवानुलेपात्, सलिलभरेण, सङ्क्लिन्ना ॥50॥

अन्वय- :विद्युज्जिह्वेन, महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभुजेन, जलधरविवृद्धहनुना, अन्तरीक्षेण, विजृम्भितम्,**॥51॥**

हिन्दी अनुवाद -प्रिय वसन्तसेने - !वेदिकाओं के भीतरी भागवाला पुराना वितान हवा की झोंकों से कॉंप रहा है। उसके भार को ये पुराने खूँटे अब ढो नहीं रहे हैं और ये भित्ति चित्र भी चूना गलने के कारण भीतर से बलबला उठे है **॥50॥**

ऊपर की ओर देखकर अहा,प्रियतमे देखो तो -

लगता है जैसे मेघ नहीं बरस रहा है बल्कि आकाश ने मुँह खोलकर जंभाई ली है। लाल-लाल विजलियॉं ही इनकी लपलपाती जीभ हैं, इन्द्रधनुष ही इनकी विशाल बाहें हैं, मेघ का

फैलाव ही इनकी दाढी है **।।51।।**

तदेहि, अभ्यन्तरमेव प्रविशाव :। इत्युत्थाय परिक्रमति।

तालीषु तारं विटपेषु मन्द्रं शिलासु रूक्षं सलिलेषु चण्डम्।

संगीतवीणा इव ताडयमानास्तालानुसारेण पतिन्त धारा :।।52।।

अन्वय-:तालानुसारेण, ताडयामाना:, संगीतवीणा, इव, धारा, तालीषु, तारम्, विटपेषु मन्द्रम्, शिलासु, रूक्षम्, सलिलेषु चण्डम्, पतन्ति **।।52।।**

इसलिए चलो अब हमलोग भीतर ही चलें। उठकर घूमता है।

बरसा की धारा ताल के पत्तों पर ऊँची आवाज से, पेडों की डालियों पर गंभीर, पत्थर की चट्टानों पर कर्कश तथा जल में प्रचण्डध्वनि के साथ बजायी गई संगीत वीणा की तरह तालlय के साथ गिर रही हैं **।।52।।** सब निकल जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न –

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर सही उत्तर दीजिए।

1. जलधर का अर्थ होता है।

क . हवा ख. पृथ्वी ग. मेघ घ. वर्षा

2. वर्षति का शब्दार्थ है –

क. बरसाता है ख . बरस गया है ग . बरसता है घ . वर्षा

3. शक्र शब्द प्रयुक्त हुआ है -

क . राजा के लिए ख . इन्द्र के लिए ग . विष्णु के लिए घ . परशुराम के लिए

4. प्रदोष शब्द का तात्पर्य है –

क.संध्या ख . रात्रि का मुख ग . अर्धरात्रि घ . कोई नहीं

निम्नलिखित के एक शब्द मेंउत्तर दीजीए -

1. चारूदत्त ने विशाल लोचना किसे कहा है-
2. ब्रह्मत्व की शपथ कौन खाता है-
3. गरीब लोग किसकी तरह बेकार है -
4. वसन्तसेना ने चारूदत्त का अलिंगन किस कारण किया
5. सलिल का अर्थ है -

14.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि सबसे पहले वसन्तसेना कहती -

और भी देखिये -पहले पहल सम्पत्तिपाये पुरूष की तरह ये बादल अनेक रूप धारण कर रहा है। कभी तो ऊपर उठकर सारे आकाश को घेर लेता है और कभी नीचे की ओर झूककर फैल जाताहै। कभी वरसता है तो कभी गरजताहै। कभी घोर अन्धकार से सम्पूर्ण आकाश के आयाम को ढँक लेताहै ।जिस पर जबाव देते हुए विट कहता है -बात तो ऐसी ही है -

आकाश, मानो विजलियों से जल रहा है; बगुलों की सैकड़ो पॉतों से खिलखिलाकर हंस रहा है, धारारूपी बाणों को वर्षाकर इन्द्रधनुष उठाये पैतरा बदल रहा है, बज्रनिर्घोष से सिंहनाद कर रहा है, वायु के रूप में क्रुद्धहोकर घूम रहा है, करैत सॉप की तरह काले बादलों से कृष्ण धूम सेवन कर रहा है। इन्हीं सब सम्वादों के क्रम में चारूदत्त और वसन्तसेना तथा विदूषक आदि के सम्वादों के साथ इस प्रकार पंचम्अंक की समाप्ति होती है जैसे -चारूदत्त का यह कथन -लगातार मेघ सैकड़ों साल तक बरसते रहें , विजलियॉ चमकती रहें, क्योंकि , मेरे जैसे गरीब के लिए दुर्लभकामिनी वसन्तसेना ने इसी दुर्दिन के कारण मुझे आलिङ्गत किया है।

और भी मित्र -!उन्हीं लोगों का जीवन धन्य है जिसके दरवाजे पर वर्षा में भीगकर अपनी इच्छा से कोई कामिनी उपस्थित हो तथा भीगी और ठंडी अपनी देह को बाहों में जकड़कर गर्मी पहुँचाने का उन्हें मौका दे। बरसा की धारा ताल के पत्तों पर ऊँची आवाज से, पेडों की डालियों पर गंभीर, पत्थत की चट्टानों पर कर्कश तथा जल में प्रचण्डध्वनि के साथ बजायी गई संगीत वीणा की तरह तालlय के साथ गिर रही हैं। अत :प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप पंचम अंक की विशेषताओं को बताते हुए यह भी समझा सकेगें की चारूदत्त और वसन्तसेना का मिलन किस प्रकारहोता है।

14. 5 पारिभाषिक शब्दावली

तालीषु – ताल के पत्तों पर

रूक्षं - कर्कश

प्रसादात् – कृपा से

प्रदोषनिलै: - सांयकाल की हवाओं से

वर्षोदकम् - वर्षा के जल को

14. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग मेघ 2.ग बरसता है 3.ख इन्द्र के लिए 4. ख रात्रि का मुख

1.वसन्तसेना 2 .विदूषक 3.जलहीन कुआ 4. दुर्दिन 5.जल

14.7 संदर्भग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् –हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी 2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

14. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्लोक संख्या 27,28, एवं 32का संदर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. इस इकाई के आधार पर मेघ एवं वर्षा वर्णनकी व्याख्या कीजिए।
3. पठितअंश के आधार दुर्दिन का वर्णन कीजिए।

इकाई -15 षष्ठअंक श्लोक 1 से 14 तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

15. 1प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15. 3 श्लोक संख्या 1 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
15.3. 1श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
15.3. 2श्लोक संख्या 6 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
15.3. 3श्लोक संख्या 11 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
15. 4सारांश
15. 5पारिभाषिक शब्दावली
15. 6अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
15. 7सन्दर्भ ग्रन्थ
15. 8निबन्धात्मक प्रश्न

15. 1 प्रस्तावना

चेटी के द्वारा वसन्तसेना को जगाये जाने का मंच पर अभिनय करते हुए मृच्छकिटम् के छठे अंक का प्रारम्भ हुआ है उसी वर्णन के संबन्ध में श्लोक संख्या 1से लेकर 14 तक के सम्वादों का अध्ययन इस इकाई के अन्तर्गत आपको करना है। चेटी और वसन्तसेना का सम्वाद रदनिका और बालक के सम्वाद श्लोक संख्या 1 के पूर्व प्राप्त हैं।

चेट का कथन श्लोक संख्या 1से प्रारम्भ होकर आर्यक के साथ युग्मक और वीरक के सम्वादों से होता हुआ आगे चन्दनक के वार्तालाप को प्राप्त करता है इन्ही सब सम्वादों के मध्य श्लोक संख्या के 14 तक के वर्णन सीमित हैं।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप यह बतायेगें कि छठे अंक के इन पात्रों के कथनों में कितना शिष्टाचार,कितनी सामाजिक विशेषताए और कितने प्रकार के साहित्यिक वैशिष्ट्य बताये गये हैं।

15. 2 उद्देश्य

छठे अंक के आधे अंश से सम्बन्धित इस इकाई का अध्ययन करने के बाद यह बतायेंगे कि-

- वसन्तसेना बैलगाडी द्वारा कहॉ गयी।
- रदनिका का क्या सम्बन्ध है।
- बालक नामक पात्र की क्या भूमिका है।
- रदनिका और वसन्तसेना के बीच वार्तालाप क्या है।
- चौदह श्लोक तक सम्पूर्ण सम्वाद का क्या तात्पर्य है।

15. 3 श्लोक संख्या 1 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

इस इकाई के अन्तर्गत मृच्छकटिकम् के छठे अंक में मिट्टी की गाड़ी का तात्पर्य परिलक्षित होगा जिसमें विभिन्न पात्रों के सम्वादों से परिचित होते हुए प्रकरणनाटक की सम्पूर्ण नाटकीयता को समझने का पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अन्य सम्वादों में भी बहुत से शिष्टाचार प्राप्त होते है।

15.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

संस्कृत भाग – पात्रों का सम्वाद

तत :प्रविशति चेटी।

चेटी- कथमद्यापि आर्या न विवुध्यते। भवतु, प्रविश्य प्रतिबोधयिष्यामि।

तत :प्रविशति आच्छादितशरीरा प्रसुप्ता वसन्तसेना।

चेटी -उत्तिष्ठतु उत्तिष्ठतु आर्या। प्रभातं संवृत्तम्।

वसन्तसेना –कथं रात्रिरेव प्रभातं आर्याया :पुना रात्रिरेव।

वसन्तसेना कस्मिन् पुनर्युष्मार्क द्यूतकर :?

चेटी -आर्ये! वर्द्धमानकं समादिश्य पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं गत आर्य चारूदत्त :।

वसन्तसेना -किं समादिश्य ?

चेटी -योजय रात्रौ प्रवहणम्। वसन्तसेना गच्छतु इति।

वसन्तसेना -कस्मिन् मया गन्तव्यम् ?

चेटी -आर्ये! यस्मिन् चारूदत्त :।

वसन्तसेना -हञ्जे ! सुष्ठु न निध्यातो रात्रौ। तदद्य प्रत्यक्षं प्रेक्षिष्ये। हञ्जे ! किं प्रविष्टा अहमिह अभ्यन्तरचतु:शालकम् ?

चेटी -न के केवलमभ्यन्तरचतु:शालकम्, सर्वजनसयापि हृदयं प्रविष्टा।

वसन्तसेना -अपि सन्तप्यते चारूदत्तस्य परिजन :?

चेटी -सन्तप्स्यति।

वसन्तसेना -कदा?

चेटी –यदा आर्या गमिष्यति।

वसन्तसेना -ततो मया प्रथमं सन्तप्तव्यम्। हञ्जे ! गृहाण एतां रत्नावलीं मम भगिन्ये आर्याधूतायै गत्वा समर्पय, वक्तव्यञ्च 'अहं श्रीचारूदत्तस्य गुणनिर्जिता दासी ,तदा युष्माकमपि। तदेषा तवैवकण्ठाभरणं भवतु रत्नावली।

चेटी -आर्ये! कुपिष्यति चायदत्त आर्यायै तावत्।

वसन्तसेना -गच्छ ,न कुपिष्यति।

चेटी – यदाज्ञापयति। आर्ये ! भणत्यार्या धूता -'आर्यपुत्रेण युष्माकं प्रसादीकृता न युक्तं ममैतां ग्रहीतुम्। आर्यपुत्र एव मम आभरणविशेष इति जानातु भवती।

रदनिका -एहि वत्स! शकटिकया क्रीडाव:।

दारक -:रदनिके! किं मम एतयामृत्तिकाशकटिकया; तामेव सौवर्णशकटिका देहि।

रदनिका -जात! कुतोऽस्माकं सुवर्णव्यवहार :? तातस्य पुनरपि ऋद्धया सुवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि। तद्यावद्विनोदयाम्येनम्। आर्याया वसन्तसेनाया :समीपमुपसर्पिव्यामि। आर्ये! प्रणमामि।

वसन्तसेना -रदनिके! स्वागतं ते। कस्य पुनरयं दारक :? अनलङ्.कृतशरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।

रदनिका -एष खलु आर्यचारूदत्तस्य पुत्रो रोहसेनो नाम।

वसन्तसेना -एहि मे पुत्रक! आलिङ्.ग। अनुकृतमनेन पितु :रूपम्।

रदनिका -न केवलं रूपम्, शीलमपि तर्कयामि। एतेन आर्य चायदत्त आत्मानं विनोदयति।

वसन्तसेना -अथ किंनिमित्तमेष रोदिति।

रदनिका -एतेन प्रतिवेशिकगृहपति-दारकस्य सुवर्णशकटिकया क्रीडितम्। तेन चसा नीता। तत : पुनस्तां मार्गयतो सयेयं मृत्तिकाशकटिका कृत्वा दत्ता। ततो भणति -'रदनिके! किं मम

एतयामृत्तिका-शकटिकया, तामेव सौवण-शकटिका देहि' इति ।

वसन्तसेना -हा धिक्, हा धिक ! अयमपि नाम परसम्पत्या सन्तप्यते। भगवन् ! कृतान्त ! पुष्करपत्र -पतित- जलबिन्दु - सदृशै:क्रीडसि त्वं पुरूषभागधेयै :। जात! मा रूदिहि, सौवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि ।

दारक - :रदनिक! का एषा ?

वसन्तसेना -पितुस्ते गुणनिर्जिता दासी ।

रदनिका -जात! आर्या ते जननी भवति ।

दारक -:रदनिके! अलीकं त्वं भणसि, यद्यस्माकमार्या जननी , तत् केन अलंकृता ?

वसन्तसेना -जात! मुग्धेन अतिकरूणं मन्त्रयसि। एषां इदानी ते जननी संवृत्ता । तद् गृहाणैतमलङ्.कारकम्, सौवर्णशकटिका घटय।

दारक -:अपेहि, न ग्रहीष्यामि, रोदिषि त्वम् ।

वसन्तसेना -जात! न रोदिष्यामि। गच्छ् क्रीड । जात ! कारय सौवर्णशकटिकाम् ।

इति दारकमादाय निष्क्रान्ता रदनिका।प्रविश्य प्रवहणाधिरूढ :।

चेट -रदनिके, रदनिके! निवेदय आर्यायै वसन्तसेनायै-'अपवारितं पक्षद्वारके सज्जं प्रवहणं तिष्ठति '।

रदनिका -आर्ये! एष बर्द्धमानको विज्ञापयति -'पक्षद्वारे सज्जं प्रवहणम्' इति।

वसन्तसेना -हञ्जे! तिष्ठतु मुहूर्त्तकम्, यावदहमात्मानं प्रसाधयामि।

रदनिका -वर्द्धमानक! तिष्ठ मुहूत्तर्कम् । यावदार्या आत्मानं प्रसाध्यति।

चेट -:ही ही भो! : मयापि यानास्तरणं विस्मृतम्, तत् यावद् गृहीत्वा आगच्छामि । एते **नस्यरज्जु-कटुका बलीबर्द्दा:। भवतु प्रवहणेनैव गतागति करिष्यामि।**

वसन्तसेना -हञ्जे ! उपनय मे प्रसाधनम्, आत्मानं प्रसाधयिष्यामि। ।

चेट -:आज्ञप्तोऽस्मि राज-श्यालक-संस्थानेन-'स्थावरक! प्रवहणं गृहीत्वा पुष्पकरण्डकं जीणोद्यानं त्वरितमागच्छ ' इति । भवतु, तत्रैव गच्छामि। बहतं बलवदौ :। वहतम् कथं ग्रामशकटै :रूद्धो मार्ग:। किमिदानीमत्र करिष्यामि ? इति। एतद् राजश्यालक संसथानस्य प्रवहणमिति ।तत् शीघ्रमपसरत । कथम् एष :अपर :सभिकमिव मां प्रेक्ष्य सहसैव द्युतप इव द्युतकर :अपवार्यात्मानम् अन्यत :अपक्रान्त:। तत् क :पुनरेष:? अथवा किं मम एतेन ? त्वरितं गमिष्यामि । अरे रे राज-श्यालक-संस्थानस्य अहं शूर:, चक्रपरिवृत्ति दास्यामि ? अथवा एष एकाकी तपस्वी ।तदेवं करोमि, एतत् प्रवहणमार्यचारूदत्तस्य वृक्षवाटिकाया :पक्षद्वार के स्थापयामि । एषोऽस्मि आगत:।

चेटी -आर्ये! नेमिशब्द इव श्रुयते, तदागतं प्रवहणम् ।

वसन्तसेना -हञ्जे ! गच्छ, त्वरते मे हृदयम्। तदादेशय पक्षद्वारकम् ।

चेटी -एतु एतु आर्या ।

वसन्तसेना -किंन्विदस्फुरति दक्षिणं लोचनम् ? अथवा चारूदत्तस्यैव दर्शनमनिमित्तं प्रमार्जयिष्यति ।

स्थावरकश्चेट - :अपसारिता मया शकटा:। तद् यावद् गच्छामि। भारिकं प्रवहणम्। अथवा चक्र-परिवृत्तिकया परिश्रन्तस्य भारिकं प्रवहणं प्रतिभासते। भवतु , गमिष्यामि । यातं गावौ ! यातम्। अरे रे दौवारिका! : अप्रमत्ता :स्वकेषु स्वकेषु गुल्मस्थानेषु भवत। एषोऽद्य गोपालदारको गुप्तिं भड्.कत्वा, गुप्तिपालकंव्यापाद्य,बन्धनं भित्वा, परिभ्रष्ट :अपक्रामति। तद्गृह्णीत।

संस्कृत से हिन्दी भाग – पात्रों का सम्वाद

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद मंच पर चेटी का प्रवेश

चेटी-क्या कभी तक आर्या वसन्तसेना सोयी है ? अच्छा चलकर उन्हें जगाती हूँ। अभिनय पूर्वक मंच पर घूमती है। इसके बाद चादर से देह ढँककर वसन्तसेना सोई हुई दिखलाई पड़ती है।

चेटी- देखकर (आर्ये, उठो , उठो सवेरा हो गया।

वसन्सेना- जगकर (क्या रात ही भोर हो गई है ?

चेटी – हमलोगं के लिए तो सबेरा हो गया , किन्तु श्रीमति के लिए अभी रात है ही।

वसन्तसेना -अच्छा तो तुम्हारे जुआरी जी कहॉ चले गये ?

चेटी -वर्द्धमानक को हुक्म देकर स्वयं आर्य चारूदत्त पुष्पकरण्डक नामक पुरानी वाटिका में गये है। वसन्तसेना -क्या कहकर गये है ?

चेटी -अगली रात के लिए बैलगाड़ी ठीक करो। आर्या वसन्तसेना उस पर सवार होकर जायेगी।

वसन्तसेना-अरी, मुझे कहॉ जाना होगा ?

चेटी -मान्ये, जहॉ आर्य चारूदत्त गये है।

वसन्तसेना -चेटी को गले लगाकर (रात में उन्हें मैने ठीक से नहीं देखा, अत :आज दिन में उन्हें अच्छी तरह देखूंगी। सखी यह तो बतलाओ क्या मैं अभी उनके अन्त:पुर में हूँ ?

चेटी -केवल अन्त:पुर में ही नहीं, बल्कि आप हम सबों के दिल में समा गई हैं।

वसन्तसेना -क्या आर्य चारूदत्त के परिचर हमारे यहॉ आने से दु:खी है ?

चेटी – है नहीं , पर दु:खी होंगे।

वसन्सेना -कब ?

चेटी -जब आप यहॉ से जायेंगी ?

वसन्तसेना -तो सबसे पहले तो मुझे ही दु:खी होना चाहिए। विनम्र भाव से सखि, यह रत्नहार लो और मेरी ओर से मेरी बहन, आर्य चारूदत्त की धर्मपत्नी आर्या धूता को सौप दो। उनसे कहना-आर्य, चारूदत्त के गुणों से खिचकर मैं उनकी दासी बनकर यहॉ आई हूँ। मैं उनकी दासी हूँ, अत :आर्या धूता की भी दासी हूँ। इस लिए यह रत्नहार उनके गले ही शोभेगा।

चेटी -आर्ये, तो फिर आर्य चारूदत्त मान्या धूता पर नाराज होगे।

वसन्तसेना -जाओ न, वे बिल्कुल नाराज नहीं होंगे।

चेटी -हार लेकर (अब आप जैसा कहे) बाहर निकल जाती है और कुछ क्षण के बाद पुन : लौटकर आ जाती है। उनका कहना है कि 'आर्यपुत्र ने प्रसन्न होकर यह हार आपके दिया है, अत :इसे आप से पुन :लौटा लेना उचित नहीं। फिर उन्होने कहा कि आर्यपुत्र ही मेरे लिये

सर्वश्रेष्ठ आभूषण है, ऐसा आपको जानना चाहिए।
इसके बाद रदनिका बालक को लेकर मंच पर आती है।
रदनिका -आओ बेटे, इस गाडी से हम लोग खेले।
बालक –सकरूण भाव से (रदनिके, मुझे इस मिट्टी की गाडी से क्या मतलब? मुझे तो वही सोने वाली गाड़ी चाहिए।
रदनिका - गहरी साँस लेकर , दु:ख के साथ (बेटे , हमारे घर सोने का व्यवहार कहॉ ? तुम्हारे पिताजी पर जब भाग्यलक्ष्मी खुश होगी , तब फिर सोने की गाड़ी से खेलना। तो इस का तब तक जी बहलाऊँ। आर्या वसन्तसेना के पास ही ले चलूँ ? पास जाकर मान्ये , प्रणाम करती हूँ।
वसन्तसेना -आओ रदनिके , स्वागत है। यह बच्चा किसका है ? निराभरण होते हुए भी इसकी आकृति आकर्षक है। यह मेरे हृदय को आनन्दित कर रहा है।
रदनिका -यह आर्य चारूदत्त का पुत्र रोहसेन है।
वसन्तसेना - बॉहे फैलाकर (मेरे बेटे,आओ , गले लग जाओ।)गोद में बैठाकर इसने बिल्कुल पिता की आकृति पाई है।
रदनिका -केवल आकृति ही नहीं, मुझे लगता है इसने स्वभाव भी पिताका ही पाया है। आर्य चारूदत्त तो इसी से अपना मनोविनोद करते है।
वसन्तसेना -अच्छा तो यह रो क्यों रहा है ?
रदनिका -अपने पडोसी सेठ के बेटे की सोने की गाड़ी से यह अभी खेल चुका है। वह उस गाड़ी को ले गया है। फिर भी यह गाड़ी मॉगने लगा तो मिट्टी की गाड़ी बनाकर इसे मैंने दे दी है। तब यह कहता है मुझे मिट्टी की गाडी नहीं सोने वाली गाड़ी ही चाहिए।
वसन्तसेना -हाय,हाय यह भी तो दूसरों की सम्पत्ति से जल रहा है। हाय, विधाता, कमल के पत्ते पर गिरे पानी की बूँ दे की तरह मनुष्यों के भाग्य से खेला करते हो।)रोते हुए (बेटे ,मत रो, तुम भी सोने की गाड़ी से खेलोगे।
बालक-रदनिके, ये कौन है ?
वसन्तसेना -तुम्हारे पिता के गुणों से विजित एक दासी।
बालक -रदनिके , तुम झूठ बोलती हो। ये अगर मेरी मॉ होती तो भला इतने आभूषण क्यों पहनती।
वसन्तसेना -बेटे,इतने भोले-भाले मुख से ऐसी कारूणिक बाते क्यों बोल रहे हो।) शरीर से सारे आभूषण हटाकर रोती हुई,) लो , अब तो तुम्हारी मॉ बन गई। इन जेवरों को ले जाओं और इससेअपनी गाड़ी बनवा लो।
बालक-हटो, मैं नहीं लेता,तुम रो रही हो।
वसन्तसेना -ऑसू पोंछकर (बेटे , अब नही रोऊँगी , जाओ खेलो।)मिट्टी की गाड़ी को जेवरों से भर देती है। (इनसे सोने की गाड़ी बनवा लो।
बालक को लेकर रदनिका बाहर निकल जाती है।

गाड़ी पर बैठे चेट का प्रवेश।

चेट-रदनिके, मान्या वसन्तसेना से निवेदन करो, बगल के दरवाजे पर उनके जाने के लिए पर्दा लगी बैलगाड़ी खडी है।

रदनिका -भीतर जाकर (आर्ये, वर्धमानक निवेदन करता है कि बगल के दरवाजे पर बैलगाड़ी आपको ले जाने के लिए तैयार है।

वसन्तसेना -सखि, क्षणभर रोको, जरा मैं तैयार हो लूँ।

रदनिका -बाहर निकलकर (वर्धमानक, पल भर रूको। आर्या तैयार हो रही है।

चेट -अरे, मैं भी तो गाड़ी का गद्दा भूल आया हूँ, जब तक ये तैयार होती है, उसे मैं ले जाता हूँ। नाथे रहने के बाबजूद ये बैल चलने को छटपटा रहे है तो फिर क्यों न गाड़ी से गद्दा लेकर शीघ्र लौट आऊँ ।)इतना कहकर चेट गाड़ी लेकर चल देता है।

वसन्तसेना -सखि , मेरी प्रसाधन सामग्री तो ला दो, मैं अपने को तैयार कर लूँ। अपने को सजाती है। इसी बीच गाड़ी पर सवार स्थावरक चेट का प्रवेश।

चेट -राजा के साले संस्थानक ने जल्द गाड़ी लेकर पुष्पकरण्डक नामक पुराने बगीचे में पहुँचने को कहा है। तो फिर चलूँ। बढे चलो, बैलो ! बढे चलो। कुछ दूर चलकर और देखकर गॉव की गाड़ियों से तो राह खचाखच भरी है। तो अब क्या करूँ ?गर्व के साथ (अरे, ओ गाड़ीवानो हटो, रास्ता छोड़ो। सुनकर क्या कहा ? यह किसकी गाड़ी है? राजा से साले संस्थानक की यह गाड़ी है। जल्दी करो, रास्ता दो। देखकर जुए के सभाध्यक्ष को देखकर जुए से भागे जुआरी की तरह मुझे देखकर अपने को छिपाते हुए यह दूसरी ओर क्यों सरक गया ? अच्छा तो फिर यह कौन है ? अथवा इससे मुझे क्या मतलब ? शीघ्रतासे चला जाऊँ। अरे ओ गँवारो, हटो, रास्ते से हटो। क्यो कहा ? पलभर रूको। जरा पहिए में सहारा लगा दो। अरे तुम्हें पता है -मैं राजा के साले संस्थानक का वीर, भला मैं अपनी गाड़ी घूमा कर तुम्हारी गाड़ी के लिए रास्ता दूँ ?हाय, यह गरीब तो अकेला है। मुझे गाड़ी घूमा कर लेनाचाहिए।तो फिर अपनी गाड़ी आर्य चारूदत्त के बगीचे वाले दरवाजे पर घूमा कर रोक देता हूँ। गाड़ी को रोक कर (यह मैं आया।) चला जाता है।

चेटी-आर्ये सखि ,चलो न, मेरा चित्त चंचल हो रहा है। दरवाजे की राह दिखलाओ।

चेटी -इधर से, इधर से मान्या चलें।

वसन्तसेना –घूमकर सखि , अब तुम आराम करो।

चेटी -जैसी आपकी आज्ञा। चली जाती है।

वसन्तसेना –गाडीपर बैठते ही दाहिने ऑख फड़कती है। दाहिनी आँख क्यों फड़क रही है ?

अथवा –चारूदत्त के दर्शन से ही अनिष्ट का निवारण हो जायेगा।

स्थावरकचेट -प्रवेशकर (मैंने गाडियों को हटा दिया है। अब चलूँ।)अभिनयपूर्वकगाड़ी पर चढकर,उसे चलाक,मन ही मन (गाड़ी तो बोझिल मालूम पड़ती है। अथवा राह से गाड़ी हटाने के

कारण थके हुए मुझे गाड़ीभी भारी लगती है। अच्छा तो चलें। चलो, बैलों ! बडे चलो।

नेपथ्य में (अरे ओ सिपाहियों , अपनी चौकियों पर सावधान हो जाओं । यह अहीर का छोकडाआर्यक , जेल का फाटक तोड़कर, दरवाजे पर खडे सन्तरी की हत्या कर, कैद से छूटकर भागा जा रहा है। पकड़ो इसे पकड़ो।

प्रविश्य अपटीक्षेपेण सम्भ्रान्त एकचरणलग्ननिगडोऽवगुण्ठित आर्यक :परिभ्रमति

चेट -:महान् नगर्थां सम्भ्रम उत्पन्न:, तत् त्वरितं त्वरितं गमिष्यामि।

बिना पर्दा गिराये ही आर्यकका प्रवेश, एक पैर में लटकी बेड़ी तथा कपड़े से सारी देह ढँककर घबड़ाया हुआ-सा घूम रहा है।

चेट -मन ही मन अरे, शहर में तो चारों ओर आतंक फैल गया है। अत :यहॉ से जल्दी-जल्दी भाग निकलूँ चला जाता है।

आर्यक -:

हित्वाऽहं नरपतिबन्धनापदेश-

व्यापत्ति-व्यसन-महार्णवं महान्तम्।

पादाग्र-स्थित-निगडैक-पाश-कर्षी

प्रभ्रष्टो गज इव बन्धनाद् भ्रमामि ।।1।।

अन्वय महान्तम्,नरपतिबन्धनापदेशव्यापत्तिव्यसनमहार्णवम्,हित्वा, पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी, अहम्, बन्धनात्, प्रभ्रष्ट:, गज:, इव, भ्रमामि ।।1।।

आर्यक- राजा की कैद के बहाने से होने वाले आपत्तिपूर्ण संकट के विशाल सागर को पारकर , बन्धन को तोड़कर भागे हुए हाथी की तरह एक पैर में सिक्कड़ लटकाये इधर-उधर घूम रहा हूँ **।।1।।**

भो :अहं खलु सिद्धान्देश -जनित-परित्रासेन राज्ञा पालकेन घोषादानीय विशसने गूढागारे बन्धनेन बद्ध:। तस्माच्च प्रियसुहृच्छर्विलकप्रसादेन बन्धनात् परिभ्रष्टोऽस्मि। अश्रूणि विसृज्य।

भाग्यानि मे यदि तदा मम कोऽपराधो

यद्वन्यनाग इव संयमितोऽस्मि तेन।

दैवी च सिद्धिरपि लङ्घयितं न शक्या

गम्यो नृपो बलवता सह को विरोध :?।।2।।

अन्वय -:यदि, मे, भाग्ययानि, तदा, मम, क:, अपराध:, यत्, तेन, वन्यनाग:, इव, संयमित:, अस्मि ।दैवी, सिद्धि:,अपि, च, लङ्घ्यितुम्, नशक्या, नृप:, गम्य:, बलवता, सह क:, विरोध **?।।2।।**

हिन्दी अनुवाद -हाय, किसी त्रिकालदर्शी सिद्ध ने कह दिया -'आर्यक, राजा होगा' ।बस, इस भविष्यवाणी से डर कर राजा पालक ने मुझे घर से घसीटकर इस काल कोठरी में बेड़ी से जकड़ दिया। मेरे मित्र, शर्विलक ने मुझे उस कालकोठरी से आज मुक्त कराया है। बहते हुए ऑसुओं को पोछकर।

यदि मेरे भाग्य में ही लिखा है कि मैं राजा बनूँगा तो इसमें मेरा भला क्या कसूर है ? फिर भी

राजा ने मुझे बनैले हाथी की तरह पकड़ कर इस कारागार में क्यों बन्द कर दिया ? भाग्य में जो लिखा है वह तो होगा ही। फिर , राजा तो सबके लिए सेव्य है भला , बलवान् से विरोध कौन करना चाहेगा ?।।2।।

तत् कुत्र गच्छामि मन्दभाग्य :। विलोक्य इदं कस्यापि साधोरनावृतपक्षद्वारं गेहम्।
इदं गृहं भिन्नमदत्तदण्डो विशीर्णसन्धिश्च महाकपाट:।
ध्रुव्रं कुटुम्बी व्यसनाभिभूतां दशां प्रपन्नो मम तुल्यभाग्य :।।3।।

अन्वय - :इदम, गृहम्, भिन्नम्, विशीर्णसन्धि:, अदत्तदण्ड:, महाकपाट:, महाकपाट:, मम्, तुल्यभाग्य:, कुटुम्बी, ध्रुवम्, व्यसनाभिभूताम्,दशाम्, प्रपन्न:।

हिन्दी अनुवाद -हाय, मै अभागा हूँ , कहॉ जाऊँ ?) देखकर (यह किसी भले आदमी का घर मालूम पड़ता है, क्योंकि इसकी खिड़की की किवाड़े खुली है।

यह घर बड़ा ही पुराना लगता है, इसकों दीवार के जोड़ टूटे फूटे हैं, दरवाजे के किवाड़ों में किल्ली नहीं है। लगता है इस घर का मालिक भी मेरी तरह निश्चय ही अभागा है जो गरीबी की मार से आक्रान्त हो, इस स्थिति को प्राप्त किया है ।।3।।

तदत्र तावत् प्रविश्य तिष्ठामि।

नेपथ्ये जाध गोणा! जाध। यातं गावौ! यातम्।

इसलिए इसमें घुसकर शरण लेता हूँ।

नेपथ्य में बढे चलो, बैलो ! बढे चलो।

आर्यक -सुनकर (अरे, बैलगाड़ी तो इधर ही आ रही है।

आर्यक -:आकर्ण्य अये। प्रवहणमित एवाभिवर्त्तते।

भवेद् गोष्ठीयानं न च विषमशीलैरधिगतं
वधूसंयानं वा तदभिगमनोपस्थितमिदम्।
बर्हिनेतव्यं वा प्रवर-जन-योग्यं विधिवशाद्
विविक्तत्वाच्छून्यं मम खलु भवेद्देवविहितम् ।।4।।

अन्वय -:इदम्,विषमशीलै,अधिगतम्,गोष्ठीयानम्,न चभवेत्,शून्यम् वधूसंयानम्,तदभिगमनोप स्थितम् ,वा भवेत्विविक्तत्वात्,प्रवरजनयोग्यम्,विधिवशात्, बहिर्नेतव्यम्, दैवविहितम्, मम, भवेत् खलु ।।4।।

हिन्दी अनुवाद -यह गाड़ी किसी सामाजिक उत्सव में भाग लेने के लिए किसी असामाजिक व्यक्ति को नहीं ढो रही है, क्योंकि यह बिल्कुल शान्त लगती है। या, यह किसी नवोढा को ले जाने के लिए आई हो, अथवा किसी बड़े आदमी को कहीं पहुंचाने के लिए जा रही हो, अथवा भाग्य से मुझे ही बाहर निकालने के लिए आई हो ।।4।।

तत :प्रवहणेन सह प्रविश्य। इसके बाद गाड़ी लिये हुए बर्द्धमानक चेट उपस्थित होता है।

वर्द्धमानकश्चेट -:आश्चर्यम्! आनीतं मया यानास्तरणम्। रदनिके ! निवेदय आर्यायै बसन्तसेनाये 'अवस्थितं सज्जं प्रवहणम्, अधिरूह्य पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं गच्छतु आर्या।

बर्द्धमानकचेट – वाह , मैं तो गाड़ी का गद्दा लेकर लौट आया। रदनिके ! आर्या-वसन्तसेना से कह दो -गाड़ी तैयार है, आर्या चढकर पुष्पकरण्डक जीर्णोद्यान चलें।

आर्यक -:कथं नूपुरशब्द:? तदागता खलु आर्या। आर्ये ! इमौ नस्यकटुकौ बली बद्दौं; तत् पृष्टत एवारोहतु आर्या।

आर्यक-सुनकर अच्छा तो यह किसी गणिका की गाड़ी है, वह कहीं बाहर जा रही है। तो फिर चढ़ता हूँ। धीरे से जाता है।

चेट :पादोत्फालचालितानां नूपुराणां विश्रन्त :शब्द:। भाराक्रान्तं च प्रवहणम्। तथा तर्कयामि, साम्प्रतमार्यया आरूढया भवितव्यम्, तद्गच्छामि। यातं गावौ ! यातम्।

चेट -पैर उठाकर गाडी पर चढते समय बजते हुए पायल की आवाज बन्द हो गई है। गाडी का बोझ भी भारी हो गयी है। इसलिए मैं अनुमान करता हूँ कि बसन्तसेना अब गाड़ी पर चढ गई होंगी। तो अब चलूँ। चलो , वैलो,! चलो घूमता है।

चेट -सुनकर पायल की आवाज सुनाई पड़ती है ? तो आर्या आ गई। मान्ये, आप गाड़ी पर पीछे से चढें। बैल नाथा है और वह चलने को उतावला हो रहा है।

आर्यक पीछे की ओर से चढ़ जाता है।

वीरक -प्रवेश करके अरे रे, जय, जयमान, चन्दनक, मड्गल, पुष्पभद्र प्रभृति प्रधान पुरूषो !

किं स्थ विश्रब्धा :? य :स गोपालदारको रूद्ध:।

भित्वा समं ब्रजति नरपतिहृदयं वन्धनञ्च ।।।।5।।

अरे ! पुरस्तात् प्रतोलीद्वारे तिष्ठ त्वं, त्वमपि पश्चिमें, त्वमपि दक्षिणे, त्वमपि उत्तरे। योऽपि एष प्राकारखण्ड:, एनमधिरूह्य चन्दनेन समं गत्वा अवलोकयामि। एहि चन्दन ! एहि, इतस्तावत्।

अन्वय - :विश्रब्धा :,किं, स्थ, य:, गोपालदारक:, रूद्ध:, स:, नरपतिहृदयम्, च, बन्धनम्, अपि, समम्, भित्वा, व्रजति।।5।।

हिन्दी -आप सभी विश्वस्त हो कर इस तरह क्यों पड़े हैं ?गोपबालक आर्यक,जो कारागार में बन्द था, जेल की बेड़ी और राजा के दिल दोनों को एक साथ तोड़कर भाग निकला है **।।5।।**

अरे, तुम सामने पूरबवाली गली के छोर पर तैयार रहो; तुम भी पछॉंही मोड़ पर चले जाओ, तुम दक्खिनी राह रोककर खड़े हो जाओ और तुम उत्तर की ओर राह पर सतर्क होकर रहो और मैं चन्दन के साथ इस ऊँचे टीले पर चढकर देखता हूँ। आओ चन्दनक, आओ , इधर तो आओ।

चन्दनक -:अरे रे वीरअ-विसल्ल-भीमड्गअ-दण्डकालअ-दण्डसूर-प्पमुहा) ! अरे रे वीरक-

विशल्य-भीमाड्गद-दण्डकाल-दण्डशूरप्रमुखा! :

आअच्छध वीसत्था तुरिअं जत्तेह लहु करेज्जाह।

लच्छी ण जेण रण्णो पहवइ गोत्तन्तरं गंतुं ।।6 ।।

आगच्छत विश्वस्तासत्वरितं यतध्वं लघु कुरूत ।लक्ष्मीर्येन न राज :प्रभवति गोत्रान्तरं गन्तु म्।।

अपि च -

अन्वय -:विश्वस्ता, आगच्छत, त्वरितम्, यतध्वम्, लघु, कुरूत, येन, राज्ञः, लक्ष्मीः, गोत्रान्तरम्, गन्तुम्, न, प्रभवति ॥6॥

हिन्दी अनुवाद - घबड़ाए हुए चन्दनक का प्रवेश

चन्दनक -अरे, वीरक, विशल्य, भीमांगद, दण्डकाल, दण्डशूर, प्रभृति रक्षको -अरे ओ विश्वासभाजनो, आओ, जल्दी करो, आर्यक को पकड़ने का शीघ्र प्रयत्न करो, जिससे राजा पालक की राज्यलक्ष्मी अन्य कुल में न जा सके **॥6॥**

15.3. 2 श्लोक संख्या 7 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

उद्यानेषु सभासु च मार्गे नगर्यापणं घोषे ।

तं तमन्विष्यत त्वरितं शड्का वा जायते यत्र ॥7॥

अन्वय - :उद्यानेषु, सभासु, च, मार्गे, नगर्यापणे, घोषे, त्वरितम्, यत्र, शड्का, वा, जायते)तत्र(, तम्, अन्विष्यत ॥7॥

और भी -बगीचों में, सभाओं में, नगरों में, बाजारों में और अहीरों की वस्तियों में अथवा जहॉ कहीं भी सन्देश हो, उस भगोड़े को खोजों **॥7॥**

रे रे वीरक ! किं किं दर्शयसि भणसि तावद्विश्रब्धम्।

भित्वा च बन्धनकं क :स गोपालदारकं हरति ॥8 ॥

युग्मकम्

कस्याष्टमो दिनकर :कस्य चतुर्थश्च बत्तेते चन्द्र :।

षष्टश्च भार्गवग्रहो भूमिसुत :पन्चम :कस्य॥

अन्वय -:रे रे वीरक, किं किं, दर्शयसि, विश्रब्धं, किं, भणसि, तावत्, वन्धनकम्, भित्वा, सः, कः, गोपालदारकम्, हरित ॥8॥

अन्वय -:कस्य, अष्टमः, दिनकर :कस्य, चन्द्रः, चतुर्थः, च, वर्त्तते, कस्य, भार्गवग्रहः, षष्ठः, च, भूमिसुतः, पन्चमः, वर्त्तते **॥9॥**

अन्वय - :भण, जीवः, कस्य, जन्मषष्ठः, तथैव, सूरसुतः, नवम :चन्दन के जीवति, सः, क) :य(गोपदारकम्, हरति **॥10॥**

अरे, वीरक, तुम क्या क्या दिखला रहे हो ? विश्वास पूर्वक क्या क्या बक रहे हो? बन्धन को तोड़कर उस अहीर के छोकड़े को कौन छुड़ाये लिए जा रहे है **॥8॥**

किसके आठवे स्थान पर सूर्य है ? चन्द्रमा किसके चौथे स्थान पर है ? शुक्र किसके छठे स्थान पर है तथा मंगल किसके पॉचवे स्थान पर है **?॥9॥**

भण कस्य जन्मषष्ठो जीवो नवमस्तथैव सूरसुत :।

जीवति चन्दनके क :स गोपालदारकं हरति ॥

बतलाओ; बृहस्पति किसके छठे स्थान पर अवस्थित है ? शनि किसके नवम स्थान पर है ? जो मुझ चन्दनक के जीते जी उस अहीर के बच्चे को छुड़ाकर भाग रहा है ?**॥10॥**

15.3. 3श्लोक संख्या 11 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वीरक -:भड ? चन्दणआ भट! चन्दनक !

अपहरति कोऽसि त्वरितं चन्दनक ! शपे तव हृदयेन।

यथा अर्द्धादितदिनकरे गोपालक-दारक :खुटित:।। ।।11।।

हिन्दी -अनुवाद -वीरक– हे वीर चन्दनक !

मैं तुम्हारे हृदय की शपथ खाकर कहता हूँ कि उसे किसी ने अभी ही अपहृत किया है। क्योंकि सूर्य के आधा निकलने के समय ही वह अहीरपुत्र भागा है **।।11।।**

चेट-: यातं,गावौ ! यातम्।

हिन्दी अनुवाद -चेट -बैलो, बढे चलो।

चन्दनक -:अरे रे! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व।

अपवारितं प्रवहणं ब्रजति मध्येन राजमार्गस्य।

एतत्तावद्विचारय कस्य कुत्र प्रेषित प्रवहणमिति ।।12।।

अन्वय-:राजमार्गस्य, मध्येन, अपवारितम् , प्रवहणम्, ब्रजति, एतत्, तावत्, विचारय कस्य, प्रवहणम्, कुत्र, प्रेषितम्, इति **।।12।**

चन्दनक -देखकर (अरे रे देखों तो-सड़क के बीच पर्दा लगी गाड़ी जा रही है। इसकी पूछताछ तो करो यह किसकी गाड़ी है और कहॉ जा रही है ?।।12।।

वीरक -: अरे प्रवहणवाहक ! मा तावदेतत् प्रवहणं वाहय। कस्यैतत् प्रवहणम् ? को वा इहारूढ :? कुत्र वा व्रजति ?

वीरक -देखकर ओ गाड़ीवान्, गाड़ी रोको, यह गाड़ी किसकी है और इस पर कौन जा रहा है ? और कहॉ जायेगी ?

चेट -:एतत् खलु प्रवहणमार्यचारूदत्तस्य। इह आर्या वसन्तसेना आरूढा, पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं क्रीडितुं चारूदत्तस्य नीयते' इति।

हिन्दी अनुवाद -चेट -यह गाड़ी आर्य चारूदत्त की है, इस पर आर्या वसन्तसेना मनोविनोद के लिए पुष्पकरण्डक नामक पुराने उपवन में जा रही है।

वीरक -:एष प्रवहणवाहको भणति -'आर्यचारूदत्तस्यप्रवहणम्, वसन्तसेनाआरूढा, पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानंनीयते इति।

वीरक -चन्दनक के पास जाकर (गाड़ीवान् कहता है -'गाड़ी आर्य चारूदत्त की है, पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में मनोविनोद के लिए वसन्तसेना जा रही है।'

चन्दनक - :तत् गच्छतु!

चन्दनक -अच्छा तो जाने दो।

वीरक- :अनवलोकित एव ?

वीरक – अनदेखे ही

चन्दनक -:अथ किम् ।

चन्दनक- तो और क्या ?

वीरक -:कस्य प्रत्ययेन ?

वीरक -किसके भरोसे ?

चन्दनक -:आर्यचारूदत्तस्य ।

चन्दनक -आर्य चारूदत्त के विश्वास पर।

वीरक -:क आर्यचारूदत्त :? का वा वसन्तसेना ? येनानवलोकितं व्रजति।

हिन्दी अनुवाद -वीरक -कौन हैं ये चारूदत्त और वसन्तसेना ? जिनकी गाड़ी विना जाँचे ही जा रही है ?

चन्दनक -:अरे! आर्यचारूदत्तं न जानासि ? न वा वसन्तसेनिकाम् ? यदि आर्यचारूदत्तं वसन्तसेनिकां वा न जानासि, तद् गगने ज्योत्स्नासहितं चन्द्रमपि त्वं न जानासि ।

चन्दनक-अरे,तुम इन्हें नहीं जानते ? अगर चारूदत्त और वसन्तसेना को नही जानते तो आकाश में चन्द्र और चन्द्रिका को भी नहीं जानते ।

कस्तं गुणारबिन्दं शीलमृगाङ्कं जनो न जानाति ?

आपन्न-दु:खमोक्षं चतु:सागरसारं रत्नम् ।। ।।13।।

द्वावेव पूजनीयावत्र नगर्यां तिलकभूतौ च ।

आर्या वसन्तसेना धर्मनिधिश्चारूदत्तश्च ।।14।।

अन्वय -:गुणारबिन्दम्, शीलमृगाङ्गम्, आपन्नदु:खमोक्षम्, चतु:सागरसारम्, रत्नम्, तम्, क:, जन:, न जानाति ।।13।।

अन्वय-: इह, नगर्याम्, द्वौ, एव, पूजनीयौ, तिलकभूतौ, च, आर्या, वसन्तसेना, धर्मनिधि:, चारूदत्त:, च **।।14।।**

गरीबों को सहारा देने वाला, चारों सागरों के रत्नभूत, गुण में कमल और शील में चन्द्रमा की तरह आर्य चारूदत्त को कौन नहीं जानता है ? ।।13।।

इस नगरी में दो ही श्रेष्ठ व्यक्ति हैं, पूजनीय हैं । एक आर्या वसन्तसेना और दूसरे धर्मात्मा आर्य चारूदत्त **।।14।।**

अभ्यास प्रश्न –निम्नलिखित के अर्थ बतायें।

1. प्रभात ,2. प्रतिवेशिक 3. अलीकम् ,4 . नेपथ्य 5. आर्यक,6 . प्रवहणवाहक,7 . जहति ,8 . युक्तम,9 . अपक्रामति ,10 . मृगांङ्क.क,11 . नियोग,12 . प्रेषित,13 .अपवारित ,14 . व्रजति 15.वर्तते

15. 4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि पंचम् अंक की समाप्ति के पश्चात चेटी के द्वारा वसन्तसेना को जगाया गया और उसने बताया कि हम सभी के लिए तो सबेरा है किन्तु श्रीमति के

लिए अभी रात ही है इसके पश्चात उसने जुवारी के बारे में पूछॉ और उत्तर पाया कि जहॉ चारूदत्त गये है। इस प्रकार के सम्वादों के पश्चात वसन्तसेना का यह कथन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। तो सबसे पहले तो मुझे ही दु:खी होना चाहिए।) विनम्र भाव से (सखि, यह रत्नहार लो और मेरी ओर से मेरी बहन, आर्य चारूदत्त को धर्मपत्नी आर्या धूता को सौप दो। उनसे कहना- आर्य, चारूदत्त के गुणों खिचकर मैं उनकी दासी बनकर यहॉ आई हूँ। मैं उनकी दासी हूँ, अत :आर्या धूता की भी दासी हूँ। इस लिए यह रत्नहार उनके गले ही शोभेगा। पुन:इसी क्रम रदनिका का कथन भी देखने लायक है। अपने पडोसी सेठ के बेटे की सोने की गाड़ी से यह अभी खेल चुका है। वह उस गाड़ी को ले गया है। फिर भी यह गाड़ी मॉगने लगा तो मिट्टी की गाड़ी बनाकर इसे मैंने दे दी है। तब यह कहता है मुझे मिट्टी की गाडी नहीं सोने वाली गाड़ी ही चाहिए ।हाय,हाय यह भी तो दूसरों की सम्पत्ति से जल रहा है। हाय, विधाता, कमल के पत्ते पर गिरे पानी की बूँदे की तरह मनुष्यों के भाग्य से खेला करते हो।)रोते हुए (बेटे ,मत रो, तुम भी सोने की गाड़ी से खेलोगे। बालक- रदनिके, ये कौन है ?

15 .5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.सबेरा ,2. पडौसी,3 . मिथ्या,4 . रंगशाला,5 . गोप का लड़का,6 . गाड़ी चलाने वाला,7 . त्यागता है,8 . उचित,9 . पलायित होता है,10 . चन्द्रमा,11 . नियोजन,12 . भेजा हुआ,13 . ढका हुआ , 14. जाता है,15 .है

15. 6 पारिभाषिक शब्दावली

महान्तम् - बहुत बड़े
विधिवशात् – भाग्य के कारण
गोत्रान्तरं - दूसरे कुल की
अपवारितं - ढकी हुई
परिभूता - अपमानित हुई

15. 7 संदर्भग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् – हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

15. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2. किन्ही तीन श्लोकों की व्याख्या कीजिए।

इकाई -16 षष्ठअंक श्लोक15 से 27 तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 श्लोक संख्या 15से 27 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
16.3.1 श्लोक संख्या 15से 22 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
16.3.2 श्लोक संख्या 23से 27 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
16.4 सारांश
16.5 पारिभाषिक शब्दावली
16.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
16.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
16.8 निबन्धात्मक प्रश्न

16. 1 प्रस्तावना–

मृच्छकटिकम् प्रकरण के छठे अंक में श्लोक सं 01से लेकर 27 तक के सम्बादों एवं श्लोकों के अध्ययन से सम्बन्धित यह सोलहवीं इकाई है। इस इकाई के वर्णन का प्रारम्भ वीरक नामक पात्र के कथन से किया गया है , जो वसन्तसेना और चारूदत्त दोनों को जानने के विषय में कहते हुए राजकार्यकी महत्ता के लिए अपने पिता को भी महत्व न देने की बात करता है। वीरक, आर्यक और चन्दनक तीनों का सम्वाद हो रहा है।

आर्यक,वीरक को अपना पुराना दुश्मन कहता है। दोनों किसी एक ही कार्य में लगे है किन्तु दोनों के स्वभावों में विवाह और चिता की आग जैसा अन्तर है। आर्यक भीम के आचरण का अनुकरण करता है किन्तु साहस दिखाने का उचित भी नहीं समझता है। इन्ही सब अन्य सम्वादों में इस इकाई का वर्णन आपके अध्ययन के लिए प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप षष्ठ अंक के इस वर्णन के आधार पर पात्रों के मध्य हुए सम्वादों की विशेषताओं को बतायेगें।

16. 2 उद्देश्य–

षष्ठ अंक के श्लोक संख्या 15से लेकर 27 वें श्लोक तक के वर्णित सम्वादों एवं श्लोकों का अध्ययन करने के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि-

- वीरक और आर्यक के व्यावहारिक सम्बन्ध किस प्रकार के है।
- गाड़ी का निरीक्षण कौन करता है।
- दक्षिण वासी किस प्रकार बोलते है।
- चन्दनक का स्वभाव किसकी भॉति शीतल है।
- चन्दनक ने चिह्न रखने के लिए किसको दिया।
- आर्यक के पास सपरिवार कौन गया।

वीरक -:अरे चन्दनक ?

जानामि चारूदत्तं वसन्तसेनाञ्च सुष्ठु जानामि।
प्राप्ते च राजकार्ये पितरमपि अहं न जानामि। ।।15।।

अन्वय -:चारूदत्तम्, वसन्तसेनाम्, च, सुष्ठु, जानामि, किन्तु, राजकार्ये, प्राप्ते, पितरम्, अपि, अहम्,न जानामि ।।15 ।।

हिन्दी अनुवाद- वीरक -ओ चन्दनक। मैं आर्या वसन्तसेना को भी जानता हूँ और आर्य चारूदत्त को भी। किन्तु राज-काज में मैं अपने बाप को नहीं जानता हूँ**।।15।।**

आर्यक -:स्वगतम् अयं मे पूर्ववैरी, अयं में पूर्वबन्धु:। यत-:

एककार्यनियोगेऽपि नानयोसतुल्यशीलता।
विवाहे च चितायाञ्च यथा हुतभुजोर्द्वयो:।।16।।

अन्वय -:एककार्यनियोगे, अपि, अनयो :तुल्यशीलता, न। यथा, विवाहे, चितायाम्, च, द्वयो:, हुतभुजो **।।16।।**

आर्यक- अपने आप यह वीरक मेरा पुराना दुश्मन है और चन्दनक पुराना मित्र है। क्योंकि-

दोनों एक ही काम में लगे हैं फिर भी दोनों के स्वभाव में बड़ा अन्तर है। ठीक उसी प्रकार जैसे विवाह की आग और चिता की आग में अन्तर है। चन्दनक वैवाहिक अग्नि की तरह यदि सुखद है तो यह वीरक चिताग्नि की तरह दु:खद है **।।16।।**

चन्दनक -:त्वं तन्त्रिल :सेनापति :राज्ञ :प्रत्ययित:। एतौ धारितौ मया बलीवर्दौ,अवलोकय।

वीरक -:त्वमपि राज्ञ :प्रत्ययितो बलपति:, तत् त्वमेव अवलोक्य।

हिन्दी अनुवाद-वीरक - राजा के तुम भी तो विश्वस्त सेनापति हो, तुम्ही देख लो न।

चन्दनक - :मया अवलोकित त्वया अवलोकितं भवति ?

चन्दनक -क्या मेरे देख लेने से तुम्हारा देखना हो जायेगा ?

वीरक -: यत् त्वया अवलोकितं तत् राज्ञा पालकेनावलोकितम्।

वीरक -यदि तुमने देख लिया तो राजा पालक ने ही देख लिया।

चन्दनक -:अरे! उन्नमय धुरम्।

चन्दनक -ओ गाड़ी वाले, पर्दा उठाओ।

आर्यक -: स्वगतम्। अपि रक्षिणो मामवलोकयन्ति ? अशस्त्रश्चास्मिमन्दभाग्य :। अथवा-

भीमस्यानुकरिष्यामि बाहु :शस्त्रं भविष्यति।

वरं व्यायच्छतो मृत्युर्न गृहीतस्य बन्धने ।।17।।

अथवा, साहसस्य तावदनवसर:। चन्दनको नाट्येन प्रवहणमारूह्यवलोकयति।

आर्यक -:शरणागतोऽस्मि।

चन्दनक -:संस्कृतमाश्रित्य अभयं शरणागतस्य।

अन्वय : भीमस्य, अनुकरिष्यामि बाहु:, शस्त्रम्, भविष्यति, व्यायच्छत:, मृत्यु:, बरम्, बन्धने, गृहीतस्य, न **।। 17 ।।**

हिन्दी अनुवाद -चेट गाड़ी का पर्दा उठाता है।

आर्यक -मन ही मन (क्या ये रक्षणमुझे देखेगें। अभागा हूँ मै मेरे पास कोई हथियार भी तो नहीं है। अथवा-

तो मैं भीम का ही अनुकरण करूँगा। ये बाँहें ही मेरे हथियार बनेंगे। जेल में बन्द होने को अपेक्षा लड़कर मर जाना ही अच्छा होगा **।।17।।**

अथवा, साहस का यह उचित समय नहीं है।

चन्दनक गाड़ी पर चढकर देखता है।(आर्यक -मैं आप की शरण में हूँ।

चन्दनक -संस्कृत भाषा में (शरणागत को डरने की आवश्यकता नहीं।

आर्यक -:

त्यजति किल तं जयश्रीर्जहति च मित्राणि बन्धुवर्गश्च।

भवति च सदोपहास्यो य :खलु शारणागतं त्यजति ।।18।।

अन्वय - :य:, खलु, शरणागतम् त्यजति,तम्, जयश्री, त्यजति, मित्राणि, च, जहति,बन्धुवर्ग : जहति सदा, उपहास्य, च, भवति **।।18।।**

हिन्दी अनुवाद -आर्यक -निश्चय ही जिसने शरणागत की रक्षा नहीं की, विजय लक्ष्मी उसे छोड़ देतीहै, मित्र एवं भाई बन्धु भी उसका परित्याग कर देते है और वह समाज के बीच सदा के लिए उपहासास्पद बन जाता है **।। 18।।**

चन्दनक : कथमार्यको गोपालदारक :श्येनवित्रासित इव पत्ररथ :शाकुनिकस्य हस्ते निपातित:। एषोऽनपराध : शरणागत आर्यचारूदत्तस्य प्रवहणमारूढ :प्राणप्रदस्य में आर्यशर्विलकस्य मित्रम् : अन्यतो राजनियोग:। तत् किमिदानीमत्र युक्तमनुष्ठानुष्ठातुम् ?अथवा यद्भ्वतु तद्भ्रवतु प्रथममेवाभ्यं दत्तम् ।

चन्दनक -अहीर का पुत्र आर्यक , बाज से डरे पक्षी की तरह बहेलिए के हाथ में जा फॅसा । सोचकर एक ओर तो यह आर्यक निर्दोष है, हमारी शरण में है, आर्य चारूदत्त की गाड़ी पर सवार है, मेरे प्राणप्रद मित्र शर्विलक का मित्र है; दूसरी ओर राजाज्ञा है । तो अब क्या करना चाहिए? अथवा जो हो, इसे तो पहले से ही अभयदान दे चुका हूँ ।

भीताभयप्रदानं ददत :परोपकाररसिकसय ।

यदि भवति भवतु नाशस्तथापि च लोके गुण एव ।।।।19।।

दृष्टआर्य :न, आर्या वसन्तसेना ! तदेषा भणति-'युक्तंनेदम्, सदृशं नेदम्, यदहमार्यचारूदत्तमभिसतु राजमार्गे परिभूता ।'

अन्वय - :भीता भयप्रदानम्, ददत:, परोपकाररसिकस्य, यदि, नाश, भवति,) तदा (भवतु, तथा, अपि, च, लोके गुण**, ।।19।।**

हिन्दी अनुवाद – डरे हुए को अभयदान देनेवाले परोपकारप्रेमी की यदि मौत भी होती हो तो चिन्ता नहीं । क्योंकि मृत्यु के बाद भी संसार में उसकी प्रशंसा ही होती है, निन्दा नहीं **।।19।।**

डरते हुए, उतरकर (भाई मैंने आर्य को देख लिया) इस तरह आधा कह लेने के बाद नहीं आर्या वसन्तसेना को देख लिया। उनका कहना है कि -'यह काम उचित नहीं हुआ । आपके योग्य नहीं हुआ । मैं तो आर्य चारूदत्त से मिलने जा रही थी और आपने बीच सड़क पर रोक कर मुझे इस तरह अपमानित किया है'।

वीरक -:चन्दनक! अत्रमम संशय समुत्पन्न:।

हिन्दी अनुवाद -वीरक -चन्दनक, मुझे तुम्हारी बात में कुछ शक लगता है।

चन्दनक -:कथं ते संशय:?

चन्दनक- तुम्हें शक क्यों हो गया ?

वीरक - सम्भ्रम-घर्घर-कण्ठस्त्वमपि जातोऽसि यत्त्वया भणितम् ।
दृष्टो मया खलु आर्य :पुनरप्यार्या वसन्तसेनेति ।। ।।20 ।।

अन्वय -:त्वमपि, सम्भ्रमघर्घरकण्ठ :, जातं:, असि। यत् त्वया, मया, खलु, आर्य:, दृष्ट:, तत:, आर्या, वसन्तसेना, इति, च, पुन :भणितम् **।।20।।**

वीरक -तुम घबड़ाये से लगते हो, तुम्हारी आवाज थरथरा रही है, तुमने पहले कहा -मैंने आर्य को देख लिया, फिर कहा आर्या वसन्तसेना को देख लिया -यह विसंगति क्यों।।20।।

इसी से मुझे शक हो गया है।

चन्दनक -:अरे!क:अप्रत्ययस्तव?वयंदाक्षिणात्याअव्यक्तभाषिण:।खस-खत्ति-खडा-खडट्टो–विलय-कर्णाट-कर्ण-प्रावरण-द्रविड-चोल-चीन-बर्बर-खेर-खान-मुख-मधुधातप्रभृतीनांम्लेच्छजातीनां अनेकदेशभाषाभिज्ञा यथेष्टं मन्त्रयाम -:'दृष्टो दूरूटा वा, आर्य :आर्या वा'।

चन्दनक -अरे, तुम्हें अविश्वास क्यों हो रहा है? हम दक्षिणवासी तो अशुद्ध बोलते ही है। खस, खत्ति, खड़हो, विलय, कर्णाट कर्ण प्रावरण, द्रविड़, चोल, चीन, वर्वर ,खेर, खन, मुख,मधुघात आदि असभ्य जातिवाले हम देश की विभिन्न भाषाओं से अनजान रहने के कारण मनमाना 'देखागया' 'देखी गई' 'आर्य' 'आर्या' आदि बोलतेही रहते है।

वीरक -:ननु अहमपि प्रलोकयामि। राजाज्ञा एषा। अहं राज्ञ :प्रत्ययित:।

वीरक -अच्छा तो मैं भी राजा का विश्वासभाजन ही हूँ और उनकी आज्ञा है तो जरा मैं भी देख लूँ।

चन्दनक -:तत् किमहमप्रत्ययित :संवृत्त:।

चन्दनक -तो क्या मैं अविश्वासी हो गया ?

वीरक :ननु स्वामिनियोग:।

वीरक – अरे, नहीं राजा का आदेश ही ऐसी है।

चन्दनक -:आर्यगापालदारक :आर्यचारूदत्तस्य प्रवहणमधिरूह्य अपक्रामतीति यदि कथ्यते, तदा आर्यचारूदत्तो राज्ञा शाष्यते, तत् कोऽत्र उपाय:?कर्णाट-कलह– प्रयोगं करोमि। अरे वीरक ! मया चन्दनकेन प्रलोकितं पुनरपि त्वं प्रलोकयसि, कस्त्वम् ?

चन्दनक -मन ही मन यदि यह कहा गया कि गोपबालक आर्यक चायदत्त की गाड़ी से जा रहा है तो निश्चय ही आर्य चारूदत्त भी राजा से दण्डित होंगे। तो फिर क्या उपाय है ? सोचकर कर्णाटकदेशीय कलह शुरू कर देता हूँ। सुनाकर (अरे वीरक जब मैंने देख ही लिया तो फिर तुम देखने वाले कौन होते हो ?

वीरक -:अरे त्वमपि क :?

वीरक- तो फिर, तुम्हीं कौन देखने वाले हो ?

चन्दनक -:पूज्यमानो मन्यमानस्त्वमात्मनो जातिं न स्मरसि ?

चन्दनक –ओ अपने को पूज्य समझने वाले वीरक, अपनी जात का ख्याल करो।

वीरक -:अरे! का मम जाति:?

वीरक -गुस्सा कर अरे, मेरी जाति क्या है ?

चन्दनक -: को भणतु ?

चन्दनक -नीच जाति का नाम कौन ले?

वीरक -: भणतु।

वीरक -नहीं बोलो तो सही।

चन्दनक -:अथवा न भणामि।

चन्दनक -नहीं बतलाऊँगा।

जानन्नपि खलु जातिं तव च न भणामि शीलविभवेन।

तिष्टतु ममैव मनसि किं हि कपित्थेन भग्नेन ।।21।।

अन्वय -:तव, खलु, जातिम्, जानन्, अपि, अहम्, शीलविभवेन, च,न भणामि। मम, मनसि, एव, तिष्ठतु। हि, कपित्थेन, भग्नेन, किम् ? ।।21।।

हिन्दी अनुवाद - तुम्हारी जाति जानता हूँ किन्तु, अपने शील के कारण मैं कहूँगा नहीं। वह मेरे मन से ही रहे। बेकार कैथ फोड़ने से क्या लाभ है ?।।21।।

वीरक -:ननु भणतु भणतु।

वीरक -कहो,कहो।

चन्दनक :संज्ञां ददाति।

चन्दनक- इशारे से बतलाता है।

वीरक -:अरे! किन्नु इदम् ?

वीरक – इशारे क्या कर रहे हो ?

चन्दनक-: शीर्णशिलातलहस्त :पुरूषाणां कूर्च्च -ग्रन्थि-संस्थापन:।

कर्त्तरी-व्यापृत-हस्तस्त्वमपि सेनापतिर्जात:।। ।।22।।

अन्वय -:शीर्णशिलातलहस्त:,पुरूषाणाम्, कूर्चग्रन्थिसंस्थापन:, कर्त्तरिव्याप्तहस्त:, त्वम् सेनापति : अपि जात: **।।22।।**

चन्दनक -एक हाथ में शान चढाने वाले टूटे पत्थर के टुकड़े दूसरे हाथ में दाढ़ी छीलने वाला रखने वाला नाई भी तुम सेनापति बन गये ।।22।।

वीरक-: अरे !चन्दनक ! त्वमपि मन्यमान आत्मनो जाति न स्मरसि।

वीरक -रे चन्दनक,तुम्हें भी अपनी जाति याद नहीं आती।

चन्दनक -:अरे! का मम चन्दनकस्य चन्द्रविशुद्धस्य जाति :?

चन्दनक - चन्द्रमा की तरह स्वच्छ मुझ चन्दनक की कौन जाति है रे ?

वीरक -:को भणतु?

वीरक -नीच जाति का कौन नाम ले ?

चन्दनक -:भणतु भणतु।

चन्दनक -:बोलो, बोलो।

वीरको नाटयेन संज्ञां ददाति।

वीरक- इशारे से कुछ बतलाता है।

चन्दनक -अरे इशारे क्या कर रहे हो ? साफ बतलाओं न।

चन्दनक -:अरे! किन्नु इदम्।

वीरक -:अरे श्रृणु श्रृणु।

जातिस्तव विशुद्ध माता भेरी पितापि ते पटहः।

दुर्मुख! करटकभ्राता त्वमपि सेनापतिर्जातः।। ।।23।।

अन्वय - :दुर्मुख! विशुद्धा, तव, जातिः। ते, माता, भेरी, पिता, पटह :। कर्टक-भ्राता, त्वम्, अपि, सेनापति :जातः।।**23।।**

वीरक -तो सुन ही ले -

रे दुर्मुख ! तो सुन, तुम्हारी मॉ दुन्दुभि है, बाप ढोलक है और भाई तुरही ऐसी जाति के तुम बलाधिपति बन गये हो **।। 23।।**

चन्दनक -:अहं चन्दनकश्चर्मकार :? तत् प्रलोकय प्रवहणम्।

चन्दनक -अतिकुद्ध होकर अच्छा तो चन्दनक चमार है? तो देख लो गाड़ी जरा।

चेटस्तथा करोति।

चेट वैसा ही करता है।

वीरक :प्रवहणमारोढुमिच्छति, चन्दनक :सहसा केशेषु गृहीत्वा पातयति, पादेन ताडयति च।

वीरक गाड़ी पर चढना चाहता है और चन्दनक उसके बाल पकड़ कर धरती पर पटकता है और पैरों से पीटता है

वीरक -:अरे! अहं त्वया विश्वस्तो राजाज्ञप्तिं कुर्वन सहसा केशेषु गृहीत्वा पादेन ताडितः। तच्छृणु रे! अधिकरणमध्ये यदि ते चतुरङ्गं न कल्पयामि, तदा न भवामि वीरकः।

वीरक -क्रोधपूर्वक उठते हुए (मुझ विश्वासी सैनिक को राजाज्ञापालन करते समय केश खीच कर लतियाया है तो सुन लो, राजा के सामने या न्यायालय में तुम्हें चतुरंग दण्ड नहीं दिखवाया तो मेरा नाम वीरक नहीं।

चन्दनक -:अरे! राजकुलमधिकरणं वा व्रज। कि त्वया शुनकसदृशेन ?

चन्दनक -अरे जा जा, राजा को फरियाद सुना या कचहरी जा। तुझ जैसे कुत्ते से हमारा कुछ नहीं बिगड़ता।

वीरक -:तथा ।

वीरक -अच्छा तो देख लूँगा। चला जाता है।

चन्दनक -अरे जा जा, राजा को फरियाद सुना या कचहरी जा। तुझ जैसे कुत्ते से हमारा कुछ नहीं बिगड़ता।

चन्दनक -:गच्छ रे प्रवहणवाहकगच्छ। यदि कोऽपि पृच्छति, ततो भणिष्यसि 'चन्दनक-वीरकाभ्याम् अवलोकितमिदं प्रवहणं व्रजति।' आर्ये ! वसन्तसेने ! इदञ्च अभिज्ञानं ते ददामि।

चन्दनक -सब ओर देख कर जा रे गाड़ीवान् जा। रास्ते में यदि कोई कुछ पूछे तो कह देना - चन्दनक और वीरक ने गाड़ी देख ली है। आर्ये , वसन्तसेने यह चिह्न अपने साथ रख लो। तलवार देता है।

आर्यक -:खड्गं गृहीत्वा सहर्षमात्मगतम्।

अनुवाद -आर्यक -हाथ से तलवार लेकर, मन ही मन खुश होते हुए

वीरक -रोक रे गाड़ीवाले, मैं गाड़ी देखूँगा।

अये ! शस्त्रं मया प्राप्तं स्पन्दते दक्षिणो भुज :।

अनुकूलञ्च सकलं हन्त संरक्षितो ह्यहम् ।।24

अन्वय -:अये, मया, शस्त्रम्, प्राप्तम्, दक्षिण:, भुज:, स्पन्दते , सकलम्,अनुकूलम, हि, अहम्, संरक्षित:।।24।।

अहा, मुझे हथियार मिल गया। मेरी ढाई भुजा भी फड़क रही है। सब कुछ अनुकूल हो रहा है। मैं अब पूरी तरह सुरक्षित हूँ **।।24।।**

चन्दनक -: आर्ये //!

अत्र मया विज्ञप्ता प्रत्ययिता चन्दनमपि स्मरसि।

न भणामि एष लुब्ध :स्नेहस्य रसेन वदाम :।।25 ।।

अन्वय -:अत्,मया, विज्ञप्ता, प्रत्ययिता, चन्दनमपि, स्मरसि, एष:, लुब्ध:, न, भणामि, स्नेहस्य, रसेन, ब्रूम:**।।25।।**

चन्दनक -आर्ये, मेरी एक प्रार्थना है, इस संकट से निकलने के बाद इस चन्दनक को भूलेगे तो नहीं । यह मैं किसी लोभ से नहीं, प्रत्युत् स्नेहवश कह रहा हूँ **।।25।।**

आर्यक -:

चन्दनश्चन्द्रशीलाढ्यो दैवादद्य सुहृन्मम।

चन्दनं भो! : स्मरिष्यामि सिद्धादेशस्तथा यदि ।।26।।

अन्वय -:चन्द्रशीलाढय:, चन्दनक:, दैवात्, अद्य, मम, सुहृद्, यदि सिद्धादेश:, तथा,भो:, चन्दनम्, स्मरिष्यामि **।।26।।**

आर्यक -सुधाकर की तरह शीतल स्वाभाववाला चन्दनक संयोग से आज मेरा मित्र बन गया है। यदि सिद्ध की वाणी सच निकली तो निश्चय ही तुम्हें याद करूँगा। **।।26।।**

चन्दनक -अभयं तव ददातु हरो विष्णुर्ब्रह्मा रविश्च चन्द्रश्च ।

हत्वा शत्रुपक्षं शुम्भनिशुम्भौ यथा देवी।।।।27।।

अन्वय -:हर:, विष्णु, ब्रह्मा, रवि:, च, चन्द्र:, च, तव, अभयं, ददातु। शत्रुपक्षम्, हत्वा, यथा, शुम्भनिशुम्भौ, देवी **।।27।।**

चन्दनक -ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, चन्द्र सभी तुम्हें अभयदान दें। शत्रुओं को पराजित कर तुम उसी प्रकार विजयी बनो जैसे शुम्भ निशुम्भ को मार कर देवी दुर्गा विजयी बनी थी। **।।27।।**

चेट :प्रवहणेन निष्क्रान्त :।

चेट गाड़ी लेकर बाहर निकल जाता है।

चन्दनक -:अरे! निष्क्रामतो मम प्रियवयस्य :शर्विलक :पृष्ठत एवानुलग्नो गत :। भवतु, प्रधानदण्डधारको वीरको राजप्रययकारी विरोधित :। तद्यावदहमपि पुत्रभ्रातृपरिवृत एतमेवानुगच्छा

चन्दनक - नेपथ्य की ओर देखकर (अरे, गाड़ी के बाहर निकलते ही मेरा मित्र शर्विलक भी गाड़ी का अनुसरण करते हुए बाहर निकल गया। अच्छा तो राजा पालक के विश्वासभाजन बलाधिपति वीरक से मैंने विरोध ठाना है तो अच्छा यही होगा कि मैं भी सपरिवार इसी आर्यक के पास चला जाऊँ।

चला जाता है।

अभ्यास प्रश्न -

क-निम्नलिखित में सही विकल्प चुनिए-

1. आर्यक का पुराना दुश्मन है -

क -चारूदत्त ख -वसन्तसेना ग -शर्विलक घ – वीरक

2. जानामि का अर्थ है -

क -जानूँगा ख-जान लेना ग -जानता हूँ घ – कोई नहीं

3. भीम के आचरण का अनुकरण कौन करता है -

क -चन्दनक ख -आर्यक ग-वीरक घ -चारूदत्त

4. अहीर का पुत्र कौन है –

क -आर्यक ख -वीरक ग-चारूदत्त घ– चन्दनक

ख-निम्नलिखित के उत्तर एक शब्द में दीजिए -

1. परोपकारी की यदि मौत भी होती है तो कोई चिन्ता नहीं। यह कथन किसका है -
2. चारूदत्त से मिलने जाने पर वसन्तसेना को रास्ते में किसने अपमानित किया –
3. उस्तरा रखने वाला सेनापति कौन है -
4. तुम्हारी माता दुन्दुभि है और पिता ढोलक है यह कथन किसका है -
5. शुनक सदृश का अर्थ है -

6- विज्ञप्ता का अर्थ है -

7. प्रत्ययिता का अर्थ है -
8. लुब्ध :का अर्थ है–
9. दैवात् का अर्थ है .10निष्क्रान्त:का अर्थ है -

16. 4 सारांश–

प्रवहण विपर्ययनामक मृच्छकटिकम् के षष्ठ अंक की इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि- वीरक राजकार्य के सम्बन्ध में अपने पिता को भी नहीं जानता अर्थात महत्व नहीं देता। आर्यक

का चन्दनक पुराना मित्र है और वीरक उसका शत्रु भी है। आर्यक भीम के आचरण का अनुकरण करता है किन्तु अवसर अनुकूल न समझते हुए साहस नहीं दिखाता है। चन्दनक आर्यक को अहीरका पुत्र कहताहै । वह यह भी कहता है कि डरे हुए को अभयदान देना तथा परोपकार प्रेमी होना एक महत्ता है। ऐसे लोगों की मृत्यु भी हो तो कोई चिन्ता नहीं क्योंकि इनकी प्रशंसा तो मृत्यु के बाद भी संसार में होती ही है। चन्दनक के प्रति वीरक का सम्बोधन है कि- हे दुर्मुख ! तुम्हारी मॉ दुन्दुभि है और पिता ढोलक है तुम बलाधिपति कैसे बन गये चन्दनक उसके बालों को पकड़कर नीचे गिरा देता है और पीतता भी है। इस वीरक उसे राजाके समक्ष न्यायालय में चतुरंग दण्ड दिलवाने के लिए कहता है। इसके पश्चात चन्दनक और वसन्तसेना के स्नेहपूर्ण वार्तालापों के होने के बाद आर्यक ने चन्दनक को शीतल स्वभाव वाला कहा है और मित्र मान लिया है। चन्दनक कहता है कि ब्रह्मा, विष्णु , महेश,सूर्य , चन्द्रादि भी तुम्हें अभयदान दें। शर्विलक भी गाड़ी का अनुसरण करते हुए बाहर गया अब मैं भी राजा के विश्वासपात्र से विरोध के कारण सपरिवार आर्यक के पास ही चला जाऊँ ।

इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन से आप यह समझाएंगे कि छठे अंक के पात्रों के सम्वादों में किस प्रकार की मर्यादा एवं नीतिका पालन किया गया है।

16. 5 पारिभाषिक शब्दावली -

हुतभुज -अग्नि , उन्नमय-ऊपर की ओर, व्यायच्छत- :युद्ध करते हुए, बन्धने – कारागार में, दक्षिणात्य -दक्षिण देश के निवासी , अव्यक्तभाषी -अस्पष्टवक्ता

16.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क- 1. घ 2. ग 3. ख 4.

ख- 1. चन्दन्क 2. चन्दनक 3. वीरक 4. वीरक 5. कुत्ते के समान 6. सूचित 7. विश्वास प्राप्त 8. लोभ के वश में 9. भाग्य से 10 बाहर गया हुआ।

16.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

16.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2. किन्हीं चार श्लोकों की व्याख्या कीजिए।

इकाई 17 सप्तम अंक मूल पाठ , अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

17. 1 प्रस्तावना
17.2 उद्देश्य
17.3 श्लोक संख्या 1से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
17.3. 1श्लोक संख्या 1 से 3 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
17.3.2 श्लोक संख्या 4से 6 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
17.3.3 श्लोक संख्या 7से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
17.4 सारांश
17.5 पारिभाषिक शब्दावली
17.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
17.7 संदर्भग्रन्थ
17.8 निबन्धात्मक प्रश्न

17. 1 प्रस्तावना-

मृच्छकटिकम् -प्रकरण के सप्तम अंक का वर्णन मात्र नौ श्लोकों एवं विभिन्न सम्बादों में ही सीमित है। इस सप्तम अंक से सम्बन्धित यह सत्रहवीं इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत चारूदत्त ,विदूषक, चेत, आर्यक आदि के द्वारा किये गये वार्तालाप आपके अध्ययन हेतु प्रस्तुत हैं।

सप्तम अंक में सर्वप्रथम चारूदत्त के साथ विदूषक का प्रवेश होता है जिसमें दोनों पुष्पकरण्डक जीर्ण उद्यानकी शोभा के विषय में वार्तालाप करते हैं,चारूदत्त बर्द्धमानक की प्रतीक्षा कर हैं। इन सब सम्वादों के चलते हुए अन्त में चारूदत्त के कथन –प्रियतमा वसन्तसेना ऑखों से दूर है और बायी ऑख फड़क रही है, सिर मुड़ाते ओले पड़े,सामने अमांगलिक बौद्ध सन्यासी का दर्शन हो रहा है आदि के द्वारासप्तम अंक का वर्णन समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सप्तम अंक के पात्रों के मध्य हुए सम्वादों के वैशिष्ट्य को भली भॉति समझा सकेंगे।

17. 2 उद्देश्य

सप्तम अंक के वर्णन से सम्बन्धित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- चारूदत्त और विदूषक के वार्तालाप को समझायेगे।
- किसके पैरों में बेड़ी लगी है, बता सकेंगे।
- राजकीय अपराध को परिभाषित कर सकेगें।
- चारूदत्त की मनोदशा का वर्णनकर सकेंगे ।
- अपशकुन को परिभाषित कर सकेंगे।
- सप्तम अंक की साहित्यिक विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।

सप्तम अंक का प्रारम्भ

तत : प्रविशति चारूदत्तो विदूषकश्च।

हिन्दी अनुवाद - विदूषक के साथ चारूदत्त का प्रवेश।

विदूषक -:भो! : प्रेक्षस्व, प्रेक्षस्य, पुष्पकरण्डक-जीर्णोद्यानस्य सश्रीकाताम्।

विदूषक -आह! पुष्पकरण्डकजीर्णोद्यान की छटा कितनी मनोरम है जरा देखिए तो सही।

चारूदत्त -: वयस्य! एवमेव तत्। तथाहि -

वाणिज इव भान्ति तरव :पण्यानीव स्थिनानि कुसुमानि।

शुल्कमिव साधयन्तो मधुकर-पुरूषा :प्रविचरन्ति ॥1॥

अन्वय - तरव :वाणिज:, इव, भान्ति, कुसुमानि, पण्यानि, इव स्थितानि, मधुकरपुरूषा:, शुल्कम्, साध्यन्त:, इव, प्रविचरन्ति ॥1॥

चारूदत्त -मित्र, यह शोभा तो ठीक उसी तरह है। जैसे -कोई बाजार हो सके पेड़ बनिए है और

फूल क्रय-विक्रय की वस्तु हैं, उद्यान के भौरे राजपुरूष के द्वारा कर वसूलते इधर उधर हिल डोल रहे हैं ।।1।।

विदूषक -:भो! : इदमसस्काररमणीयं शिलातलमुपविशतु भवान् ।

विदूषक -: बिना धोये पीछे भी साफ सुथरे इस पत्थर के पटिये पर आप बैठ जॉय ।

चारूदत्त : प्रविश्य वयस्य! चिरयति वर्द्धमानक:।

चारूदत्त -बैठकर मित्र पता नहीं बर्द्धमानक, इतनी देर क्यों लगा रहा है?

विदूषक -: भणितो मया-'बर्द्धमानक! वसन्तसेनांगृहीत्वा लघु लघु आगच्छ' इति ।

विदूषक -मैंनें तो उससे कह दिया है -जितना जल्द हो सके वसन्तसेना को लेकर आ जाओं ।

चारूदत्त -: तत् किं चिरयति ?

चारूदत्त– तो फिर, देर क्यों कर रहा है ?

किं यात्यस्य पुर :शनै :प्रवहणं तस्यान्तरं मार्गते
भग्नेऽक्षेपरिवर्तनं प्रकुरूते? छिन्नोऽथवा प्रग्रह:
वर्त्मान्तोज्झित-दारू-वारित-गतिर्मार्गान्तरं याचते
स्वैरं प्रेरितगोयुग :किमथवा स्वच्छन्दमागच्छति ।2।।

अन्वय-: किम्, अस्य, पुर :,प्रवहणम्, शनै:, याति? तस्य, अन्तरम् मार्गते? अक्षे, भग्ने ,परिवर्त्तनम्, प्रकुयते किम्? अथवा, प्रग्रह:, छिन्न:, वर्त्मान्तो-ज्झितदायवारितगति:, मार्गान्तरम्, याचते, किम्? अथवा, स्वैरं, प्रेतिरतगोयुग:, स्वच्छन्दम्, आगच्छति, किम् ।।2।।–

हिन्दी - क्या इसकी गाड़ी के आगे कोई सड़ियल गाड़ी धीरे-धीरे आ रही है और वह राह काट कर आगे बढने की चेष्टा कर रहा है? या इसकी गाड़ी का कोई पहिया तो नहीं टूट गया, जिसे बदलने में इसे देर हो रही हे । अथवा बैलों के पगहे तो कहीं टूट नहीं गये? या बीच सड़क पर लकड़ी काटकर तो किसी ने नहीं गिरा दिया जिससे राह रूकी है? दूसरी राह से आने की बात सोच रहा है ? अथवा-बैलों को धीमे-धीमे हॉकता हिचकता हिचकोले खाता मस्ती से धीरे-धीरे आ रहा है ।।**2।।**

चेट: यातं गावौ ? यातम्

चेट -बढे चलो, बैलो बढ़े चलो ।

आर्यक -:स्वगतम्

नरपतिपुरूषाणां दर्शनाड्भीतभीत:
सनिगडचरणत्वात् सावशेषापसार:।
अविदितमधिरूढो यामि साधोस्तु याने
परभृत इव नीडे रक्षितो वायसीभि:।।3।।

अन्वय : नरपतिपुरूषाणाम् दर्शनात्,भीतीभीत:,सनिगडचरणत्वात्,सावशेषापसार:,नीडे, वायसीभि:,

रक्षित:, परभृत, इव साधो :याने, अविदितम्, अधिरूढ:, यामि ।।3।।

हिन्दी अनुवाद -छिपकर गाडी में बैठे हुए आर्यक को लेकर चेट का प्रवेश।

आर्यक -मन ही मन सिपाहियों को देखकर काफी डरे हुए,पैरों में बेड़ी पड़े रहने के कारण भागने में बिल्कुल असमर्थ, सज्जन चारूदत्त की गाड़ी में छिपकर ठीक उसी तरह सुरक्षित में जा रहा हूँ, जैसे कौए के घोंसले में मादा काक द्वारा अज्ञात भाव से पालित कोयल के बच्चे होते हैं ।।3।।

अहो ! नगरात् सुदूरमपक्रान्तोऽस्मि । तत् किमस्मात् प्रवहणादवतीर्य वृक्षवाटिकागहनं प्रविशामि? उताहो प्रवहणस्वामिनां पश्यामि। अथवा कृतं वृक्षवाटिकागहनेन । अभ्युपपननवत्सल :खलु तत्रभवानार्यचारूदत्त :श्रूयते; तत् प्रत्यक्षीकृत्य गच्छामि।

स तावदस्माद्व्यसनार्णवोत्थितं
निरीक्ष्य साधु :समुपैति निर्वृतिम्।
शरीरमेतत् गतमीदृशीं दशां
धृतं मया तस्य महात्मनो गुणै:।।4।।

अन्वय- : साधु:, स: , अस्मात्, वसनार्णवोत्थितम्, निरीक्ष्य, निर्वृत्तिम्, समुपैति। मया, ईदृशीम्, दशाम्, गतम्, एतत्, शरीरम्, तस्य, महात्मन:, गुणै:, धृतम् ।।4।।

हिन्दी अनुवाद -अरे वाह, मैं तो अब शहर से बहुत दूर बाहर निकल आया हूँ , तो क्यों न, गाड़ी से चुपके उतर कर इन सघन पेड़ों की ओट में छिपकर निकल जाऊँ। अथवा -इस गाड़ी के मालिक से ही क्यों न मिल लूँ पेड़ो की ओट से भाग निकलना अच्छा नहीं होगा। हमने सुना है -आर्य चारूदत्त शरणागतवत्सल हैं तो मिलकर ही जाना ठीक होगा।

उस भले आदमी को इस विपत्तिरूपी सागर से उबरा हुआ मुझे देख कर परम सुख का अनुभव होगा। क्योंकि ऐसी संकटमयी स्थिति में पड़ी मेरी देह उसी साधु पुरूष के गुणों से अब तक सुरक्षित है **।। 4 ।।**

चेट - :इदं तदुद्यानम्, तद् यावदुपसर्पामि। आर्य मैत्रेय?

हिन्दी अनुवाद- चेट -यह वह फुलवारी है तो चलूँ।पहुँच कर आर्य मैत्रेय,

विदूषक - :भो! : प्रियं ते निवेदयामि, वर्द्धमानको मन्त्रयति, आगतया वसन्तसेनया भवितव्यम्।

विदूषक -मित्र, तुम्हें मैं खुशखबरी सुनाता हूँ ,वर्द्धमानक बुला रहा है; वसन्तसेना आ गई होगी?

चारूदत्त -: प्रियं न : प्रियम्।

चारूदत्—निश्चय ही हमारे लिए यह खुशखबरी है।

विदूषक -: दास्या :पुत्र! किं चिरायितोऽसि ?

विदूषक - अरे ओ नीच तुमने इतनी देर क्यों लगा दी।

चेट -:आर्य! मैत्रेय! मा कुप्य। यानास्तरणं विस्मृतमिति कृत्वा गतागतिं कुर्वन् चिरायितोऽस्मि।

चेट -मान्यवर, गुस्सा न करें, गाड़ी का गद्दा भूल गया था अत :उसे लाने के क्रम में आने-जाने के

कारण कुछ देर हो गई।

चारूदत्त -:वर्द्धमानक! परिवर्त्तय प्रवहणम्। सखे ! मैत्रेय! अवतारय वसन्तसेनाम्।

चारूदत्त -वर्द्धमानक, गाड़ी घुमाओ। मैत्रेय, वसन्तसेना को उतारो।

विदूषक -:किं निगडेन बद्धावस्या :पादौ? येन स्वयं नावतरति। भो :न वसन्तसेना, वसन्तसेन : खल्वेष:।

विदूषक -क्या इनके पैर में बेड़ी पड़ी है, जिससे खुद उतर नहीं रही हैं?) उठकर गाड़ी को खोलकर मित्र, यह वसन्तसेना नहीं, वसन्तसेना नहीं, वसन्तसेन है।

चारूदत्त-: वयस्य! अलं परिहासेन, न कालमपेक्षते स्नेह:। अथवा स्वयमेवावतारयामि। इत्युत्तिश्ठति।

चारूदत्त-क्यों मजाक करते हो। प्रेम विलम्ब नहीं चाहता। अथवा-मैं स्वयं ही उतार लेता हूँ। उतारने के लिए उठता है।

आर्यक : दृष्ट्वा (अये! अयमेव प्रवहणस्वामी न केवलं श्रुतिरमणीय:, इृष्टिरमणीयोऽपि। हन्त! रक्षितोऽस्मि।

आर्यक -देखकर तो क्या यही गाड़ी के मालिक है। यह सुनने में ही नहीं देखने में भी रमणीय हैं। वाह, अब मेरी रक्षा निश्चित हो गई।

चारूदत्त -: प्रवहणंमधिरूह्य अये। तत् कोऽयम् ?

करिकर-समबाहु :सिंहपीनोन्नतांस:

पृथुतर-सम-वक्षास्ताम्रलोलायताक्ष:।

कथमिदमसमानं प्राप्त एवंविधो या

वहति निगडमेकं पादलग्नं महात्मा।।5।।

तत :को भवान् ?

अन्वय -:य:, महात्मा, करिकरसमबाहु :सिंहपीनोन्नतांस, पृथुतरसमवक्षा:, ताम्रलोलायताक्ष:, इदम्, असमानम्, प्राप्त:, पादलग्नम्, एकम्, निगडम्, कथम्, वहति। ।।5।।

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त -गाड़ी पर चढकर अरे तब यह कौन है?

तब आप कौन है ?इसकी बॉहें हाथ की सूडँ की तरह हैं, सिंह की तरह मोटे एवं ऊँचे कन्धे हैं, एवं चौडी छाती है, तॉवे के रंग की चंचल काली कजरारी ऑखें हैं। इस तरह में यह कोई महान् व्यक्ति प्रतीत होता है। फिर भी, इसके व्यक्तित्व के प्रतिकूल इसके पैर में बेड़ी क्यों पड़ी है।।5।।

आर्यक -: शरणागतो गोपालप्रकृतिरार्यकोऽस्मि।

आर्यक -मैं गोपबालक आर्यक एक शरणार्थी हूँ।

चारूदत्त : किं घोषादानीय योसौ राज्ञा पालकेन बद्ध:?

चारूदत्त - क्या आप वही आर्यक है जिसे राजा पालक ने घर से निकाल कर जेल में बन्द कर दिया था?

आर्यक -:अथ किम्।

हिन्दी अनुवाद -आर्यक -जी हॉ, मैं वही आर्यक हूँ।

चारूदत्त - :विधिनैवोपनीतस्त्वं चक्षुर्विषयमागत:।

अपि प्राणानहं जह्यां न तु त्वां शरणागतम् ।।6।।

आर्यको हर्षं नाटयति।

अन्वय - :त्वम्, विधिना, एव, उपनीत:, चक्षुर्विषयम्, आगत:, अहम्, प्राणान्, अपि,जह्याम्, तु, शरणागतम्, त्वाम्, न **।।6।।**

चारूदत्त -हे आर्यक, तुम्हारे भाग्य ने तुम्हें ऑखों के सामने ला पटका है, मैं अपनी जान दे सकता हूँ, पर तुम्हारी रक्षा करूँगा ।।6।।

आर्यक खुश हो जाता है

चारूदत्त -: वर्द्धमानक!: चरणान्निगडमपनय।

चारूदत्त -गाड़ीवान् इनके पैर की बेड़ी काटो।

चेट -:यदार्य आज्ञापयति। आयं! अपनीतानि निगडानि।

चेट -जैसी आप की आज्ञा वैसा ही करके आर्य, बेड़ी काट दी गई है।

आर्यक -:स्नेहमयान्यन्यानि दृढतराणि दत्तानि।

आर्यक -तुमने अपनी प्रेमरूपी दूसरी कठिन बेड़ी डाल दी है।

विदूषक -:संगच्छ निगडानि, एषोऽनि, मुक्त:, साम्प्रतं वयं व्रजिष्याम:।

विदूषक -बेड़ी कटी , ये भी महाशय मुक्त हुए, अब हमलोग वसन्तसेना की खोज में लगें।

चारूदत्त -:धिक्, शान्तम्।

चारूदत्त -रहने दो, ऐसी बातें मुँह से भी नहीं निकालो

आर्यक -: सखे! चारूदत्त!अहमपि प्रणयेनेदं प्रवहणमारूढ :तत्क्षन्तव्यम्।

आर्यक-मित्र,मैं तो उत्सुकतावश इस गाड़ी पर सवार हो गया था। इसके लिए आप मुझे क्षमा कर दें

चारूदत्त- : अलंकृतोऽस्मि स्वयंग्राहप्रणयेन भवता।

चारूदत्त -आप अपनी इच्छा से इस गाड़ी पर चढ़े हैं, इससे तो कुछ मेरी शोभा ही बढ़ी है।

आर्यक -:अभ्यनुज्ञातो भवता गन्तुमिच्छामि।

आर्यक -आप का हुक्म लेकर अब मैं जाना चाहता हूँ।

चारूदत्त -: गम्यताम् ।

चारूदत्त - आप जॉय ।

आर्यक -:भवतु, अवतरामि ।

आर्यक – अच्छ, उतरता हूँ ।

चारूदत्त -:सखे! नावतरितव्यम् । प्रत्यग्रापनीतसंयमनस्य भवतोलघुसंवारा गति :। प्रदेशे प्रवहणं विश्वासमुत्पादयति, तत् प्रवहणेनैव गम्यताम् ।

चारूदत्त -मित्र गाड़ी से मत उतरो । सिपाही घूम रहे हैं । तुम्हारे पैर से बेड़ी अभी ही कटी है। तुम ठीक से अभी चल नहीं सकते । गाड़ी तुम्हारे लिए निरापद है। अत :इसी से जाओ।

आर्यक -:यथाह भवान् ।

आर्यक -आपकी जैसी आज्ञा हो।

चारूदत्त -:क्षेमेण व्रज बान्धवान्,

आर्यक -:ननु मया लब्धो भवान् बान्धवः,

चारूदत्त -:स्मर्त्तव्योऽस्मि कथान्तरेषु भवता,

आर्यक -:स्वात्मापि विस्मर्यते ?।

चारूदत्त -:त्वां रक्षान्तु पक्षि प्रयान्तममराः,

आर्यक -:संरक्षितोऽहं त्वया,

चारूदत्त -:स्वैर्भाग्यैः परिरक्षितोसि,

आर्यक - ननु हे! तत्रापि हेतुर्भवान्।।7।।

अन्वय -:चारूदत्त:, बान्धवान् , क्षेमेण, व्रज । आर्यक-:ननु मया, भवान्, बान्धवः, लब्धः। चारूदत्त -:भवता, कथान्तरेषु, स्मर्त्तव्य :, अस्मि । आर्यक -:स्वात्मा, अपि, विस्मर्यते ? चारूदत्त-:अमराः, पथि, प्रयान्तम्, त्वाम्, रक्षन्तु, । आर्यक -:त्वया, अहम्, संरक्षितः। चारूदत्त- : स्वैः, भाग्यैः, परिरिक्षतः, असि । आर्यक-:हे, तत्रापि, ननु, भवान्, हेतुः।।7।।

चारूदत्त -सकुशल आप अपने बन्धुजनों से मिलें ।

आर्यक -मैं तो आपको ही अपना बन्धु मानता हूँ ।

चारूदत्त -फुरसत के समय मुझे भी याद कर लेना

आर्यक -क्या अपनी आत्मा को भी कोई भूलता है ?

चारूदत्त -जाते हुए रास्ते में तुम्हारी रक्षा देवता करें ।

आर्यक -मेरी रक्षा तो आपने ही कर दी ।

चारूदत्त -नहीं , तुम्हारी रक्षा तो तुम्हारे भग्य ने की है ।

आर्यक -हॉं मित्र, उस भाग्य में भी तुम्ही करण हो **।।7।।**

चारूदत्त -:यत्, उद्यते पालके महती रक्षा न वर्त्तते, तत् शीघ्रमपक्रामतु भवान्।

चारूदत्त - राजा पालक तुम्हीं पकड़ने की हर सम्भव कोशिश कर रहा है। अत :तुम्हारी रक्षा अभी खतरे में है। तुम यहॉं से शीघ्र भाग जाओ ।

आर्यक -:एवं पुनर्दर्शनाय। इति निष्क्रान्त

आर्यक – पुन : देव दर्शन के लिए चला जाता है

चारूदत्त -:

कृत्वैवं मनुजपतेर्महद्व्यलीकं,
स्थातुं हि निगडं प्रशस्तमस्मिन्।
मैत्रेय ! क्षिप निगडं पुराणकूपे
पश्येयु :क्षितिपतयो हि चारदृष्टया ।।8।।

अन्वय -:हे मैत्रेय, एवम्, मनुजपते:, महद्, व्यलीकम्, कृत्वा, अस्मिन,क्षणम् अपि, स्थातुम्, न, प्रशस्तम्।निगडम्, पुराणकूप, क्षिप्तं हि, क्षितिपतय:, चार -दृष्टया पश्येयु:।।8।।

चारूदत्त -इस तरह राजकीय अपराध करके इस बगीचे में अब एक क्षण भी रूकना भी उचित नहीं है। मैत्रेय, इस बेड़ी को जल्द किसी पुराने कुँए में फेंककर यहॉं से भागो। क्योंकि राजा दूत की ऑंखों से देखता है **।।8।।**

वामाक्षिस्पन्दनं सूचयित्वा सखे! मैत्रेय ! वसन्तसेनादर्शनोत्सुकोऽयं जन:। पश्य -

अपश्यतोद्य तां कान्तां वामं स्फुरति लोचनम्।
अकारणपरित्रस्तं हृदयं व्यथते मम ।।9।।

अन्वय -:अद्य, ताम्, कान्ताम्, अपश्यत:, मम, वामम्, लोचनम्, सफुरति, अकारणपरित्रस्तम्, हृदयम्, व्यथते ।।9 ।।

हिन्दी अनुवाद -वाई ऑंख फड़कती है। मैत्रेय, अब मैं वसन्तसेना को शीघ्र देखने के लिए अति आकुल हो उठा हूँ। देखो -

प्रियतमा वसन्तसेना ऑंखों से दूर है और मेरी वाई ऑंख फड़क रही है। बिना कोई कारण मेरा मन अकुला रहा है **।।9 ।।**

तदेहि,गच्छाव:।परिक्रम्य कथमभिमुखमनाभ्युदयिकं श्रमणकदर्शनम्। विचार्य प्रविशत्वयमनेन पथा। वयमप्यनेनैव पथा गच्छाम:। इति निष्क्रान्त:। इत्यार्यकापहरणं नाम सप्तमोऽङ्क:।

तो फिर आओ हम चले ही। घूमकर हाय! सिर मुड़ाते ही ओले पड़े सामने ही ये अमागलिक बौद्ध संन्यासी के दर्शन हुए कुछ सोच कर अच्छा तो फिर ये इस रास्ते से जॉय, हम भी इसी

रास्ते से चलें। च छोड़कर सभी चले जाते है। इसी के साथ सातवॉ अंक समाप्त हो जाता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. निम्नलिखित प्रश्नों के एक शब्द में उत्तर दीजिए -

1. चारूदत्त को पेड .किसकी भॉति लग रहे हैं-

2. क्रय विक्रय की वस्तु क्या है -

3. भौरे किसके द्वारा कर वसूलते हैं -

4. राजा के सैनिकों को क्या कहा गया है-

5. किसका आना शुभ समाचार है -

2. निम्नलिखित में सही विकल्पचुन कर उत्तर दीजिए-

1. परभृत का अर्थ है -

क -कोकिल ख -कौवा ग -काजल घ -कोई नहीं

2. गतागतिम् का अर्थ है -

क -यातायात ख-जाना ग-गति-अगति घ -गमन

3. शाकटिकया वर्द्धमानक कौन है -

क -गाड़ीवान ख-कोषाध्यक्ष ग-मन्त्री घ -सैनिक

4. क्षेमण में विभक्ति है -

क -द्वितीया ख -चतुर्थी ग-तृतीया घ -कोई नहीं

5. कान्ता का किस अर्थ में प्रयोग है -

क -पत्नी ख -प्रिया ग-प्रेमी घ-पति

17. 4 सारांश -

सप्तम अंक के वर्णन से सम्बन्धित इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि सर्वप्रथम चारूदत्त और विदूषक के बीच क्या वार्तालाप हुए। इसके पश्चात् चारूदत्त के सम्बन्ध में आर्यक के कथन विस्तृत हैं जिसमें उसके गुणों का प्रख्यापन किया गया है। आर्यक एक गोप बालक शरणार्थी है जिसे राजा पालक के द्वारा घर से निकालकर जेल में बन्द कर दिया गया था। चारूदत्त उसकी रक्षा का भरोसा देते हुए उसके पैरों की बेड़ी गाड़ीवान के द्वारा कटवा देता है, किन्तु इस पर अभिभूत लेकर आर्यक चारूदत्त से कहता है कि आपने मुझे ऐसा करके प्रेम की बेड़ी में फसा दियाहै। इसके पश्चात् सभी वसन्तसेना की खोज में लग जाते है। आर्यक जाना चाहता है किन्तु चारूदत्त उसे अपनी गाड़ी को सुरक्षित स्थान बताते हुए जाने से मना कर देता है। किन्तु अब क्षणभर भी वहॉ

रूकना नही चाहता। पुन:वसन्तसेना से मिलने की इच्छा प्रकट करते हुए अपशकुन का वर्णन प्राप्त है। चारूदत्त कहता है कि सिर मुड़ाते ही ओले पड़े अब तो किसी अमांगलिक बौद्ध सन्यासी के दर्शन हो गये। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि सप्तम अंक में चारूदत्त ने किसप्रकार की उदारता का प्रदर्शन कर आर्यक को बन्धन मुक्त किया एवं सप्तम अंक का साहित्यिक तथा सामाजिक वैशिष्ट्य क्या है।

17.5 शब्दावली –

1.वयस्य -यह नाटक की भाषा में मित्र के लिए सम्बोधन स्वरूप प्रयुक्त किया जाता है।

2. पण्यानि – विक्रय की जाने वाली वस्तु को पण्य कहते है, उसी का बहुवचन है पण्यानि।

3. लघु लघु आगच्छ -त्वरित या जल्दी आने के लिए शब्द का प्रयोग किया गया है।

4 . अहो -नाटकों में इस शब्द का प्रयोग विस्मय सूचक अव्यय के रूप में किया जाता है।

5. अभ्युपन्नवत्सल – शरण में आने वाले पर कृपा करके उसकी रक्षा करने वाला अर्थात् शरणागतवत्सल।

17. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.प्रश्नों के एक शब्द में उत्तर -

1.बनिया 2. फूल 3.राजपुरूष 4.नरपतिपुरूष 5. वसन्तसेना

2. सही उत्तर-

1. क 2. क 3. क 4.ख 5.ख

17. 7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

17. 8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. सप्तम अंक के श्लोक संख्या 1, 2 व तीन के सन्दर्भ सहित अनुवाद कीजिए।

2. सप्तम अंक की साहित्यिक विशेषता लिखिए।

3. सप्तम अंक का सारांश अपने शब्दो में लिखिए।

इकाई 18श्लोक संख्या 1से 24तक मूलपाठ,अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
18.2 उद्देश्य
18.3 श्लोक संख्या 1से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
18.3. 1श्लोक संख्या 1 से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
18.3.2 श्लोक संख्या 10से 15 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
18.3.3 श्लोक संख्या 16से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
18.4 सारांश
18.5 पारिभाषिक शब्दावली
18.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
18.7 संदर्भग्रन्थ
18.8 निबन्धात्मक प्रश्न

18. 1प्रस्तावना -

मृच्छकटिकम् प्रकरण के अध्ययन से सम्बन्धित यह अठारहवी इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप अष्टम अंक के प्रथम श्लोक से लेकर चौबीसवें श्लोक तक किये गये वार्तालापों एवं श्लोको में वर्णित साहित्यिक एवं व्याकरणात्मक विषयों का भी अध्ययन करेंगे।

आठवें अंक का प्रारम्भ भीगा हुआ भगवा हाथ में लिए हुए बौद्ध सन्यासी के प्रवेश से होता है जिसकी सूचना पूर्व की इकाई में अन्त में चारूदत्त के द्वारा दी गयी है। वह धर्म का उपार्जन करने की बात करता है, ध्यान करने का उपदेश और जितेन्द्रिय होकर आचरण करने की बात करता है। संसार नश्वर है अत :धर्म की शरण में रहो। उसके इन कथनों पर नेपथ्य से उसे नीच बौद्ध सन्यासी कहा जाता है जिसे वह पहचान कर राजा के साले संस्थान के रूप में परिचय देकर अगली बात कहता है। इसके बाद शकार विट और भिक्षु आदि के बीच अनेक सम्वाद हुए हैं। जिनका अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप अष्टम अंक के श्लोक सं 1 से चौबीस तक के विभिन्न वैशिष्ट्यों को बता सकेंगे।

18. 2 उद्देश्य–

मृच्छकटिकम-प्रकरण के आठवें अंक के अध्ययन हेतु प्रस्तुत इस इकाई के अध्ययन के बाद आप बतायेंगे कि-

- प्रवेश के पश्चात बौद्ध सन्यासी ने क्या कहा।
- राजा का साला सन्यासी से किस प्रकार की वार्ता करता है।
- नेपथ्य से सन्यासी का अपमान कौन करता है।
- गुणगान और स्तुति में क्या अन्तर है।
- कामनाएं किस कारण और तीव्र होती हैं।
- पाप और पुण्य का साक्षी कौन है।
- इस इकाई के वर्ण्य विषय की विशेषता क्या है।

आठवें अंक का प्रारम्भ तत: प्रविशति आर्द्रचीवरहस्तो भिक्षु

भिक्षु -:अज्ञा! कुरूत धर्मसञ्चयम्।

संयच्छत निजोदरं नित्यं जागृत ध्यानपटहेन।

विषमा इन्द्रिय चौरा हरन्ति चिरसञ्चितं धर्मम् ।।1।।

अपि च, अनित्यतया प्रेक्ष्य केवलं तावद्धर्माणां शरणमस्मि।

अन्वय -:निजोदरम्, संयच्छत, ध्यानपटहेन, नित्यम्, जाग्रत, विषमा:, इन्द्रियचौरा:,चिरसञ्चितम्, धर्मम्, हरन्ति **।।1।।**

हिन्दी अनुवाद -इसके बाद भीगा भगवा हाथ में लिये संन्यासी का प्रवेश

संन्यासी -हे पुरूषों, धर्म का उपार्जन करो। अपने पेट को नियंत्रण में रक्खों , ध्यानरूपी नगाड़े से हमेशा जगते रहो, क्योंकि ये इन्द्रियॉ अतिशक्तिशालिनी है, चिरकालोपार्जित धर्म भी ये सहसा अपहृत कर लेती है ।।1।।

और धर्म के अतिरिक्त सम्पूर्ण संसार को नश्वर समझ कर ही मैं धर्म की शरण में आया हूँ।

पन्चजना येन मारिता :स्त्रियं मारयित्वा ग्रामो रक्षित:।

अवलश्च चाण्डालो मारित :अवश्यमपि स नर :स्वर्ग गाहते ।।2।।

शिरो मुण्डितं तुण्डं मुण्डितं चित्तं न मुण्डितं किमर्थ मुण्डितम् ?।

यस्य पुनश्व चित्तं मुण्डितं साधु शिरस्तस्य मुण्डितम् ।।3।।

अन्वय -:येन, पञ्चजना:, मारिता:, स्त्रियम्, मारयित्वा, ग्राम:, रक्षित:, अबल :चाण्डाल:, च मारित:, स, नर:, अवश्यम्, स्वर्गम् अपि गाहते ।।2।।

अन्वय -:यस्य, शिर:, मुण्डितम्, तुण्डम्, मुण्डितम्,चित्तम्, न, मुण्डितम् तदा किमर्थम्, मुण्डितम्, यस्य च, चित्तम्, साधु, मुण्डितम्, तस्य, शिर:, सुष्ठु, मुण्डितमम्, ।।3।।

हिन्दी अनुवाद -जिसने पञ्चज्ञानेन्द्रियों को नियंत्रित कर लिया, अविद्यारूपी स्त्री को मारकर शरीर रूपी ग्राम की रक्षा कर ली है तथा घमण्ड या कामरूपी निर्बल चाण्डाल का जिसने बध कर डाला है, निश्चय ही वह स्वर्ग जाता है ।।2।।

जिसने सिर मुंडा लिया , दाढी मुँडा ली, किन्तु मन नहीं मुड़ाया, उसने कुछ भी नहीं मुँडाया और जिसने अपने मन से विषय वासना को हटा दिया, निश्चय ही उसी का सिर मुँडाना सार्थक है ।।3।।

गृहीत-काषायोदकमेतत् चीवरम्, यावदेतत् राष्ट्रियश्यालकस्य उद्याने प्रविश्य पुश्करिण्यां प्रक्षाल्य लघुलघु अपक्रमिष्यामि।

यह भगवॉ अब काफी गेरूआ रंग सोख चुका है, जल्दी-जल्दी , राजा के साले के बगीचे में घुसकर उसी सरोवर में इसे धोकर निकल जाऊँ। जाकर वैसा ही करता है।

नेपथ्ये - तिष्ठ, रे दुष्टश्रमणक ! तिष्ठ।

हिन्दी अनुवाद -नेपथ्य में ठहर, रे नीच, बौद्ध संन्यासी तू ठहर।

भिक्षु -:आश्चर्यम्! एष स राज-श्याल-संस्थानक आगत:। एकेन भिक्षुणा अपराधे कृते, अन्यमपि यस्मिन् यस्मिन् भिक्षुं प्रेक्षते, तस्मिन् गामिव नासिकां विद्ध्वा अपवाहयति। तत् कस्मिन् अशरण :शरणं गमिष्यामि ? अथवा भट्टारक एव बुद्धो मे शरणम्।

प्रविश्य सखड्गेन विटेन सह शकार:।

भिक्षु -देखकर, डरते हुए (हाय, हाय यह तो राजा का साला संस्थान आ गया, यह दुष्ट तो किसी एक सन्यासी को देखता है -बैल की तरह उसकी नाक में नथ डाल कर, पीट-पीट कर बाहर खदेड़ देता है। मैं तो बिल्कुल असहाय हूँ किसकी शरण जाऊँ ? अथवा – भगवान् बुद्ध ही मेरे संरक्षक हैं। तलवार लिए हुए विट के साथ शकार का प्रवेश

शकार -:तिष्ठ,रे दुष्टश्रमणक !तिष्ठ ।आपानक-मध्य–प्रविष्टस्येव रक्तमूलकस्य शीर्ष ते भङ्क्ष्यामि।

शकार – ठहर रे नीचे संन्यासी, ठहर, मदिरा पीने वालों के बीच आई हुई लाल मूली की तरह तुम्हारा माथा फोड़ता हूँ। मारता है।

विट -:काणेलीमात! : न युक्तं निर्वेद-धृत-कषायं भिक्षुं ताडयितुम्। तत् किमनेन। इदं तावत् सुखोपगम्यमुद्यानं पश्यतु भवान्।

अशरण-शरण-प्रमोदभूतैर्वनतरूभि : क्रियमाण-चारू कर्म।

हृदयमिव दुरात्मनामगुप्तं नवमिव राजयमनिर्जितोपभोग्यम् ।।4।।

अन्वय -:शरणशरणप्रमोदभूतै:, वनतरूभि:, क्रियमाणचारूकर्म, दुरात्मनाम्, हृदयमिव , अगुप्तम्, नवम् राज्यमिव, अनिर्जितोपभोग्यम् उद्यानं पश्य।

विट -अरे ओ कुँआरी मॉं के बेटे,गैरिकवस्त्रधारी विरागी संन्यासी को भी कोई मारता है ? इससे झगड़ने से भला कया लाभ ?सुख प्राप्य इस वाटिका की निराली छटा तो देखो। घरहीनों के लिए आश्रयभूत, आनन्ददायक इन पेड़ो के परोपकारी काम को तो देखो। यह दुष्टों के दिल की तरह सामान्य सर्वगम्य तथा नवीन राज्य की तरह अनियंत्रित उपभोग्य फल को देने वाला है **।।4।।**

भिक्षु -:स्वागतम्, प्रसीदतु उपासक:।

शकार -:भाव! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व। आक्रोशति माम्।

विट -:किं ब्रवीति?

शकार -:उपासक इति मां भणति। किमहं नापित :?

विट -:बुद्धोपासक इति भवन्तं स्तौति।

शकार -:स्तुनु श्रमणक! स्तुनु।

भिक्षु -:त्वं धन्य:, त्वं पुण्य :।

शकार :भाव! धन्य :पुण्य इति मां भणति, किमहं श्रावक:, कोष्ठक:, कुम्भकारो वा ?

विट -:भाव! तत् केन एष इहागत :?

भिक्षु -:इदं चीवरं प्रक्षालयितुम्।

शकार -:अरे दुष्टश्रमणक! एतन्मम भगिनीपतिना सर्वोद्यानानां प्रवरं पुष्पकरण्डकोद्यानं दत्तम्, यस्मिन् तावत् शुनका :श्वृनका :श्वृगाला :पानीयं पिबन्ति , अहमपि प्रवरपुरूषो नस्नामि। तस्यां त्वं पुष्करिण्यां पुराणकुलुत्थ-यूथ-शबलानि दूष्यगन्धीनि चीवराणि प्रक्षालयसि । तत् त्वामेकप्रहारिकं करोमि।

विट -:काणेलीमात! : तथा तर्कयामि, यथा अनेन अचिरप्रव्रजितेन भवितव्यम्।

शकार -:कथं भावो जानाति ?

हिन्दी अनुवाद -भिक्षु -मैं आप का स्वागत करता हूँ। उपासक प्रसन्न हों।

शकार -आत्मन्, देखो तो यह गाली बक रहा है।

विट -क्या कहता है ?

शकार-मुझे उपासक कहता है। क्या मैं हज्जाम हूँ ?

विट -बुद्ध का उपासक कहकर यह आप की प्रशंसा करता है।

शकार-प्रशंसा करो, सन्यासी प्रशंसा।

भिक्षु -आप प्रशंसनीय, आप पवित्र हैं।

शकार हे विद्वान्,यह मुझे – 'धन्य पुण्य' कह रहा है। क्या मैं चारण, जुआरी या कुम्हार हूँ।

विट -रे पुंश्चलीपुत्र, यह तुम्हें धन्य कहता है, तुम्हें पुण्यात्मा कहकर तुम्हारी प्रशंसा करता है।

शकार -महाशय, तो फिर यह इस बगीचे में क्या लेने आया है ?

भिक्षु -इस भगवे को धोने के लिए।

शकार -रे दुष्ट संन्यासी, मेरे जीजा राजा पालक ने य श्रेष्ठतम पुष्पकरण्डक उद्यान मुझे दिया है। इसमें कुत्ते और सियार पानी पीते हैं। यहॉ तक की प्रधान पुरूष मैं मनुष्य होकर भी इसमें स्नान नहीं करता हूँ । उस स्वच्छ जलाशय में तुमने पुरानी कुलथी के चूर्ण से रंगे बदबू फैलाते भगवे को धोया है। अत :मैं तुम्हें एक वेंत की मार खाने की सजा देता हूँ।

विट -पुंश्वली पुत्र, मेरा अनुमान है कि यह हाल में ही बौद्ध सन्यासी बना है।

शकार -आप यह कैसे जानते हैं ?

विट -:किमत्र ज्ञेयम्। ज्ञेयम्। पश्य –

अद्याप्यस्य तथैव केशविरहाद्गौरी ललाटच्छवि:
कालस्याल्पतया च चीवरकृत :स्कन्धे न जात किण:।
नाभ्यस्ता च कषाय-वस्त्र- रचना दूरं निगूढान्तरो
वस्त्रान्तश्च पटोच्छयात् प्रशिथिलं स्कन्धे न सन्तिष्ठते ।।5।।

अन्वय -:अद्य, अपि, केशविरहात्, अस्य, ललाटच्छवि:, तथैव, गौरी, कालस्य, अल्पतया, स्कन्धे, चीवरकृत:, किण:, च, न, जात:, कषायवस्त्ररचना, च, न, अभ्यस्ता, दूरम्, निगूढान्तरम्, पटोच्छयात्, प्रशिथिलम्, वस्त्रान्तम्, च, स्कन्धे, न, सन्तिष्ठते ।।5।।

विट -इसमें जानने की बात ही क्या है। देखो -

आज भी, बालों के मुंडवा देने से इसके लिलार का रंग वैसा ही गोरा है, बहुत कम समय होने के कारण इसके कंधे पर झोले लटकाने का घट्टा नहीं पड़ा है। अभी तक इसने गेरूआ वस्त्र तक भी पहनना नहीं सीखा है। इसे भगवा रंगना भी नहीं आता है। इसके लम्बे और ढीले काले उत्तरीय वस्त्र के छोर कन्धे पर टिक नहीं पा रहे हैं **।।5।।**

भिक्षु -:उपासक! एवम् अचिरप्रव्रजितोऽहम्

भिक्षु - हॉ उपासक, तुम्हारा कथन बिल्कुल सत्य है। मैंने हाल में ही सन्यास ग्रहण किया है।

शकार -:तत् केन त्वं जातमात्र एव न प्रव्रजित :?

शकार -तो, जन्म लेते ही तुमने सन्यास क्यों नहीं ग्रहण किया? पीटता है

भिक्षु -:नमो बुद्धाय।

हिन्दी अनुवाद -भिक्षु -भगवान बुद्ध को नमस्कार है।

विट -:किमनेन ताडितेन तपस्विना? मुच्यतां, गच्छतु।

विट -इस गरीब को भला पीटने से क्या फायदा ? छोड़ो, इसे जाने दो।

शकार -:अरे! तिष्ठ तावत्, यावत् सम्प्रधारयामि।

शकार -अरे रूको तो, इसके जाने के बारे में थोड़ा विचार तो कर ही लूँ।

विट -:केन सार्द्धम् ?

विट -किसके साथ

शकार -:आत्मनो हृदयेन।

शकार -:अपने मन के साथ।

विट : हन्त! न गत :।

विट : क्या सन्यासी भागा नही।

शकार -:पुत्रक! हृदय !भट्टारक ! एष श्रमणक :अपि नाम किं गच्छतु, किं तिष्ठतु ? नापि गच्छतु, नापि तिष्ठतु। भाव ! सम्प्रधारितं मया हृदयेन सह। एतन्मम हृदयं भणति।

शकार-:, बेटे , मालिक, -क्या यह बौद्ध सन्यासी चला जाय या ठहरे मन ही मन ठहरे, न जाय, प्रकट विद्वान् मैंने मन से पूछ लिया है, मेरा मन कहता है।

विट -:किं ब्रबीति?

विट –क्या कहता है ?

शकार -:मापि गच्छतु, मापि तिष्ठतु, मापि उच्छ्वसितु, मापि नि:श्वसितु।इहैव झटिति पतित्वा म्रियताम्।

शकार -यह न जाय, न रूके, न सांस ले, न सांस छोड़े; सीधे गिर कर मर जाय।

भिक्ष -:नमो बुद्धाय। शरणागतोऽस्मि।

भिक्षु – भगवान बुद्ध को प्रणाम है। मैं शरणागत हूँ, मुझे बचाओ।

विट -:गच्छतु।

विट -जाओ।

शकार -:ननु समयेन।

शकार -एक ही शर्त्त पर।

विट -:कीदृश :समय :?

विट -वह क्या ?

शकार -:तथा कर्द्दमं क्षिपतु,यथा पानीयं पङ्काविलं न भवति। अथवा पानीयं पुञ्जीकृत्य कर्द्दमे क्षिपतु।

शकार -पानी में कीचड़ इस तरह फेंके कि पानी गन्दा न हो अथवा पानी ही इकट्ठा कर कीचड़ में फेंके।

विट -: अहो मूर्खता!

विपर्यस्तमनश्चेष्टै :शिला-शकल-वर्ष्मभि :।
मांसवृक्षैरियं मूर्खेर्भाराक्रान्ता वसुन्धरा ।।6।।

अन्वय -:विपर्यस्तमनश्चेष्टै:, शिलासकलवर्ष्मभि:, मांसवृक्षै:, मूर्खे:, इयम्, वसुन्धरा, भाराक्रान्ता वर्तते। भिक्षुर्नाट्येन आक्रोशति।

विट -हाय रे, बेवकूफी –

विपरीत बुद्धिवाले, पत्थरदिल, मांसल देह मूर्खो के द्वारा ही धरती भारतवती है ।।6।।

भिक्षु हावभाव से गलियाता है।

शकार -:किं भणति ?

शकार-यह क्या करता है।

विट -:स्तौति भवन्तम्।

विट -आपका गुणगान करता है।

शकार -:स्तुनु स्तुनु, पुनरपि स्तुनु।

तथा कृत्वा निष्क्रान्तो भिक्षु:।

शकार- थोड़ा और गुणगान करो फिर से स्तुति करो।

वैसा करके भिक्षुक चला जाता है।

विट -:काणेलीमात :पश्योद्यानस्य शोभाम्।

विट – अरे ओ व्यभिचारिणी के बेटे, जरा बगीचे की छटा तो निहारो-

अमी हि वृक्षा :फल-पुष्प-शोभिता
कठोर-निष्पन्द-लतोपवेष्टिता:।
नृपाज्ञया रक्षिजनेन पालिता
नरा सदारा इव यान्ति निर्वृतिम् ।।7।।

अन्वय-:फलपुष्पशोभिता:,कठोरनिष्पन्दलतोपवेष्टिता:,अमी,वृक्षा:, नृपाज्ञया, रक्षिजनेन,पालिता:, सदारा:, नरा:, इव, निर्वृत्तिम्, यान्ति ।।7।।

हिन्दी अनुवाद -सिपाहियों से सुरक्षित, फल, फूलों से लदे,मोटी मोटी लताओं से लिपटे ये पेड़ निष्कम्प वातावरण में पत्नी के साथ प्रसन्न पुरूष की तरह सुखी लगते हैं ।।7।।

शकार:- बहुकुसुमविचित्रिता च भूमि :कुसुमभरेण विनामिताश्च वृक्षा:।
द्रुम-शिखर-लता च लम्बमाना:, पनसफलानीव वानरा ललन्ति ।। ।।8।।

अन्वय -:भूमि:, च, बहुकुसुमविचित्रिता, वृक्षा:, च, कुसुमभरेण, विनामिता, द्रुमशिखरलता, च, लम्बमाना, वानरा :पनसफलानि, इव, ललन्ति ।।8।।

शकार -आपने बहुत ठीक कहा।

अनेक रंग के फूलों के चूकर गिरने के कारण बगीचे की धरती रंग बिरंगी हो गई है, पेड़ की ऊँची डालियॉ फल-फूलों के बोझ से झुक गये हैं। ऊपर की टहनियों में लटके बानर, कटहल की तरह लग रहे हैं ।।8।।

विट -:काणेलीमात! : इदं शिलातलमध्यास्यताम् ।

विट - ओ काणेलीसुत, इस पत्थर के टुकड़े पर बैठ जाओ।

शकार -:एषोऽस्मि आसित:। भाव! अद्यापि तां वसन्तसेनाम् स्मरामि, दुर्जनवचनमिव हृदयान्नपसरति ।

शकार -लो बैठ गया, विट के साथ बैठ जाता है । महाशय, मैं आज भी उस वसन्तसेना को भूल नहीं पाता हूँ, दुष्टों के दुर्वचन की तरह हृदय से उसकी स्मृति हटती ही नहीं है।

विट -:स्वागतम् तथा निरस्तोऽपि स्मरति ताम् । अथवा-

स्त्रीभिर्विमानितानां कापुरूषाणां विवर्द्धते मदन:।
सत्पुरूषस्य स एव तु भवति मृदुर्नेव वा भवति ।।9।।

अन्वय -:स्त्रीभि:, विमानितानाम्, कापुरूषाणाम्,मदन:, विवर्धते, तु, सत्पुरूषस्य, स, एव, मृदु:, भवति, नैव, वा, भवति,।।9।।

विट -मन ही मन (उस तरह अपमानित होने पर भी यह वसन्तसेना को भूल नहीं पाता है अथवा, कामिनियों की फटकार से जहॉं दुष्टकामुकों की कामवासना और तेज होती है, वहीं सत्पुरूषों की वासना कम हो जाती है या बिलकुल ही समाप्त हो जाती है।। **9।।**

शकार -:भाव! कापि वेला स्थावरकचेटस्य भणितसय 'प्रवहणं गृहित्वा लघु आगच्छेति। अद्यापि नागच्छतीति चिरमस्मि बुभुक्षित:। मध्याह्नेन शक्यते पादाभ्यां गन्तुम्। तत् पश्य पश्य

नभोमध्यगत :सूरो दुष्प्रेक्ष्य :कुपितवानरसदृश:।
भूमिर्दृढसन्तप्ता हतपुत्रशतेव गान्धारी।। ।।10 ।।

अन्वय -:नभोमध्यगत:, सूर्य:, कुपितवानरसदृश:, दुष्प्रक्ष्य:, हतपुत्रशता, गान्धारी, इव, भूमि:, दृढसन्तप्ता अस्ति ।।10।।

शकार -मान्यवर, स्थावरक को मैंने जल्द गाड़ी लेकर आने को कहा है, पर, वह अब तक भी नहीं आया । भूख के मारे मेरी हालत खराब है और इस दुपहरिया में मैं पैदल चल नहीं सकता। जरा देखें तो -

आकाश के बीच चमचमाते ये सूरज गुस्साये हुए वानर की तरह यह धरती भी तो संतप्त हो उठी है ।।10।।

विट - :एवमेतत् -

छायासु प्रतिमुक्तशष्पकवलं निद्रायते गोकुलं
तृष्णात्तैश्च निपीयते वनमृगैरूष्णं पय :सारसम्।
सन्तापादतिशड़्कितैर्न नगरीमार्गो नरै :सेव्यते
तप्तां भूमिमपास्य च प्रवहणं मन्ये क्वचित्संस्थिस्तम् ।।11।।

अन्वय -:गोकुलम्, छायासु, प्रतिमुक्तशष्पकवलम्, निद्रायते।तृष्णार्त्तै:, वनमृगै:, उष्णम्, सारसम्, पय:, निपीयते। सन्तापात्, अतिशड़्कितै:, नरै:, नगरीमार्ग:, न सेव्यते। प्रवहणम्, च, तप्ताम्, भूमिम्, अपास्य, क्वचित्, संस्थितम्, मन्ये ।।11।।

विट -ठीक ही तो कह रहे हो -

गायें घास चबाना छोड़कर छाया में झपकी ले रही हैं। जंगली जानवर प्यास से व्याकुल होकर जलाशय का गर्म गर्म पानी पी रहे है। मनुष्य धूप से अकुलाकर घर में घुसे हैं; जनपथ शूना पड़ा है। अत :मैं समझता हूँ, धूप में गाड़ी रोककर यह भी किसी छाया में विश्राम कर रहा होगा ॥11॥

शकार -:भाव!

शिरसि मम निलीनो भाव! सूर्यस्य पाद :

शकुनि-खग-विहङ्गा वृक्षाशाखासु लीना :।

नर-पुरूष-मनुष्या उष्णदीर्घ श्वसन्तो

गृह-शरण-निषण्णा आतयं निर्वहन्ति ॥ ॥12॥

अन्वय -:हे भाव, सूर्यस्य, पाद:, मम, शिरसि, निलीन:, शकुनिखगविहंगा:, आतपम्, निर्वहन्ति ॥12॥

शकार -मान्यवर, सूर्य की किरणें मेरे माथे पर हैं, चिड़िया पेड़ की डालों में चुप्पी लगाये बैठी हैं, आदमी घर में दुबके अपनी गर्म सॉस से देह की गर्मी ठंडा रहे हैं ॥12॥

भाव ! अद्यापि स चेटो नागच्छति। आत्मनो विनोदननिमिप्त किमपि गास्यामि ! भाव, भाव ! श्रुतं त्वया ? यन्मया गीतम्।

हिन्दी अनुवाद -विद्वन्! चेट अभी तक नहीं आ रहा है, तो मनोविनोद के लिए कुछ गीत ही गा लेता हूँ गाता है। आपने सुना, मैंने जो गाया।

विट -:किमुच्यते। गन्धर्वो भवान्।

विट -क्या कहा जाय ? तुम तो गन्धर्व हो।

शकार -:कथं गन्धर्वो न भविष्यामि ?

हिड्गूज्ज्वला जीरक-भद्रमुस्ता वचाया ग्रन्थि : सगुडा च शुण्ठी।

एषा मया सेविता गन्धयुक्ति :कथं नाहं मधुरस्वर इति ॥13॥

अन्वय -: हिड्गूज्वला, जीरकभद्रमुस्ता, वचाया :ग्रन्थि:, सगुडा शुण्ठी च, एषा, गन्धयुक्ति:, मया, सेविता, कथम्, नाहम्, मधुरस्वर :इति ॥13॥

शकार-आखिर, मैं गन्धर्व क्यों नहीं हूँ ?

हींग मिलाया सफेद जीरा, नागरमोथा, वच की गॉठ और गुड़ मिली सोंठ का सेवन मैंने किया है ? तो फिर, मेरे स्वर में माधुर्य क्यों नहीं आयेगा ?॥13॥

भाव ! पुनरपि तावत् गास्यामि। भाव ! भाव ! श्रुतं त्वया ? यन्मया गीतम्।

हे विद्वन्, मैं फिर गाता हूँ। गाता है। मान्यवर! मैंने जो गाया, उसे आपने सुना तो ?

विट :किमुच्यते ? गन्धर्वो भवान्।

विट -क्या कहा जाय ? तुम तो गन्धर्व हो।

शकार -: कथं गन्धर्वो न भवामि ?

हिङ्गूज्ज्वलं दत्तमरीचचूर्ण व्याधारितं तेलघृतेन मिश्रम् ।
भुक्तं मया पारभृतीयमांसं कथं नाहं मधुरस्वर इति ।।14।।

अन्वय -:हिङ्गूज्ज्वलम्, दत्तमरीचचूर्णम् तैलघृतेन मिश्रम्, व्याधारितम्, पारभृतीयमांसम्, मया भुक्तम्, हम्, कथम् , न, मधुरस्वर इति **।।14।।**

शकार-आखिर, मैं गन्धर्व क्यों नहीं हूँ ?

हींग डालकर,मरीच की बुकनी मिलाकर घी में वधारा हुआ कोयल का मांस मैंने खाया है। तो फिर मेरी आवाज सुरीली क्यों नहीं हो सकती ? **।।14।।**

भाव ! अद्यापि चेटो नागच्छति

मान्यवर,अभी तक चेट आ नहीं रहा है।

विट -:स्वस्थो भवतु भवान्। सम्प्रत्येव आगमिष्यति।

तत :प्रविशति प्रवहणाधिरूढा वसन्तसेना चेटश्च।

विट -आप होश तो संभालो, चेट तो अब आ ही पहुँचेगा।

इसके बाद गाड़ी पर सवार चेट और वसन्तसेना का प्रवेश।

चेट :भीत :खल्वहम् । माध्याह्निक :सूर्य:। मा इदानीं कुपितो राजश्यालसंस्थानो भविश्यति । तत् त्वरितं वहामि। वहामि। यातम्, गावौ यातम्।

हिन्दी अनुवाद -चेट -मुझे तो बड़ा डर लग रहा है। सूर्य मध्याह्न में आ गया है। राजाका साला संस्थानक कहीं गुस्सा न जाय, इसलिए गाड़ी जल्दी-जल्दी हॉकता हूँ । बढे चलो, बैलो ! बढे चलो।

वसन्तसेना -हा धिक्! हा धिक् ! न खलु वर्द्धमानकस्यायं स्वरसंयोग :। किन्नु खलु आर्यचारूदत्तेन वाहनपरिश्रमं परिहरता अन्यो मनुष्योऽन्यत् प्रवहणं प्रेषितं भविष्यति ? स्फुरति दक्षिणं लोचनम्, वेपते मे हृदयम्, शुन्या :दिश:, सर्वमेव विसुष्ठुलं पश्यामि।

वसन्तसेना -हाय, हाय, यह तो वर्धमानक की आवाज नहीं है। तो फिर क्या बात है ? क्या आर्य चारूदत्त ने थकावट दूर करने के लिए गाड़ी और गाड़ीवान् को बदल दिया है ? मेरी दाहिनी ऑख फड़क रही है। कलेजा कॉप रहा है। दिशाऍं सूनी-सूनी लग रही हैं। सब कुछ उल्टे दिखलाई पड़ रहा है।

शकार -:भाव! भाव ! आगतं प्रवहणम।

शकार -गाड़ी की घड़घड़ाहट सुनकर (महाशय, गाड़ी आ गई।

विट -:कथं जानासि ?

विट -कैसे जानते हो ?

शकार -:किं न प्रेक्षते भाव :? बृद्धशूकर इव घुरघरायमाणं लक्ष्यते।

शकार -क्या आप नहीं देख रहे हैं ? बूढे सुँअर की तरह घुरघुराती गाड़ी आ रही है।

विट -:दृष्ट्वा साधु लक्षितम्। अयमागत:।

विट -देखकर आपने ठीक ही कहा। ये गाड़ी आ गई।

चेट -:अथ किम् ।

चेट -हॉं मैं आ गया ।

शकार -:पुत्रक! स्थावरक ! चेट ! आगतोऽसि ?

शकार -:वेटे, स्थावरक, चेट तुम आ गये ?

शकार -:गावावपि आगतौ ?

शकार -गाड़ी भी आ गई ?

शकार -तुम भी आ गये ?

चेट -:अथ किम् ।

चेट-हॉं, गाड़ी भी आ गई

शकार -:त्वमपि आगत :?

शकार -बैल भी आ गये ?

चेट -:भट्टारक! अहमप्यागत :। हंसकर हॉं, मालिक मैं भी आ गया।

चेट -हॉं , बैल भी आ गये ।

शकार -:तत् प्रवेशय प्रवहणम्।

शकार-तब गाडी भीतर करो ।

चेट -:कतरेण मार्गेण ?

चेट -किस राह से ?

शकार -:एतेनैव प्राकारखण्डेन ।

शकार-इस टीले पर से ।

चेट -:भट्टारक! गावौ म्रियेते, प्रवहणमपि भज्यते , अहमपि चेटो म्रिये ।

चेट -मालिक, इस रास्ते से तो बैल मर जायेगे, गाड़ी टूट जायेगी, और आपका सेवक मैं भी मर जाऊँगा ।

शकार: - अरे राजश्यालकोहं, गावौ मृतौ अपरौ क्रेष्यामि प्रवहणम् भग्नं अपरं घटयिष्यामि , त्वं मृत: अन्य: प्रवहणवाहको भविष्यति ।

शकार-अरे, मैं राजा का साला हूँ , बैल मरेगें तो दूसरा खरीद लँगा, गाड़ी टूटेगी तो दूसरी बन जायेगी, तुम मर जाओगे तो दूसरा गाड़ीवान् रख लूँगा।

चेट -:सर्वमुपपन्नं भविष्यति, अहमात्मीयो न भविष्यामि ।

चेट -सब कुछ ठीक हो जायेगा। पर मैं आपका सेवक तो जिन्दा नहीं रहूँगा ।

शकार -:अरे! सर्वमपि नश्यतु । प्राकारखण्डेन प्रवेशय प्रवहणम् ।

शकार -सब कुछ, समाप्त हो जाने दो, तुम इस टीले पर से गाड़ी हॉंको ।

चेट -:विभड्धि रे प्रवहण! समं स्वामिना विभड्पि। अन्यत् प्रवहणं भवतु भट्टारकं गत्वा निवेदयामि। कथं न भग्नम् ? भट्टारक ! एतदुपस्थिते प्रवहणम् ।

चेट -टूट जा री गाड़ी, मालिक के साथ ही खत्म हो जा, दूसरी गाड़ी बन जायेगी,मैं अभी

मालिक को कहताहूँ।)पास जाकर (क्या गाड़ी टूटी नहीं ? मालिक, यह गाड़ी हाजिर है।

शकार -:न छिन्नौ गावौ ? न मृता रज्जव :? त्वमपि न मृत:?

शकार -अरे बैल नहीं टूटे, रस्सियॉं नहीं मरी और तुम भी नहीं मरे?

चेट -:अथ किम्।

चेट -हाँ, सब बच गये

शकार -:भाव! आगच्छ, प्रवहणं पश्याव:। भाव! त्वमपि से गुरू :परमगुरू :प्रेक्ष्यसे, सादरक : अभ्यन्तरक इति पुरस्करणीय इति त्वं तावत् प्रवहणमग्रत :अधिरोह।

शकार -विद्वन्, आइए गाड़ी देखें। मान्यवर, तुम मेरे गुरू हो, परमगुरू हो आदरणीय हो, अन्तरंग हो एवं सम्माननीय हो, अत :तुम्हीं पहले गाड़ी पर चढो।

विट -:एवं भवतु। इत्यारोहति।

विट -ठीक ऐसा ही हो। गाड़ी पर चढता है।

शकार -:अथवा तिष्ठ त्वम्। तव वप्रीयं प्रवहणम् ? येन त्वमग्रत :अधिरोहसि। अहं प्रवहणस्वामी अग्रत :प्रवहणमधिरोहामि।

शकार -अथवा नहीं,तुम रूको। क्या तुम्हारे बाप की गाड़ी है ? जो तुम मुझसे पहले गाड़ी पर चढते हो ? मैं गाड़ी का मालिक हूँ ,अत :इस पर सबसे पहले मैं चढूँगा।

विट -:भवानेव ब्रवीति।

विट -आप ने ही तो ऐसा कहा था।

शकार -:यद्यपि अहमेवं भणामि, तथापि तब एष आदर :अधिरोह भट्टारक। इति भणितुम्।

शकार -हॉं यद्यपि तुमसे ऐसा करने को मैंने ही कहा था फिर भी तुम्हारा भी तो कुछ कर्त्तव्य था, तुम मुझसे कहते -'मालिक, पहले आप चढिए।'

विट -:आरोहतु भवान्।

विट -ठीक है तो पहले आप ही चढिए।

शकार -:एष साम्प्रतमधिरोहामि। पुत्रक ! स्थावरक ! चेट ! परिवर्त्तय प्रवहणम्।

शकार -अच्छा तो अब पहले मैं ही चढता हूँ। बेटे, स्थावरक, चेट, जरा गाड़ी तो घुमाओ।

चेट -:अधिरोहतु भट्टारक :।

चेट- गाडी घूमाकर मालिक चढिए।

शकार -:भाव! भाव ! म्रियते, म्रियते। प्रवहणाधिरूढा राक्षसी चौरो वा प्रतिवसति। यदि राक्षसी, तदा उभावपि मुषितौ। अथ चौर :तदा उभावपि खादितौ।

शकार -चढकर, कुछ देखकर, सन्देह का अभिनय कर, जल्दी –जल्दी उतरकर विट के गले से लगकर भाव, भाव, मर गये , गये। गाड़ी पर कोई राक्षसी बैठी है अथवा कोई चोर घुसा है। यदि राक्षसी है तो हम दोनों को लूटेगी और यदि चोर है तो तुम दोनों को खा जायेगा।

विट -: न भेतव्यम्। कुतोऽत्र वृषभयाने राक्षस्या :सञ्चार:। मा नाम, ते मध्याह्नार्क-ताप-च्छिन्न-दृष्टे :स्थावरकस्य सकञ्चुकां छायां दृष्ट्वा भ्रान्तिरूत्पन्ना ?

विट -डरना नहीं चाहिए। इस गाड़ी में राक्षसी कहॉ से आ सकती है। दुपहरिया की धूप के कारण तुम्हारी ऑखे चुँधिया गई हैं, अत :चेट के कपड़े की परछाई देखकर तुम्हें भ्रम हो गया है

शकार -: पुत्रक! स्थारक ! चेट जीवसि ?

शकार -बेटा चेट, तुम जिन्दा हो ?

चेट -: अथ किम्।

चेट -हॉ मालिक, मैं जिन्दा हूँ।

शकार -: भाव! प्रवहणाधिरूढा स्त्री प्रतिवसति। तदवलोकय।

शकार -महाशय, गाड़ी में कोई औरत बैठी है, देखो तो।

विट -: कथं स्त्री

अवनतशिरस :प्रयास शीघ्रं पथि वृषभा इव वर्षताडिताक्षा :।

मम हि सदसि गौरवप्रियस्य कुलजनदर्शनकातरं हि चक्षु :।।15।।

अन्वय -:पथि, वर्षताडिताक्षा:, वृषभा:, इव, अवनतशिरस:, वयम् शीघ्रम्, प्रयास। हि, सदसि,गौरवप्रियस्य, मम्, चक्षु :कुलजनदर्शनकातरम्, हि ।।15।।

विट -क्या औरत ?

राह में मेघ के पानी से आहत ऑखों वाले बैल की तरह सिर झुकाये हमें भी यहॉ से चुपचाप चल देना चाहिए। क्योंकि, मैं समाज का लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति हूँ। अत :किसी कुल ललना के सामने मेरी ऑखे स्वत :नीचे झुक जाती हैं। मैं उसे देखने में बिल्कुल असमर्थ हूँ **।।15।।**

वसन्तसेना -कथं मम नयनयोरायासकर एव राजश्याल :। तत् संशयिताऽस्मि मन्दभागा। एतदिदानीं मन्दभागिन्या ऊषरक्षेषपतित इव बीजमुष्टि :निष्फलमिहागमनं संवृत्तम्। तत् किमत्र करिष्यामि ?

वसन्तसेना -आश्चर्य के साथ , मन ही मन क्या मेरी ऑखों का कॉटा राजा का साला शकार ही है। हाय मैं अभागिन हूँ, मेरी जान पर खतरा है। इस समय मुझ हतभागिनी का यहॉ आना ऊसर खेत में बीज बोने की तरह बेकार हो गया। तो मैं अब क्या करूँ ?

शकार - :कातर :खल्वेष :वृद्धचेट :प्रवहण नावलोकयति । भाव! आलोकम प्रवहणम्।

शकार - यह बूढा चेट डरपोक है, ठीक से गाड़ी को देख पा नहीं रहा है। मान्यवर, जरा तुम्हीं देखो तो गाड़ी को।

विट -:को दोष :। भवत्वेवं तावत्।

विट -क्या हर्ज है। मैं ही देख लेता हूँ।

शकार -: कथ श्रृगाला उड्डीयन्ते , वायसा व्रजन्ति। तद् यावतु भाव :अक्षिभ्यां भक्ष्यते, दन्तै : प्रेक्ष्यते, तावदहं पलायिष्ये।

शकार -क्या सियार उड़ रहे हैं ? कौए भाग रहे हैं ? अत :जब तक गाड़ी पर बैठी राक्षसी मुझे ऑखो से नहीं खा लेती,दॉतो से नहीं देख लेती, मैं भाग जाता हूँ।

विट -:वसन्तसेनां दृष्ट्वा, सविषादमात्मगतम् कथमये मृगी व्याघ्रमनुसरति। भो :कष्टम्।

विट -वसन्तसेना को देखकर, मन ही मन, दु:ख से अरे यह हिरणी बाघ का पीछा क्यों कर रही है ? हाय खेद है -

शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पुलिनान्तरशायिनम् ।

हंसी हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता ।।16।।

अन्वय -:हंसी, शरच्चन्द्रप्रतीककाशम् , पुलिनान्तरशायिनम्, हंसम्, परित्यज्य, वायसम्, समुपस्थिता ।।16 ।।

शरत्काल के चन्द्रमा की भॉति अति शुभ्र एवं नदी की रेती पर स्थित हंस को छोड़कर यह हंसी कौवे के पास कैसे पहुँच गयी ।

जनान्तिकम्- वसन्तसेने! न युक्तमिदं, नापि सदृशमिदम् ।

पूर्व मानादवज्ञाय द्रव्यार्थे जननीवशात् ।

वसन्तसेना- । **इति शिरश्चालयति ।** न

विट -:अशौण्डीर्यस्वभावेन वेशभावेन मन्यते ।।17 ।।

ननूक्तमेव मया भवतीं प्रति -'सममुपचर भद्रे ! सुप्रियञ्चाप्रियञ्च '।

अन्वय -:पूर्वम्,मानात्,अवज्ञाय, सम्प्रति जननीवशात्,द्रव्यार्थम्,अथवा शौण्डीर्यस्वभावेन,मन्यते **।।17 ।।**

हिन्दी अनुवाद- धीरे से वसन्तसेने, तुमने यह उचित नहीं किया, यह तुम्हारे योग्य नहीं हुआ -पहले तो तुमने मान किया, शकार का अनादर किया । फिर धन के लालच से मॉ के कहने पर -

वसन्तसेना-नहीं । सिर हिलाती है ।

विट -अपने वेश्यापन के कारण,अपने अनुदारस्वभावश स्वत: शकार के पास पहूँच गई हो ।**17।** मैंने पहले ही तुमसे कहा -हे कल्याणि, प्रिय और अप्रिय का भेद किये बिना तुम सभी पुरूषों के साथ समान व्यवहार करो ।

वसन्तसेना -प्रवहणविपर्यासेनागता शरणागताऽस्मि ।

वसन्तसेना -नहीं गाड़ी के फेरबदल में अनजाने ही मैं यहॉ गई हूँ । मैं आपकी शरण में हूँ मेरी रक्षा कीजिए ।

विट -: न भेतव्यं, न भेतव्यम् । भवत्वेनं वञ्चयामि । शकारमुपगम्य काणेलीमात!: सत्यं राक्षस्येवात्र प्रतिवसति ।

विट -डरने की कोई बात नहीं है। ठहरो, मैं शकार को ठगता हूँ । शकार के पास जाकर अरे ओ कुँआरी के बेटे,गाड़ी पर तो सचमुच राक्षसी बैठी है ।

शकार : भाव! भाव ! यदि राक्षसी प्रतिवसति, तत् केन न त्वां मुश्णाति ? अथ चौर:, तत् किं न त्वं भक्षित:?

शकार : यदि सचमुच दानवी बैठी है तो उसने आपको लूटा क्यों नहीं, अथवा चोर बैठा है तो फिर खा क्यों न लिया ?

विट -:किमनेन निरूपितेन । यदि पुनरूद्यानपरम्परया पद्भ्यामेव नगरी -मुज्जयिनीं प्रविशाव:, तदा

को दोष :स्यात्?

विट- इस तरह विचार करने से क्या लाभ यदि बगीचे की आड़ ग्रहण कर ही हम लोग उज्जयिनी पहुँच जॉय तो हानि क्या है।

शकार -: एवं कृते किं भवति ?

शकार - ऐसा करने से क्या होगा।

विट -:एवं कृते व्यायाम :सेवितो धुर्याणाञ्च परिश्रम :परिहृतो भवति।

विट - ऐसा करने से हम लोगों की कसरत हो जायेगी, गाड़ीवान् और बैलों की थकावट भी दूर हो जायेगी।

शकार : एवं भवतु। स्थावरक! चेट ! नय प्रवहणम्। अथवा, तिष्ठ, तिष्ठ। देवतानां ब्रह्मणानाञ्चाग्रत :चरणेन गच्छामि। नहिं, प्रवहणमधिरूह्य गच्छामि। येन दूरतो मां प्रेक्ष्य भणिष्यन्ति –'एष सराष्ट्रियश्यालो भट्टारकोगच्छति।

शकार -तो फिर, ऐसा ही करो, बेटे चेट, गाड़ी लेकर आगे बढ। अथवा रूक जा, देवता और ब्राह्मण के आगे मैं पैदल ही चलूँगा। नहीं नहीं, मैं तो गाड़ी पर चढकर ही चलूँगा, ताकि दूर से ही लोग मुझे देखकर ही कहेंगे -'यह राजा का साला धनपति आ रहा है।'

विट -:स्वागतम् दुष्करं विषमौषधीकर्त्तुम्। भवतु एव तावत्। प्रकाशम् काणेलीमात! : एषा वसन्तसेना भवन्तमभिसारयितुमागता।

विट- मन ही मन जहर को औषधि बनाना बड़ा कठिन है। अच्छा ऐसा हो प्रकट हे पुंश्चलीपुत्र , यह वसन्तसेना, छिपकर आपसे मिलने आई है।

वसन्तसेना -शान्तं पापं, शान्तं पापम्।

वसन्तसेना -हाय, हाय, ऐसा बोलना भी पाप है।

शकार -:भाव! भाव! मां प्रवरपुरूषं मनुष्यं वासुदेवकम् ?

शकार -खुश होकर मान्यवर, प्रधान पुरूष, मनुष्य, मुझ वासुदेव के पास ?

विट -:अथ किम्।

विट -हॉं, आपके ही पास आई है।

शकार -:तेन हि अपूर्वा श्री :समासादिता, तस्मिन् काले मया रोषिता, साम्प्रतं पादयो :पतित्वा प्रसादयामि।

शकार -तब तो यह अपूर्व लक्ष्मी अनायास उपलब्ध हो गई। उस दिन तो इसे मैंने नाखुश कर दिया था। आज इसके पैरों पर गिरकर इसे खुश कर लेता हूँ।

विट -:साधु अभिहितम्।

विट -बहुत अच्छा।

शकार -:एष पदयो :पतामि। मात! : अम्बिके ! श्रृणु मम विज्ञाप्तिम्।

शकार -लो चरणो पर गिरता हूँ वसन्तसेना के पास जाकर हे मॉं, हे अम्बे, मेरी विनती सुनो-

एष पतामि चरणयोर्विशालनेत्रे! हस्ताञ्जलिं दशनखे ! तव शुद्धदन्ति !

यत्तन्मया अपकृतं मदनातुरेण तत् क्षामितासि वरगात्रि ! तवास्मि दारा:।। ।।18।।

अन्वय -:हे विशालनेत्रे, एष:, चरणयो:, पतामि,हे शुद्धदन्ति, दशनखे, तव, हस्ताञ्जलिम् हे वरगात्रि, मया, यत्, तत् क्षामिता, असि,अहम् तव, दास:, अस्मि **।।18।।**

अर्थात् हे विशाललोचने तेरे पैरों पर मैं गिरता हूँ। हे दशनखमय चरण वाली, हे स्वच्छ दॉतों वाली, मैं तुम्हें हाथ जोड़ता हूँ। हे कोमलांगी, कामातुर होकर मैंने जो पहले तुम्हें अपमानित किया, उसके लिए आज क्षमा प्रार्थी हूँ। मैं तुम्हारा दास हूँ **।।18।।**

वसन्तसेना -अपेहि , अनार्य मन्त्रयसि।

वसन्तसेना -गुस्साकर दूर हट नीच, तुम अनर्गल बक रहे हो। पैरों से उसे मारती है।

शकार -: सक्रोधम्

यच्चुम्बितमम्बिकामातृकाभिर्गतं न देवानामपि यत् प्रणामम्।

तत् पातितं पादतलेन मुण्डं वने श्रृगालेन यथा मृताङ्गम् ।।।।19।।

अरे स्थावरक ! चेट ! कस्मिन् त्वया एषा समासादिता।

अन्वय -:यत्, अम्बिकामातृकाभि:, चुम्बितम्, यत्, देवानाम्, अपि, प्रणामम्, न, गतम्, तत्, मुण्डम्, पादतलेन, पातितम्,यथा, वने, श्रृगालेन, मृताङ्गम् **।।19।।**

शकार- क्रुद्ध होकर जिस माथे को मेरी मॉ ने चूमा, जो सिर कभी देवताओं के आगे भी नहीं झुका, उस माथे को जैसे जंगल में सियार शव के अंगो को पैरों से रौंदता है उसी तरह तुमने पैरों से ठुकरा दिया है **।।19।।**

अरे, चेट, तू इसे कहॉ से उठा लाया।

चेट -:भट्टक! ग्रामशकटै :रूद्धे राजमार्गे तदा चारूदत्तस्य वृक्षवाटिकायां प्रवहणं स्थापयित्वा, तस्मिन्नवतीर्य यावत् चक्रपरिवृत्तिं करोमि , तावदेषा प्रवहणविपर्यासेन इह आरूढेति तर्कयामि।

चेट -मालिक, गॉव की गाड़ियों से जब सड़क अवरूद्ध हो गई, उस समय मैंने कुछ देर के लिए अपनी गाड़ी चारूदत्त की वाटिका में खड़ी कर दी और उतर कर उन्हें घुमाने लगा, सोचता हूँ उसी समय धोखे से यह इस गाड़ी पर चढ गई होगी।

शकार -:कथं प्रवहणविपर्यासेनागता। न मामभिसारयितुम्। तदवतर अवतर मदीयात् प्रवहणात्। त्वं तं दरिद्रासार्थवाह-पुत्रकमभिसारयसि, मदीयौ गावौ वाहयसि। तदवतर अवतर गर्भदासि ! अवतर अवतर

शकार -तो क्या गाड़ी के फेरबदल से यह आई मुझसे मिलने नहीं। तो फिर मेरी गाड़ी से उतर। नीच, मिलने जा रही है उस दरिद्र चारूदत्त से और मेरे बैलों से ढोयी जा रही है। उतर मेरी गाड़ी से उतर।

वसन्तसेना-तमार्यचारूदत्तमभिसारयसि इति यत् सत्यम्, अलङ्कृतास्मि अनेन वचनेन। साम्प्रतं यद्भवतु तद्भवतु।

वसन्तसेना- उस आर्य चारूदत्त से रमण करने जा रही हो यह सुनकर मैं निहाल हो गई अब जो हो, सो हो।

शकार -:

एताभ्यां ते दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां हस्ताभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम् ।
कर्षामि ते वरतनुं निजयानकात् केशेषु बालिदयितामिव यथा जटायु :।।20।।

अन्वय -:दशनखोत्पलमण्डलाभ्याम् , चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्, एताभ्याम्, हस्ताभ्याम्, यथा, जटायु:, बालिदयिताम्, इव, केशेषु, ते वरतनुम्, निजयानकात्, कर्षामि ।।20।।

शकार -मैं दसनख रूपी कमलवाले तथा मीठी मीठी बातों की तरह पीटने में अभ्यस्त अपने हाथों से तुम्हारा बाल पकड़कर गाड़ी से घसीटकर उसी तरह निकालता हूँ जैसे जटायु ने बालि की पत्नी तारा को घसीटा था **।।20।।**

विट -:अग्राह्या मूर्द्धजेष्वेता :स्त्रियो गुणसमन्विता :।
न लता :पल्लवच्छेदमर्हन्त्युपवनोद्भवा :।।21।।

अन्वय -: गुणसमन्विता:, एता :स्त्रिय:, मूर्धजेषु, अग्राह्या :उपंवनोद्भवा:, लता:, पल्लवच्छेदम्, न, अर्हन्ति **।।21।।**

तदुत्तिष्ठ त्वम् । अहमेनामवतारयामि । वसन्तसेने ! अवतीर्यताम् ।

वसन्तसेना अवतीर्य एकान्ते स्थिता ।

विट -ये गुणवती स्त्रियॉं ऐसे घसीटी नहीं जाती, फुलवाड़ी की लताओं के पत्ते तोड़े नहीं जाते ।।21।।

तो फिर तुम उतरो, मैं इसे गाड़ी से उतारता हूँ। वसन्तसेने, उतरिये ।

वसन्तसेना गाड़ी से उतर कर एक ओर खड़ी हो जाती है ।

शकार -:य :स मम वचनापमानेन तदा रोषाग्नि :सन्धुक्षित:, अद्य एतया पादप्रहारेणनेन प्रज्वलित:, तत् साम्प्रतं मारयाम्येनाम् । भवतु, एवं तावत् । भाव! भाव !

शकार-मन ही मन पहले जो इसके तिरस्कार से मेरी कोपाग्नि जली थी, आज इसके पैरों की ठोकर से दहक उठी है। तो अब इसे मारूँगा । अच्छा ठीक इस तरह , प्रकट हे विद्वन!

यदिच्छसि लम्बदशाविशालं प्रावारकं सूत्रशतैर्युक्तम्।
मासञ्च खादितु तथा तुष्टिं कतुँ चुहू चुहू चुक्कु चुहू चुहू इति।22।।

अन्वय -:यदि, सूत्रशतै:, युक्तम्, लम्बदशाविशालम्, प्रावारकम्, तथा, चुहू, चुहू, चुक्कू, चुहू, इति ध्वनिम् कुर्वन्, मांसम्, खादितुम्, तुष्टिम्, च, कर्त्तुम्, इच्छसि। **।।22।।**

हिन्दी अनुवाद -यदि तुम रंग-विरंगे सूतो से विनिर्मित, लम्बी किनारी वाले दुपट्टे पुरस्कार में चाहते हो, चुहू,चुहू, चुक्कु, चुहू,आवाज के साथ मांस खाना चाहते हो **।।22।।**

विट -:तत :किम् ?

विट -तो मुझे क्या करना होगा ?

शकार -:मम प्रियं कुरू ।

शकार -मेरे कथनानुसार करो ।

विट -:बाढं करोमि, वर्जयित्वा त्वकार्यम् ।

विट -अवश्य करूँगा,पर दुष्कर्म को छोड़कर।

शकार -:भाव! अकार्यस्य गन्धोऽपि नास्ति, राक्षसी क्वापि नास्ति।

शकार -महाशय, अपकर्म की तो इसमें गन्ध भी नहीं है। कोई राक्षसी थोड़े ही है।

विट -:उच्यतां तहिं।

विट -तब कहो।

शकार -:मारय वसन्तसेनाम्।

शकार -वसन्तसेना को मार दो।

विट -:कणौ पिधाय

बालां स्त्रियञ्च नगरस्य विभूषणञ्च वैश्यामवेश-सदृश-प्रणयोपचाराम्।
एनामनागसमहं यदि मारयामि केनोडुपेन परलोकनदीं तरिष्ये ।।23।।

अन्वय -:यदि, अहम्, नगरस्य, विभूषणम्, अवेशसदृशप्रणयोपचाराम्, वैश्याम्, बालाम्,अनागसम्, एनाम् स्त्रियम्, घातयामि, केन, उडुपेन, परलोकनदीं तरिष्ये **।।23।।**

विट-कान मूँदकर

हिन्दी - यदि मैं इस उज्जयिनी के अलंकार, कुलललना की तरह व्यवहार करने वाली निरपराध इस युवा वेश्या की मैं हत्या कर दूँ तो फिर परलोक की वैतरणी को किस नाव से पार करूँगा **।।23।।**

शकार -:अहं ते उडुपं दास्यामि। अन्यच्च विविक्ते उद्याने इह मारयन्तं कस्त्वां प्रेक्षिष्यते ?

शकार -वैतरणी पार करने के लिए मैं तुम्हें नौका दूँगा। दूसरी वात यह है कि इस निर्जन फुलवाड़ी में तुम्हें देखेगा ही कौन ?

विट -: **पश्यन्ति मां दश दिशो,वनदेवताश्च ,**
चन्द्रश्च दीप्तिकिरणश्च दिवाकरोऽयम् ।
धर्मानिलौच गगनश्च तथान्तरात्मा
भूमिस्तथा सुकृति –दुष्कृति-साक्षिभूता: ।।24।।

अन्वय -:सुकृतिदुष्कृतिसाक्षिभूता:, दशदिश:, वनदेवता:, च, चन्द्र:, च, दीप्त किरण:, अयम् दिवाकर:, च, धर्मानिलौ, च, गगनम्, च, तथा,अन्तरात्मा, तथा भूमि:, माम्, पश्यन्ति ।।24।।

विट - पाप और पुन्य की साक्षी ये दिशाएँ देखेंगी, वनदेवता, चन्द्रमा, तीक्षणकिरणवाले ये दिवाकर, धर्म, वायु, आकाश और भूमि देखेगी और सबसे अधिक देखेगी मेरी अन्तरात्मा **।।24।।**

शकार -: तेन हि पटान्तापवारितां कृत्वा मारय।

शकार -तो फिर, कपड़े, से ढककर इसे मारों।

विट -:मूर्ख! : अपध्वस्तोऽसि

विट -मूर्ख , तुम पतित हो गये हो।

शकार -: अधर्मभीरूरेष वृद्धकोल :। भवतु स्थावरकं चेटमनुनयामि। पुत्रक! स्थावरक ! चेट !

सुवर्णकटकानि दास्यामि।

शकार -यह बूढा सुअर धर्म से डरता है। अच्छा तो इस काम के लिए मैं चेट से अनुनय करता हूँ । बेटे! स्थावरक ! चेट ! देख मैं तुम्हें सोने का कंगन दूँगा।

चेट -:अहमपि परिधास्यामि।

चेट -मैं उसे पहन लूँगा।

शकार -:सौवर्ण ते पीठकं कारयिष्यामि।

शकार -बैठने के लिए मैं तुम्हें सोने का आसन बनवा दूँगा।

चेट -:अहमपि उपवेक्ष्यामि।

चेट -मैं आराम से उस पर बैठूँगा।

शकार -:सर्वचेटानां महत्तरकं कारयिष्यामि।

शकार -मै बचा खुचा सारा भोजन तुम्हें ही दूँगा।

चेट -:भट्टक ! भविष्यामि।

चेट -मैं खूब खाऊँगा।

शकार -:तन्मन्यस्व मम वचनम्।

शकार -तो फिर, मेरी बात मान लो।

चेट -:भट्ट! सर्व करोमि वर्जयत्वा अकार्यम्।

चेट -मालिक, मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ, केवल कोई दुष्कर्म नहीं करूँगा।

शकार -:अकार्यस्य गन्धोऽपि नास्ति।

शकार -इसमें गलत काम की गन्ध भी नहीं है।

चेट :भणतु भट्टक :।

चेट -तो फिर बतलाओ मालिक।

शकार -:एनां वसन्तसेनां मारय।

शकार -इस वसन्तसेना को समाप्त कर दो।

चेट -:प्रसीदतु भट्टक :इयं मया अनार्येण आर्या प्रवहणपरिवर्त्तनेनानीता।

चेट -इसके लिए मुझे माफ कर दो मालिक। मैं ही पापी हूँ, गाड़ी बदल जाने के कारण मैंने ही आर्या वसन्तसेना को इस स्थिति में ला दिया हैं।

शकार -:अरे चेट! तवापि न प्रभवामि ?

शकार -अरे सेवक, क्या तुम पर भी मेरा अधिकार नहीं है ?

चेट -:प्रभवति भट्टक:शरीरस्य, नचारित्रस्य। तत् प्रसीदतु भट्टक :बिभेमि खलु अहम्। ,

चेट-है क्यों नहीं देह पर ही , चरित्र पर नहीं । आप रंज न हो, निश्चय ही में डरता हूँ।

शकार -:त्वं मम चेटी भूत्वा कस्माद् विभेषि ?

शकार -रे तुम मेरा नौकर होकर डरते किससे हो ?

चेट -:भट्टक! : परलोकात्

चेट -मालिक, मैं परलोक से डरता हूँ।

शकार -:क :स परलोक :?

शकार -यह परलोक क्या है ?

चेट -:भट्टक! सुकृतदुष्क;तस्य परिणाम :?

चेट -मालिक, पाप और पुण्य का फल ही तो परलोक है।

शकार -:कीदृश :सुकृतस्य परिणाम :।

शकार -पुण्य का फल क्या होता है ?

चेट -:यादृशो भट्टक :बहुसुवर्णमण्डित:।

चेट -:आप की तरह सम्पन्न रहना सुकृत का परिणाम है ।

शकार -:दुष्कृतस्य कीदृश :?

शकार -:और कुकर्म का फल कैसा होता है।

चेट -:यादृशोऽहं परपिण्डभक्षको भूत :। तदकार्य न करिष्यामि।

चेट -मेरे जैसा आदमी जो दूसरों पर पलता हो, इसलिए अब और अधिक कुकर्म नहीं करूँगा

शकार -:अरे! न मारयिष्यसि ?बहुविधं ताडयति।

शकार -अरे, तो तुम इसे नहीं मारोगे ? चेट को अनेक प्रकार से पीटता है।

चेट -:ताडयतु भट्टक -:मारयतु भट्टक:, अकार्य न करिष्यामि।

चेट -चाहे आप मुझे पीटिए, जान से मार दीजिए, मैं ऐसा कुकर्म नहीं करूँगा।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1. बौद्ध सन्यासी का स्वरूप कैसा है-

क -मंगल ख -उदास ग -अमंगल घ -विशेष

2. नापित का अर्थ है -

क -नपा हुआ ख -न पाया ग -नाई घ -विशेष

3. स्तुनु का अर्थ है -

क -प्रशंसा ख -प्रशस्त ग -स्तुति घ -कोई नहीं

4. शुनक का तात्पर्य है -

क -शेर ख- कुत्ता ग -मुर्गा घ -सियार

5. भगवान बुद्ध को कौन नमस्कार कहता है -

क -शकार ख -विट ग -चेट घ -भिक्षु

6. व्यभिचारिणी का बेटा किसे कहा गया है -

क -शकार ख -विदूषक ग -विट घ -कोई नहीं

7. कापुरूष का अर्थ है -

क -उद्योगी ख -कायर ग -साहसी घ -आलसी

8. विवर्द्धते शब्द से तात्पर्य है -

क -विशेष ख -वृद्धि को प्राप्त ग -विशेषता घ-कोई नहीं

9. निलीन :शब्द का अर्थ है -

क -गिरा हुआ ख -पतन ग -सुखा घ -गीला

10. अवनत शिरस :से तात्पर्य है -

क -नतमस्तक ख -गिरागया ग -सिर के बल घ -कोई नही

11. "प्रयाम" का अर्थ है -

क -चले जाना ख -जाना ग -जाया है घ-जायेगे

12. शरत् चन्द्र प्रतीकाशं शब्द का अर्थ है -

क -चन्द्रमा का प्रतीकाश ख-शरद काल के चन्द्रमा के समान

ग-शरद की पूर्णिमा घ -शरदचन्द्र का प्रतीक विशेष

18. 4 सारांश -

अष्टम् अंक के अध्ययन के लिए वर्णित इस इकाई के अध्ययन के बाद आपने जाना कि बौद्ध सन्यासी का अपमान नेपथ्य में करने के बाद किसने उसे अधिक अपमान दिया । सन्यासी ने अपासक कहकर शकार को प्रशांसित किया है। विट, भिसु और शकार के बीच सम्वादों में एक दूसरे को अपमानित और कलंकित करते हुए भिक्षु के चले जाने पर शकार और विट के सम्वादो में विभिन्न प्रकार के वातावरण सम्बन्धी वार्तालाप हो रहे हैं । पुन :शकार के द्वारा विभिन्न औषधियों के सेवन के पश्चात भी कण्ठ के मधुर न बनने रूपी पश्चाताप का कथन सराहनीय है जो प्राकृतिकता की जानकारी का निदर्शन भी है ।

गाड़ी पर सवार चेट और वसन्तसेना का प्रवेश होता है तथा चेट, शकार आदि अन्य पात्रों के सम्भावना से होकर दानवी कहता है । अपने लिए वह कल्पना करता है कि मुझे जाते हुए देखकर लोग यही कहेंगे कि यह राजा का साला धनपति आ रहा है । पुन :बीसवें श्लोक में वह वसन्तसेना को गाड़ी से घसीटकर उतारने की बात करता है। वसन्तसेना गाड़ी से उतरकर एक ओर खड़ी हो जाती है । शकार उसे मारने के लिए कहताहै । पुन :विभिन्न सम्वादो के मध्य चौबीसवें श्लोक तक विट के कथन में पाप और पुण्य ,देवी –देवता पृथ्वी आदि को साक्षी बताकर सर्वाधिक द्रष्टा के रूप में अपनी अन्तरात्मा को स्वीकार किया गया है ।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप यह बतायेंगे कि आठवें अंक में शकार और विट तथा वसन्तसेना के मध्य सम्वादों की क्या मर्यादा है। शिष्टाचार का अतिक्रमण कहॉ पर किया गया है ।

18. 5 शब्दावली -

1. इन्द्रिय चौरा - :यहॉ पर इन्द्रियों को शक्तिशालिनी मानकर धर्म आदि क्रियाओं का अपहरण करने के कारण इन्द्रिय चौरा कहा गया है।

2. काणेलीमात- :अविवाहिता स्त्री को काणेली कहा जाता है और वह जिसकी माता हो ।

3. किण - **:**प्रतीक अथवा चिह्न

4. केशविरहात् – बालों का अभाव या बालों का सिर पर न रहना।

5. श्रमणक – बौद्ध सन्यासी को श्रमणक कहा गया है।

6. प्रतिमुक्त शष्यफल – घास चबाना छोड़कर, या घास खाना छोड़कर

7. सदसि -सभा में

8. राजश्याल – राजा का साला

9**. अशौण्डीर्यस्वभावेन** -उदारता से हीन स्वभाव के द्वारा

10. सुकृति -पुण्य कर्म, सुन्दर कर्म

11. दुष्कृति – दुराचार, अनाचार, इत्यादि।

18.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग 2.ग 3. क 4 .ख 5 .**घ** 6.क 7.क 8.ख 9.क
10.क 11.क 12.ख

18. 7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

18. 8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. आठवें अंक के श्लोक सं04,5 एवं 6 का सन्दर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. इस इकाई में वर्णित तथ्यों के आधार पर वसन्तसेना के कथनों अनुवाद कीजिए।
3. पठित अंश के आधार पर शकार का चरित्र चित्रण दीजिए।
4. प्रस्तुत इकाई का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

इकाई . 19श्लोक संख्या 25 से 47 तक मूलपाठ, अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

.191 प्रस्तावना
19.2 उद्देश्य
19.3 श्लोक संख्या 1से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
19.4 सारांश
19.5 पारिभाषिक शब्दावली
19.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
19.7 संदर्भ ग्रन्थ
19.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1 9 . 1 प्रस्तावना -

मृच्छकटिकम प्रकरण के अध्ययन से सम्बन्धित यह उन्नीसवीं और अन्तिम इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप आठवें अंक के 25वें श्लोक से लेकर अन्तिम श्लोक एवं कथनों का अध्ययन करेंगे। इसके पूर्व की इकाई में शकार और विट के कथनों के क्रम में आगे के वर्णनों का अध्ययन इस इकाई के अन्तर्गत प्रस्तुत है।

शकार ने विट को बूढ़ा सूअर कहा और चेट को उसने सोने का कंगन पहनने के लिए दिया। पुन : चेट और शकार के बीच विभिन्न वार्तालाप हुए जिसमें वसन्तसेना को मारने के लिए भी कहा गया। परलोक से भी डरने का कथन किया गया, पाप, पुण्य आदि के फलों से सम्बन्धित बातें हुई। वसन्तसेना शरणागत है। शकार मूर्छित हो जाता है। पुन :होश में आने पर वसन्तसेना की हत्या के आशंका और अन्य वार्तालाप होते हैं। वसन्तसेना माता का स्मरण करती है चारूदत्त को अन्तिम प्रणाम कहती है। आगे चलकर भिक्षु के कथन के साथ अंक समाप्त होता है।

स्वर्ग प्राप्ति की बात कहते हुए भिक्षु के कथन से अंत हो रहे आठवें अंक का अध्ययन करने के पश्चात् आप इसकी विशेषताओं को बता सकेंगे।

19. 2 उद्देश्य–

आठवें अंक के अध्ययन से सम्बन्धित इस इकाई का सम्यक् अध्ययन करने के बाद आप -

- पच्चीसवें श्लोक से लेकर सैंतालीसवें श्लोक के वर्णनों को संक्षेप में बता सकेंगे।
- आठवें अंक में किसका आचरण ठीक है मूल्यांकन कर सकेगे।
- वसन्तसेना का आचार कैसा है, बता सकेंगे।
- शकार और चेट का क्या सम्बन्ध है, समझा सकेंगे।
- विट और चेट की भूमिका का निर्धारण कर सकेंगे।
- बौद्ध भिक्षु की शिक्षाओं का क्या महत्व है, बता सकेंगे।

येनास्मि गर्भदासो विनिर्मितो भागधेयदोषै :।

अधिकञ्च न क्रीणिष्यामि तेनाकार्य परिहरामि।। ।। 25

अन्वय -:येन, भागधेयदोषै :, गर्भदास:, विनिर्मित:, अस्मि। तेन अधिकम्, न, क्रीणिष्यामि, अकार्यम्, च ,परिहरामि ।।25।।

हिन्दी अनुवाद -पूर्वजन्म में किए गये पापों के कारण ही मेरा जन्म दास कुल में हुआ है। अब वसन्तसेना को मार कर और अधिक पाप बटोरना नहीं चाहूँगा। दुष्कर्म नहीं करूँगा **।।25।।**

वसन्तसेना -भाव! शरणागतास्मि।

वसन्तसेना -भाव, मैं शरणागत हूँ।

विट -:काणेलीमात :मर्षय मर्षय। साधु स्थावरक! साधु।

अप्येष नाम परिभूतदशो दरिद्र :

प्रेष्य :परत्र फलमिच्छति नास्य भर्ता।

तस्मादमी कथमिवाद्य न यान्ति नाशं

ये वर्द्धयन्त्यसददृशं सदृशं सदृशं त्यजन्ति ।।26।।

अपि च -

रन्ध्रानुसारी विषय :कृतान्तो यदस्य दास्यं तव चेश्वरत्वम्।

श्रियं त्वदीयां यदयं न भुड्क्ते यदेतदाज्ञां न भवान् करोति ।।27।।

अन्वय-:परभूतदश:, दरिद्र:, प्रेष्य:, अपि, एष:, परत्र, फलं, नाम, इच्छति, अस्य, भर्ता, न, तस्मात् , ये, असदृशम्, वर्धयन्ति , सदृशम्, त्यजन्ति। अमी, अद्य, कथमिव, नाश, न, यान्ति **।।26।।**

अन्वय -:कृतान्त:, रन्ध्रानुसारी, विषम्, यत् , अस्य , दास्यम्, तव, च, ईश्वरत्वम । यत्, अयम्, त्वदीयाम्, श्रियम्,न, भुड.क्ते, यत्, भवान् , एतदाज्ञाम्, न, करोति **।।27।।**

विट -पुंश्चलीपुत्र , इसे माफ कर दो। धन्य रे चेट, धन्य। यह दास दरिद्र है, दयनीय है, फिर भी परलोक के फल की इच्छा करता है, किन्तु इसके मालिक को इसकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है। तो फिर जो उचित काम छोड़कर पापों का पहाड़ बनाते रहते हैं, उनका इसी क्षण विनाश क्यों नहीं हो जाता **।।26।।**

और भी -भाग्य भी विपरीत ही करता है, वह छिद्रान्वेषी है, अन्यथा यह धार्मिक चेट और नौकर और पापी शकार मालिक कैसे बन गया । और यह चेट शकार की सम्पत्ति का उपभोग नहीं कर पाता और शकार जिसे चेट का दास होना चाहिए था, उसका हुक्म नहीं मानता **।।27।।**

शकार:- अधर्मभीरूको वृद्धश्रृगाल:, परलोकभीरूरेष गर्भदास :। अहं राष्ट्रियश्याल :कस्माद्विभेमि वर-पुरूष– मनुष्य:? अरे गर्भदास ! चेट ! गच्छ त्वम्, अपवारके प्रविश्य विश्रान्त एकान्ते तिष्ठ।

हिन्दी अनुवाद -शकार -मन ही मन यह बूढा सियार विट , पाप से डरता है। और चेट परलोक से भय खाता है किन्तु मैं तो प्रधान पुरूष हूँ , राजा का साला हूँ , मुझे किसका डर है ?प्रकट अरे ओ नीच सेवक जा यहॉ से भाग जा और किसी एकान्त कुंज में विश्राम कर।

चेट -:यद्भ्द्रक आज्ञापयति। आर्ये! एतावान्मे विभव:।

चेट -मालिक जैसा कहें। वसन्तसेना के पास जाकर आर्ये, तुम्हारी रक्षा के लिए मुझमें इतनी ही ताकत है। निकल जाता है।

शकार -:तिष्ठ वसन्तसेने! तिष्ट, मारयिष्यामि।

शकार -फेटा कसते हुए रूको, वसन्तसेने रूको , मैं ही तुम्हें मारूँगा।

विट -:आ! : ममाग्रतो व्यापादयिष्यसि ? इति गले गृह्णाति।

विट -अरे, तो क्या मेरे सामने ही मारोगे ? गर्दन पकड़ लेता है।

शकार -:भावो भट्टकं मारयति।

शकार-धरती पर गिर जाता है। विद्वन्, मालिक को मारते हो ,अचेत हो जाता है,फिर होश मेंआकर

सर्वकालं मयापुष्टो मांसेन च घृतेन च

अद्य कार्ये समुत्पन्ने जातो मे वैरिक: कथम् ।।28।।

अन्वय-:सर्वकालम् , मया, मांसेन, च, घृतेन, च, पुष्ट:, अद्य, कार्ये, समुत्पन्ने, मे, वैरी, कथम् जात:? ।।28।।

हिन्दी अनुवाद -सदा मांस और घी खिलाकर मैंने तुम्हारा पालन किया है किन्तु , आज जब तुमसे काम पड़ा तो तुम हमारे शत्रु कैसे बन गये ?

भवतु, लब्धो मया उपाय: । दत्ता वृद्धश्रृगालेन शिरश्चालनसञ्ज्ञा, तदेवं प्रेष्य वसन्तसेनां मारयिष्यामि। एवं तावत्। भाव ! यत् त्वं यया भणित :, तत् कथमहमेवं बृहत्तरै :गल्लकप्रमाणै : कुलैर्जातोऽकार्य करोमि ? एवमेतदङ्गीकारयितं मया भणितम्।

कुछ सोचकर अच्छा तो अब मुझे उपाय सूझ गया। इस बूढे सियार ने शिर हिलाकर इशारा कर दिया है, तो पहले इसी को यहॉ से हटाकर तब वसन्तसेना को मारूँगा। तो ऐसा करूँ। कट अरे ओ पण्डित, मैंने तुमसे जो कुछ कहा उस पर तुमने सोचा । जरा विचारो तो, ऊँच कुत्ते की तरह कुल में जन्म लेकर भला मैं ऐसा कुकर्म कैसे करूँगा ? यह सब तो मैंने केवल उसे स्वीकार कराने के लिए कहा था।

विट -: **किं कुलेनोपदिष्टेन शीलमेवात्र कारणम्।**

भवन्ति सुतरां सफीता :सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमा :।।29।।

अन्वय -:कुलेन, उपदिष्टेन, किम् ? अत्र, शीलम्, एव, कारणम्, सुक्षेत्रे , कष्टकिद्रुमा:, सुतराम्, स्फीता:, भवन्ति **।।29।।**

हिन्दी अनुवाद –विट -अच्छाई के लिए , अच्छे खानदान में जन्म लेना कोई जरूरी नहीं है। इसमें तो आदमी का अपना स्वभाव ही कारण है। क्योंकि , अच्छी जमीन में भी कंटीले पेड़ जन्म लेकर और अधिक फैलते हैं **।।29।।**

शकार -:भाव! एषा तवाग्रतो लज्जते, न मामंगीकरोति तद् गच्छ, स्थावरकचेटो मया पीड़ितो गतोपि। एष पलाय्य गच्छति, तत् तं गृहीत्वा आगच्छतु भाव :।

शकार -हे पण्डित, वसन्तसेना तुम्हारे सामने लजाती है, इसी लिए वह मुझे स्वीकार नहीं करती है। अत :तुम यहॉ से हट जाओ। स्थावरक को भी मैंने पीट दियाहै, वह भी रूककर भागा जा रहा है, कृपया उसे पकड़ कर ले आओ।

विट -:स्वगतम्

अस्मत्समक्षं हि वसन्तसेना शौण्डीर्यभावान्न भजेत मूर्खम्।

तस्मात् करोम्येष विविक्तमस्या विविक्तविस्रम्भरसो हि काम :।।30।।

प्रकाशम् एवं भवतु, गच्छामि।

अन्वय-: वसन्तसेना, शौण्डीर्यभावात्, अस्मत् समक्षं, मूर्खम्, न भजेत्, तस्यात् एष:, अस्या:, विवक्तम्, करोमि,हि काम:, विविक्तविश्रम्भरस :भवति **।।30 ।।**

विट -मन ही मन

अपने गर्वीले स्वभाव के कारण ही वसन्तसेना शायद मेरे सामने इस मूर्ख को कबूल नहीं करे। अत :मैं यहॉ से हटकर इन्हें इसका अवसर दे देता हूँ। क्योंकि एकान्त में ही परस्पर काम

भावना बढती है **।।30।।** सुनकर अच्छा तो अब चलूँ।

वसन्तसेना - पटान्ते गृहीत्वा ननु भणामि शरणागतास्मि।

वसन्तसेना -कपड़े से पकड़ कर मैं कहती हूँ न, मैं आप की शरण में हूँ।

विट -: वसन्तसेने! न भेतव्यं न भेतव्यम्। काणेलीमात! : वसन्तसेना तब हस्ते न्यास :।

विट- वसन्तसेने डरने की कोई बात नहीं है। मत डरो। हे पुंश्चलीपुत्र यह वसन्सेना, मैं तुम्हारे हाथों में धरोहर छोड़ रही है।

शकार -:एवं। मम हस्ते एषा न्यासेन तिरष्ठतु।

शकार -ठीक है, मेरे पास यह धरोहर ही है।

विट -:सत्यम् ?

विट -सच बोलते हो न ?

शकार -:सत्यम्

शकार -हॉ सच बोल रहा हूँ।

विट : किंचिद् गत्वा अथवा मयि गते नृशंसो हन्यादेनाम्। तदपवारितशरीर :पश्यामि तावदस्य चिकीर्षितम्। इत्येकान्ते स्थित :।

विट -कुछ दूर जाकर या अगर मैं चला गया तो कहीं यह पापी , वसन्तसेना की हत्या न कर दे, तो क्या कहीं छिपकर इस पापी का चरित्र देखा जाय। शून्य स्थान में छिप जाता है।

शकार -:भवतु मारयिष्यामि। अथवा कपट-कापटिक एष ब्राह्मणो वृद्धश्रृगाल :कदापि अपवारितशरीरो गत्वा श्रृगालो भूत्वा कपटं करोति । तदेतस्य वञ्चनानिमित्तम् एवं तावत् करिष्यामि। बाले बाले ! वसन्तसेने !एहि।

शकार - अच्छा, मारूँगा। पर, कहीं यह रंगा सियार छिपकर देखता हो और मौका पाते ही झपट कर आक्रमण कर दे। अत :इसे धोखा देने के लिए पहले ऐसा करूँ) फूल चुनकर अपने को सजाता है। हे बाले , वसन्तसेना आओ ।

विट -:अये! कामी संवृत्त:। हन्त! निर्वृतोऽस्मि। गच्छामि। इति निष्क्रान्त :।

सुवर्णकं ददामि , प्रियं वदामि ,पतामि शीर्षेण सवेष्टनेन

तथापि मां नेच्छसि शुद्धदन्ति, किं सेवकं कष्ट मया मनुष्या: ।।31।।

अन्वय -सुवर्णकम्, ददामि, प्रियम्, वदामि,सवेष्टनेन, शीर्षेण, पतामि, तथापि,हे शुद्धदन्ति, माम्, सेवकम्, किम्, न , इच्छामि, ? मनुष्या:,कष्टमया :भवन्ति ।।31।।

विट -अरे यह तो कामातुर है। मैं निश्चिन्त हो गया। अब जाता हूँ। चला जाता है।

शकार -सोना देता हूँ। मीठी– मीठी बातें करता हूँ। पैरों पर माथा टेकता हूँ।

अरी सुदन्ती , फिर भी मुझ सेवक को तुम नहीं चाहती हो। सच ही मनुष्य अपने अनुगतों से बड़ा क्रूर व्यवहार करता है **।।31।।**

वसन्तसेना -कोऽत्र सन्देह :? अवनतमुखी खलचरितं इत्यादि श्लोकं पठति।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना - इसमें क्या सन्देह ?खलचरित' आदि दो श्लोकों को सर झुकाकर

ही गुनगुनाती है।

खलचरित ! निकृष्ट ! जातदोष :कथमिह मां परिलोभसे धनेन।

सुचरितचरितं विशुद्धदेहं न हि कमलं मधुपा :परित्यजन्ति ।।32।।

यत्नेन सेवितव्य :पुरूष :कुलशीलवान् दरिद्रोऽपि।

शोभा हि पणस्त्रीणां सदृशजनसमाश्रय :काम :।।33।।

अन्वय -हे खलचरित, निकट, जातदोषः, इद, माम्,धनेन, कथम्, परिलोभसे? मधुपा : सुचरितचरितम्, विशुद्धदेहम्, कमलम्, हि, न, परित्यजन्ति ।।32।।

अन्वय -कुलशीलवान्, पुरूषः, दरिद्रः, अपि ,यत्नेन, सेवितव्यः, हि सदृशजनसमाश्रयः, कामः, पणस्त्रीणाम् शोभा अस्ति ।।33।।

हिन्दी - रे नीच, तुम अपने व्यवहार से क्रूर हो , मूर्खता प्रभृति तुममें दोष हैं फिर भी अपनी सम्पदा से तुम मुझे लुभाना चाहतेहो। पर तुम यह नहीं जानते कि सुन्दर शील एवं आकर्षक आकृति वाले कमल को छोड़कर भौंरी और कहीं नहीं भटकती **।।32।।**

यदि शीलवान् एवं कुलीन व्यक्ति निर्धन भी है तो भी सेवनीय है। क्योंकि, समशील एवं अनुरूपव्यक्ति के साथ समागम ही हम वारवनिताओं की शोभा है **।।33।।**

अपि च, सहकारपादपं सेवित्वा न पलाशपादपमङ्गीकरिष्यामि।

और भी रसाल का रस चख लेने के बाद पुनः पलाश को कैसे स्वीकार करू।

शकार -:दास्या :पुत्रि! दरिद्र-चारूदत्तक :सहकारपादप :कृतः,अहं पुन :पलाशो भणितः, किंशुकोऽपि न कृतः। एवं त्वं मे गार्लि ददती अद्यापितमेव चारूदत्तकं स्मरसि ?

शकार – ओ नौकरानी की बच्ची तुमने तो उस दरिद्र चारूदत्त को आम कहा किन्तु मुझे टेसूका फूल भी न कहकर पलरा का पेड़ कह दिया। मुझे तुमने गाली दी है , उस गरीब चारूदत्त को तुम आज भी याद करती हो।

वसन्तसेना -हृदयगत एव किमिति न स्मर्यते ?

वसन्तसेना- जो हृदय में है उसकी याद कैसे न आये।

शकार -अद्यापि ते हृदयगतं त्वाञ्च सममेव मोटयामि। तद् दरिद्र-सार्थवाहकमनुष्कामुकिनि! तिष्ठ, तिष्ठ।

शकार- आज ही तुम्हारे हृदय में बैठे उस चारूदत्त को और तुमको चूर करके रख देता हूँ। उस भिक्षुक को चाहने वाली ठहर।

वसन्तसेना -भण भण, पुनरपि भण। इलाघनीयानि एतानि अक्षराणि।

वसन्तसेना- बोलो , फिर बोलो , उन पवित्र अक्षरों को फिर से बोलो।

शकार -:परित्रायतां दास्या :पुत्रो दरिद्र-चारूदत्तस्त्वाम्।

शकार -:देखता हूँ कि वह दरिद्र तुम्हें कैसे बचाता है।

वसन्तसेना -परित्रायते, यदि मां प्रेक्षते।

वसन्तसेना- यदि मुझे देख ले तो बचा ही लेगा।

शकार -:

किं स शक्रो बालिपुत्रो महेन्द्रः ,रम्भापुत्रः कालनेमिः सुबन्धुः
रूद्रो राजा द्रोणपुत्रो जटायुश्चाणक्यो वा धुन्धुमारस्त्रिशंकुः ?॥34॥
अथवा एतेऽपि त्वां न रक्षन्ति।
चाणक्येन यथा सीता मारिता भारते युगे
एवं त्वां मोटयिष्यामि जटायुरिव द्रौपदीम् ॥35॥

अन्वय- सः किं शक्रः बालिपुत्रः महेन्द्रः , रम्भापुत्रः कालनेमिः सुबन्धुः ,राजा रूद्र द्रोणपुत्रः जटायुःचाणक्यः धुन्धुमारः वा त्रिशंकु**:। 34।**

अन्वय -यथा, भारते, युगे, चाणक्येन, सीता, मारिता, जटायु :, द्रौपदीम्, इव, एवम्, त्वाम्, मोटयिष्यामि ॥35॥

क्या वह चारूदत्त स्वयं इन्द्र हे या बालि का बेटा महेन्द्र है ,वह रम्भा नाम की अप्सरा का पुत्र कालनेमि है या सुबन्धु। वह राजा रूद्र है या द्रोण का पुत्र जटायु , चाणक्य है कि धुन्धुमार या फिर वह त्रिशंकु है।। **34।**

अथवा, ये भी तुम्हें बचा नहीं पायेंगे।

महाभारत युद्ध में जैसे चाणक्य ने सीता को मारा था, जैसे जटायु ने द्रौपदी को मारा था , उसी प्रकार मैं भी तुम्हारी हत्या कर दूँगा **॥35॥**

वसन्तसेना -हा मात! : कस्मिन्नसि ? हा आर्य्यचारूदत्त ! एष जन :असम्पूर्णमनोरथ एव विपद्यते। तदूर्ध्वमाक्रन्दयिष्यामि। अथवा वसन्तसेना ऊर्ध्वमाक्रन्दतीति लज्जनीयं खल्वेतत्। नम आर्यचारूदत्ताय।

वसन्तसेना -हाय, मॉ , तुम कहॉ हो ? हा प्रिय चारूदत्त, मनोरथ पूरा होने से पहले ही मर रही हूँ। जी करता है जोर जोर से चिल्ला कर रोऊँ। किन्तु नहीं –'वसन्तसेना चिल्ला रही है।'
यह कितनी लाज की बात है। हे आर्य चारूदत्त , तुम जहॉ हो, वहीं मेरा अन्तिम प्रणाम।

शकार -:अद्यापि गर्भवासी तस्यैव पापस्य नाम गृह्णाति ?इति कण्ठे पीडयन् स्मर गर्भदासि! स्मर।

शकार -यह नीच अभी भी उसी पापी को पुकार रही है। गला दबाता है। ले अधम अब उसे खूब याद कर।

वन्तसेना - नमः आर्यचारूदत्ताय

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त को प्रणाम।

शकार -:म्रियस्व गर्भदासि! म्रियस्व।

वसन्तसेना मूर्च्छिता निश्चेष्टा पतति।

शकार -मर साली मर। अभिनयपूर्वक गला दबाकर मारता है। वसन्तसेना मूर्च्छित होकर गिरती है और निश्चेष्ट हो जाती है।

शकार -:सहर्षम्

एतां दोषकरण्डिकामविनयस्यावासभूतां खलां

रक्तां तस्य किलागतस्य रमणे कालागतामागताम्।
किमेषु समुदाहरामि निजकं बाह्वो :शूरत्वं
नि:श्वासेपि म्रियते अम्बा सुमृता सीता यथा भारते ।।36।।
इच्छन्तं मां नेच्छतीति गणिका रोषेण मया भारिता
शून्येपुष्पकरण्डके इति सहसा पाशेनोत्त्रासिता।
स वा वञ्चितो भ्राता मम पिता मातेव सा द्रौपदी
योऽसौ पश्यति नेदृशं व्यवसितं पुत्रस्य शूरत्वम् ।।37।।

अन्वय -दोषकरण्डिकाम् , अविनयस्य, आवासभूताम्, खलाम्, रक्ताम्, आगतस्य, तस्य, रमणे, आगताम्, किल, कालागताम्, एताम्, एष :, निजकम्, बाह्वो:, शूरत्वम्, किम्, उदाहरामि, नि:श्वासे , अपि , अम्बा, म्रियते, यथा , भारते, सीता, सुमृता ।।36।।

अन्वय -इच्छन्तम्, माम्, गणिका, न, इच्छति, इति, रोषेण, मया, शून्ये, पुष्पकरण्डके, सहसा, पाशेन, उत्त्रासिता, मारिता, च, स:, मम, भ्राता, वा, पिता, वन्चित :, द्रौपदी, इव, सा माता, च, वन्चिता, य :असौ , पुत्रस्य, ईदृशम्, शूरत्वम्, व्यवसितम्, च, न, पश्यति।।37।।

हिन्दी अनुवाद) -पीटना चाहता है।

शकार -प्रसन्न होकर

पाप की पिटारी , दुर्व्यवहार की निवास भूमि यह वसन्तसेना चारूदत्त को प्यार करती है; उसी के साथ रमण करने हेतु यह पापिन इस जीर्णोद्यान में क्या आई ? मौत इसे घसीटकर ले आई है। इसे मारकर मैं अपनी बाहुओं की क्या बडाई करूँ , जबकि जोर से मेरी श्वास लेने से ही यह उसी प्रकार माता मर गयी जैसे महा-भारत में सीता मारी गई थी **।।36।।**

मैं इसे दिल से चाहता हूँ पर यह वेश्या मुझे नहीं चाहती है, इसी क्रोध से मैंने इसे इस एकान्त में गला घोटकर मार डाला। वह मेरे भाई और पिता अथवा द्रौपदी की तरह यह मेरी मॉ अपने बेटे के वीरता पूर्ण इस काम को ऑख भर देखने के लिए जिन्दा नहीं रही, यही खेद है **।।37।।**

भवतु , साम्प्रतं वृद्धश्रृगाल आगमिष्यतीति तदपसृत्य तिष्ठामि।

विट -:प्रविश्य चेटेन सह (अनुनीतो मया स्थावरकश्चेट:। तद् यावत् काणेलीमातरं पश्यामि। परिक्रम्यावलोक्य च अये! मार्ग एव पादपो निपतित:। अनेन च पतिता स्त्री व्यापादिता। भो : पाप! किमिदमकार्य मनुष्ठितं त्वया तवापि पापिन :पतनात् स्त्रीवधदशनेनातीव पातिता वयम्। अनिमित्तमेतद् यत्सत्यं वसन्तसेनां प्रति शंकितं मे मन :। सर्वथादेवता :स्वस्ति करिष्यन्ति। शकारमुपसृत्य काणेलीमात! : एवं मया अनुनीत :स्थावरकश्चेट:।

अच्छा तो वह बूढा सियार विट अब आने ही वाला है तो थोड़ा दूर हटकर प्रतीक्षा करूँ । कुछ दूर खिसक जाता है।

विट -चेट को लिये विट का प्रवेश लो, मैं चेट को मनाकर ला दिया, तो अब उस अधम को देखता हूँ थोड़ा घूमकर और देखकर (यह तो रास्ते में ही वृक्ष गिरा है। इसने गिर कर स्त्री को

मार डाला। रे पापी, तुमने यह कुकर्म क्यों किया? तुम्हारे गिरने और स्त्रीवध देखने के कारण हम भी पतित हो गये। अकारण ही वसन्तसेना के लिए मेरा मन सन्दिग्ध हो रहा है। देवता उसकी रक्षा करें। शकार के पास जाकर लो, मैंने तुम्हारे सेवक को मनाकर ला दिया।

शकार -:भाव! स्वागतं ते। पुत्रक ! स्थावरक ! चेट ! तवापि स्वागतम्।

शकार -मैं तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ। बेटे, स्थावरक, चेट, तुम्हारा भी स्वागत है।

चेट -:अथ किम्।

चेट -हॉं

विट -:मदीयं न्यासमुपनय।

विट -अब मेरी धरोहर मुझे लौटा दो

शकार -:कीदृश :?

शकार -कैसी धरोहर ?

विट -:वसन्तसेना।

विट - वसन्तसेना

शकार -:गता।

शकार- वह तो गई।

विट -:क्व ?

विट -कहॉं ?

शकार -:भावस्यैव पृष्टत:।

शकार -तुम्हारे पीछे पीछे।

विट -:सवितर्कम् न गता खलु सा तया दिशा।

विट -कुछ सोचकर नहीं उधर तो वह नहीं गई है।

शकार -:त्वं कतमया दिशा गत :?

शकार -तुम किस ओर गये थे?

विट -:पूर्वया दिशा।

विट -पूरब की ओर।

शकार -:सापि दक्षिणया गता।

शकार -तो फिर वह दक्षिण की ओर गई।

विट -:अहं दक्षिणया।

विट – मैं तो दक्षिण की ओर गया था।

शकार -:सापि उत्तरया।

शकार -वह भी उत्तर की ओर गई है।

विट -:अत्याकुलं कथयसि । न शुध्यति मे अन्तरात्मा। तत् कथय सत्यम्।

विट -तुम कुछ घबड़ाकर बोल रहे हो। तुम्हारी बातें सच्ची नहीं लगती।

ठीक-ठीक बतलाओ; वह कहॉं गई ?

शकार -:शपे भावस्य शीर्षमात्मीयाभ्यां पादाभ्याम्, तत् संस्थापय हृदयम् एषा मया मारिता।

शकार- मैं अपने पैरों से तुम्हारा माथा छू कर कसम खाकर कहता हूँ ,दिल थामकर सुनो, मैंने वसन्तसेना को मार डाला।

विट -:सविषादम् सत्यं त्वया व्यापादिता ?

विट -दु:ख के साथ क्या सचमुच तुमने उसे मार डाला ?

शकार -:यदि मम वचने न प्रत्ययसे,तत् प्रेक्षस्व प्रथमं राष्ट्रिय-श्याल-संस्थानस्य शूरत्वम्।

शकार -यदि तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास नहीं है तो राजा के साले की वीरता को देख लो। गिरी हुई वसन्तसेना को दिखाताहै।

विट -:हा! हतोऽस्मि मन्दभाग्य :। इति मूर्च्छित :पतति।

विट -हाय, मैं अभागा तो मर गया। अचेत होकर गिर जाताहै।

शकार - :ही ही! उपरतो भाव :।

शकार -अरे, विट तो मर गया।

चेट -: समाश्वसितु समाश्वसितु भाव:। अविचारितं प्रवहणमानयतैव मया प्रथमं मारिता।

चेट -भाव, धीरज धरो, बिना कुछ सोचे विचारे अपनी गाड़ी से यहॉं लाकर पहले तो मैंने ही उसका बध किया।

विट -:समाश्वस्य सकरूणम् हा वसन्तसेने!

दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिता याता स्वदेशं रति :

हा हालड्कृतभूषणे ! सुवदने ! क्रीडारसोद्भासिनि !।

हा सौजन्यनदि ! प्रहासपुलिने ! हा मादृशामाश्रये !

हा हा नश्यति मन्मथस्य विपणि :सौभाग्यपण्याकर :।।38।।

सास्रम् कष्टं भो! : कष्टम्।

किं नु नाम भवेत् कार्यमिदं येन त्वया कृतम्।

अपापा पापकल्पेन नगरश्रीर्निपातिता ।।39।।

स्वगतम् अये! कदाचिदयं पाप इदमकार्य मयि संक्रामयेत्। भवतु, इतो गच्छामि।

शकार उपगम्य धारयति।

अन्वय -दाक्षिाण्योदकवाहिनी, विगलिता, रति:, स्वदेशम्, याता, हा हा, अलंकृतभूषणे, सुवदने, क्रीडारसोद्भासिनि, हा प्रहासपुलिने, सौजन्यनदि, हा, मादृशाम्, आश्रये, हा ! हा! मन्मथस्य, विपणि:, सौभाग्यपण्याकर:, नश्यति **।।38।।**

अन्वय -किम्, नु, नाम, कार्यम्, भवेत्, येन , त्वया, इदम्, कृतम्, पापकल्पेन, अपापा:, नगरश्री:, निपातिता:।**।39।।**

विट -धीरज रखकर, दयापूर्वक हाय, वसन्तसेने।

हा आभूषणों के आभूषण, सुन्दर मुखवाली, सुरतसुखदायिनि, सुजनता की नदी, हास्य के

पुलिन, मेरे जैसे अनाथों की आश्रयदायिनि, हा वसन्तसेने, तुम कहॉ गई? उदारता रूपी जल की नदी सूख गई। धरती की रति पुन :स्वर्ग चली गई। हाय, हाय, सौन्दर्यरूपी विक्रेय वस्तु की खान खत्म हो गई और कामदेवका बाजार लुट गया **।।38।।**

हिन्दी अनुवाद -ऑखो में ऑसु भरकर कष्ट है, महाकष्ट -

वसन्तसेना को मारकर तुम्हारा कौन सा मनोरथ पूरा हुआ ? किसलिए तुमने यह जघन्य अपराध किया ? महान् पापी तुमने इस पाप रहित नगरलक्ष्मी को ही समाप्त कर दिया **।।39।।**

मन ही मन अरे कहीं यह पापी इस कुकर्म को मेरे माथे ही न थोप दे ? अच्छा तो मुझे यहॉ से चल ही देना चाहिये। शकार आकर विट को पकड़ लेता है।

विट -:पाप! मा मा स्प्राक्षी:। अलं त्वया। गच्छाम्यहम्।

विट -पापी, तुम मुझे मत छुओ। तुम्हारा प्रयास बेकार है। मैं अब चला ।

शकार -:अरे! वसन्तसेनां स्वयमेव मारयित्वा मां दूषयित्वा कुत्र फलायसे ? साम्प्रतम् ईदृशोऽहमनाथ: प्राप्ता:।

शकार -अरे, तुमने वसन्तसेना की हत्या कर दी और इस हत्या का कलंक मेरे माथे थोप कर स्वयं कहॉ भाग रहे हो ? हाय, इस समय मैं ऐसे असहाय हो गया।

विट -:अपध्वस्तोऽसि।

विट -तुम पतित हो।

शकार -: अर्थान् शतं ददामि सुवर्णकं ते कार्षापणं ददामि सवोडिकं ते
एष दोषस्थानं पराक्रमो मेसामान्यकोभवति मनुष्यकाणाम् ।।40।।

अन्वय -अहम् (ते, शतम्, अर्थान् सुवर्णकम्, ददामि, ते सवोडिकम्, कार्षापणम् ददामि, दोषस्थानम्, मे, एष:, पराक्रम:, मनुष्याणाम्, सामान्यक:, भवतु, **।।40।।**

शकार -मैं तुम्हें सोने के मोहरों से भर दूँगा। कौड़ियों के साथ कार्षापण भी दूगॉ। अपराध का करण मेरा यह पराक्रम किसी और सामान्यजन पर थोप देना। **।।40।।**

विट -:धिकं, तवैवास्तु।

विट -तुम्हें धिक्कार है। यह दोष तो तुम्हीं पर होगा।

चेट -:शान्तं पापम्।

चेट - ऐसा मत कहो शकार , जिसका पाप है, उसी पर रहेगा।

शकार :हसति।

शकार हँसता है।

विट-:

अप्रीतिर्भव तु विमुच्यतां हि हासो
धिक् प्रीतिं परिभवकारिकामनार्याम्।
मा भूच्च त्वयि मम संगतं कदाचिद्
आच्छिन्नं धनुरिव निर्गुणं त्यजामि ।।41।।

अन्वय-हास:, विमुच्यताम्, अप्रीति:, भवतु, हि, परिभवकारिकाम्, अनार्याम्, प्रीतिम्, धिक्। त्वयि, मम,संगतम्, कदाचित्, मा भूत। च, आच्छिन्नम् , निर्गुणम्, धनु :, इव, त्वाम् त्यजामि ॥41॥

हिन्दी अनुवाद - विट -बेकार हँसना बन्द करो। अब तुम्हारे साथ हमारी दोस्ती नहीं निभेगी। ऐसी दोस्ती पद लानत है जिससे अपमान एवं दुष्टता की बदबू आती हो। तुम्हारे साथ हमारी संगति कभी न हो तुम्हें टूटे डोरे वाले धनुष की तरह छोड़कर जाता हूँ **॥41॥**

शकार -:भाव! प्रसीद, प्रसीद ! एहि, नलिन्यां प्रविश्य क्रीडाव:।

शकार -अरे ओ विद्वन्, प्रसन्न हो जाओ,आओ इस कमल से भरे तालाब में हम क्रीड़ा करें।

विट -:

अपतितमति तावत् सेवमानं भवन्तं
पतितमिव जनोऽयं मन्यते मामनार्यम्।
कथमहमनुयायां त्वां हतस्त्रीकमेनं
पुनरपिनगरस्त्री-शंकितार्द्धाक्षिदृष्टम् ॥42॥

सकरूणम् वसन्तसेने!
अन्यस्यामपि जातौ मा वेश्या भूस्त्वं हि सुन्दरि !।
चारित्र्यगुणसम्पन्ने ! जायेथा विमले कुले॥43॥

अन्वय -भवन्तम्, सेवमानम्, अपतितम्, अपि, माम्, अयम्, जन:, पतितम्, इव, मन्यते, हतस्त्रीकम्, नगरस्त्रीशंकितार्द्धाक्षिदृष्टम्, एनम्, त्वाम्, पुनरपि, कथम्, अनुयायाम् **॥42॥**

अन्वय -हे सुन्दरि, त्वम्,अन्यस्याम्, जातौ, अपि, वेश्या, मा, भू:, हे चारित्रगुणसम्पन्ने, विमले, कुले, जायेया:। **॥43॥**

विट-तुम्हारे साथ रहने पर मैं स्वयं अपनी ऑंख में ही आप गिर जाऊँगा। जनसामान्य भी मुझे पतित एवं नीच समझेंगे। तुम वसन्तसेना के हत्यारे हो। नगर की महिलाएँ तुम्हें बड़ी सन्दिग्ध दृष्टि से देखती हैं। तुम्ही बतलाओ, तुम पर खुश होकर मैं तुम्हें अब कैसे साथ दूँ **॥42॥**

दयापूर्वक हे वसन्तसेने!

हे सुन्दरी, अगले जन्म में तुम वेश्या कुल में कभी जन्म मत लेना, तुम एक चरित्रगुणसम्पन्न महिला हो, अत :तुम किसी कुलीन घर में जन्म लेना **॥43॥**

शकार : मदीये पुष्पकरण्डकजीर्णोद्याने सवन्तसेनां मारयित्वा कस्मिन् पलायसे । एहि, मम आवुत्तस्य अग्रतो व्यवहारं देहि।

शकार -अरे ओ दुष्ट, मेरे पुष्पकरण्डक नामक जीर्णोद्यान में वसन्तसेना को मारकर, अब तुम्हारा विचार होगा। पकड़ता है

विट -:किं रे! भीतोऽसि ? तद्गच्छ।

विट - अच्छा, ठहर रे नीच। तलवार खींचता है।

शकार -:निधनं गच्छ । अरे स्थावरक! पुत्रक ! कीदृशं मया कृतम्।

शकार-डर से कुछ दूर हटकर अरे, तो क्या तुम डर गये, जब जाओ।

विट -:स्वगतम् न युक्तमवस्थातुम् । भवतु, अत्र आर्यशर्विलकचन्दनकप्रभृतय :सन्ति, तत्र गच्छामि !इति निष्क्रान्त:।

विट -अपने आप अब यहॉ ठहरना बिल्कुल ठीक नहीं है। अच्छा तो जहॉ, आर्य शर्विलक, चन्दनक आदि गये हैं वहीं चला जाय। निकल जाता है।

चेट -:भट्टक! महदकार्य कृतम्।

चेट -मालिक, आपने बहुत बुरा काम किया है।

शकार -:अरे चेट! किं भणसि अकार्य कृतमिति ? भवतु , एवं तावत्। गृहाण इममलंकारं मया तावद्दत्तम्, यावत्यां वेलयामलङ्करोमि, तावती वेलां मम अन्यां तव।

शकार -क्या कहा, रे सेवक, 'बहुत बुरा काम किया'? अच्छा तो सुन)अपनी देह से बहुत सारे जेवरों को उतार कर ले, इसे रख ले। मैंने तुझे दे दिया। पहनने के समय ये मेरे रहेंगे और बाकी समय में तेरे।

चेट -:भट्टके एव एते शोभन्ते किं मम एतै :?

चेट-ये सब तो आपको ही शोभते हैं मालिक, मेरे लिए ये किस काम के हैं ?

शकार -:तद् गच्छ , एतौ गावौ गृहीत्वा मदीयायां क्रीडार्थायां प्रासादबालाग्रप्रतोलिकायां तिष्ठ , यावदहमागच्छामि।

शकार -तो जा अब इन बैलों को अपने साथ लेते जा। हॉ और वहॉ महल की नई अटारी की ऊपर वाली प्रतोली में रूककर मेरी प्रतीक्षा करो। मैं आ ही रहा हूँ।

चेट -:यद्भट्टक आज्ञापयति।

चेट -मालिक का जैसा हुक्म। ऐसा कहकर चला जाता है।

शकार -:आत्म्परित्राणे भावो गत :अदर्शनम्, चेटमपि प्रासादबालाग्रप्रतालिकायां निगडपूरितंकृत्वा स्थापयिष्यामि। एवं मन्त्रो रक्षितो भवति। तद्गच्छामि। अथवा, पश्यामि तावदेनाम्, किमेषा मृता ? अथवा पुनरपि मारयिष्यामि। कथं सुमृता। भवतु , एतेन प्रावारकेण प्रच्छादयामि एनाम्। अथवा नामांकित एष:, तत् कोऽपि आर्यपुरूष :प्रत्यभिजानाति। भवतु, एतेन वातालीपुञ्जितेन शुष्कपर्णपुटेन प्रच्छादयामि । भवतु एवं तावत्, साम्प्रतमधिकरणं गत्वा व्यवहारं लेखयामि। यथा; अर्थस्य कारणात् सार्थवाहचारूदत्तेन मदीयं पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं प्रवेश्य वसन्तसेनाव्यापादितेति।

चारूदत्त्-विनाशाय करोमि कपटं नवम्।

नगर्या विशुद्धायां पशुघातमिव दारूणम् 44।।

अन्वय -अस्याम् विशुद्धायाम्, नगर्याम्, दारूणम्, पशुघातम्, इव, चारूदत्तविनाशाय, नवम्, कपटम्, करोमि **।।44।।**

शकार -अपने बचाव के लिए विट विलुप्त हो गया। चेट को भी बेड़ी डालकरअपने महल

की नई अटारी वाली गली में छोड़ दूँगा। इस तरह इस हत्या का भेद छिपा रह जायेगा। तो, जाता हूँ ,अथवा जाने से पहले इसे देख लूँ कि यह मर गई ? अथवा और मारूँ देखकर यह तो पूरी तरह मर गई। अच्छा तो इस दुपट्टे से इसे ढँक देता हूँ। अथवा -इस दुपट्टे पर तो नाम लिखा है। कोई भी भला आदमी इसे देखते ही पहचान लेगा। अच्छा तो, हवा के झोंको से इकट्ठे किये गये इन सूखे पत्तों से ही इसे ढँक दूँ। वैसा ही करके ,कुछ सोंचकर (अच्छा तो अब ऐसा करूँ ; न्यायालय में जाकर रपट लिखवा दूँ कि धन के लोभ से सार्थवाहसुत चारूदत्त ने वसन्तसेना को पुष्पकरण्डक नामक मेरे पुराने बगीचे में लाकर मार दिया।

इस पवित्र नगरी में दुखद पशुहत्या की तरह आर्य चारूदत्त के विनाश के लिए मैं एक नया छल करता हूँ ।।44।।

शकार -मर जा। अरे बेटा स्थावरक, मैंने कैसा काम किया?

भवतु , गच्छामि। अविदमादिके ! अवदमादिके !येन येन गच्छामि मार्गेण, तेनैव एष दुष्टश्रमणक : गृहीतकाषायोदकं चीवरं गृहीत्वा आगच्छति । एष मया नासां छत्वा वाहित :कृत्वैर :कदापि मां प्रेक्ष्य 'एतेन मारिता' इति प्रकाशयिष्यति । तत् कथं गच्छामि ? भवतु एतदर्द्धपतितं प्राकारखण्डमुल्लंघय गच्छामि।

अच्छा तो अब चलूँ। निकल कर, देखकर, डरते हुए ओह, जिधर मैं जाता हूँ, उधर ही हाथ में गेरूआ कौपीन लिये यह संन्यासी मुझे मिल जाता है। मैंने इसकी नाक छेदकर इसे अपने बगीचे से बाहर खदेड़ दिया है। अत :यह मेरा नित्य-शत्रु है, मुझे यहॉ देखकर कही यह न कह दे कि- 'शकार ने ही वसन्तसेना को मारा है।' तो फिर कैसे जाऊँ ? देखकर अच्छा तो आधी गिरी हुई इस दीवार को लॉघकर में निकल जाता हूँ।

एषोऽस्मि त्वरित-त्वरितो लंकानगर्य्या गगने गच्छत्।
भूम्यां पाताले हनूमच्छिखरे इव महेन्द्र :।।45।।

अन्वय -एष:, अहम्, आकाश, भूमयाम, पाताले, हनुमच्छिखरे, लंकानगर्याम्, गच्छन्, महेन्द्र:, इव, त्वरितत्वरित:, गच्छामि **।।45।।**

यह मैं शकार आकाश, पाताल, धरती और हनुमान् पर्वत की चोटी महेन्द्र पर्वत की चोटी एवं लंका को जाते हुए महेन्द्र वस्तुत:हनुमान् की भॉति तेजी से जा रहा हूँ **।।45।।**

इति निष्क्रान्त :प्रविश्य अपटीक्षेपेण

संवाहको भिक्षु -:प्रक्षालितमेतन्मया चीवरखण्डम् किं नु खलु शाखायां शोषयिष्यामि ? इह वानरा विलुम्पन्ति। किं नु खलु भूम्याम् ? धूलिदोषो भवति। तत् कुत्र प्रसार्य्य शोषयिष्यामि ? भवतु, इह वातालीपुञ्जिते शुष्क–पत्रसञ्चये प्रसारयिष्यामि। नमो बुद्धाय ।भवतु, धर्माक्षराणि उदाहरामि। अथवा अलं ममैतेन स्वर्गेण। यावत्तस्या बुद्धोपासिकाया :प्रत्युपकारं न करोमि,यया दशानां सुवर्णकानां कृते द्यूतकाराभ्यां निष्क्रीत:, तत :प्रभृति तया क्रीतमिवात्मानमवगच्छामि। किं न खलु पर्णोदरे समुच्छ्वसिति ? अथवा -

वातातपेन तप्तानि चीवरतोयेन स्तमितानि पत्राणि।

एतानि विस्तीर्णपत्राणि मन्ये पत्राणीवसफुरन्ती ।।46।।

वसन्तसेना संज्ञां लब्ध्वा हस्तं दर्शयति।

अन्वय -वातातपेन, तप्तानि, एतसनि, पत्राणि, चीवरतोयेन, स्तिमितानि, विस्तीर्णपत्राणि, पक्षिण:, इव, स्फरन्ति, इति मन्ये ।।46।।

संवाहक भिक्षु – इस भगवे को तो मैंने धो डाला किन्तु इसे कहॉ पर सुखाऊँ , यदि पेड़ पर डालूँ तो बन्दर इसे फाड़ डालेंगे। धरती पर धूल लग जायेगी , हवा ने यहॉ सूखे पत्तों की राशि लगा दी है , इसी पर सुखाता हूँ। भगवान बुद्ध को प्रणाम करता है , बैठ जाता है – कहता है कि अब मैं धार्मिक अक्षरों का पाठ करता हूँ **पंचजना: येन मारिता्**.....' इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक पढता है। अथवा इस स्वर्ग से मुझे क्या लाभ ? जब जक मैं उस बुद्धोपासिका वसन्तसेना का प्रत्युपकार नहीं करता हूँ, जिसने सुवर्ण के लिए मुझे जुआड़ियों से छुडा़ लिया। तभी से मैं समझता हूँ कि उसने मुझे खरीद लिया देखकर अरे, पत्तो के ढेर के बीच से यह सॉस कौन ले रहा हूँ अथवा - **हिन्दी -** हवा और घाम से सूखे ये पत्ते भगवे के पानी से भीगकर मानो ऐसे फैल रहे हैं जैसे कोई पखेरू अपने पंख फैलाकर हिल रहे हों **।।46।।**

भिक्षु -:हा हा शुद्धालंकारभूषित :स्त्रीहस्तो निष्क्रामति। कथं द्वितीयोऽपि हस्त :? प्रत्यभिजानामीव एतं हस्तम्। अथवा,किं विचारेण सत्यं स एव हस्त :, येन मे अभयं दत्तम्। भवतु, प्रेक्षिष्ये। सैव बुद्धोपासिका। सन्तसेना पानीयमाकांक्षति।

भिक्षु -हाय, हाय यह तो सुन्दर जेवरो से सजा हुआ किसी औरत का हाथ बाहर निकल रहा है, ये लो, यह दूसरा हाथ भी। कुछ गौर कर यह हाथ तो कुछ जाना पहचाना-सा लगता है, अथवा – सच यह तो वही हाथ है जिसने जुआडियों से मुझे अभयदान दिया था। अच्छा , देखता हूँ। अभिनयपूर्वक पत्ते हटाकर, देख और पहचान कर यह तो वही बुद्धोपासिका वसन्तसेना है।

वसन्सेना इशारे से पानी मॉगती है।

भिक्षु -:कथमुदकं मार्गयति, दूरे च दीर्घिका। किमिदानीमत्र करिष्यामि ? भवतु, एतच्चीवरमस्या उपरि गालयिष्यामि।

वसन्तसेना संज्ञां लब्ध्वा उत्तिष्ठति। भिक्ष :पटान्तेन बीजयति

भिक्षु -हाय , यह तो पानी मॉग रही है। जलाशय दूर है। अब मैं क्या करूँ ? अच्छा इस भगवे को निचोड़ता हूँ। निचोड़ता है।

वसन्तसेना होश में आकर उठ बैठती है। सन्यासी वस्त्र से हवा करता है।

वसन्तसेना -आर्य! कस्त्वम्?

वसन्तसेना -मान्यवर ,आप कौन है ?

भिक्षु - :किं मां न स्मरति बुद्धोपासिका दश-सुवर्ण-निष्क्रीतम् ?

भिक्षु -अरी ओ बुद्धोपासिका, तुमने मुझे पहचाना नहीं, दस सोने के सिक्के देकर तुमने ही तो मुझे खरीदा है।

वसन्तसेना -स्मरामि, न पुनर्यथा आर्यो भणति। वरमहमुपरतैव।

वसन्तसेना -याद तो आती हैं पर, जैसे आप कह रहे हैं वैसे नहीं। इससे तो वह मौत ही अच्छी थी।

भिक्षु - बुद्धोपासिके ! किं नु इदम् ?

भिक्षु -:बुद्धोपासिके, यह तुम्हें क्या हुआ है ?

वसन्तसेना -यत् सदृशं वेशभावस्य।

वसन्तसेना -दु:ख के साथ वेश्यालय में जन्म लेने का उचित फल ही है।

भिक्षु - :उत्तिष्ठतु, उत्तिष्ठतु, बुद्धोपासिका, एतां पादपसमीप-जातां लतामवलम्ब्य।

भिक्षु -बुद्धोपासिके, वृक्ष की पार्श्ववर्त्तिनी इस लता के सहारे उठकर खड़ी हो जाओ। ऐसा कहकर लता को झुकाता है।

वसन्तसेना लता के सहारे उठकर खड़ी हो जाती है।

भिक्षु -:एतस्मिन् विहारे मम धर्मभगिनी तिष्ठति। तस्मिन् समाश्वस्तमना भूत्वा उपासिका गेहं गमिष्यति। तत् शमै :शनै :गच्छतु बुद्धोपासिका। अपसरत आर्य्या! : अपसरत। एषा तरूणी स्त्री, एष भिक्षुरिति शुद्धो मम एष धर्म :।

भिक्षु -इस बौद्ध मठ में मेरी एक धर्म की बहन रहती है। वहॉ कुछ आराम कर आप लौट जाओगी। तो धीरे धीरे बढो। ऐसा कहकर घूमता है। देखकर लोगो हटो, यह युवती स्त्री है और मैं सन्यासी हूँ। इसलिये मेरा यह पवित्र कर्त्तव्य है।

हस्तसंयतो मुखसंयत इन्द्रियसंयत :स खलु मानुष:।
किं करोति राजकुलं तस्य परलोको हस्ते निश्चल:।। 47।। इति निष्क्रान्ता :

अन्वय -स:, खलु, मानुष:, हस्तसंयत:, मुखसंयत:, इन्द्रियसंयत:, राजकुलम्, तस्य ,किम्, करोति, परलोक:, तस्य:, हस्ते, निश्चल**:।। 47।।**

हिन्दी - वही मनुष्य वस्तुत :मनुष्य है, जिसका हाथ, मुँह और इन्द्रियॉ वश में रहती हैं। राजकुल उसका क्या बिगाड़ सकता है ? मरने के बाद स्वर्गतो उसकी मुट्ठी में है। **47।।**

सभी निकल जाते है। आठवॉ अंक समाप्त।

अभ्यास के प्रश्न –

1. निम्नलिखित सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1. शकार ने किसे बूढा सियार कहा है-

क -चेट ख -विट ग -भिक्षु घ -कोई नहीं

2. सदा मांस और घी खिलाकर किसे पाला गया -

क -विट ख -चेट ग -भिक्षु घ -वसन्तसेना

3. शकार ने पण्डित किसे कहा है -

क -स्वयं ख -विट को ग -चेट को घ-वसन्तसेना को

4. शकार किसे मारने की इच्छा करता है -

क-वसन्तसेना ख-चेट ग-विट घ -कोई नहीं

5. वसन्तसेना ने सर झुकाकर कितने श्लोको को गाया -

क-चार ख-दो ग-तीन घ-पांच

2. सत्य एवं असत्य कथनों की पहचान कीजिए

क-जो मन में बसा है उसकी याद कैसे नहीं आयेगी ,यह कथन वसन्तसेना का है।

ख-गर्भदासि वसन्तसेना को कहा गया है।

ग-चेट का नाम स्थावरक नहीं है।

घ-विट को पतित कहा गया है।

ड -.भिक्षु ने वसन्तसेना को बुद्धोपासिका कहा।

19.4 सारांश –

प्रसतुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि 25वें श्लोक में चेट ने यह कहा कि मैं अपने पूर्व जन्म में किये हुए पापों के कारण ही दासकुल में जन्म पाया हूँ। वसन्तसेना की हत्या करके मैं और अधिक पापों को नहीं जुटाना चाहता। विट को बूढा सियार कहा और चेट को परलोक से भय खाने वाला बताया किन्तु मैं तो राज्य का साला और प्रधान पुरूष हूँ । वह विट को भगा देता है। दोनों के वार्तालाप होते हैं। किन्तु विट का कथन सराहनीय है कि अच्छाई के लिए अच्छे कुल में जन्म लेना अनिवार्य नहीं है। ऐसा कह कर वह शकार और वसन्तसेना को मिलने के लिए एकान्त प्रदान करता है। किन्तु शंका भी करता है कि कहीं यह पापी शकार उसकी हत्या न कर दे। वसन्तसेना दुष्टचरित के लिए दो श्लोक कहती है। शकार क्रोधित होता है। वह चारूदत्त की प्रसंशा नहीं सुनता। वसन्तसेना चारूदत्त के वियोग में मरने जा रही है। चारूदत्त को पुकार रही है। शकार इसे सहन नहीं करता और वह कहता है कि इस पापिनी की मौत इसे जीर्णोद्यान में खीचकर लायी है। शकार विट से कहता है कि मैंने वसन्तसेना को मार डाला। किन्तु बौद्धभिक्षु और वसन्तसेना के वार्तालापों से अष्टम अंक समाप्त होता है। अत :इस इकाई को पढ़ने के बाद आप आठवें अंक के वर्णन वैशिष्ट्य के साथ-साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताएं भी बता सकेंगे।

19.5 पारिभाषिक शब्दावली

1 . शौण्डीर्यभावात् -स्व औदार्यात्अर्थात् अपनी उदारता से।

2. विविक्तविस्तम्भ रसो -विविक्त का अर्थ होता है शून्य या एकान्त और विस्ततम्भ का अर्थ है विश्वास रस का तात्पर्य है आनन्द।

3. पणस्त्रीणाम-शारीरिक व्यवसाय में लिप्त स्त्रियों को कहा गया है।

4. मोटायिष्यामि -इसका अर्थ चूर्णा करोमि है अर्थात् चूर कर दूँगा।

5. परिभव कारिकामनायीम -.आनादर करने वाली , या अनादरकारिणी, निन्दनीया महिलायें।

6. आच्छिन्नं -टूटा हुआ। टूट गया

7. पशुघात - -हिंसा , बलि इत्यादि।

8. हस्तसंयत -हाथों के द्वारा कोई गलत कार्य न करने वाला।

9. मुखसंयत – मुख से किसी को पीड़ा न पहुचाने वाला।

10. इन्द्रिय संयत – इन्द्रिय रूप साधनों से किसी का अपकार न करने वाला।

19. 6अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख-2 .क -3 .ख -4 .क 5. ख

2. क -सत्य ख -सत्य ग- असत्य घ-सत्य ड-.सत्य

19.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

19.8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. इस पठित इकाई के आधार पर वसन्तसेना की विशेषता लिखिए।

2. पठित अंश का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

3. पठित अंश का साहित्यिक वैशिष्ट्य लिखिए।

4. बौद्ध भिक्षु के कथनों की समीक्षा कीजिए।

इकाई 20 रत्नावली प्रथम अंक संवाद एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना
20.2 उद्देश्य
20.3 मंगलाचरण से प्रस्तावना तक
20.4 श्लोक संख्या **7** से 25 तक अर्थ व्याख्या
20.5 सारांश
20.6 शब्दावली
20.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
20.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
20.9 निबन्धात्मक प्रश्न

20.1 प्रस्तावना

स्नात्तकोत्तर संस्कृत द्वितीय वर्श के चतुर्थ प्रश्न पत्र नाटक एवं नाटिका में खण्ड 5 के वर्ण्य विशय रत्नावली नाटिका से सम्बन्धित यह **प्रथम** इकाई है । इस इकाई में प्रथम अंक मुख्य वर्ण्य विशय है ।

प्रथम अंक का आरम्भ परम्परा के अनुसार कवि ने मंगलाचरण से किया है । इसकी कथा वस्तु का मूल स्रोत कथासरितसागर है । यह रूपक का एक भेद है । प्रथम अंक में प्रारम्भिक वर्णन नान्दी के पश्चात् विश्कम्भक का चित्रण करते हुये यौगन्धरायण के द्वारा उदयन के भाग्योत्कर्श की सूचना दी गई है । नेपथ्य की कल कल ध्वनि में महाराज उदयन का वसन्त उत्सव देखने के लिये राजप्रसाद पर चढ़ना, कौशाम्बी में वसन्तोत्सव के समय समस्त अन्तःपुर का आनन्दित होना इत्यादि सूचित हुआ है । राजा का मकरन्द उद्यान में पहुॅचना, सागरिका का कौशाम्बी में काम पूजन देखने का कुतूहल, तथा राजा की अन्य अभिलाशायें संवादों के मध्य प्रथम अंक में प्रकट है ।

अतः रत्नावली नाटिका के प्रथम अंक से सम्बन्धित श्लोकों के अध्ययन व संवादों के अवलोकन के पश्चात् आप मंगलाचरण से लेकर प्रथम अंक की सम्पूर्ण कथावस्तु के विविध पक्षों को समझा सकेगें ।

20.2 उद्देश्य

रत्नावली नाटिका के प्रथम अंक में विभिन्न पात्रों के मध्य हुये संवादों एवं श्लोकों का सम्यक् अध्ययन करने के पश्चात् आप बता सकेगें कि –

1. मंगलाचरण कितने प्रकार के होते है ।
2. नान्दी का प्रयोग क्यों किया जाता है ।
3. कथावस्तु की प्रथम सूचना कौन देता है ।
4. रत्नावली के नायक नायिका कौन तथा किस कोटि के है ।
5. प्रथम अंक के श्लोकों में किन किन छन्दों का प्रयोग हुआ है ।
6. प्रथम अंक के रचना विधान में कवि ने नाट्य शास्त्र के नियमों का किस प्रकार पालन किया है ।
7. प्रथम अंक का वैशिश्ट्य क्या है ।

20.3 मंगलाचरण से प्रस्तावना तक

पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शंभोः सस्पृहलोचनत्रयपथं यान्त्या तदाराधने।
ह्रीमत्या शिरसीहितः सपुलकस्वेदोद्गमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तर पातु वः।। 1।।

अपि च

औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया
तैस्तैर्बन्धुवधूजनस्य वचनैर्नीताभिमुख्यं पुनः।
दृष्टवाग्रे वरमात्तसाध्वसरसा गौरी नवे संगमे
संरोहत्पुलका हरेण हसता श्लिष्टा शिवायाऽस्तु वः।। 2।।

हिन्दी अनुवाद –उसके (शिव के) आराधन में पैरों के अगले भाग पर खड़ी हुई, (परन्तु) स्तनों के भार से बार–बार झुकाई गई, शम्भु के लालसापूर्ण तीनों नेत्रों के पथ में जाती हुई, (अतः) रोमाञ्च, पसीने तथा कम्पन से युक्त, (अतः) लजाती हुई पार्वती द्वारा (शिव के) सिर

पर (डालने के लिये) चाही गई (परन्तु) फेंके जाने पर (शिव और पार्वती के) बीच में बिखरती हुई पुष्पों की अंजलि तुम्हारी (अर्थात् सभासदों की) रक्षा करे।।1।।

प्रथम मिलन में उत्सुकता के कारण (पति की ओर जाने की) शीघ्रता करती हुई, (लेकिन) सहज लज्जा के कारण लौटती हुई, फिर सम्बन्धी स्त्रियों के उन–उन (अनेक प्रोत्साहित करने वाले) वचनों द्वारा (शिव के) सामने ले जाई गई, आगे पति को देख कर भय तथा आनन्द का अनुभव करती हुई, रोमान्चित हुई तथा (पार्वती की विचित्र अवस्था को देखकर) हँसते हुये शिव द्वारा आलिंगन की गई गौरी तुम्हारे कल्याण के लिये होवे।।2।।

अपि च

संप्राप्तं मकरध्वजेन मथनं त्वत्तो मदर्थे पुरा
तद् युक्तं बहुमार्गगां मम पुरो निर्लज्ज वोढुं तव।
तामेवानुनय स्वभावकुटिलां हे कृष्णकण्ठग्रहं
मुच्चेत्याह रुषा यमद्रितनया लक्ष्मीश्च पायात्सवः।।

अपि च

क्रोधेद्धैर्दृष्टिपातैस्त्रिभिरुपशमिता वह्नयोऽमी त्रयोऽपि।
त्रासार्ता ऋत्विजोऽधश्चपलगणहृतोष्णीषपट्टाः पतन्ति।
दक्षः स्तौत्यस्य पत्नी विलपति करुणं विद्रुतं चापि देवैः
शंसन्नित्यात्तहासो मखमथनविधौ पातु देव्यै शिवो वः।। 3।।

और भी –

शिव पक्ष में – ''पहले मेरे कारण कामदेव ने तुम से नाश प्राप्त किया था, हे निर्लज्ज, तब क्या मेरे सामने अनेक मार्गों में बहने वाली (त्रिपथगा गंगा) को वहन करना तेरे लिये उचित है ? हे नीलकण्ठ (शिव) स्वभाव से कुटिल उस (गंगा) को ही प्रसन्न कर, (मेरी) पकड़ छोड़ दे।'' इस प्रकार क्रोध से पार्वती ने जिसे कहा था, वह (शिव) तुम्हारी रक्षा करे।

विष्णु–पक्ष में – ''पहले मेरे कारण समुद्र ने तुम से मंथन प्राप्त किया था, हे निर्लज्ज तब क्या मेरे सामने अनेकों के मार्गों पर चलने वाली (कुलटा, कुब्जा) को वहन करना तेरे लिये उचित है। हे कृष्ण, हृदय से कुटिल उस (कुब्जा) को ही प्रसन्न कर, (मेरे) कण्ठ का आश्लेष छोड़ दे'' लक्ष्मी ने इस प्रकार क्रोध पूर्वक जिस से कहा था, वह (विष्णु) तुम्हारी रक्षा करे।

''क्रोध से दीप्त तीन दृष्टियों के प्रक्षेप ने वह तीनों ही अग्नियाँ बुझा दीं, भय से आक्रान्त पुरोहित, जिनके दुपट्टे चञ्चल गणों ने छीन लिये थे, नीचे गिरने लगे; दक्ष (प्रजापति) स्तुति करने लगा; इसकी पत्नी करुण विलाप करने लगी और देव लोग भी भाग खड़े हुये।'' इस प्रकार यज्ञ–विध्वंस के विधान के विषय में देवी (पार्वती) से कहकर अट्टाहस करता हुआ शिव तुम्हारी रक्षा करें।।3।।

अपि च

जितमुडुपतिना नमः सुरेभ्यो द्विजवृषभा निरुपद्रवा भवन्तु।
भवतु च पृथिवी समृद्धसस्या प्रतपतु चन्द्रवपुर्नरेन्द्रचन्द्रः।।4।।

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः – अलमतिविस्तरेण। अद्याहं वसन्तोत्सवे सबहुमानमाहूय नानादिग्देशागतेन राज्ञः श्रीहर्षदेवस्य पादपद्मोपजीविना राजसमूहेनोक्तो यथा–अस्मत्स्वामिना श्रीहर्षदेवेनापूर्ववस्तुरचना लंकृता रत्नावली नाम नाटिका कृता। सा चास्माभिः श्रोत्रपरम्परया श्रुता न तु प्रयोगतो दृष्टा। तत्तस्यैव राज्ञः सकलजनहृदयाह्लादिनो बहुमानादस्मासु चानुग्रहबुद्धया यथावत्प्रयोगेण त्वया

नाटयितव्येति।तद्यावदिदानीं नेपथ्यरचनां कृत्वा यथाभिलषितं सम्पादयामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) अये आवर्जितानि सकलसामाजिकानां मनांसीति मे निश्चयः। कुतः –

श्रीहर्षो निपुणः कविः परिषदप्येषा गुणग्राहिणी
लोके हारि च वत्सराजचरितं नाट्ये च दक्षा वयम्।

और भी –

नक्षत्रों का अधिपति (चन्द्रमा) सर्वोत्कर्ष को प्राप्त है; देवों को (मेरा) नमस्कार है; श्रेष्ठ ब्राह्मण उत्पीडन से मुक्त हों; पृथ्वी समृद्ध धान्य वाली हो और चन्द्रमा के समान (सुन्दर) शरीर वाला, चन्द्र सदृश राजा प्रताप प्रदर्शित करे।।4।।

(नान्दी के बाद)

सूत्रधार – बस, अधिक क्या ! आज वसन्तोत्सव के अवसर पर अनेक दिशाओं तथा देशों से आये हुये, राजा श्री हर्षदेव के चरण–कमलों के आश्रित, राजा लोगों ने अत्यादरपूर्वक बुलाकर मुझसे कहा है – 'हमारे स्वामी श्री हर्षदेव ने अपूर्व कथा–रचना से अलंकृत रत्नावली नाम की नाटिका रची है। हमने श्रोत्र–परम्परा से उसके विषय में सुना तो है, लेकिन उसका अभिनय नहीं देखा है। इसलिये सब लोगों के हृदय को आनन्दित करने वाले उस राजा के प्रति अत्यधिक आदर के कारण और हमारे प्रति अनुग्रह करके तुम्हें उचित अभिनय द्वारा उसका नाट्य करना चाहिये।' तो, अब मैं वेश–विन्यास करके मन–चाहा किये देता हूँ। (घूम कर और देखकर) अहा ! मुझे निश्चय है कि सब सहृदयों के चित्त (हमारे नाट्य के लिये) लालायित हैं। क्योंकि –

श्रीहर्ष चतुर कवि हैं, यह सभा भी गुणों की ग्राहक है, वत्सराज (उदयन) का चरित लोगों को लुभाने वाला है और हम अभिनय–कला में पारंगत हैं।

वस्त्वेकैकमपीह वाञ्छितफलप्राप्तेः पदं किं पुन–
र्मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः।।5।।

तद् यावद् गृहं गत्वा गृहिणोमाहूय संगीतकमनुतिष्ठामि। (परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य च) इदमस्मदीयं गृहम्। यावत् प्रविशामि। (प्रविश्य) आर्ये इतस्तावत्।

इनमें से एक–एक वस्तु भी अभीष्ट फल की प्राप्ति का कारण होती है। फिर भला क्या (कहना, जबकि) मेरे भाग्य के उत्कर्ष से सब गुणों का समूह एकत्र उपस्थित हो गया है।।5।।

तो अब घर जाकर और गृहिणी को बुलाकर संगीत का प्रबन्ध करता हूँ। (प्रवेश कर के) आर्ये, इधर तो आओ।

(प्रवेश करके)

(प्रविश्य)

नटी – आर्यपुत्र, इयमस्मि। आज्ञापयत्वार्यः को नियोगोऽनुष्ठीयतामिति।

नटी – आर्यपुत्र, यह आ गई। आर्य आज्ञा देवें कि क्या आज्ञा सम्पन्न की जाय ?

सूत्रधारः – आयें रत्नावलीदर्शनोत्सुकोऽयं राजलोकः। तद् गृह्यतां नेपथ्यम्।

सूत्रधार – आर्ये, ये राजा लोग रत्नावली देखने को उत्सुक हैं। इसलिये वेश–विन्यास कर लीजिये।

नटी – (निःश्वस्य सोद्वेगम्) आर्यपुत्र, निश्चिन्त इदानीमसि त्वम्। तत्किमिति न नृत्यसि। मम मन्दभाग्यायाः पुनरेकैव दुहिता। सापि त्वया कस्मिंश्चिद्देशान्तरे दत्ता। कथमेवं दूरदेशस्थितेन जामात्रा सहास्याः पाणिग्रहणं भविष्यतीत्यनया चिन्तयात्मापि न मे प्रतिभाति। किं पुनर्नर्तितव्यम्।

नटी – (लम्बा सांस लेकर परेशानी के साथ) आर्यपुत्र, तुम तो अब निश्चिन्त हो, नाचोगे क्यों नहीं ? लेकिन मुझ भाग्यहीन की तो एक ही पुत्री थी, वह भी तुमने कहीं परदेस में दे

दी। इतने दूर देश में रहने वाले दामाद से इसका विवाह कैसे होगा – इस चिन्ता से मुझे तो आपा भी नहीं सुहाता, फिर भला नाचना क्या ?

सूत्रधारः – आर्ये, दूरस्थेनेत्यलमुद्वेगेन। पश्य –

द्वीपादन्यस्मादपि मध्यादपि जलनिधेर्दिशोऽप्यन्तात्।
आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।।6।।

सूत्रधार – आर्ये, 'दूर रहने वाले (पति से कैसे विवाह होगा)' इसके लिये परेशानी न उठाओ। देखो –

अनुकूल भाग्य अन्य द्वीप से भी, समुद्र के मध्य से भी और दिशा के छोर से भी अभीष्ट को लाकर तुरन्त मिला देता है।।6।।

(नेपथ्ये)

साधु, भरतपुत्र, साधु! एवमेतत्। कः संदेहः। ('द्वीपात्–1/6 इत्यादि पठति)

सूत्रधारः – (आकर्ण्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य सहर्षम्) आर्ये, नन्वयं मम यवीयान्भ्राता गृहीतयौगन्धरायणभूमिकः प्राप्त एव। तदेहि। आवामपि नेपथ्यग्रहणाय सज्जीभवावः।

(इति निष्क्रान्तौ)इति प्रस्तावना

(नेपथ्य में)

ठीक है, भरतपुत्र, ठीक है। ऐसा ही है। क्या सन्देह है ? ('द्वीपादन्यस्माद्' इत्यादि श्लोक का पाठ करता है)।

सूत्रधार – (सुनकर, नेपथ्य की ओर देखकर, हर्ष से) आर्ये, यह मेरा छोटा भाई यौगन्धरायण की भूमिका धारण करके आ ही गया। तो आओ हम भी वेष–विन्यास के लिये तैयार होवें।(दोनों निकल जाते हैं)प्रस्तावना समाप्त होती है (यौगन्धरायण प्रवेश करता है)

21.4 श्लोक संख्या 7 से 25 तक अर्थ एवं व्याख्या

(ततः प्रविशति यौगन्धरायणः)

यौगन्धरायणः – ऐवमेतत्। कः सन्देहः ? (द्वीपादन्यस्मादिति पुनः पठित्वा) अन्यथा क्व सिद्धादेशप्रत्ययप्रार्थितायाः सिंहलेश्वरदुहितुः समुद्रे यानभङ्गमग्नोत्थिताया फलकासादनं क्व च कौशाम्बीयेन वणिजा सिंहलेभ्यः प्रत्यागच्छता तदवस्थायाः संभावनं रत्नमालाचिह्नायाः प्रत्यभिज्ञानादिहानयनं च।(सहर्षम्) सर्वथा स्पृशन्ति नः स्वामिनमभ्युदयाः। (विचिन्त्य) मयापि चैनां देवीहस्ते सगौरवं निक्षिपता युक्तमेवानुष्ठितम्।श्रुतं च मया –बाभगव्योऽपि कञ्चुकी सिंहलेश्वरामात्येन वसुभूतिना सह कथं कथमपि समुद्रादुत्तीर्य कोशलोच्छित्तये गतवता रुमण्वता मिलित इति। तदेवं निष्पन्नप्रायमपि प्रभुप्रयोजनंन न मे धृतिमावहतीति कष्टोऽयं खलु भृत्यभावः। कुतः –

प्रारम्भेऽस्मिन्स्वामिनो वृद्धिहेतौ
दैवेनेत्थं दत्तहस्तावलम्बे।
सिद्धेर्भ्रान्तिर्नास्ति सत्यं तथापि
स्वेच्छाचारी भीत एवास्मि भर्तुः।। 7।।

यौगन्धरायण – ऐसा ही है। क्या सन्देह है ? ('द्वीपादन्यस्माद्' इत्यादि श्लोक पुनः पढ़कर) नहीं तो, कहाँ सिद्ध के वचन के विश्वास से मांगी गई, समुद्र में जहाज के टूट जाने से डूब कर बची हुई, सिंहल देश के राजा की पुत्री का तख्ते को पा लेना और कहाँ सिंहल देश से लौटने वाले कौशाम्बी निवासी व्यापारी द्वारा उस दशा वाली की रक्षा और रत्नमाला के चिह्न वाली को पहचान लेने के कारण यहाँ ले आना। (हर्ष के साथ) सब तरह हमारे स्वामी को अभ्युदय प्राप्त हो रहे हैं। (सोचकर) और मैंने भी इसे आदरपूर्वक महारानी

के हाथों में सौंप कर ठीक ही किया है। और मैंने सुना है कि–कञ्चुकी बाभ्रव्य भी सिंहल के राजा के मन्त्री वसुभूति के साथ किसी प्रकार समुद्र से निकल कर कोशल के नाश के लिये गये हुये रूमण्वान् से मिल गया है। तो इस प्रकार लगभग सम्पन्न होता हुआ भी प्रभु का कार्य मुझे सन्तोष नहीं देता। सेवक होना, निश्चय ही, बड़ा कष्टकारी है। क्योंकि –

स्वामी की वृद्धि के निमित्तभूत, दैव के द्वारा इस प्रकार हाथ का सहारा दिये गये इस उद्योग के विषय में, सचमुच, सफलता में कोई सन्देह नहीं है। तब भी, अपनी इच्छानुसार आचरण करने वाला मैं स्वामी से डरा हुआ ही हूँ।।7।।

(नैपथ्ये कलकलः)

यौगन्धरायणः – (आकर्ण्य) अये, यथायमभिहन्यमानमृदुमृदङ्गानुगतसंगीतमधुरः पुरः पौराणां समुच्चरति चर्चरीध्वनिस्तथा तर्कयामि यदेनं मदनमहमहीयांसं पुरजनप्रमोदमत्रलोकयितुं प्रासादाभिमुख प्रस्थितो देव इति। (ऊर्ध्वमवलोक्य) अये, कथमधिरूढ एव देवः प्रासादम्। य एषः –

विश्रान्तविग्रहकथो रतिमाञ्जनस्य
चित्ते वसन्प्रियवसन्तक एव साक्षात्।
पर्युत्सुको निजमहोत्सवदर्शनाय
वत्सेश्वरः कुसुमचाप इवाभ्युपैति।।8।।
तद्यावद्गृहं गत्वा कार्यशेषं चिन्तयामि।

(इति निष्क्रान्तः)

यौगन्धरायण – (सुनकर) अरे ! जैसे कि यह सामने पीटे जाते हुए मृदुल शब्द करने वाले मृदंगों के साथ गाये गये गीतों के कारण मनोहारी, नागरिकों की करतलध्वनि बढ़ रही है, उससे सोचता हूँ कि देव मदनमहोत्सव के कारण बढ़े हुए, नगर निवासियों के उल्लास को देखने के लिए राजमहल की ओर चल पड़े हैं। (ऊपर की ओर देखकर) अरे कैसे ! महाराज राजमहल पर चढ़ भी गये। जो यह –

अनुरागवान्, प्रजा के हृदय में समाये हुए, वत्स देश के महाराज हैं, जिनकी युद्ध की बात शान्त हो गई है और जिन्हें वसन्तक प्रिय है, वह, मानो, साक्षात् कामदेव ही–जिसके शरीर की कथा समाप्त हो गई है, जिसकी रति नाम की पत्नी है, जो लोगों के चित्त में वास करता है और वसन्त ऋतु जिसका सखा है–अपने महोत्सव (मदन महोत्सव) को देखने के लिये लालायित होकर सामने आ रहे हैं। तो अब घर जाकर शेष कार्य की चिन्ता करूं।।8।। (बाहर चला जाता है)

इति विष्कम्भकः

(ततः प्रविशत्यासनस्थो गृहीतवसन्तोत्सववेषो राजा विदूषकश्च)

(नेपथ्य में कलकल ध्वनि)

(आसन पर स्थित और वसन्तोत्सव का वेष धारण किये राजा विदूषक के साथ प्रवेश करता है।) **विष्कम्भक समाप्त**

राजा – (सहर्षमवलोक्य) सखे वसन्तक !

राजा – (हर्ष के साथ देखकर) मित्र वसन्तक।

विदूषकः – आणवेदु भवं। (आज्ञापयतु भवान्।)

विदूषक – आज्ञा कीजिये।

राजा –

राज्यं निर्जितशत्रु योग्यसचिवे न्यस्तः समस्तो भरः
सम्यक्पालनलालिताः प्रशमिताशेषोपसर्गाः प्रजाः।
प्रद्योतस्य सुता वसन्तसमयस्त्वं चेति नाम्ना धृतिं

कामः काममुपैत्वयं मम पुनर्मन्ये महानुत्सवः।। 9।।

राजा – (यह) राज्य है, जिसमें सब शत्रुओं को जीत लिया है; सारा भार योग्य मन्त्री पर रख दिया है; प्रजायें, जिनके सब उपद्रव शान्त कर दिये गये हैं, भली भाँति रक्षा द्वारा वृद्धि को प्राप्त है, प्रद्योत की पुत्री (वासवदत्ता जैसे पत्नी) है; वसन्त ऋतु का समय है और तुम (अनुकूल मित्र) हो, इससे कामदेव (मदनमहोत्सव) नाम के कारण सन्तोष भले ही पा लेवे, लेकिन मैं समझता हूँ कि यह महान् उत्सव मेरा (ही) है।।9।।

विदूषकः –(सहर्षम्) भो वयस्य, एवं न्विदम्। अहं पुनर्जानामि न भवतो न कामदेवस्य ममैवैकस्य ब्राह्मणस्यायं मदनमहोत्सवो यस्य प्रियवयस्येनैवं मन्त्र्यते। तत्किमनेन। प्रेक्षस्व तावदेतस्यधुमत्तकामिनीजनस्वयंग्राहगृहीतशृङ्गकजलप्रहारनत्यन्नागरजनजनितकौतूहलस्य समन्ततः शब्दायमानमर्दलोद्दामचर्चरीशब्दमुखररथ्यामुखशोभिनः प्रकीर्णपटवासपुञ्जपिञ्जरी कृतदश दिशामुखस्य सश्रीकतां मदनमहोत्सवस्य।

विदूषक – (हर्ष के साथ) हे मित्र, हाँ ऐसा हो सकता है। लेकिन मुझे तो लगता है कि यह मदन महोत्सव न आपका है और न ही कामदेव का, बल्कि अकेले मुझ ब्राह्मण का है, जिसका प्रिय मित्र इस प्रकार कह रहा है। (देखकर) खैर, इससे क्या ? मद्य से मस्त सुन्दरियों द्वारा स्वयं पकड़े गये और पिचकारियों के जल के प्रहार से नाचते हुए नगर निवासियों द्वारा कुतूहल उत्पन्न करने वाले, चारों ओर बजते हुए मृदंगों के कारण प्रचण्ड चर्चरी ध्वनि से गूँजती हुई सड़कों के मोड़ों से शोभा देने वाले और फैंके गये गुलाल के पुञ्ज से दसों दिशाओं के मुखों को पीला कर देने वाले इस मदन–महोत्सव की शोभा को तो देखो।

राजा – (समन्तादवलोक्य) अहो, परां कोटिमधिरोहति प्रमोदः पौराणाम्।

तथा हि –

कीर्णैः पिष्टातकौघैः कृतदिवसमुखैः कुङ्कुमक्षोदगौरै–
र्हेमालङ्कारभाभिर्भरनमितशिखैः शेखरैः कैङ्किरातैः।
एषा वेषाभिलक्ष्यस्वविभवविजिताशेषवित्तेशकोशा
कौशाम्बी शांतकुम्भद्रवखचितजनेवैकपीता विभाति।।10।।

अपि च

धारायन्त्रविमुक्तसंततपयःपूरप्लुते सर्वतः
सद्यः सान्द्रविमर्दकर्दमकृतक्रीडे क्षणं प्राङ्गणे।
उद्दामप्रमदाकपोलनिपतत्सिन्दूररागारुणैः
सैन्दूरीक्रियते जनेन चरणन्यासैः पुरः कुट्टिमम्।।11।।

राजा – (चारों ओर देखकर) आहा ! नागरिकों का उल्लास चरम–सीमा को पहुँच रहा है। क्योंकिकेसर के चूर्ण से पीले, (अतः) (दिन को) उषाकाल में परिणत करने वाले, फेंके गये, सुगन्धित चूर्ण की राशियों से, स्वर्ण के आभूषणों की कान्तियों से और भार से सिरों को झुका देने वाले अशोक पुष्पों के शिरो–भूषणों से यह कौशाम्बी (नगरी), जिसने (नागरिकों के) वेष से प्रकट होने वाले अपने ऐश्वर्य से कुबेर के सम्पूर्ण कोश को जीत लिया है और जिसके निवासी जन, मानो, स्वर्ण के रस से लिप्त हैं, पीली ही पीली दीखती है।**।10।।**

सब ओर पिचकारियों से छूटती हुई अविरल जल–धाराओं से भरे हुए और तभी अत्यधिक विमर्दन से (उत्पन्न) पङ्क में की गई क्रीड़ा वाले आंगन में लोगों द्वारा अत्यधिक मत्त स्त्रियों के कपोलों से गिरते हुए सिन्दूर के वर्ण से लाल पद–चिह्नों से वह सामने फर्शक्षण भर सिन्दूर वर्ण का किया जा रहा है।**।11।।**

विदूषकः – (विलोक्य) एतदपि तावत्सुविदग्धजनभरितशृंगकजलप्रहारमुक्तसीत्कारमनोहरं

वारविलासिनीजनविलसितमालोकयतु प्रियवयस्यः।

विदूषक – (देखकर) प्रिय मित्र वाराङ्गनाओं के विलास को तो देखो जो कि चतुर जनों द्वारा भरी हुई पिचकारी के जल के प्रहार के कारण छोड़ी गई सी–सी की ध्वनि से मनोहारी है।

राजा – (विलोक्य) वयस्य, सम्यग्दृष्टं भवता। कुतः –

अस्मिन्प्रकीर्णपटवासकृतान्धकारे
दृष्टो मनाङ्मणिविभूषणरश्मिजालैः।
पातालमुद्यतफणाकृतिशृङ्गकोऽयं
मामद्य संस्मरयतीह भुजङ्गलोकः।।12।।

राजा – (देखकर) मित्र, तुमने खूब देखा ! क्योंकि –

बिखेरे गये गुलाल से किये गये इस अन्धकार में मणि जटित आभूषणों की किरण–समूह से कुछ–कुछ दीख पड़ने वाला, (सर्प के) फण के आकार वाली पिचकारी उठाये हुए, यह कामी जनों का समूह (अन्य अर्थ–सर्पों का समूह) आज मुझे पाताल की याद दिला रहा है।।12।।

विदूषकः – (विलोक्य) भो वयस्वय, प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व। एषा खलु मदनिका मदनवशविसंष्ठुलं वसन्ताभिनयं नृत्यन्ती चूतलतिकया सहेत एवागच्छति।

विदूषक – (देखकर) ऐ मित्र, देखो, देखो। यह मदनिका काम–पीड़ित होने से लड़खड़ाते हुए वसन्त का अभिनय करती हुई चूतलतिका के साथ इधर ही आ रही है।

(ततः प्रविशतो मदनलीलां नाटयन्त्यौ द्विपदीखण्डं गायन्त्यौ चेट्यौ)

चेट्यौ –

कुसुमायुधप्रियदूतको मुकुलायितबहुचूतकः।
शिथिलितमानग्रहणको वाति दक्षिणपवनकः।।13।।

(मदनलीला का नाट्य करती हुई तथा द्विपदी–खण्ड गाती हुई दो चेटी प्रवेश करती हैं)।

दोनों चेटी –

कामदेव का प्रिय दूत, अनेक आम्र वृक्षों को मुकुलित करने वाला, (मानिनी सुन्दरियों के) प्रणय–कलह को शिथिल करने वाला, दक्षिण पवन बह रहा है।।13।।

विकसितबकुलाशोककः काङ्क्षितप्रियजनमेलकः।
प्रतिपालनासमर्थकस्ताम्यति युवतिसार्थकः।।14।।
इह प्रथमं मधुमासो जनस्य हृदयानि करोति मृदुलानि।
पश्चाद्विध्यति कामो लब्धप्रसरैः कुसुमबाणैः।।15।।

मौलसरी तथा अशोक को विकसित करने वाला, प्रिय जनों के साथ की इच्छा करने वाला, (प्रिय के आगमन की) प्रतीक्षा करने में असमर्थ युवतियों का समूह व्याकुल हो रहा है।।14।।

यहाँ (वसन्त आरम्भ होने पर) पहले वसन्त मास लोगों के हृदयों को कोमल कर देता है, (तब) बाद में, कामदेव अवसर पाए हुए पुष्प–बाणों से बींध देता है।।15।।

राजा – (निर्वर्ण्य सविस्मयम्) अहो निर्भरः क्रीडारसः परिजनस्य तथाहि –

स्रस्तः स्रग्दामशोभां त्यजति विरचितामाकुलः केशपाशः
क्षीबाया नूपुरौ च द्विगुणतरमिमौ क्रन्दतः पादलग्नौ।
व्यस्तः कम्पानुबन्धादनवरतमुरो हन्ति हारोऽयमस्याः
क्रीडन्त्याः पीडयेव स्तनभरविनमन्मध्यभङ्गानपेक्षम्।।16।।

राजा – (आश्चर्य से देखकर) आह ! सेवकों को (तो) क्रीड़ा का बड़ा आनन्द (आ रहा है)। जैसे कि –मधु–पान से मत्त हुई (और) स्तनों के भार से झुकते हुए कटिभाग के टूटने

की चिन्ता न करके नाचती हुई इस (सेविका) का खुला हुआ (अतः) बिखरा हुआ जूड़ा, मानो पीड़ा के कारण, किये गए पुष्प–मालाओं के प्रसाधन को छोड़ रहा है; ये पैरों में बंधे हुए दोनों नूपुर (मानो पीड़ा के कारण) और दुगना चिल्ला रहे हैं; कम्पन की निरन्तरता के कारण झूलता हुआ यह हार (मानो पीड़ा से) अनवरत छाती पीट रहा है।**।16।।**

विदूषकः – भो वयस्य, अहमप्येतासां मध्ये गत्वा नृत्यन् गायन् मदनमहोत्सवं मानयिष्यामि।

विदूषक – ए मित्र, मैं भी इन दोनों के बीच में जाकर नाचता–गाता मदन महोत्सव मनाऊँगा।

राजा – (सस्मितम्) वयस्य एवं क्रियताम्।

राजा – (मुस्कुराते हुए) मित्र, ऐसा (ही) करो।

उभे – हताश, न खलु एषा चर्चरी।

दोनों – (जोर से हंसकर) मूर्ख यह चर्चरी नहीं है।

विदूषक : – तत्किं खल्वेतत्।

विदूषक – तो, यह क्या है ?

मदनिका – द्विपदीखण्डं खल्वेतत्।

मदनिका – यह तो द्विपदी–खण्ड है।

विदूषकः – (सहर्षम्) किमेतेन खण्डेन मोदकाः क्रियते।

विदूषक – (हर्ष से) क्या इस खण्ड (= खाँड) से लड्डू बनाये जाते हैं ?

मदनिका – (विहस्य) नहि नहि पठ्यते खल्वेतत्।

मदनिका – नहीं, नहीं ! यह तो पढ़ी जाती है।

विदूषकः – (सविषादम्) यदि पठ्यते तदलं ममेतेन। वयस्यस्य सकाशमेव गमिष्यामि।

विदूषक – (विषाद से) यदि पढ़ी जाती है तो मेरे लिए इससे बस करो। मैं तो प्रिय मित्र के समीप ही जाता हूँ। (जाना चाहता है)

उभे – (हस्ते गृहीत्वा) एहि क्रीडामः। वसन्तक, कुत्र गच्छसि।

दोनों –आओ खेलें बसन्तक कहाँ जा रहे हो ।

विदूषकः – (हस्तमाकृष्य प्रपलाय्य राजानमुपसृत्य।) वयस्य नर्तितोऽस्मि। नहि नहि, क्रीडित्वा पलायितोऽस्मि।

विदूषक – (हाथ खींचकर, दौड़कर राजा के पास जाकर) प्रिय मित्र, मैं नाच लिया। ना, ना, खेलकर भाग आया।

राजा – साधु कृतम्।

राजा – अच्छा किया।

चूत0 – हञ्जे मदनिके चिरं खल्वावाभ्यां क्रीडितम्। तदेहि निवेदयावस्तावत् भर्त्र्याः संदेशं महाराजस्य।

चूतलतिका – सखी मदनिका, हम दोनों बहुत देर खेल लीं। तो आओ; अब महाराज को स्वामिनी का सन्देश निवेदन कर दें।

मदनिका – सखि, एवं कुर्वः।

मदनिका – सखी, ऐसा (ही) करें।

विदूषकः–(उत्थाय चेटयोर्मध्ये नृत्यन्) यद्भवानाज्ञापयति। भवति मदनिके भवति चूतलतिके। मामप्येतच्चर्चरिकं शिक्षयतम्।

विदूषक– (उठकर, चेटियों के बीच में नाचते हुए) श्रीमती मदनिका जी, श्रीमती चूतलतिका जी, मुझे भी यह चर्चरी सिखा दो।

चेट्यो– (परिक्रम्योपसृत्य च) (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयन्त्यौ) जयतु जयतु भर्ता। भर्तः, देव्याज्ञापयति। नहि नहि। विज्ञापयति।

दोनों चेटियाँ – (घूमकर और समीप जाकर) स्वामी की जय हो। स्वामी, महारानी आज्ञा देती हैं ..... (यह आधा कह कर लज्जा का नाट्य करती हुई) ना, ना, निवेदन करती हैं।
राजा–(विहस्य सादरम्) मदनिके, नन्वाज्ञापयतीत्येव रमणीयम्। विशेषतोऽद्य मदनमहोत्सवे। तत्कथय, किमाज्ञापयति देवी।
राजा – (हंसकर, आदर से) मदनिका, 'आज्ञा देती हैं' बस यही सुन्दर है, विशेषकर आज मदन–महोत्सव में। तब बतलाओ महारानी क्या आज्ञा देती हैं।
विदूषकः – आः दास्याः पुत्रि, किं देव्याज्ञापयति।
विदूषक – ए, दासी की बेटी, क्या देवी आज्ञा दे रही हैं।
चेट्यो –एवं देवी विज्ञापयति–अद्य खलु मया मकरन्दोद्यानं गत्वा रक्ताशोकपादपतल स्थापितस्य भगवतः कुसुमायुधस्य पूजा निर्वर्तयितव्या। तत्र आर्यपुत्रेण संनिहितेन भवितव्यमिति।
दोनों चेटी – देवी यह निवेदन करती हैं – कि आज मुझे मकरन्द नाम के उद्यान में जाकर रक्ताशोक वृक्ष के नीचे प्रतिष्ठापित भगवान् कामदेव की पूजा करनी है। वहाँ आर्यपुत्र उपस्थित होवें।
राजा – (सानन्दम्) वयस्य ननु वक्तव्यमुत्सवादुत्सवान्तरमापतितमिति।
राजा – (आनन्द के साथ) प्रिय मित्र, अब तो यह कहना चाहिए कि एक उत्सव के पश्चात् दूसरा उत्सव आ गया।
विदूषकः – भो वयस्य, तस्मादुत्तिष्ठ। तत्रैव गच्छावः। येन तत्र गतस्य ममापि ब्राह्मणस्य स्वस्तिवाचनं किमपि भविष्यतीति।
विदूषक – हे प्रिय मित्र, तब उठो। वहीं चलें, क्योंकि वहाँ जाने पर मुझ ब्राह्मण का भी कुछ स्वस्तिवाचन हो जायेगा।
राजा – मदनिके, गम्यतां देव्यै निवेदयितुमयमहमागत एव मकरन्दोद्यानमिति।
राजा – मदनिका, जाओ, महारानी से निवेदन करो कि बस मैं यह मकरन्द उद्यान में आ ही गया।
चेट्यो – इति निष्क्रान्ते। यद्भर्ताऽऽज्ञापयति।
दोनों चेटी – जो स्वामी आज्ञा दें। (यह कहकर चली जाती हैं)
राजा – उभौ प्रासादावतरणं नाटयतः। वयस्य, आदेशय मकरन्दोद्यानस्य मार्गम्।
राजा – प्रिय मित्र, आओ। नीचे चलें। (दोनों महल से उतरने का अभिनय करते हैं) प्रिय मित्र, मकरन्द उद्यान का मार्ग बतलाओ।
विदूषकः – यद्भवानाज्ञापयति। एत्वेतु भवान्।
विदूषक – जो आप आज्ञा देवें। चलिये, चलिये।
इति परिक्रामतः)(दोनों घूमते हैं)
विदूषकः – (अग्रतोऽवलोक्य) भौ एतत्तन्मकरन्दोद्यानम्। तदेहि। प्रविशावः।
विदूषक – (आगे देखकर) अरे, यह वह मकरन्द उद्यान है। तो आओ, अन्दर चलें।
(इति प्रविशतः)
विदूषकः – (अवलोक्य सविस्मयम्) भो वयस्य प्रेक्षस्व। एतत् खलु तन्मलयमारुतान्दोलन प्रफुल्लत्सहकार मञ्जरीरेणुपटलप्रतिबद्धपटवितानं मत्तमधुकरमुक्तझङ्कारमिलित मधुरकोकिलारावसंगीतश्रुतिसुखं तावगमनदर्शितादरमिव मकरन्दोद्यानं लक्ष्यते। तत्प्रेक्षतां भवान्।(दोनों प्रवेश करते हैं)
विदूषक – (देखकर, आश्चर्य से) ए प्रिय मित्र, देखो, देखो। यह मकरन्द उद्यान, जिसमें मलय की वायु द्वारा झकझोर से खिलते हुए आम के बौर के पराग–समूह से शामियाना ताना गया है और जो मत्त भौरों से की गई झंकार से मिली हुई कोयलों की मीठी कूक के

संगीत से श्रोत्रों को सुखदायी है, मानो, तुम्हारे आने पर आदर दिखलाता हुआ प्रतीत होता है। इसलिये आप देखें।

राजा – (समन्तादवलोक्य) अहो रम्यता मकरन्दोद्यानस्य। इह हि –

उद्यद्विद्रुमकान्तिभिः किसलयैस्ताम्रां त्विषं बिभ्रतो
भृङ्गालीविरुतैः कलैरविशदव्याहारलीलाभृतः।
घूर्णन्तो मलयानिलाहतिचलैः शाखासमूहैर्मुहु –
भ्रान्ति प्राप्य मधुप्रसङ्गमधुना मत्ता इवामी द्रुमाः।।17।।

अपि च

मूले गण्डूषसेकासव इव बकुलैर्वास्यते पुष्पवृष्ट्या।
मध्वाताम्रे तरुण्या मुखशशिनि चिराच्चम्पकान्यद्य भान्ति।
आकर्ण्याशोकपादाहतिषु च रणतां निर्भरं नूपुराणां
झङ्कारस्यानुगीतैरनुगणनयिवारभ्यते भृङ्गसार्थैः।।18।।

राजा – (चारों ओर देखकर) आ ! हा ! मकरन्द उद्यान की रमणीयता (आश्चर्यकारी है)। क्योंकि यहाँ –

अब वसन्त ऋतु के संपर्क (अन्य अर्थ–मद्य के संपर्क) को पाकर उगते हुए मूंगों की कान्ति वाले नूतन पल्लवों से लाल कान्ति को धारण करते हुए, मधुर भ्रमर–माला की गुंजार से अस्पष्ट प्रलाप की चेष्टा को धारण करने वाले (और) मलय–वायु के आघात से चंचल शाखाओं के समूहों से बार–बार झूमते हुए, ये वृक्ष, मानो, मत्त–से प्रतीत होते हैं।**।17।।**

और भी –

मौलसरी के वृक्ष जड़ में मुंह में भर–भरकर सींचे गये मद्य को पुष्प वृष्टि से, मानो, सुगन्धित कर रहे हैं, सुन्दरी युवति के मुखरूपी चन्द्रमा के मद्य से आरक्त होने पर चिर काल बाद आज चम्पा के पुष्प शोभित हो रहे हैं और भ्रमरों के समूह (युवतियों के) अशोक वृक्षों को पैर से ताडन करने में जोर से बजते हुए नूपुरों की झंकार को सुनकर किये गये अपने गुंजारों से, मानो, (युवतियों के नूपुरों की झंकार को) गुनगुना रहे हैं**।।18।।**

विदूषकः – (श्रुत्वा) भो वयस्य, नैते मधुकरा नूपुरशब्दमनुहरन्ति। नूपुरशब्द एवैष देव्याः परिजनस्य।

विदूषक – (सुनकर) हे मित्र, यह भौंरे नूपुर की ध्वनि का अनुकरण नहीं कर रहे, (अपितु) यह महारानी की दासियों के नूपुरों की ध्वनि ही है।

राजा – वयस्य सम्यगुपलक्षितम्।

(ततः प्रविशति वासवदत्ता, काञ्चनमाला, पूजोपकरणहस्ता सागरिका, विभवतश्च परिवारः)

राजा – मित्र, (तुमने) ठीक पहचाना।

(तब वासवदत्ता, काञ्चनमाला हाथ में पूजा की सामग्री लिये सागरिका और श्रेणी के अनुसार सेवक–समूह प्रवेश करता है)

वासवदत्ता – हञ्जे काञ्चनमाले, आदेशय मे मकरन्दोद्यानस्य मार्गम्।

वासवदत्ता – सखी काञ्चनमाला, मुझे मकरन्द उद्यान का मार्ग बतलाओ।

काञ्च – एत्वेतु भर्त्री।

काञ्चनमाला – स्वामिनी चलें, चले।

वास0 – (परिक्रम्य) हञ्जे काञ्चनमाले, अथ कियद्दूरे स रक्ताशोकपादपो यत्र मया भगवतः कुसुमायुधस्य पूजा निर्वर्तयितव्या।

वासवदत्ता – (घूमकर) सखी काञ्चनमाला, अब वह रक्ताशोक वृक्ष कितनी दूर है, जहाँ मुझे भगवान् कामदेव की पूजा करनी है।

काञ्च0 – भर्त्रि, आसन्न एव। किं न प्रेक्षते भर्त्री। इयं खलु सा निरन्तरोद्भिन्नकुसुमशोभिनी

भर्त्र्या परिगृहीता माधवीलता। एषाप्यपरा नवमालिका लता यस्या आकालकुसुमसमुद्रमश्रद्धालुना भर्त्रानुदिनमायास्यत

काञ्चनमाला – स्वामिनी, आ ही गया। क्या स्वामिनी देख नहीं रहीं ? निश्चय ही, यह वह घने खिले पुष्पों से शोभा देने वाली, स्वामिनी द्वारा अपनाई गई माधवी लता है। और यह दूसरी नवमालिका लता है, जिसके बिना ऋतु पुष्पोद्गम में विश्वास करने वाले स्वामी प्रतिदिन स्वयं को कष्ट दे रहे हैं।

आत्मा। तदेनामतिक्रम्य दृश्यत एव स रक्ताशोकपादपो यत्र देवी पूजां निर्वर्तयिष्यति।

तो इसे पार करके वह रक्ताशोक वृक्ष दीख ही पड़ रहा है, जहाँ देवी पूजा करेंगी।

वास0 – तदेहि तत्रैव लघु गच्छामः।

वासवदत्ता – तो आओ। शीघ्र वहीं चलें।

काञ्च0 – एत्वतु भर्त्री।

काञ्चनमाला – स्वामिनी चलिये, चलिये।

(सर्वाः परिक्रामन्ति)(सब घूमती हैं)

काञ्च0 – भर्त्रि, अयं खलु स रक्ताशोकपादपो यत्र देवी पूजा निर्वर्तयिष्यति।

काञ्चनमाला – स्वामिनी, यही वह रक्ताशोक वृक्ष है, जहाँ महारानी पूजा करेंगी।

वास0 – तेन हि मे पूजानिमित्तान्युपकरणान्युपानय।

वासवदत्ता – तब मुझे पूजा के लिये सामग्री दो।

साग0 – (उपसृत्य) भर्त्रि, एतत्सर्वं सज्जम्।

सागरिका – (समीप जाकर) स्वामिनी, यह सब तैयार है।

वास0 – (निरूप्यात्मगतम्) अहो प्रमादः परिजनस्य। यस्यैव दर्शनपथात्प्रयत्नेन रक्ष्यते तस्यैव दृष्टिगोचरे पतिता भवेत्।भवतु। एवं तावद्भणिष्यामि। हञ्जे सागरिके, कस्मात्त्वमद्य मदनमहोत्सवपराधीने परिजने सारिकामुज्झित्वेहागता। तत्तत्रैव लघु गच्छ। एतदपि सर्वं पूजोपकरणं काञ्चनमालाया हस्ते समर्पय।

वासवदत्ता – (देखकर मन ही मन) ओह ! सेवकों की लापरवाही ! जिसके ही दृष्टि–पथ से प्रयत्नपूर्वक बचाई जा रही है, उसकी ही दृष्टि में पड़ जायेगी। अच्छा, तब ऐसे कहूँगी। (प्रकट में) सखी सागरिका, आज सेवकों के मदन–महोत्सव से बे–सुध होते हुए तू सारिका को छोड़कर यहाँ कैसे आ गई। जल्दी से वहीं पहुँच। और इस सब पूजा की सामग्री को काञ्चनमाला के हाथ में सौंप दे।

साग0 –(इति तथा कृत्वा कतिचित्पदानि गत्वा आत्मगतम्) (इति कुसुमावचयं नाटयति)। यद्भर्त्र्याज्ञापयति। सारिका मया पुनः सुसङ्गताया हस्ते समर्पिता। एतदप्यस्ति में प्रेक्षितुं कौतूहलं किं यथा तातस्यान्तःपुरे भगवाननङ्गोऽर्च्यते, अत्रापि तथैव किमन्यथेति। तस्मादलक्षिता भूत्वा प्रेक्षिष्ये। तद्यावदिह पूजासमयो भवित तावदहमपि भगवन्तमनङ्गमेव पूजयितुं कुसुमान्यवचेष्यामि।

सागरिका – जो स्वामिनी आज्ञा दें। (वैसा ही करके और कुछ पद जाकर, स्वगत) सारिका तो मैंने सुसङ्गता के हाथ सौंप दी है। फिर, मुझे यह देखने की उत्सुकता है कि पिता के अन्तःपुर में भगवान् कामदेव की जैसे पूजा होती है, क्या यहाँ भी वैसे ही होती है या अन्यथा। इसलिये छिपकर देखूँगी। (घूमकर और देखकर) जब तक यहाँ पूजा का समय होवे, तब तक मैं भी भगवान् कामदेव ही की पूजा के लिये पुष्प चुनती हूँ। (पुष्प चुनने का नाट्य करती है।)

वास0 – काञ्चनमाले, प्रतिष्ठापयाशोकमूले भगवन्तं प्रद्युम्नम्।

वासवदत्ता – काञ्चनमाला, अशोक की मूल में भगवान् कामदेव की प्रतिष्ठापना करो।

काञ्च0 – (इति तथा करोति)। यद्भर्त्र्याज्ञापयति

काञ्चनमाला – जो स्वामिनी की आज्ञा हो। (वैसा करती है)
विदू0 – भो वयस्य, यथा विश्रान्तो नूपुरशब्दस्तथा तर्कयाभ्यागता देव्यशोकमूलमिति।
विदूषक – हे मित्र, जैसे कि नूपुरों की ध्वनि शांत हो गई है, उससे समझता हूँ कि महारानी अशोक की मूल पर पहुँच गई है।
राजा – (अवलोक्य) वयस्य, सम्यगवधारितम्। पश्येयं देवी या किलषा

कुसुमसुकुमारमूर्तिर्दधती नियमेन तनुतरं मध्यम्
आभाति मकरकेतोः पार्श्वस्था चापयष्टिरिव।।19।।

तदेहि। उपसर्पावः। (उपसृत्य) प्रिये वासवदत्ते।
राजा – (देखकर) मित्र, ठीक समझा। देखो, यह महारानी है जो यह –
पुष्प के समान कोमल शरीर वाली (और) व्रत–उपवास जो क्षीणतर कटि को धारण करती हुई कामदेव के समीप में स्थित, मानो धनुर्यष्टि सी लगती है।।19।।
तो आओ। पास चलें। (समीप जाकर) प्रिय वासवदत्ता।
वास0 – (विलोक्य) कथमार्यपुत्रः। जयतु जयत्वार्यपुत्रः। एतदासनं अत्रोपविशत्वार्यपुत्रः।
(राजा नाट्येनोपविशति)
वासवदत्ता – (देखकर) कैसे ! आर्यपुत्र !! आर्यपुत्र की जय हो, जय हो। (लीजिये) यह आसन। आर्यपुत्र इस पर बैठें।
(राजा बैठने का नाट्य करता है)
काञ्च0 – भर्त्रि, स्वहस्तदत्तैः कुङ्कुमचन्दनस्थासकैः शोभितं कृत्वा रक्ताशोकपादपमर्च्यतां भगवान्प्रद्युम्नः।
काञ्चनमाला – स्वामिनी, रक्ताशोक वृक्ष को अपने हाथ लगाये गये केसर के लेप से भूषित करके भगवान् प्रद्युम्न की पूजी कीजिये।
वास0 – (उपनय मे पूजोपकरणानि।) काञ्चनमालोपनयति। वासवदत्ता तथा करोति।
वासवदत्ता – पूजा की सामग्री मेरे पास लाओ।
(काञ्चनमाला समीप ले जाती है और वासवदत्ता वैसा करती है)
राजा – प्रिये

प्रत्यग्रमज्जनविशेषविविक्तकान्तिः
कौसुम्भरागरुचिरस्फुरदंशुकान्ता।
विभ्राजसे मकरकेतनमर्चयन्ती
बालप्रवालविटपिप्रभवा लतेव।।20।।

अपि च

स्पृष्टस्त्वयैष दयिते स्मरपूजाव्यापृतेन हस्तेन।
उद्भिन्नापरमृदुतरकिसलय इव लक्ष्यतेऽशोकः।।21।।

अपि च

अनङ्गोऽयमनङ्गत्वमद्य निन्दिष्यति ध्रुवम्।
यदनेन न संप्राप्तः पाणिस्पर्शोत्सवस्तव।।22।।

राजा – प्यारी,
सद्यःस्नान से विशेष निर्मल कान्ति वाली, कुसुम्भी रंग (में रंगने) से सुन्दर चमकते हुए आंचल वाली, तुम कामदेव की पूजा करती हुई ताजे जलसिञ्चन से विशेष निर्मल कान्ति वाली, कुसुम्भ के पुष्प की–सी लाली से सुन्दर एवं चमचमाती हुई किरणों से रमणीय, नूतन–पल्लवों वाले वृक्ष पर उगी हुई, लता के समान शोभा दे रही हो।।20।।और भी –
प्रिये, तुम्हारे द्वारा कामदेव की पूजा में संलग्न हाथ से स्पर्श किया गया यह अशोक

वृक्ष (ऐसा) लगता है कि जिसमें, मानो, दूसरा अतिकोमल नूतन–पल्लव फूट आया है।।21।।

और भी –

आज, निश्चित ही, यह कामदेव (अपनी) शरीर हीनता की निन्दा करेगा कि यह तेरे हाथ के स्पर्श के आनन्द को न प्राप्त हुआ।**।22।।**

काञ्चनमाला – भर्त्रि, अर्चितो भगवान् प्रद्युम्नः। तत्कुरु भर्तुरुचितं पूजासत्कारम्।

काञ्चनमाला – स्वामिनी, भगवान् प्रद्युम्न की पूजा कर ली। अब स्वामी का योग्य पूजा–सत्कार कीजिये।

वासवदत्ता – तेन ह्युपनय में कुसुमानि विलेपनं च।

वासवदत्ता – तो पुष्प और अङ्गराग मेरे पास लाओ।

काञ्चनमाला – भर्त्रि, एतत् सर्व सज्जम्।

(वासवदत्ता नाट्येन राजानं–पूजयति)

काञ्चनमाला – स्वामिनी, यह सब तैयार है।

(वासवदत्ता राजा की पूजा का नाट्य करती है)

साग0 – (गृहीतकुसुमा) तथा कृत्वा विलोक्य सविस्मयम्। कुसुमानि प्रक्षिप्य। इति प्रणमति। (इति कतिचित् पदानि गच्छति) हा धिक् हा धिक्। कथं कुसुमलोभोत्क्षिप्तहृदयातिचिरमेव मया कृतम्। तदनेन सिन्धुवारविटपेनापवारितशरीरा भूत्वा प्रेक्षे। कथं प्रत्यक्ष एव भगवान् कुसुमायुध इह पूजां प्रतीच्छति। अस्माकं तातस्यान्तःपुरे पुनश्चित्रगतोऽर्च्यते। तदहमप्येभिः कुसुमैरिह स्थितैव भगवन्तं कुसुमायुधं पूजयिष्ये। नमस्ते भगवन् कुसुमायुध। अमोघदर्शनो मे भविष्यसि। दृष्टं यद् द्रष्टव्यम्। तद्यावन्न कोऽपि मां प्रेक्षते तावदेव गमिष्यामि।

सागरिका – (पुष्प लिए हुए) हाय धिक्कार ! हाय धिक्कार !! पुष्पों के लोभ से आकृष्ट हृदय होकर क्यों मैंने बहुत देर कर दी ? तो अब इस सिन्धुवार के झुरमुट में शरीर छिपाकर देखती हूँ। (वैसा करके और देखकर, आश्चर्य से) यह क्या ? यहाँ भगवान् कामदेव प्रत्यक्ष होकर पूजा ग्रहण करता है ! हमारे पिता के अन्तःपुर में तो चित्र में बना हुआ पूजा जाता है ! तो मैं भी यहाँ खड़ी रह कर ही इन पुष्पों से भगवान् कामदेव की पूजा करूँगी। (पुष्प फेंक कर) भगवान् कामदेव, तुम्हें प्रणाम। अब तुम मेरे लिये सफल दर्शन वाले होगे। (इस प्रकार प्रणाम करती है) जो देखना था (वह) देख लिया। इसलिये जब तक कोई मुझे नहीं देखता तब तक चली जाती हूँ। (यह कहकर कुछ पद जाती है)।

काञ्च0 – आर्य वसन्तक, एहि सांप्रतं त्वमपि स्वस्तिवाचनं प्रतीच्छ।

(विदूषकः उपसर्पति)

काञ्चनमाला – आर्य वसन्तक, आओ। अब तुम भी स्वस्ति–वाचन ग्रहण करो।

(विदूषक समीप जाता है)

वास0 – (विलेपनकुसुमाभरणदानपूर्वकम्) (इत्यर्पयति) आर्य स्वस्तिवाचनं प्रतीच्छ।

वासवदत्ता – (अङ्गराग, पुष्प और आभूषण देते हुए) आर्य, स्वस्ति–वाचन लीजिये। (देती है)।

विदू0 – (सहर्ष गृहीत्वा) स्वस्ति भवत्यै।

विदूषक – (हर्ष से लेकर) आपका कल्याण (हो)।

(नेपथ्ये वैतालिकः पठति)

अस्तापास्तसमस्तभासि नभसः पारं प्रयाते रवा–
वास्थानीं समये समं नृपजनः सायंतने संपतन्।
संप्रत्येष सरोरुहद्यु तिमुषः पादांस्तवासेवितुं
प्रीत्युत्कर्षकृतो दृशामुदयनस्येन्दोरिवोद्वीक्षते।।23।।

(नेपथ्य में वैतालिक पाठ करता है)

समस्त कान्ति को अस्ताचल पर डाल चुके हुए सूर्य के आकाश के पार पहुँच जाने पर अब सायं काल के समय एक साथ राजसभा की ओर मिलकर जाता हुआ यह राज–समूह चन्द्रमा के समान नेत्रों को आनन्द का अतिशय उत्पन्न करने वाले तुझ उदयन के, कमलों की कान्ति को चुराने वाले, चरणों की सेवा करने के लिये ऊपर (मुख करके) प्रतीक्षा कर रहा है ।।23।।

साग0 –(श्रुत्वा सहर्षं परिवृत्य राजानं सस्पृहं पश्यन्ती) कथमयं स राजा उदयनो यस्याह तातेन दत्ता। तत्परप्रेषणदूषितमपि मे जीवितमेतस्य दर्शनेनेदानीं बहुमतं संवृत्तम्।

सागरिका –(सुनकर, हर्ष से मुड़कर राजा को चाह से देखती हुई) अरे ! यह राजा उदयन है जिसको पिता ने मुझे दिया था (लम्बा सांस लेकर) तब दूसरे की चाकरी से दूषित भी मेरा जीवन इसके दर्शन से अब आदरणीय हो गया।

राजा –कथमुत्सवापहृतचेतोभिरस्माभिः सन्ध्यातिक्रमोऽपि नोपलक्षितः। सम्प्रति परिणतमहः। देवि, पश्य–

उदयतटान्तरितमियं प्राची सूचयति दिङ् निशानाथम्।
परिपाण्डुना मुखेन प्रियमिव हृदयस्थितं रमणी।।24।।
देवि, तदुत्तिष्ठ। आवासाभ्यन्तरमेव प्रविशावः।

(सर्व उत्थाय परिक्रामन्ति)

राजा – अरे ! यह क्या ! उत्सव से लुभाये चित्त वाले हम ने सन्ध्या का बीत जाना भी न देखा ! अब दिन समाप्त हो गया है। देवी, देखो,

यह पूर्व दिशा उदयगिरि के तट से व्यवहित चन्द्रमा को, जैसी (विरहिणी) रमणी पीले मुख से हृदय में स्थित प्रिय को, सूचित कर रही **है।।24।।**

देवी, तब उठो। घर के अन्दर ही चलें।

(सब उठकर घूमते हैं)

सागरिका – (राजानं सस्पृहं दृष्टवा निःश्वस्य) (इति राजानं पश्यन्ती निष्क्रान्ता)। कथं प्रस्थिता देवी। भवतु। तदहमपि त्वरितं गमिष्यामि। हा धिक् हा धिक्। मन्दभागिन्य। मया प्रेक्षितुमपि चिरं न पारितोऽयं जनः।

सागरिका – ऐं, महारानी चल पड़ी। अच्छा, तब मैं भी जल्दी से जाती हूँ। (राजा को चाह से देखकर और गहरा सांस लेकर) हाय ! धिक्कार ! हाय !! धिक्कार !! मैं मन्दभाग्य इस जन को देर तक देख भी न सकी। (इस प्रकार राजा को देखती हुई निकल जाती है)।

राजा – (परिक्रामन्)

देवि त्वन्मुखपङ्कजेन शशिनः शोभातिरस्कारिणा
पश्याब्जानि विनिर्जितानि सहसा गच्छन्ति विच्छायताम्।
श्रुत्वा ते परिवारवारवनितागीतानि भृङ्गाङ्गना
लीयन्ते मुकुलान्तरेषु शनकैः सञ्जातलज्जा इव।।25।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

राजा – (घूमता हुआ) देवी, देखो, चन्द्रमा की कान्ति को तिरस्कृत करने वाले तुम्हारे मुख रूपी कमल से जीते गये जलज अचानक कान्ति–हीन हो रहे हैं। तुम्हारी सेविका गणिकाओं के गीतों को सुनकर भ्रमराङ्गनाएँ, जिन्हें, मानो, लज्जा उत्पन्न हो रही है, धीरे–से कुड्मलों के मध्य में छिप रही हैं।।25।।

(सभी निकल जाते हैं) इस प्रकार मदनमहोत्सव नाम का प्रथम अंक समाप्त हो जाता है ।

अभ्यास प्रश्न –निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिये –

1. नक्षत्रों का अधिपति कौन है –
   क. सूर्य ख. चन्द्रमा ग. आकाश घ. पृथ्वी
2. वत्सराज किसकी उपाधि है ।
   क. दुश्यन्त ख. शकार ग. उदयन घ. कोई नही
3. उदयन का प्रधानमन्त्री कौन है ।
   क. विदूशक ख. विजयवर्मा ग. यौगन्धरायण घ. वसुभूति
4. कांचनमाला कौन है ।
   क. परिचारिका ख. विदूशक की सहेली ग. सेविका घ. प्रतीहारी
5. ऐन्द्रजालिक है –
   क. सेवक ख. मजदूर ग. द्वारपाल घ. जादूगर
6. द्विपदीखण्ड का गायन कौन करता है ।
   क. चेटी ख. कंचुकी ग. सागरिका घ. कोई नही
7. औत्सुक्येन में किस विभक्ति का प्रयोग है ।
   क. प्रथमा ख. तृतीया ग. चतुर्थी घ. पंचमी
8. कृतत्वरा का अर्थ –
   क. शीघ्रता से किया हुआ ख. विलम्ब से किया हुआ ग. आकांक्षायुक्त घ. सम्भावना
9. निर्जितशत्रु शब्द का तात्पर्य है –
   क. सभी शत्रुओं का जीता जाना ख. सभी शत्रु ग. शत्रुहीन घ. कोई नही
10. सुसंगता कौन है –
    क. सागरिका की सखी ख. परिचारिका ग. दासी घ. प्रतिहारी

20.5 सारांश

मंगलाचरण से लेकर प्रथम अंक के वर्णन पर्यन्त इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि कौशाम्बी में वसन्तोत्सव की धूम में अन्तःपुर के सब सेवक और पुर के नर और नारी डूबे हुये है । मकरन्द उद्यान में महारानी वासवदता को कामदेव की पूजा सम्पन्न करनी है । जिसमें वह महाराज उदयन की उपस्थिति भी चाहती है । राजा के मकरन्द उद्यान में पहुॅचन पर वासवदत्ता कामदेव पूजन के लिये तत्पर होती है । परन्तु तभी उसे ज्ञात होता है कि सागरिका जिसे महारानी ने सारिका की रक्षा के व्याज से राजा की दृश्टि से बचाने के अभिप्राय से कामदेव पूजन के समय मकरन्द उद्यान से रखने का प्रयास किया था, पूजा की सामग्री लिये खडी है ळ। रानी वासवदश्त्ता ने सागरिका को सारिका की देख रेख करने के लिये वहॉ से चले जाने की आज्ञा दी । परन्तु सागरिकास को कौशाम्बी में काम पूजन देखने का कुतूहल था, इसीलिये वह छिपकर काम पूजन देखने का निश्चय करती है और स्वयं काम – पूजन के लिये पुश्प चयन के लिये चली जाती है । रानी वासदत्ता काम पूजा करने के प्श्चात राजा उदयन की पूजा करती है । तभी पुश्प्प चुनकर सागरिका भी आ जाती है और उसे यह देखकर आश्चर्य होता है कि कौशाम्बी में चित्र में बनाये गये कामदेव की पूजा नहीं होती, अपितु देहधारी कामदेव की पूजा होती है । वह उदयन का कामदेव समझती है और स्वयं भी उसकी पूजा करती है । लेकिन तभी वैतालिक के द्वारा पढी गई स्तुति से सागरिका यह जान लेती है कि यह वही राजा उदयन है जिसक लिये उसके पिता ने उसे दिया था । वह राजा को साभिलाश होकर देखती है और उसे देखते रहने के अवसरों की सुलभता की आशा से अन्तःपुर में सेविका के जीवन को भी बहुत मानती है ।अतः इस प्रकार की कथा वस्तु के माध्यम से आप पात्रों का चरित्र

चित्रण करने और श्लोकों का भाव बताने में सक्षम हो सकेगें ।

20.6 शब्दावली

1. निशानाथम– रात्रि के स्वामी
2 भ्रूभङ्गे–आखें टेढी करने पर
3, प्रभुतया – विश्वास पूर्वक
4,त्वन्मुखपंकजेन– तुम्हारे मुख पंकज के द्वारा

20.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न– 1– ख 2– ग 3– ग 4– ग 5– घ 6– क 7– ख 8– क 9– क 10– क

20.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

20.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. रत्नावली के प्रथम अंक का सारांश अपने शब्दों में लिखिए
2. रत्नावली के प्रथम अंक का साहित्यिक वैशिश्ट्य अपने शब्दों में लिखिए

इकाई 21- रत्नावली द्वितीय अंक सम्वाद एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना
21.2 उद्देश्य
21.**3** श्लोक संख्या 1 से 21 तक अर्थ व्याख्या
21.**4** सारांश
21.**5** शब्दावली
21.**6** अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
21.**7** सन्दर्भ ग्रन्थ
21.**8** निबन्धात्मक प्रश्न

21.1 प्रस्तावना

रत्नावली नाटिका के द्वितीय अंक के वर्णन की इस इकाई में आप सागरिका के कामसन्तप्त अवस्था का अध्ययन करेंगे । वह राजा के प्रति अनुरक्त है । उत्कण्ठावश केले के बागीचे में बैठकर उदयन का चित्र बनाती है जिसे सुंसंगता आदि सखियों से छिपाती है । इसी के साथ द्वितीय अंक के वर्णन का प्रारम्भ होता है ।

राजा के चित्र रहस्य को सुसंगता समझती है और सागरिका से उसका विवाद है इसी बीच अश्वशाला से छूटा हुआ बन्धन तोडकर भागा हुआ वानर अन्तःपुर में भगदड मचाता है । कदलीगृह में भी आता है किन्तु सागरिका आदि उसे देखकर तमालवीथि में छुप जाती है । सखियों का वार्तालाप निरन्तर चल रहा है । यही सब विदूशक के हर्श पूर्वक नृत्यकरने तक का वर्णन इस इकाई में आपके अध्ययनार्थ प्रस्तुत है ।

अतः इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सागरिका के मदनावस्था का वर्णन करते हुये द्वितीय अंक के नाटकीय वैशिश्ट्य को भली –' भॉति समझा सकेगें । साथ ही पात्रों का चरित्र चित्रण करते हुये श्लोकों की व्याख्या भी कर सकेंगे ।

21.2 उद्देश्य

रत्नावली नाटिका के द्वितीय अंक में सागरिका के मदनावस्था से सम्बन्धित वर्णन की इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

1. राजा के प्रति सागरिका किस प्रकार अनुरक्त है कि इसका वर्णन कर सकेगें ।
2. सागरिका और सुसंगता के वार्तालाप को बता सकेंगे ।
3. कदलीगृह की शोभा का वर्णन कर सकेंगे ।
4. विदूशक की मूर्खता को बता सकेंगे ।
5. मकरन्द उद्यान की विशेशता का वर्णन कर सकेगे ।
6. द्वितीय अंक के नाटकीय वैशिश्ट्य को समझा सकेगें ।

21.3 श्लोक संख्या 1 से 21 तक अर्थ व्याख्या

द्वितीय अंक (ततः प्रविशति सारिकापञ्जव्यग्रहस्ता सुसंगता)

सुसङ्गता – हा धिक् ! हा धिक् ! कुत्रेदानीं मम हस्ते सारिकापञ्जरं निक्षिप्य गता मे प्रियसखी सागरिका। तत्कुत्र पुनरेनां प्रेक्षिष्ये। कथमेषा खलु निपुणित एवागच्छति। तद्यावदेनां प्रक्ष्यामि।(सारिका का पिंजड़ा हाथ में लिये सुसङ्गता आती है)

सुसङ्गता – हाय ! हाय !! मेरे हाथ में सारिका का पिंजड़ा सौंप कर अब मेरी प्यारी सखी सागरिका कहाँ चली गई ? अब फिर उसे कहाँ देखूं ? (आगे देखकर) हूँ, यह निपुणिका इधर ही आ रही है। तब उससे ही पूछूंगी।ततः प्रविशति निपुणिका)

निपुणिका – (सविस्मयम्) (इति परिक्रामति) आश्चर्यम् आश्चर्यम्। अनन्यसदृशः प्रभावो मन्ये देवतायाः। उपलब्धः खलु मया भर्तुर्वृत्तान्तः। तद्गत्वा भर्त्र्यै निवेदयिष्यामि।(निपुणिका प्रवेश करती है)

निपुणिका – (विस्मय से) आश्चर्य ! आश्चर्य !! मैं देवता का अद्‌भुत प्रभाव स्वीकार करती हूँ। मैंने स्वामी का वृत्तान्त पा लिया। अब जाकर स्वामिनी से कहे देती हूँ। (घूमती है)।

सुसङ्गता – (उपसृत्य) हला निपुणिके, कुत्रैदानी विस्मयोत्क्षिप्तहृदयेवेह स्थितां मामवधीर्येतोऽतिक्रामसि।

सुसङ्गता – (समीप जाकर) सखी निपुणिका, तू अब कहाँ आश्चर्य से हर लिये गये हृदय वाली सी मुझ यहाँ खड़ी हुई की उपेक्षा करके इधर से निकली जा रही है।

निपुणिका – कथं सुसङ्गता। हला सुसङ्गते, सुष्ठु त्वया ज्ञातम्। एतत्खलु मम विस्मयस्य कारणम्। अद्य किल भर्ता श्रीपर्वतादागतस्य श्रीखण्डदासनामधेयस्य धार्मिकस्य सकाशादकालकुसुमसञ्जननदोहदं शिक्षित्वाऽऽत्मनः परिगृहीतां नवमालिकां कुसुमसमृद्धिशोभितां करिष्यतीति। तत्रेतद्‌वृत्तान्तं ज्ञातुं देव्या प्रेषितास्मि। त्वं पुनः कुत्र प्रस्थिता ?

निपुणिका – कैसे ! सुसङ्गता ! सखी सुसङ्गता, तुमने ठीक जान लिया। मेरे आश्चर्य का कारण यह है – सुना है कि आज स्वामी श्रीपर्वत से आये हुए, श्रीखण्डदास नाम के महात्मा से बिना ऋतु के पुष्प उत्पन्न करने वाले योग को सीखकर अपनी अपनाई हुई नवमालिका को पुष्पों की बहार से शोभित करेगा। यह वृत्तान्त जानने के लिये महारानी ने मुझे वहाँ भेजा था। लेकिन तू कहाँ चली ?

सुसङ्गता – प्रियसखीं सागरिकामन्वेष्टुम्।

सुसङ्गता – प्रिय सखी सागरिका को खोजने।

निपुणिका – सखि, दृष्टा मया ते प्रियसखी सागरिका गृहीतसमुद्‌गकचित्रफलकवर्तिका समुद्विग्नेव कदलीगृहं प्रविशन्ती। तद्‌गच्छ प्रियसखीम्। अहमपि देवीसकाशं गमिष्यामि।

निपुणिका – सखी, मैंने तेरी प्रिय सखी सागरिका रंगों का डिब्बा, चित्रपट और कूंची लिये, परेशान–सी कदली–गृह में घुसती–देखी थी। तब तू प्रिय सखी के पास जा। मैं भी महारानी के पास जाती हूँ।

(इति निष्क्रान्ते) इति प्रवेशकः(दोनों निकल जाती हैं)प्रवेशक समाप्त

(ततः प्रविशति गृहीतचित्रफलकवर्तिका मदनावस्थां नाटयन्तौ सागरिका)

सागरिका – (निःश्वस्य)

हृदय, प्रसीद प्रसीद। किममुनायासमात्रफलकेन दुर्लभजनप्रार्थनानुबन्धेन। अन्यच्च, येनैव दृष्टेन त ईदृशः सन्तापो ननु वर्धते पुनरपि तमेव प्रेक्षितुमभिलषसीत्यहो ते मूढता। कथं चातिनृशंस जन्मतः प्रभृति सहसंवर्धितमिमं जनं परित्यज्य क्षगमात्रदर्शनपरिचितं जनमनुगच्छन्न लज्जसे। अथवा कस्तव दोषः। अनङ्गशरपतनभीतेन त्वयैवमद्य व्यवसितम्। भवतु। अनङ्ग तवादुपालष्स्ये। भगवन् कुसुमायुध, निर्जितसकलसुरासरो भुत्वा स्त्रीजनं प्रहरन् कथं न लज्जसे। अथवानङ्गोऽसि। सर्वथा मम मन्दभागिन्या अनेन दुर्निमित्तेनावश्यं मरणमेवोपस्थितम्। तद्यावदिह कोऽपि नागच्छति तावदालेख्यसमर्पितं तमभिमतं जनं प्रेक्ष्य यथासमीहितं करिष्यामि। यद्यपि मेऽतिसाध्वसेन वेपतेऽयमतिमात्रमग्रहस्तस्तथापि तस्य जनस्यान्यो दर्शनोपायो नास्तीति यथातथाऽऽलिख्यैनं प्रेक्षिष्य।इति नाट्येन लिखति

(ततः प्रविशति सुसङ्गता)

तत्पश्चात् चित्रपट और वर्ण लिये, कामावस्था का नाट्य करती हुई सागरिका प्रवेश करती है)

सागरिका – (गहरा सांस लेकर) हृदय, प्रसन्न हो, प्रसन्न हो। इस दुर्लभ जन की अभिलाषा के हठ से, जिसका केवलमात्र फल दुःख है, क्या लाभ ? और फिर, जिसके देखने मात्र से तुझे इतना सन्ताप बढ़ रहा है, फिर भी तू उसे ही देखने की अभिलाषा कर रहा है।

आश्चर्य है तेरी मूढता ! और अतिक्रूर, जन्म से लेकर साथ बड़े हुये इस जन को छोड़कर क्षण भर के दर्शन से परिचित जन का अनुगमन करते तू लज्जित क्यों नहीं होता ? अथवा तेरा क्या दोष ? कामदेव के बाण के पड़ने से आशङ्कित हुये तूने आज ऐसा किया है। (आँसू लाकर) अच्छा, तब कामदेव को ही उपालम्भ दूंगी। (हाथ जोड़ कर) भगवान् कामदेव, सब सुर एवं असुरों को जीतने वाले होकर भी तुम स्त्री जन पर प्रहार करते हुए लजाते क्यों नहीं हो ? (सोच कर) या (ठीक है), तुम शरीर–हीन हो। (गहरा सांस लेकर) इस अपशकुन के कारण निश्चित ही मुझ मन्दभागिनी की मृत्यु आ गई है। (चित्रपट को देखकर) तो जब तक कोई यहाँ नहीं आता, तब तक चित्र में लिखित इस अभीष्ट जन को देखकर इच्छानुसार करूंगी। (संभल कर एकाग्र मन होकर चित्रपट उठाने का नाट्य करके गहरा सांस लेकर) यद्यपि अधिक घबराहट से मेरी अंगुलियाँ बहुत काँप रही हैं, फिर भी इस जन को देखने का कोई अन्य उपाय नहीं है। इसलिये जैसा–तैसा चित्रित करके इसे देखूँगी। (चित्र बनाने का नाट्य करती है)।

(तत्पश्चात् सुसङ्गता प्रवेश करती है)

सुसङ्गता – एतत्तत्कदलीगृहम्। तत्प्रविशामि। एषा में प्रियसखी सागरिका। किं पुनरेषा गुर्वनुरागोत्क्षिप्तहृदया किमप्यालिखन्ती न मां प्रेक्षते। भवतु तद्यावदस्या दृष्टिपथं परिहृत्य निरूपयिष्यामि किमेषाऽऽलिखतीति। कथं भर्ताऽऽलिखितः साधु, सागरिके, साधु। अथवा न कमलाकरमुज्झित्वा राजहंस्यन्यस्मिन्नभिरमते।

सुसङ्गता – यही वह कदली–गृह है। तो अन्दर जाती हूँ। (प्रवेश करके, आगे देखकर, विस्मय से) यह मेरी प्रिय सखी सागरिका है। लेकिन अधिक अनुराग से आक्रान्त–हृदय सी, कोई चित्र बनाती हुई, यह मुझे क्यों नहीं देख रही ? अच्छा ! तब इसकी नजर बचाकर देखूँगी कि यह क्या चित्र बना रही है ? (उसके पीछे की ओर निश्शङ्क खड़ी होकर ओर देखकर हर्ष से) क्या स्वामी का चित्र बनाया है ? धन्य हो, सागरिका, धन्य हो। ठीक है, राजहंसी कमल–वन को छोड़ कर अन्यत्र रमण नहीं करती।

साग0 – (सबाष्पम्) मुखमुत्तानीकृत्याश्रूणि निवारयन्ती सुसङ्गतां दृष्टवोत्तरीयेण फलकं प्रच्छादयन्ती सविलक्षस्मितम्। आलिखितो मयैषः। किं पुनरनवरतनिपतद्वाष्पसलिलेन मे दृष्टिः प्रेक्षितुं न प्रभवति। कथं प्रियसखी सुसङ्गता। सखि, इहोपविश।

सागरिका – (आँसू भर कर) मैंने यह बना तो लिया। लेकिन निरन्तर बहते हुये आंसुओं के कारण मेरी दृष्टि इसे देख नहीं पाती। (मुख ऊपर उठा कर, आँसुओं को रोकते हुए और सुसङ्गता को देखकर ओढ़नी से चित्रफलक ढंकते हुये लज्जा और मुस्कान के साथ) क्या सखी सुसंगता है ? सखी, इधर बैठो।

सुसङ्ग0 – (उपविश्य बलात्फलकमाकृश्य) सखि, क एष त्वयात्र चित्रफलक आलिखितः।

सुसंगता – (बैठकर और बलपूर्वक चित्रफलक को खींचकर) सखी, यहाँ चित्रपट में तुमने किसे चित्रित किया है ?

साग0 – (सलज्जम्) सखि, प्रवृत्तमदनमहोत्सवे भगवाननङ्ग।

सागरिका – (लजाते हुये) सखी, (इस) हो रहे मदन–महोत्सव में भगवान् कामदेव।

सुसङ्ग – (सस्मितम्) वर्तिकां गृहीत्वा नाट्येन रतिव्यपदेशेन सागरिकामालिखति। अहो ते निपुणत्वम्। किं पुनः शून्यमिवैतच्चित्रं प्रतिभाति। तदहमप्यालिख्य रतिसनाथं करिष्ये।

सुसंगता – (मुस्कराकर) धन्य है तुम्हारी निपुणता ! फिर भी यह चित्र कुछ सूना–सा क्यों लग रहा है ? तो मैं भी चित्र बनाकर (इसे) रति से युक्त कर दूँ। (कूँची लेकर रति के व्याज से सागरिका का चित्र बनाने का नाट्य करती है)।

साग0 – (विलोक्य सासूयम्) सुसङ्गते, कस्मात्त्वयात्राहमालिखिता।

सागरिका – (देखकर नाराज होकर) सुसंगता, इसमें तूने मेरा चित्र क्यों बनाया ?

सुसङ्गता – (विहस्य) सखि, किमकारणं कुप्यसि। यादृशस्त्वया कामदेव आलिखितस्तादृशी मया रतिरालिखिता। तदन्यथासम्भाविनि, किं तवैतेनालपितेन। कथय सर्वं वृत्तान्तम्।

सुसंगता – (हंस कर) सखी, बिना कारण क्यों नाराज होती हो ? जैसा तूने कामदेव बनाया है, वैसी मैंने रति बना दी है। इसलिये, ए उल्टा समझने वाली, तेरी इस बकवास से क्या लाभ सच्ची बात कह।

साग0 – (सलज्जा स्वगतम्) ननु ज्ञातास्मि प्रियसख्या। प्रियसखि, महती खलु मे लज्जा। तत्तवा कुरु यथा न कोप्यपर एतद्वृत्तान्तं जानातीति।

सागरिका – (लजाते हुये, मन में) प्रिय सखी ने मेरी बात जान ली है। (सुसङ्गता का हाथ पकड़ कर, प्रकट रूप से) प्रिय सखी, मुझे बड़ी लज्जा आ रही है। इसलिये ऐसा करो कि कोई दूसरा इस बात को न जान पाये।

सुसंगता – सखि, मा लज्ज स्व। ईदृशस्य कन्यारत्नस्यावश्यमेवेदृशे वरेऽभिलाषेण भवितव्यम्। तथापि यथा न कोऽप्यपर एतं वृत्तान्तं ज्ञास्यति तथा करोमि। एतया पुनर्मेधविन्.... सारिकयात्र कारणेन भवितव्यम्। कदाप्येषास्यालापस्य गृहीताक्षरा कस्यापिपुरतो मन्त्रयिष्यते।

सुसंगता – सखी, लज्जा न करो। ऐसी उत्तम कन्या को अवश्य ही ऐसे वर की अभिलाषा करनी चाहिये। फिर भी, जिससे कोई दूसरा इस बात को न जान पाये, मैं वैसा करूँगी। लेकिन यह बुद्धिमती सारिका इस (रहस्योद्घाटन) का कारण हो सकती है। कहीं यह इस बात–चीत के शब्दों को जानकर किसी के सामने कह सकती है।

साग0 – (इति मदनावस्थां नाटयति) तत्किमिदानीमत्र करिष्यामि अतोऽपि मेऽधिकतरं सन्तापो वर्धते।

सागरिका – तो अब इस विषय में क्या करूँ ? मेरा सन्ताप तो इससे भी अधिक बढ़ रहा है। (कामावस्था की चेष्टा करती है)।

सुसङ्ग0 – (सागरिकाया हृदये हस्तं दत्त्वा) (निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य च नाट्येन नलिनीपत्रैः शयनीयं मृणालैर्वलयानि च रचयित्वा परिशिष्टानि नलिनीपत्राणि सागरिकाया हृदये निक्षिपर्ति) सखि, समाश्वसिहि समाश्वसिहि। यावदस्या दीर्घिकाया नलिनीपत्राणि मृणालिकाश्च गृहीत्वा लघ्वागच्छामि।

सुसंगता – (सागरिका के हृदय पर हाथ रखकर) सखी धैर्य रक्खो। धैर्य रक्खो। अभी मैं इस बावड़ी से कमलिनी के पत्ते और नाल लेकर तुरन्त आती हूँ।

(बाहर जाकर फिर प्रवेश करके कमलिनी के पत्तों से बिछावन और नालों से कड़े बनाकर और बचे हुये कमलिनी के पत्रों को सागरिका के वक्ष पर रखने का नाट्य करती है)।

साग0 – सखि, अपनयेमानि नलिनीपत्राणि मृणालवलयानि च। अलमेतेन किमित्यकारण आत्मानमायासयसि। ननु भणामि।

दुर्लभजनानुरागो लज्जा गुर्वी परवश आत्मा।
प्रियसखि विषमं प्रेम मरणं शरणं न वरमेकम् ।।1।।

(इति मूर्च्छति)

सागरिका – सखी, इन कमल–पत्रों तथा नाल–वलयों को अलग हटा दो। इससे कुछ न होगा। क्यों व्यर्थ अपने को कष्ट दे रही हो ? मैं ठीक कहती हूँ – दुर्लभ जन के प्रति प्रेम है, भारी लाज है और शरीर दूसरे के अधीन है। प्रिय सखी, (इन परिस्थितियों में) प्रेम संकटपूर्ण है। (क्या अब) केवल मृत्यु ही उत्तम शरण नहीं है।।1।।

(मूर्च्छित हो जाती है)

सुसंगता – (सकरुणम्) सखि सागरिके, समाश्वसिहि समाश्वसिहि।(नेपथ्ये)

कण्ठे कृत्तावशेषं कनकमयमधः शृङ्खलादाम कर्ष–
न्क्रान्त्वा द्वाराणि हेलाचलचरणरणत्किङ्किणीचक्रवालः।
दत्तातङ्कोऽङ्गनानामनुसृतसरणिः संभ्रमादश्वपालैः
प्रभ्रष्टोऽयं प्लवङ्गः प्रविशति नृपतेर्मन्दिरं मन्दुरायाः।।2।।

अपि च

नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपा–
मन्तःकञ्चुकिकञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः।
पर्यन्ताश्रयिभिर्निजस्य सदृशं नाम्नः किरातैः कृतं
कुब्जा नीचतयैव यान्ति शनकैरात्मेक्षणाशङ्किनः।।3।।

सुसंगता – (करुणा से) सखी सागरिका, धीरज रक्खो, धीरज रक्खो।

(नेपथ्य में)

गले में टूटने से बची हुई सोने की जंजीर को नीचे (जमीन में) घसीटता हुआ, उछल–कूद से चञ्चल चरणों में बजते हुये घुँघरुओं के समूह वाला, द्वारों को लाँघ कर स्त्रियों को भयभीत करने वाला, हड़बड़ा कर अश्व–रक्षकों द्वारा पीछा किया जाता हुआ, अश्व–शाला से खुला हुआ, यह वानर राजा के भवन में प्रवेश कर रहा है।।2।।

और भी –

हीजड़े, मनुष्यों में गिनती न होने कारण, लज्जा छोड़ कर भाग पड़े हैं; डर के मारे यह बौना कञ्चुकी के जामे में घुस रहा है; (अन्तःपुर) छोर का आश्रय लेने वाले किरातों ने अपने नाम के अनुरूप किया है और अपने देख लिये जाने से डरने वाले कुबड़े और झुककर धीरे–से जा रहे **हैं।।3।।**

सुसंगता – (आकर्ण्याग्रतोऽवलोक्य ससंभ्रममुत्थाय सागरिकां हस्ते गृहीत्वा) सखि, उत्तिष्ठोत्तिष्ठ। एष खलु दुष्टवानर इत एवागच्छति। तदलक्षितं तमालविटपान्धकारे प्रविश्यैनमतिवा हयावः।

सुसंगता – (सुनकर, सामने देखकर, घबराहट से उठकर और सागरिका का हाथ पकड़ कर) सखी, उठो, उठो। यह दुष्ट वानर इधर ही आ रहा है। अतः बिना दीखे तमाल वृक्षों के अंधियारे में जाकर इसे निकल जाने देवें।

(तथा कृत्वोभे सभयं पश्यन्त्यौ स्थिते)

साग0 – सुसङ्गते कथं त्वया चित्रफलक उज्झितः। कदापि कोऽपि तं प्रेक्षते।

(वैसा करके दोनों भयपूर्वक देखती हुई खड़ी होती हैं)

सागरिका – सुसंगता, अरी ! क्या तूने चित्रपट वहीं छोड़ दिया ? कहीं कोई उसे देख ले

सुसंग0 – अयि सुस्थिते, किमद्यापि चित्रफलकेन करिष्यसि। एष खलु दधिभक्तलम्पटः सारिकापञ्जरमुद्घाट्य दुष्टवानरीऽतिक्रान्तः। एषा खलु मेधाविन्युड्डीनाऽन्यतो गच्छति। तदेहि। लघ्वनुसरावः। अस्यालापस्य गृहीताक्षरा कस्यापि पुरतो मन्त्रयिष्यते।

सुसंगता – अरी, आराम से खड़ी रहने वाली, अब चित्रफलक का क्या करेगी ? (देख), दही और भात का लोभी यह दुष्ट बन्दर सारिका के पिंजरे को खोल कर चला गया है। यह मेधाविनी भी उड़ी जा रही है। तो आओ, जल्दी से इसका पीछा करें। इस बातचीत के अक्षरों को जानी हुई (यह) किसी के सामने कह देगी।

साग0 – सखि एवं कुर्वः।

सागरिका – सखी, ऐसा करते हैं।(इति परिक्रामतः)

(यह कहकर दोनों घूमती हैं)(नेपथ्ये)

ही ही आश्चर्यमाश्चर्यम्। (नेपथ्य में) हा ! हा ! अरे ! आश्चर्य, आश्चर्य !

साग0 – (विलोक्य सभयम्) सुसंगते, ज्ञायते पुनरपि स दुष्टवानर आगच्छतीति।

सागरिका – (देखकर भय से) सुसंगता, मालूम होता है, वह दुष्ट वानर फिर आ रहा है।
सुसंग0 – (विदूषकं दृष्टवा विहस्य) अयि कातरे, मा बिभीहि। भर्तुः परिपार्श्ववर्ती खल्वेष आर्यवसन्तकः।
सुसङ्गता – (विदूषक को देखकर जोर से हँसकर) अरी, डरपोक, न डर। यह तो स्वामी के पास रहने वाला आर्य वसन्तक है।
साग0 – (सस्पृहमवलोक्य) सखि सुसंगते, दर्शनीयः खल्वयं जनः।
सागरिका – (चाह से देखकर) सखी सुसंगता, तब तो यह जन दर्शनीय है।
सुसंग0 – अयि सुस्थिते, किमनेन दृष्टेन। दूरीभूता खलु सारिका। तदेहि। अनुसरावः।
(इति निष्क्रान्ते)
सुसंगता – अरी निश्चिन्त, इसके देखने से क्या होगा। सारिका दूर होती जा रही है। आओ, दोनों (उसी का) पीछा करें।
(दोनों बाहर जाती हैं)
(ततः प्रविशति प्रहृष्टो विदूषकः)
विदूषक – ही ही भो आश्चर्यमाश्चर्यम्। साधु, रे श्री खण्डदास धार्मिक, साधु। येन दत्तमात्रेणैव तेन दोहदकेनेदृशी नवमालिका संवृत्ता येन निरन्तरोद्भिन्नकुसुमगुच्छशोभितविटपोपहसन्तीव लक्ष्यते देवीपरिगृहीतां माधवीलताम्। तद्यावद्गत्वा प्रियवयस्यं वर्धयिष्यामि। एष खलु प्रियवयस्यस्तस्य दोहदस्य लब्धप्रत्ययतया परोक्षामपि तां नवमालिकां प्रत्यक्षामिव कुसुमितां प्रेक्षमाणो हर्षोत्फल्ललोचन इत एवागच्छति। तद्यावदेनमुपसर्पामि।
विदूषक – अहा ! हा ! अरे आश्चर्य। धन्य रे महात्मा श्रीखण्डदास, धन्य। क्योंकि उस योग (धूनी) के देते ही नवमालिका ऐसी हो गई कि निरन्तर खिले हुए फूलों के गुच्छों से शोभित डालियों वाली (वह), मानो, महारानी द्वारा अपनाई गई माधवी लता का उपहास करती हुई दीखती है। तब अब जाकर प्रिय मित्र को बधाई दूँगा। (घूमकर और देखकर) उस योग में विश्वास होने के कारण परोक्ष नवमालिका को, मानो, प्रत्यक्ष पुष्पित देखता हुआ, हर्ष से विकसित नेत्रों वाला यह प्रिय मित्र इधर ही आ रहा है। तो इसके पास जाता हूँ।
(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टो राजा)
राजा – (सहर्षम्)

उद्दामोत्कलिकां विपाण्डुररुचं प्रारब्धजृम्भां क्षणा–
दायासं श्वसनोद्गमैरविरतैरातन्वतीमात्मनः।
अद्योद्यानलतामिमां समदनां नारीमिवान्यां ध्रुवं
पश्यन्कोपविपाटलद्युति मुखं देव्याः करिष्याम्यहम् ।।4।।

(तत्पश्चात् प्रसन्न विदूषक प्रवेश करता है)
(तत्पश्चात् राजा प्रवेश करता है)
राजा – (हर्ष से)

क्षण भर में ही अत्यधिक कलियाँ निकली हुई, धवल कान्ति वाली, (कलियों का) प्रारम्भ हुए विकास वाली, निरन्तर वायु के आघात से अपना आयास प्रकट करती हुई (अर्थात् वायु के झोकों से हिलती हुई), मदन नामक वृक्ष से युक्त इस उद्यान लता को, अत्यधिक उत्कण्ठा वाली, जंभाई लेती हुई, निरन्तर गहरे श्वासों से अपनी खिन्नता प्रकट करने वाली, किसी अन्य कामावस्था वाली सुन्दरी के समान देखता हुआ मैं आज निश्चय ही महारानी के मुख को क्रोध से लाल कान्ति वाला कर दूँगा।।4।।

तद्वृत्तान्तमुपलब्धुं गतो वसन्तकोऽद्यापि नायाति।

उसका समाचार जानने के लिये गया हुआ वसन्तक अभी तक नहीं आया।

विदूषक – (सहसोपसृत्य) जयतु जयतु प्रियवयस्यः। भो वयस्य, दिष्ट्या वर्धसे।

विदूषक – (अकस्मात् समीप आकर) प्रिय मित्र की जय हो, जय हो। हे मित्र, तुम्हें बधाई है। (क्योंकि उस दोहद के देते ही नवमालिका ऐसी हो गई– ..... इत्यादि कहता है)

राजा – वयस्य, कः सन्देहः। अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभावः।

पश्य

कण्ठे श्रीपुरुषोत्तमस्य समरे दृष्टवा मणिं शत्रुभि–
र्नष्टं मन्त्रबलाद्वसन्ति वसुधामूले भुजङ्गा हताः।
पूर्व लक्ष्मणवीरवानरभटा ये मेघनादाहताः
पीत्वा तेऽपि महौषधेर्गुणनिधेर्गन्धं पुनर्जीविताः।।5।।

तदादेशय मार्गं येन वयमद्य तदवलोकनेन चक्षुषः फलमनुभवासः।

राजा – मित्र, क्या संदेह है ? मणि, मन्त्र और औषधियों का प्रभाव अचिन्त्य होता है। देखो

युद्ध में भगवान् विष्णु के कण्ठ में (कौस्तुभ) मणि को देखकर (उसके) शत्रु भाग खड़े हुए। मन्त्र के प्रभाव से शक्तिहीन हुए सर्प पृथ्वी के मूल (पाताल) में रहते हैं। पहले जो लक्ष्मण और वीर वानर–योद्धा मेघनाद ने मार दिये थे, वे भी गुणों की निधान महौषधि की गन्ध का पान करके फिर जीवित हो गये।। 5।।

तो मार्ग दिखलाओ, जिससे कि उसको देखकर हम भी दृष्टि का फल पा लेवें।

विदूषक – (साटोपम्) एत्वेतु भवान्।

विदूषक – (गर्व से) चलिये, चलिये।

राजा – गच्छाग्रतः।

राजा – आगे आगे चलो।

(उभौ सगर्वं परिक्रामतः)

विदूषक – (आकर्ण्य सभयं निवृत्य राजानं गृहीत्वा ससंभ्रमम्) भो वयस्य, एहि। पलायावहे।(दोनों गर्व से घूमते हैं)

विदूषक – (सुनकर, भय से लौटकर, राजा को पकड़ कर घबराहट से) ए मित्र, आओ, भाग चलें।

राजा – किमर्थम्।

राजा – क्यों ?

विदूषक – भोः, एतस्मिन् बकुलपादपे कोऽपि भूतः प्रतिवसति।

विदूषक – इस मौलसिरी के पेड़ पर कोई रहता है।

राजा – धिङ् मूर्ख विस्रब्धं गम्यताम्। कुत ईदृशानामत्र संभवः।

राजा – छिः मूर्ख, निडर होकर चलो। यहाँ ऐसी चीजों की कहाँ से सम्भावना हो सकती है।

विदूषक – भोः, एष खलु स्फुटाक्षरमेव मन्त्रयति। यदि मम वचनं न प्रत्याययसि तदग्रतो भूत्वा स्वयमेवाकर्णय।

विदूषक – अरे ! यह तो बिल्कुल साफ अक्षरों में बोल रहा है। यदि मेरी बात का विश्वास न हो तो आगे बढ़कर स्वयं ही सुन लो।

राजा – (तथा कृत्वा श्रुत्वा च)

स्पष्टाक्षरमिदं यस्मान्मधुरं स्त्रीस्वभावतः।
अल्पाङ्गत्वादनिर्ह्रादि मन्ये वदति सारिका।। 6।।

(ऊर्ध्वं निरूप्य) कथं सारिकैवेयम्।

राजा – (वैसा करके और सुनकर)

क्योंकि यह (वचन) स्पष्ट अक्षरों वाला है, स्त्रियों के स्वभाव के अनुरूप मधुर है, और (बोलने वाले के) छोटे अङ्गों वाला होने के कारण धीमा है, (इससे) मैं समझता हूँ कि (कोई) सारिका बोल रही है।।6।।

(ऊपर की ओर ध्यान से देखकर) अरे ! कैसे ! यह तो सारिका ही है।

विदूषक – (ऊर्ध्वमवलोक्य) आः कथं सत्यमेव सारिका। आः दास्याः पुत्रि, किं त्वं जानासि सत्यमेव वसन्तको बिभेतीति। तत्तिष्ठ मुहूर्त्तं यावदतेन पिशुनजनहृदयकुटिलेन दण्डकाष्ठेन परिपक्वमिव कपित्थफलमस्माद्वकुलपादपादाहत्य भूमौ त्वां पातयिष्यामि।

विदूषक – (ऊपर की ओर देखकर) आह ! कैसे ! सचमुच ही सारिका है। (क्रोध से छड़ी उठाकर) आह ! दासी की बच्ची, क्या तूने समझ लिया है कि वसन्तक सचमुच ही डर रहा है। तो जरा ठहर। अभी धूर्त जनों के हृदय के समान कुटिल इस छड़ी से पके कैथ के फल के समान तुझे मारकर इस मौलसिरी के पेड़ से जमीन पर गिराता हूँ। (यह कहकर मारने के लिये तैयार हो जाता है)।

राजा – (निवारयन्) मूर्ख, किमप्येषा रमणीयं व्याहरति। तत्किमेनां त्रासयसि। शृणुवस्तावत्।

राजा – (रोकते हुये) मूर्ख, यह कोई सुन्दर बात कह रही है। तो क्यों इसे डरा रहा है। दोनों सुनें तो।

(उभावाकर्णयतः)

विदूषक – (आकर्ण्य) भो वयस्य, श्रुतं त्वया यदेतया मन्त्रितम्। एषा भणति–'सखि क एष स्वयाऽऽलिखित। सखि, प्रवृत्तमदनमहोत्सवे भगवाननङ्ग' इति। पुनरपि भणति–'सखि, कस्मात्त्वयाहमत्रालिखिता। सखि, किमकारणे कुप्यसि। यादृशस्त्वया कामदेव आलिखितस्तादृशी मया रतिरालिखिता। तदन्यथासम्भाविनि, किं तवै तेनालपितेन। कथय सर्वं वृत्तान्तम्' इति। भो वयस्य, किंन्विदम्।

(दोनों सुनते हैं)

विदूषक – (सुनकर) ऐ मित्र, तुमने सुना, इसने क्या कहा। यह कह रही है–''सखी, तुमने यह किसका चित्र बनाया है ? सखी, प्रारम्भ हुए मदनमहोत्सव में भगवान् कामदेव का।'' यह आगे कह रही है–''सखी, तूने इसमें मेरा चित्र क्यों बनाया। सखी, क्यों तू व्यर्थ कुपित हो रही है। जैसा तूने कामदेव का चित्र बनाया है, वैसा ही मैंने रति का चित्र बना दिया है। इसलिये विपरीत समझने वाली, तेरी इस बकवास से क्या लाभ ? सारी सच्ची बात बतला।'' मित्र यह क्या बात है ?

राजा – वयस्य, एवं तर्कयामि। कयापि हृदयवल्लभोऽनुरागादालिख्य कामदेवव्यपदेशेन सखीपुरतोऽपह्न तः। तत्सख्यापि प्रत्यभिज्ञाय वैदग्ध्यावसावपि रतिव्यपदेशेन तत्रैवाऽऽलिखितेति।

राजा – मित्र, मैं ऐसा समझता हूँ–किसी ने प्रेमवश हृदय के प्रिय जन का चित्र बनाकर (उसे) सखी के सामने कामदेव के व्याज से छिपाया। तब सखी ने भी (रहस्य) ताड़ कर चतुरता से वहीं रति के बहाने उसका भी चित्र बना दिया।

विदूषक – (छोटिकां दत्वा) भो वयस्य, युज्यते। एवं खल्वेतत्।

विदूषक – (चुटकी बजाकर) ऐ मित्र, ठीक है। ऐसा ही है।

राजा – भो वयस्य, तूष्णीं भव। पुनरप्येषा व्याहरति।

राजा – मित्र, चुप रहो। यह फिर आगे कह रही है।

विदूषक – भो एषा भणति–'सखि, मा लज्जस्व। ईदृशस्य कन्यारत्नस्यावश्यमेवेदृशे वरेऽभिलाषेण भवितव्यम्' इति। भो वयस्य, यैषाऽऽलिखिता सा खलु कन्या दर्शनीया। **विदूषक** – अरे ! यह कह रही है–'सखी, लज्जा न करो। ऐसी उत्तम कन्या की अवश्य ही ऐसे वर के लिये अभिलाषा होनी चाहिए'। ऐ मित्र, जिस कन्या का चित्र बनाया गया है, वह अवश्य सुन्दर होगी।

राजा – यद्येवमवहितौ शृणुवस्तावत्। अस्त्यत्रावकाशो नः कुतूहलस्य।
(इत्युभावाकर्णयतः)
राजा – यदि ऐसा है तो सावधान होकर सुनें। इसमें हमारी उत्सुकता के लिये स्थान है। (दोनों सुनते हैं)
विदूषक – भो वयस्य, श्रुतं त्वया यदेतया मन्त्रितम्–'सखि, अतोऽपि मेऽधिकतरं संतापो वर्धते। 'सखि, अपनयेमानि नलिनीपत्राणि मृणालवलयानि च। अलमेतेन। कस्मादकारण आत्मानमायासयसि' इति।
विदूषक – ऐ मित्र, तुमने, इसने जो कहा – 'सखी, इससे मेरी पीड़ा और अधिक बढ़ रही है।' 'सखी, इन कमलिनी के पत्रों और नाल के वलयों को हटाओ। इनसे बस करो। क्यों व्यर्थ स्वयं को कष्ट दे रही हो'।
राजा – वयस्य न केवलं श्रुतमभिप्रायोऽपि लक्षितः।
राजा – मित्र, केवल सुन ही नहीं लिया, अपितु आशय भी समझ लिया है।
विदूषक – भो मा त्वं पाण्डित्यगर्वमुद्रह। अहं त एतस्या मुखाच्छ्रुत्वा सर्वं व्याख्यास्यामि। तच्छृणुवः। अद्यापि कुरकुरायत एवैषा सारिका दास्याः पुत्री।
विदूषक – अरे, पाण्डित्य का अभिमान न कर। मैं इसके मुख से सुनकर तुझे सब बतला दूँगा। इसलिये दोनों सुनें। अभी भी यह दासी की पुत्री सारिका कुर–कुर कर रही है।
राजा – युक्तमभिहितम्। (पुनराकर्णयतः)
राजा – ठीक कहा। (फिर दोनों सुनते हैं)
विदूषक – भो वयस्य, एषा खलु सारिका दास्या दुहिता चतुर्वेदी ब्राह्मण इव ऋचः पठितुं प्रवृत्ता।
विदूषक – हे मित्र, यह तो दासी की बेटी सारिका चतुर्वेदी ब्राह्मण के समान ऋचायें पढ़ने लगी।
राजा – वयस्य, कथय किमप्यन्यचेतसा मया नावधारितं किमनयोक्तमिति।
राजा – मित्र, तनिक बतलाओ, अन्यत्र चित्त वाले मैंने समझा नहीं कि इसने क्या कहा।
विदूषक – भो एतदेतया पठितम्

दुर्लभजनानुरागो लज्जा गुर्वी परवश आत्मा।
प्रियसखि विषमं प्रेम मरणं शरणं नु वरमेकम्।। 7।।

विदूषक – अरे इसने यह कहा है –

दुलर्भ जन के प्रति प्रेम है, भारी लज्जा है और शरीर दूसरे के अधीन है। प्रिय सखी, (इन परिस्थितियों में) प्रेम संकटपूर्ण है। (क्या अब) केवल मृत्यु ही उत्तम शरण नहीं है।।7।।

राजा – (सस्मितम्) साधु, भवन्तं महाब्राह्मणं मुक्त्वा कोऽन्य एवमृचामभिज्ञः।
राजा – (मुस्करा कर) ठीक, आप महाब्राह्मण को छोड़कर अन्य कौन इस प्रकार ऋचाओं को जान सकता है।
विदूषक – ततः किं नु खल्विदम्।
विदूषक – तब फिर यह क्या है ?
राजा – ननु गाथेयम्।
राजा – यह गाथा है।
विदूषक – किं गाथा ?
विदूषक – क्या ? गाथा ?
राजा – वयस्य, कयापि श्लाघ्ययौवनया प्रियतममनासादयन्त्या जीवितनिरपेक्षयोक्तम्।

राजा – किसी प्रशंसनीय यौवन वाली ने प्रियतम को न पाकर जीवन से उदास हुई ने (यह) कहा है।

विदूषक – (उच्चैर्विहस्य) (हस्ततालं दत्त्वोच्चैर्विहसति)। भोः किमेतैर्वक्रभणितैः। ऋजुकमेव किं न भणसि यथा मामेवानासादयन्त्येति। अन्यथा कोऽन्यः कुसुमचापव्यपदेशेन निह्नूयते। **विदूषक** – (जोर से हंसकर) अरे ! इन टेढ़ी बातों से क्या (लाभ) ? सीधे ही क्यों नहीं कहते कि 'मुझे न पाती हुई ने'। नहीं तो, दूसरे किसको इस प्रकार कामदेव के व्याज से छिपाया जायेगा। (हाथों से ताली बजाकर जोर से हँसता है)।

राजा – (ऊर्ध्वमवलोक्य) धिङ् मूर्ख, किमुच्चैर्विहसता त्वयेयमुन्त्रासिता येनोड्डीयान्यत्र क्वापि गता।(इति निरूपयतः)

राजा – (ऊपर की ओर देखकर) छिः मूर्ख, जोर से हँस कर तूने यह क्यों डरा दी कि उड़कर कहीं दूसरी जगह चली गई।

(दोनों ध्यान से देखते हैं)

विदूषक – (विलोक्य) भो एषा कदलीगृहमेव गता। तदेहि। लघ्वनुसरावः।

विदूषक – (देखकर) अरे, यह तो कदली–गृह की ओर ही गई है। तो आओ, दोनों जल्दी से पीछा करें।

राजा – दुर्वारां कुसुमशरव्यथां वहन्त्या
कामिन्या यदभिहितं पुरः सखीनाम्।
तद् भूयः शिशुशुकसारिकाभिरुक्तं
धन्यानां श्रवणपथातिथित्वमेति ।। 8।।

राजा – दुष्परिहार काम–पीड़ा को धारण करने वाली सुन्दरी द्वारा सखियों के सामने जो (वचन) कहा जाता है, बालक, तोते तथा मैना द्वारा फिर कहा गया वह (वचन) भाग्यशालियों (ही) के श्रोत्रपथ का गोचर होता है ।।8।।

विदूषक – (परिक्रामतः) एत्वेतु भवान्। भो एतत्खलु कदलीगृहम्। यावत्प्रविशावः।

(इत्युभौ प्रविशतः)

विदूषक – चलें, आप चलें। (दोनों घूमते हैं) रे, यही कदली–गृह है। आओ, प्रवेश करें।

(दोनों प्रवेश करते हैं)

विदूषक – भोगता दास्याः पुत्री इह तावन्मन्दमारुतोद्वेल्लद्बालकदलीदलशीतले शिलातल उपविश्य मुहूर्तं विश्राम्यावः।

विदूषक – अरे ! (वह) दासी की पुत्री (तो) गई। अब यहाँ मन्द पवन से हिलते हुए नये केले के पत्तों से शीतल शिलातल पर बैठ कर क्षण भर विश्राम कर लेवें।

राजा – यदभिरुचितं भवते। (इत्युपविशतः। राजा निःश्यस्य दुर्वार कुसुमशख्यथामित्यादि 2/8 पुनः पठति)।

राजा – जैसा आपको अच्छा लगे। (यह कहकर दोनों बैठ जाते हैं राजा गहरा सांस लेकर, 'दुष्परिहार काम–पीड़ा' इत्यादि 2/8 फिर दोहराता है)।

विदूषक –(पार्श्वतोऽवलोक्य) कलकं गृहीत्वा निरूप्य च सहर्षम्। भो वयस्य एतेनोद्घाटितद्वारेण तस्याः सारिकायाः पञ्जरेण भवितव्यम्। एषोऽपि स चित्र फलकः। यावदेनं गृह्णामि। भो वयस्य, दिष्ट्या वर्धसे।

विदूषक – (दोनों ओर देखकर) अरे ! यह खुले हुए द्वार वाला उस सारिका का पिंजरा होगा। और यह वह चित्रपट है। तो इसे लेता हूँ। (चित्रपट ले लेकर, ध्यान से देखकर हर्ष से) हे मित्र, तुम्हें बधाई !

राजा – (सकौतुकम्) वयस्य, किमेतत् ?

राजा – (कुतूहल से) मित्र, यह क्या है ?

विदूषक – भो एतत्तद्यन्मया भणितम्। त्वमेवात्राऽऽलिखितः। कोऽन्यः कुसुमचापव्यपदेशेन निह्नूयत इति।

विदूषक – अरे, यह वही है जो मैंने कहा था। इसमें तेरा ही चित्र बनाया है। कामदेव (पुष्प के धनुष वाले) के ब्याज से अन्य किसे छिपाया जा सकता है।

राजा – (सहर्ष हस्तौ प्रसार्य) सखे, दर्शय दर्शय।

राजा – (हर्ष से दोनों हाथ फैलाकर) मित्र, दिखलाओ, दिखलाओ।

विदूषकः – न ते दर्शयिष्यामि। सापि कन्यकात्रैवाऽऽलिखिता। तत् किं पारितोषिकेण विनेद्दशं कन्यारत्नं दर्श्यत।

विदूषक – तुम्हें नहीं दिखलाऊँगा। वह कन्या भी इसी में चित्रित की हुई है। तो क्या इनाम के बिना ऐसी उत्तम कन्या दिखाई जाती है।

राजा – (कटकमर्पयन्नेव बलाद् गृहीत्वा विलोक्य सविस्मयम्।

लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः।
मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव ।।9।।

अपि च

विधायापूर्वपूर्णेन्दुमस्या मुखमभूद् ध्रुवम्।
धाता निजासनाम्भोजविनिमीलनदुःस्थितः ।।10।।

(ततः प्रविशति सागरिका सुसङ्गता च)

राजा – (कड़ा देते हुए बलपूर्वक लेकर, देख कर विस्मय से)

क्रीड़ा से कमलों को कम्पित करने वाली, पंखों के फड़फड़ाने को प्रकट करती हुई, सुन्दर चाल वाली, राजहंसी जैसे मानसरोवर में (वैसे ही) विलास से लक्ष्मी को तिरस्कृत करने वाली, हमारे प्रति अनुराग प्रकट करने वाली, चित्र में लिखित यह कौन (हमारे) मन में प्रवेश कर रही है **।। 9।।**

और भी –

इसके मुखरूपी अनुपम पूर्ण चन्द्र को बनाकर, निश्चय ही, विधाता अपने वासस्थान कमल के संकोचन से कठिनाई से बैठा होगा **।।10।।**

(इसके बाद सागरिका और सुसङ्गता प्रवेश करती हैं)

सुसङ्गता–सखी न समासादितास्माभिः सारिका। तच्चित्रफलकमपि तावदेतस्मात्कदलीगृहाद् गृहीत्वा लघ्वागच्छावः।

सुसङ्गता – सखी, हमें सारिका (तो) नहीं मिली। तब अब इस कदली गृह से चित्रपट को ही लेकर जल्दी से आ जायें।

सागरिका – सखि एवं कुर्वः।

सागरिका – सखी, ऐसा करें।(उभे परिक्रामतः)(दोनों घूमती हैं)

विदूषकः – भो वयस्य, कस्मात्पुनरेपावनतमुख्यालिखिता।

विदूषक – हे मित्र, लेकिन इसे नीचा मुख की हुई क्यों चित्रित किया गया है ?

सुसङ्गता – (आकर्ण्य) सखि, यथा वसन्तको मन्त्रयते तथा तर्कयामि भर्त्राप्यत्रैव भवितव्यम्। तत्कदलीगुल्मान्तरिते भूत्वा प्रेक्षावहे।

सुसङ्गता – सखी, क्यों कि वसन्तक बोल रहा है, उससे अनुमान करती हूँ कि यहाँ स्वामी भी होंगे। तब केले के झुरमुट की ओर में होकर देखें तो।(इत्युभे पश्यतः)

राजा – वयस्य, पश्य पश्य। (विधायापूर्वपूर्णेन्दुमित्यादि पुनः पठति।)(दोनों देखती हैं)

राजा – मित्र, देखो, देखो। ('अनुपम पूर्ण चन्द्र बनाकर ....' इत्यादि कहता है)

सुसङ्गता – सखि, दिष्ट्य वर्धसे। एष ते हृदयवल्लभस्त्वामेव निर्वर्णयंस्तिष्ठति।)

सुसङ्गता – सखी, बधाई है। यह तेरा प्रियतम तुझे ही देख रहा है।
साग0 – (सलज्जम्) सखि, कस्मात्परिहासशीलतयेमं जनं लघुं करोषि।
सागरिका – (लज्जा से) क्यों उपहास करके इस जन का तिरस्कार कर रहे हो।
विदूषकः – (राजानं चालयित्वा) ननु भणामि–कस्मादेषावनतमुख्यालिखितेति।
विदूषक – (राजा को हिलाकर) अरे, मैं पूछता हूँ कि इसे नीचा मुख की हुई क्यों चित्रित किया गया है ?
राजा – वयस्य, सारिकयैव सकलमावेदितम्।
राजा – मित्र, यह तो सारिका ने ही सब बतला दिया।
सुसङ्ग0 – सखि, दर्शित खलु मेधाविन्याऽऽत्मनो मेधावित्वम्।
सुसङ्गता – सखी, मेधाविनी ने तो दिखला दी अपनी मेधाविता।
विदूषकः – भो वयस्य, अपि सुखयति ते लोचने ?
विदूषक – हे मित्र, क्या (यह) तुम्हारे नयनों को सुख देती है ?
साग0 – (ससाध्वसं स्वगतम्) किमेष भणिष्यतीति यत् सत्यं जीवितमरणयोरन्तरे वर्ते।
सागरिका – (आशङ्का से मन ही मन में) यह क्या कहेगा। इससे सचमुच मैं जीवन और मृत्यु के बीच में हूँ।
राजा – सुखयतीति किमुच्यते। पश्य–

कृच्छादूरुयुगं व्यतीत्य सुचिरं भ्रान्त्वा नितम्बस्थल
मध्येऽस्यास्त्रिवलीतरङ्गविषमे निस्पन्दतामागता।
मद्दृष्टिस्तृषितेव संप्रति शनैरारुह्य तुङ्गौ स्तनौ
साकांक्षं मुहुरीक्षते जललवप्रस्यन्दिनी लोचने ।।11।।

राजा – सुख देती है, इसमें क्या कहना है। देखो –

मुश्किल से इसकी दोनों जाँघों को पार करके, चिरकाल तक कटि–प्रदेश में भ्रमण करके, उदर की तीनों रेखाओं (त्रिवली) की तरङ्गों से दुर्गम मध्य भाग में निश्चल हुई, मेरी दृष्टि, मानो, प्यासी–सी अब धीरे–धीरे उन्नत स्तनों पर चढ़कर बार बार चाह–से जल–कणों को बहाने वाले (इसके) दोनों नेत्रों को देख रही है।।11।।

सुसङ्गता – सखि श्रुतं त्वया।
सुसङ्गता – सखी, सुना तुमने ?
साग0 – (विहस्य) त्वमेव शृणु यस्या आलेख्यविज्ञानमेवं वर्ण्यते।
सागरिका – (हँसकर) तू ही सुन, जिसकी चित्र–कला का इस प्रकार वर्णन किया जा रहा है।
विदूषकः – भो वयस्य, यस्य पुनरीदृश्योऽप्येवं समागमं बहु मन्यन्ते तस्याप्यात्मन उपरि कः परिभवः। येनात्रैव तया लिखितमात्मानं न प्रेक्षसे।
विदूषक – लेकिन, हे मित्र, ऐसी (सुन्दरियाँ भी जिसके मिलन को इस प्रकार बहुत मानती हैं, उसका अपने प्रति यह कैसा उपेक्षाभाव है कि इस (चित्रफलक) में ही उसके द्वारा चित्रित किये गये स्वयं को नहीं देख रहे।
राजा – (निर्वर्ण्य) वयस्य, अनयाऽऽलिखितोऽहमिति यत्सत्यं ममात्मन्येव बहुमानः। तत्कथं न पश्यामि। पश्य –

भाति पतितो लिखन्त्यास्तस्या बाष्पाम्बुशीकरकणौघः।
स्वेदोद्गम इव करतलसंस्पर्शादेष मे वपुषि।।12।।

राजा – (ध्यान से देखकर) मित्र, इसने मेरा चित्र बनाया है, इससे सचमुच मुझे अपने पर भी बहुत मान हो गया (है), तब कैसे न देखूंगा ?
देखो –

अभ्यास प्रश्न –

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए ं।

क– विधायापूर्वपूर्णेन्दुमस्या मुखमभूद् ध्रुवम्।
धाता निजासनाम्भोजविनिमीलनदुःस्थितः ।

_____
_____
_____

ख– लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः।
मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव ।

_____
_____
_____
_____

चित्र बनाती हुई का मेरे शरीर पर गिरा हुआ यह अश्रु–बिन्दुओं के कणों का समूह उसके करतल के स्पर्श से (उत्पन्न) पसीना–सा प्रतीत होता है।**।12।।**

साग0 – (आत्मगतम्) हृदय, समाश्वसिहि समाश्वसिहि। मनोरथोऽपि ते एतावतीं भूमिं न गतः।

सागरिका – (मन में) हृदय, धैर्य रक्खो धैर्य रक्खो। यहाँ तक तो तेरा मनोरथ भी नहीं पहुँचा था।

सुसङ्गता – सखि, त्वमेवैका श्लाघनीया यया भर्ताप्येवं मन्त्र्यते।

सुसङ्गता – सखी, केवल तू ही प्रशंसनीय है, जो स्वामी से भी इस प्रकार कहला रही है।

विदूषकः – (पार्श्वतोऽवलोक्य) भो वयस्य, एतत्खलु सरसकमलिनीदलमृणालविरचितं तस्या मदनावस्थासूचकं शयनीयं लक्ष्यते।

विदूषक – (चारों ओर देखकर) हे मित्र, यह ताजे कमलिनी के पत्तों तथा नालों से बना हुआ, उसकी कामावस्था को सूचित करने वाला बिछावन दीख रहा है।

राजा – वयस्य, निपुणमुपलक्षितम्। तथा हि

परिम्लानं पीनस्तनजघनसंगादुभयत–
स्तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम्।
इदं व्यस्तन्यासं श्लथभुजलताक्षेपवलनैः
कृशाङ्ग्याः संतापं वदति नलिनीपत्रशयनम्।।13।।

अपि च

स्थितमुरसि विशालं पद्मिनीपत्रमेतत्
कथयति न तथान्तर्मन्मथोत्थामवस्थाम्।
अतिगुरुपरितापम्लापिताभ्यां यथास्याः
स्तनयुगपरिणाहं मण्डलाभ्यां ब्रवीति।।14।।

विदूषकः – (नाट्येन मृणालिकां गृहीत्वा) भो वयस्य, अयमपरस्तस्या एव पीनस्तनोष्माक्लिश्यमानकोमलमृणालहारः। तत्प्रेक्षतां भवान्।

विदूषक – (नाट्यपूर्वक मृणालिका लेकर) हे मित्र, यह उसका ही दूसरा स्थूल स्तनों के सन्ताप से मुरझाया हुआ कोमल नालों का हार है। इसे देखो।

राजा – (गृहीत्वोरसि विन्यस्य) अयि जडप्रकृते,

परिच्युतस्तत्कुचकुम्भमध्यात् किं शोषमायासि मृणालहार।
न सूक्ष्मतन्तोरपि तावकस्य तत्रावकाशो भवतः किमु स्यात्।।15।।

राजा – मित्र, ठीक जाना। क्योंकि –

स्थूल स्तन तथा जघन के सम्पर्क से दोनों ओर से मुरझाया हुआ, क्षीण मध्य भाग का सम्पर्क न पाकर बीच में हरा, और शिथिल लता–सदृश भुजाओं के (इधर–उधर) फेंकने तथा चलाने से अस्त–व्यस्त रचना वाला, यह कमलिनी के पत्तों का बिछावन कृशाङ्गी के सन्ताप को कह रहा **है।।13।।**

और भी

वक्षःस्थल पर स्थित यह विशाल कमलिनि–पत्र इसके हृदय की काम से उत्पन्न दशा को उतना नहीं कह रहा है, जितना अत्यधिक ताप से मुरझाये हुए गोल चिह्नों से इसके दोनों स्तनों की विशालता को कह रहा **है।।14।।**

राजा – (लेकर वक्ष पर रखकर) अरे मूर्ख

मृणालहार, उसके स्तनरूपी कलशों के मध्य से गिरा हुआ तू क्यों खिन्न हो रहा है ? यहाँ तेरे सूक्ष्म धागे के लिये भी स्थान नहीं है, तेरे लिए फिर कैसे हो सकता है।**।15।।**

सुसङ्गता – (आत्मगतम्) (प्रकाशम्) हा धिक्, हा धिक्। गुर्वनुरागोत्क्षिप्तहृदयो भर्ताऽसंबद्धमपि मन्त्रयितुं प्रवृत्तः। तदतः परं पुनर्न युक्तमुपेक्षितुम्। भवतु। एवं तावत्। सखि, यस्य कृते त्वमागता सोऽयं पुरतस्तिष्ठति।

सुसङ्गता – (स्वगत) आह ! धिक्कार ! अत्यधिक अनुराग से व्याकुल हृदय वाले स्वामी ने (अब) असम्बद्ध भी कहना प्रारम्भ कर दिया। अब इससे आगे उपेक्षा करना ठीक नहीं। अच्छा, तब ऐसा (करूं)। (प्रगट में) सखी, जिसके लिये यहाँ आई थी, वह यह सामने है।

सागरिका – (सासूयम्) सुसंगते, कस्य कृतेऽहमत्राऽऽगता।

सागरिका – (चिढ़ कर) सुसङ्गता, मैं यहाँ किसके लिये आयी थी !

सुसङ्गता – (विहस्य) अयि अन्यशङ्किते, ननु चित्रफलकस्य। तद् गृहाणैनम्।

सुसङ्गता – (हँस कर) अरी,कुछ अन्य समझने वाली, चित्रपट के लिये। तो इसे ले ले।

सागरिका – (सरोषम्) इति गन्तुमिच्छति। अकुशलाऽस्मि तवेदृशानामालापानाम्। तदन्यतो गमिष्यामि।

सागरिका – (क्रोध से) मैं तेरी ऐसी बातों को नहीं समझ सकती। तो मैं अन्यत्र चली जाऊँगी। (यह कहकर जाना चाहती है)।

सुसङ्गता – (सागरिका हस्ते गृहीत्वा) अयि असहने, इह तावन्मुहूर्तं तिष्ठ यावदस्मात्कदलीगृहाच्चित्रफलकं गृहीत्वागच्छामि।

सुसङ्गता – (सागरिका का हाथ पकड़ कर) अरी कोप करने वाली, मुहुर्त्त भर तो यहाँ ठहर, जब तक मैं कदली–गृह से चित्रपट लेकर आऊँ।

सागरिका – सखि, एव कुरु।(सुसंगता कदलीगृहाभिमुखं परिक्रामति)

सागरिका – सखी, ऐसा (ही) कर। (सुसङ्गता कदलीगृह की ओर घूमती है)

विदूषकः – (सुसंगतां दृष्टवा ससंभ्रमम्) भो वयस्य, प्रच्छादयैतं चित्रफलकम्। एषा खलु देव्याः परिचारिका सुसंगताऽऽगता। (राजा पटान्तेन फलकमाच्छादयति)

विदूषक – (सुसङ्गता को देखकर घबराहट से) ऐ मित्र, इस चित्रपट को छिपा लो। यह महारानी की सेविका सुसङ्गता आ रही है।(राजा आंचल से फलक को ढकता है)

सुसङ्गता – (उपसृत्य) जयतु जयतु भर्ता।

सुसङ्गता – (समीप जाकर) स्वामी की जय हो।
राजा – सुसंगते, स्वागतम्। इहोपविश्यताम्। (सुसंगतोपविशति)
राजा – सुसङ्गता, (तेरा) स्वागत। यहाँ बैठो। (सुसङ्गता बैठती है)
सुसङ्गता – (विहस्य) इति गन्तुमिच्छति।
राजा – सुसंगते, कथमिहस्थोऽहं भवत्या ज्ञातः।
राजा – सुसङ्गता, यहाँ स्थित हमें तुमने कैसे जान लिया ?
सुसङ्गता– भर्तः, न केवलं त्वम्, अयमपि चित्रफलकेन सह सर्वो वृत्तान्तो मया विज्ञातः। तद्दैव्यै गत्वा निवेदयामि।
सुसङ्गता – (हँस कर) स्वामिन्, केवल तुम्हें ही नहीं, बल्कि चित्रपट सहित यह सारी बात भी मैंने जान ली है। तो अब जाकर महारानी से कह दूँगी।
विदूषकः – (अपवार्य सभयम्) भो वयस्य, सर्व संभाव्यते। मुखरा खल्वेषा गर्भदासी। तत्पारितोषिकेण संप्रीणयैनाम्।
विदूषक – (एक ओर को होकर, भय से) ऐ मित्र, यह सब सम्भव है। यह गर्भ की दासी बड़ी वाचाल है। इसलिये इनाम से इसे प्रसन्न करो।
राजा – युक्तमुक्तं भवता। (सुसङ्गता हस्ते गृहीत्वा) सुसंगते, क्रीडामात्रमेवैतत्। अकारणे त्वया देवी न खेदयितव्या। इदं ते पारितोषिकम्। (इति कर्णाभरणं प्रयच्छति)।
राजा – आपने ठीक कहा है। (सुसङ्गता का हाथ पकड़ कर) सुसंगता, यह तो खेल–भर था। तुम्हें व्यर्थ देवी को दुःखी नहीं करना चाहिये। लो, यह तुम्हारा इनाम है। (कर्णाभूषण देता है)
सुसङ्गता – (प्रणम्य सस्मितम्) भर्तः, अलं शंकया। भयाऽपि भर्तुः प्रसादेन क्रीडितमेव। तत्विकं कर्णाभरणेन। एष एव मे गुरुः प्रसादो यत् कस्मात् त्वयाऽहमत्र चित्रफलक आलिखितेति कुपिता में प्रियसखी सागरिका। तद् गत्वा प्रसादयत्वेनां भर्ता।
सुसंगता – (प्रणाम करके मुस्कराते हुये) स्वामी, डरिये नहीं। मैंने भी स्वामी के प्रसाद से खेल ही किया है। इसलिये कर्णाभूषण से क्या ? मुझ पर स्वामी का यही महान् प्रसाद है कि–तूने इस चित्रपट में मेरा चित्र क्यों बनाया, इस कारण मेरी सखी सागरिका कुपित हो गई है, स्वामी चलकर उसे प्रसन्न कर दें।
राजा – (ससंभ्रममुत्थाय) क्कासौ क्कासौ।
राजा – (जल्दी से उठकर) वह कहाँ है ? कहाँ है ?
सुसङ्गता – इत इतो भर्ता।
सुसंगता – स्वामी इधर (चलिये), इधर।
विदूषकः – भोः गृह्हाम्येतं चित्रफलकम्। कदापि पुनरप्येतेन कार्यं भविष्यति।
(सर्वे कदलीगृहान्निष्क्रान्ताः)
विदूषक – अरे, इस चित्रपट को लिये लेता हूँ। कभी फिर भी इससे काम पड़ेगा।
(सब कदलीगृह से बाहर निकलते हैं)
सागरिका – (राजानं दृष्टवा सहर्षं ससाध्वसं सकम्पं च स्वगतम्) हा धिक्, हा धिक्! एवं प्रेक्ष्यातिसाध्वसेन न शक्नोमि पदात् पदमपि चलितुम्। तत्किमिदानीमत्र करिष्यामि।
सागरिका – (राजा को देखकर हर्ष, भय तथा कम्पन सहित) हाय ! धिक् ! इसे देखकर अत्यधिक घबराहट के कारण मैं एक पग भी नहीं चल पा रही। तो अब इस दशा में क्या करूं ?
विदूषकः – (सागरिकां दृष्टवा) ही ही भोः, आश्चर्यमाश्चर्यम्। ईदृशं रूपं मनुष्यलोके नपुनर्दृश्यते। ततर्कयामि प्रजापतेरपीदं निर्माय विस्मयः समुत्पन्न इति।

विदूषक – (सागरिका को देखकर) अरे! रे! आश्चर्य है! ऐसा रूप मनुष्यलोक में तो अन्यत्र देखा नहीं। इससे मैं सोचता हूँ कि इसे बनाकर प्रजापति को भी विस्मय हो गया होगा।

राजा – वयस्य, ममाप्येवं मनसि वर्तते।

दृशः पृथुतरीकृता जितनिजाब्जपत्रत्विष–
श्चतुर्भिरपि साधु साध्विति मुखैः समं व्याहृतम्।
शिरांसि चलितानि विस्मयवशाद् ध्रुवं वेधसा
विधाय ललनां जगत्त्रयललामभूताभिमाम् ।।16।।

राजा – मित्र, मेरे भी मन में ऐसा ही आ रहा है।

निश्चय ही ब्रह्मा ने तीनों लोकों की भूषण स्वरूप इस ललना को बनाकर विस्मय–वश अपने (वासस्थान) पद्म के पत्रों की कान्ति को जीतने वाले नेत्र विस्फारित किये होंगे, चारों मुखों से एक साथ 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा' यह कहा होगा और (उसके) सिर हिल उठे होंगे।।16।।

सागरिका– (सासूयं सुसंगतामालोक्य) (इति गच्छति)। सखि, ईदृशश्चित्रफलकस्त्वयाऽऽनीतः।

सागरिका – (चिढ़कर सुसङ्गता को देखकर) सखी, ऐसा चित्रपट लाई है तू। (यह कहकर चली जाती है)

राजा –दृष्टिं रुषा क्षिपसि भामिनि यद्यपीमां
स्निग्धेयमेष्यति तथापि न रूक्षभावम्।
त्यक्त्वा त्वरां व्रज पदस्खलितैरयं ते
खेदं करिष्यति गुरुर्नितरां नितम्बः ।।17।।

राजा – हे सुन्दरी, यद्यपि तू रोष से यह दृष्टि डाल रही है, फिर भी स्नेह–भरी यह रूखी नहीं होगी। तू झटपटी छोड़कर चल। (अन्यथा) पैर के फिसल जाने से यह तेरा भारी नितम्ब तुझे अत्यधिक कष्ट देगा **।।17।।**

सुसंगता – भर्तः, अतिकोपना खल्वेषा। तद्धस्ते गृहीत्वा प्रसादयैनाम्।

सुसंगता – स्वामी, यह बड़ी कोपशील है। इसलिए इसे हाथ पकड़ कर मनाओ।

राजा – (सानन्दम्) सागरिकां हस्ते गृहीत्वा स्पर्शसुखं नाटयति।

राजा – (आनन्द से) जैसा आप कहें। (सागरिका को हाथ से पकड़ कर स्पर्श के सुख का अभिनय करता है)

विदूषकः – भोः, एषा खलु त्वयाऽपूर्वा श्रीः समासादिता।

विदूषक – अरे, तूने निश्चय ही यह अनुपम श्री पा ली है।

राजा – वयस्य सत्यम्।

श्रीरेषा पाणिरप्यस्याः पारिजातस्य पल्लवः।
कुतोऽन्यथा स्रवत्येष स्वेदच्छद्मामृतद्रवतः।।18।।

राजा – मित्र, सचमुच,

यह श्री है, और इसका हाथ पारिजात का किसलय है। नहीं तो, यह स्वेद के व्याज से अमृत–रस कहाँ से बह रहा है।**।18।।**

सुसंगता – सखि, अतिनिष्ठुरेदानीमसि त्वं यैवं भर्त्रा हस्तेऽवलम्बितापि कोपं न मुञ्चसि।

सुसंगता – सखी, तू अब बड़ी कठोर है, जो इस प्रकार स्वामी द्वारा हाथ में धारण की गई भी कोप नहीं छोड़ रही।

सागरिका – (सभ्रूभङ्गम्) अयि सुसंगते, अद्यापि न विरमसि।

सागरिका – (भौं टेढ़ी करके) अरी सुसंगता, तू अभी भी नहीं रुकेगी।

राजा – अयि प्रसीद। न खलु सखीजने युक्त एवं कोपानुबन्धः।

राजा – अयि, प्रसन्न हो। सखियों पर इस प्रकार लगातार कोप ठीक नहीं है।

विदूषकः – एषा खलु अपरा देवी वासवदत्ता।
(राजा सचकितं सागरिकाया हस्तं मुञ्चति)
विदूषक – यह तो दूसरी महारानी वासवदत्ता है।
(राजा चौंक कर सागरिका का हाथ छोड़ देता है)
सागरिका – (ससंभ्रमम्) सुसंगते, किमिदानीमत्र करिष्ये।
सागरिका – (घबराकर) सुसंगता, अब इस अवस्था में क्या करूँ ?
सुसंगता – सखि, एतां तमालवीथिकामन्तरयित्वा निष्क्रामावः।
(इति निष्क्रान्ते)
सुसंगता – सखी, इस तमाल वृक्षों की पङ्क्ति की ओट लेकर निकल चलें।
(दोनों निकल गई)
राजा – (पार्श्वतोऽवलोक्य) वयस्य क्व सा देवी वासवदत्ता ?
राजा – (चारों ओर देखकर) मित्र, महारानी वासवदत्ता कहाँ है ?
विदूषकः – भोः, न जानामि क्व सा। मयैषा खल्वपरा देवी वावसदत्ताऽतिदीर्घरोषतयेति भणितम्।
विदूषक – अरे, मैं नहीं जानता कि वह कहां है। मैंने तो (इसके) अतिदीर्घ कोप वाली होने के कारण कहा था कि यह दूसरी महारानी वासवदत्ता है।
राजा – धिक् मूर्ख,

प्राप्ता कथमपि दैवात्कण्ठमनीतैव सा प्रकटरागा।
रत्नावलीव कान्ता मम हस्ताद् भ्रंशिता भवता।।19।।

राजा – छिः ! मूर्ख,

किसी प्रकार भाग्य से प्राप्त हुई, व्यक्त अनुराग वाली, वह कान्ता, स्फुट कान्ति वाली रत्नावली के समान, कण्ठ में बिना धारण की गई ही आपने मेरे हाथ से गंवा दी।।19।।
(ततः प्रविशति वासवदत्ता काञ्चनमाला च)
वासवदत्ता – हञ्जे काञ्चनमाले, अथ कियद्दूर इदानीं साऽऽर्यपुत्रेण परिगृहीता नवमालिका
(तत्पश्चात् वासवदत्ता और काञ्चनमाला प्रवेश करती हैं)
वासव0 – सखी काञ्चनमाला, आर्यपुत्र द्वारा अपनाई हुई वह नवमालिका अब कितनी दूर है ?
काञ्चन0 – भर्त्रि, एतत्कदलीगृहमतिक्रम्य दृश्यत एव।
काञ्चनमाला – स्वामिनी, इस कदलीगृह को पार करके दीख ही रही है।
वासवदत्ता – तदादेशय मार्गम्।
वासव0 – तो मार्ग बतलाओ।
काञ्चन0 – एत्वेतु भर्त्री।
काञ्चनमाला – स्वामिनी, चलिये, चलिये।
राजा – वयत्व, क्वेदानीं प्रियतमा द्रष्टव्या।
राजा – मित्र, अब प्रिया को कहाँ देखा जाय ?
काञ्चन0 – भर्त्रि, यथा समीपे भर्ता मन्त्रयति तथा तर्कयामि भर्त्रीमेव प्रतिपालयंस्तिष्ठति। तदुपसर्पतु भर्त्री।
काञ्चनमाला – स्वामिनी, जैसे कि स्वामी समीप बोल रहे हैं, उससे समझती हूँ कि वह स्वामिनी की ही प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसलिये स्वामिनी समीप जायें।
वासवदत्ता – (उपसृत्य) जयतु जयत्वार्यपुत्रः।
वासव0 – (समीप जाकर) आर्यपुत्र की जय हो, जय हो।

राजा – (अपवार्य) विदूषकः कक्षायां फलकं निक्षिप्योत्तरीयेण प्रच्छादयति।
राजा – (एक ओर को होकर) मित्र, चित्रपट को ढक लो।**(विदूषक चित्रपट को बगल में रखकर चादर से ढंकता है)**
वासवदत्ता – आर्यपुत्र, अथ कुसुमिता नवमालिका।
वासव0 – आर्यपुत्र, क्या नवमालिका पर फूल आ गये ?
राजा – देवि, प्रथममिहागतैरप्यस्माभिस्त्वं चिरयसीति नैव दृष्टा। तदेहि। समेतावेव तां पश्यावः।
राजा – देवी, हमने यहाँ पहले आकर भी इसलिये नहीं देखी, क्योंकि तुम्हें देर थी। तब आओ। दोनों साथ ही देखें।
वासवदत्ता – (निर्वर्ण्य) आर्यपुत्र, मुखरागादेव मया ज्ञातं यथा कुसुमिता नवमालिकेति! तन्न गमिष्यामि।
वासव0 – (ध्यान से देखकर) आर्यपुत्र, (आपके) मुख की कान्ति से ही मैंने जान लिया कि नवमालिका पर कुसुम आ गये हैं। इसलिये मैं नहीं जाऊँगी।
विदूषकः – इति बाहु प्रसार्य नृत्यति। नृत्यतः कक्षान्तरात् फलकः पतति। ही ही भोः, जित्रं जितमस्माभिः।(राजापवार्याङ्गुल्या विदूषकं तर्जयति)
विदूषक – आ ! हा ! हा ! अरे, हम जीत गये, जीत गये। (दोनों भुजायें फैलाकर नाचता है। नाचते हुये की बगल से फलक गिर पड़ता है)।
(राजा एक ओर को होकर विदूषक को अंगूली के संकेत से सचेत करता है)
विदूषकः – (अपवार्य) भो मा कुप्य। तूष्णीकस्तिष्ठ। अहमेवात्र ज्ञास्यामि।
विदूषक – (मुँह फेर कर) अरे, कोप न करो। चुप रहो। इस विषय में मैं स्वयं जान लूँगा।
काञ्चन0 – (फलकं गृहीत्वा निरूप्यापवार्य) भर्त्रि, प्रेक्षस्व तावत् किमत्र चित्रफलक आलिखितम् ?
काञ्चनमाला – (फलक लेकर, ध्यान से देखकर, मुख दूसरी ओर करके) स्वामिनी, देखों तो इस चित्रपट में क्या लिखा है ?
वासवदत्ता – (निरूप्यापवार्य) काञ्चनमाले, अयमार्यपुत्रः। इय पुनः सागरिका किंन्वेतत् ?
वासव0 – (ध्यान से देखकर, एक ओर को) काञ्चनमाला, यह आर्यपुत्र है, और यह सागरिका है। यह क्या है ?
काञ्चन0 – भर्त्रि, अहमप्येतदेव चिन्तयामि।
काञ्चनमाला – स्वामिनी, मैं भी यही समझती हूँ।
वासव0 – (सकोपहासम्) आर्यपुत्र, केनेदमालिखितम् ?
वासव0 – (कोप और हास के साथ) आर्यपुत्र, यह किसने बनाया है ?
राजा – (सवैलक्ष्यस्मितमपवार्य) वयस्य, किं ब्रवीमि।
राजा – (लज्जा और मुस्कराहट के साथ, मुँह फेर कर) मित्र क्या कहूँ ?
विदू0 – (अपवार्य) (प्रकाशं वासवदत्तां प्रति) भोः मा चिन्तय। अहमुत्तरं दास्यामि। भवति, मान्यथा संभावय। आत्मा किल दुःखमालिख्यत इति मम वचनं श्रुत्वा प्रियवयस्येनैतदालेख्यविज्ञानं दर्शितम्।
विदूषक – (एक ओर को) अरे, चिन्ता न करो। मैं उत्तर दूंगा। (प्रकट में, वासवदत्ता को लक्ष्य करके) माननीय, अन्य कुछ न समझिये। 'अपना चित्र कठिनता से बनाया जा सकता है' मेरे इस वचन को सुनकर प्रिय मित्र ने यह चित्र–कला की प्रवीणता प्रदर्शित की है।
राजा – यथाह वसन्तकस्तथैवैतत्।
राजा – वसन्तक जैसा कह रहा है, यह बिल्कुल वैसा ही है।

वासव0 – (फलकं निर्दिश्य) आर्यपुत्र, एषाऽपि यापरा तब समीप आलिखिता तत्किमार्यवसन्तकस्य विज्ञानम्।

वासव0 – (चित्रफलक की ओर संकेत करके) आर्यपुत्र, यह जो दूसरी तुम्हारे पास अङ्कित की गई है, वह क्या आर्य वसन्तक की कला है ?

राजा – (सवैलक्ष्यस्मितम्) देवि, अलमन्यथा शङ्कया। इयं हि कापिकन्यका स्वचेतसैव परिकल्पयाऽऽलिखिता। न तु दृष्टपूर्वा।

राजा – (लज्जा के साथ मुस्करा कर) महारानी, और कोई संदेह न कीजिये। यह किसी कन्या का अपने मन से ही कल्पना करके चित्र बना दिया है। लेकिन (यह) पहले (कभी) देखी नहीं है।

विदूषकः – भवति, सत्यं सत्यम्। शपे ब्रह्मसूत्रेण यदि कदाप्यस्माभिरीदृशी दृष्टपूर्वा।

विदूषक – माननीय, (यह बिल्कुल) सत्य है। मैं यज्ञोपवीत की शपथ लेता हूँ जो ऐसी हमने कभी देखी हो।

काञ्चन0 – (अपवार्य) भर्त्रि, घुणाक्षरमपि कदापि संभवत्येव।

काञ्चनमाला – (एक ओर को) स्वामिनी, कभी संयोगवश भी हो सकता है।

वासव0 – (अपवार्य) (प्रकाशम्)(प्रतिस्था)। अयि ऋजुके, वसन्तकः खल्वेषः। त्वमेतस्य वक्रभणितानि न जानासि। आर्यपुत्र, मम पुनरिदं चित्रफलकं प्रेक्ष्य शीर्षवेदना समुत्पन्ना। तद् गमिष्याम्यहम्।

वासव0 – (एक ओर को) अरी भोली, यह वसन्तक है। तू इसकी टेढ़ी बातों को नहीं समझती। (प्रकट में) आर्यपुत्र, मेरे तो इस चित्र को देखते हुए सिर में पीड़ा हो गई है। मैं जा रही हूँ। (प्रस्थान करती है)।

राजा – (पटान्तेन गृहीत्वा) देवि,

प्रसीदेति ब्रूयामिदमसति कोपे न घटते
करिष्याम्येवं नो पुनरिति भवेदभ्युपगमः।
न मे दोषोऽस्तीति त्वमिदमपि च ज्ञास्यसि मृषा
किमेतस्मिन्वक्तुं क्षममिति न वेद्मि प्रियतमे।।20।।

राजा – (आँचल पकड़ कर) देवी,

यदि 'प्रसन्न होओ' यह कहूँ तो यह कोप न होने पर ठीक नहीं बैठता; यदि 'फिर ऐसा नहीं करूँगा' यह कहूँ तो (दोष की) स्वीकृति हो जायेगी; यदि 'मेरा दोष नहीं है' यह कहूँ तो तुम इसे भी झूठ समझोगी, प्रियतमे, इस परिस्थिति में क्या कहना उचित है, मैं यह नहीं समझ पा रहा ।।20।।

वासव0 – (सविनयं पटान्तमाकर्षन्ती) आर्यपुत्र, मान्यथा सम्भावय। सत्यमेव मां शीर्षवेदना बाधते। तद्गमिष्यामि।

(उभे निष्क्रान्ते)

वासव0 – (विनयपूर्वक आँचल को खींचते हुये) आर्यपुत्र, और कुछ न समझिये। सचमुच मुझे सिर की पीड़ा सता रही है। इसलिये जा रही हूँ।

(दोनों चली जाती हैं)

विदूषकः – (पार्श्वाण्यवलोक्य) भोः, दिष्ट्या वर्धसे। क्षेमेणास्माकमतिक्रान्ताऽकालवातावली।

विदूषक – (चारों ओर देखकर) अरे, तुम्हारा बड़ा सौभाग्य है। यह अकाल की आँधी हमारे क्षेमपूर्वक बीत गई।

राजा – धिङ् मूर्ख, कृतं परितोषेण। यान्त्याऽऽभिजान्यान्निगूढो न लक्षितस्त्वया देव्याः कोपानुबन्धः।

भ्रूभङ्गे सहसोद्गतेऽपि वदनं नीतं परां नम्रता–

मीषन्मां प्रति भेदकारि हसितं नोक्तं वचो निष्ठुरम्।
अन्तर्बाष्पजडीकृतं प्रभुतया चक्षुर्न विस्फारितं
कोपश्च प्रकटीकृतो दयितया मुक्तश्च न प्रश्रयः।।21।।

राजा – छिः ! मूर्ख, सन्तोष से बस करो। जाती हुई देवी के भद्रता से छिपाये गये कोप के प्रवाह को तूने देखा नहीं।

अकस्मात् भ्रूकुटि चढ़ जाने पर भी मुख बहुत नीचा कर लिया; मेरे प्रति कुछ भेद–भरा मन्द हास किया; कोई निष्ठुर वचन नहीं कहा; आत्मवशिता के कारण अन्दर भरे आँसुओं से जड़ की हुई आँखें (मेरी ओर) नहीं निकालीं। प्रिया ने अपना कोप तो प्रकट कर दिया, लेकिन विनय नहीं छोड़ा।।21।।

तदेहि। देवीमेव प्रसादयितुं गच्छावः।**(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)इति कदलीगृहो नाम द्वितीयोऽङ्कः।**

21.4सारांश

सागरिका के मदनावस्था के प्रधान वर्णन से सम्बन्धित इस द्वितीय अंक के अध्ययन से आपने जाना कि राजा के प्रति अनुरक्त सागरिका अपनी उत्कण्ठा मिटाने के लिये कदली गृह में बैठकर उसका चित्र बनाती है और सखी सुसंगता के पूछने पर रहस्य छिपाती है । परन्तु सुसंगता रहस्य को ताड लेती है और उस चित्र फलक में सागरिका का चित्र बनादेती है । इस पर सागरिका सुसंगता से कुपित हो जाती है, लेकिन सुसंगता के आग्रहपूर्वक पूछने पर अपनी सब व्यथा बतला देती है । पिंजरें में बन्द सारिका उनके इस वार्तालाप को सुन लेती है । इसी बीच अश्वशाला से बन्धन तुडा कर छूटा हुआ वानर अन्तःपुर में भगदड मचा देता है । वानर को कदलीगृह की ओर आता देखकर सागरिका और सुसंगता घबराहट में सारिका के पिजरे ओर चित्रफलक को कदलीगृह में छोड कर तमाल वीथि में छिप जाती है । वानर पिंजरे का द्वार खोल देता है और सारिका उडकर बकुल के वृक्ष पर बैठकर सागरिका और सुसंगता के मध्य हुये विश्रब्ध आलाप को दुहराने लगती है । श्रीखण्डदास धार्मिक से सीखे हुये दोहद के प्रभाव से अकाल पुश्पित नवमालिका को देखने केलिये मकरन्द उद्यान में जातेहुये राजा और विदूशक सारिका के अलाप को सुन लेते है और सारिका के पीछे पीछे कदलीगृह में पहुँच जाते है औरवहॉ सागरिका की काम दशा को सूचित करने वाले कमलिनी पत्रों के शयन, मृणाल हार और चित्रपट को देखता है ।

21.5 शब्दावली

1.प्रसीदेति . प्रसन्नता हो
2 भ्रूभङ्गे–आखें टेढी करने पर
3, प्रभुतया – विश्वास पूर्वक

21.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क – उत्तर इकाई में ही देखें ।
ख – उत्तर इकाई में ही देखें ।

21.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

21.8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. रत्नावली के द्वितीय अंक का सारांश अपने शब्दों में लिखिए
2. रत्नावली के द्वितीय अंक का साहित्यिक वैशिश्ट्य अपने शब्दों में लिखिए